गोरा

मूल लेखक

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवादक

सूर्यदेव त्रिपाठी बी० ए०

प्रकाशक

आदर्श हिन्दी पुस्तकालय

४१९ अहियापुर

इलाहाबाद

तीसरा संस्करण] मार्च १९५३ [मूल्य ५) रू०

प्रकाशक
सुशील कृष्ण शुक्ल
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१९, अहियापुर,
इलाहाबाद

मुद्रक
रघुनाथ प्रसाद जा॰
रघुनाथ प्रेस,
गाड़ीवान टोला, ॰

गोरा

[१]

श्रावण का महीना और प्रातः काल का समय था। बसंत के दिन होने पर भी इस समय आकाश में बादल नहीं थे। निर्मल स्वच्छ धूप से कलकत्ते का आकाश साफ दिखाई दे रहा था। कालेज की सारी परीक्षाओं को पास करके भविष्य के लिये आगे कोई बात निश्चय न कर विनय भूषण अपने घर पर ही फुरसत का समय बिता रहा था। सड़क के सामने बरांडे पर अकेला खड़ा हुआ रास्ते की भीड़ का दृश्य देखकर अपने मन को बहला रहा था। अभी तक उसे संसार का कोई ज्ञान न था। न तो उसका विवाह ही हुआ था और न उसे घर गृहस्थी की चिन्ता ही थी। कोई काम न रहने से कभी कभी सभा समिति में प्रवेश कर तथा समाचार पत्रों में लेख आदि लिखकर अपना समय काट लेता था। पर इतने से ही उसको सन्तोष न था, वह कोई बड़ा काम करने की बात को सोचा करता था।

आज सबेरे से उसके पास कोई काम न होने से उसका मन चंचल हो उठा था। बहुत कुछ सोच करके भी वह कुछ निश्चय न कर सका कि क्या करूँ। इतने में ही देखा सामने दूकान पर खड़ा हुआ एक भिखारी गा रहा था —

"खांचार भितर आचिन् पाखी केमने आसे जाय।
धर्ते पार्ले मने बेड़ि दितेम् पाखीय पाय॥"

विनय की इच्छा हुई कि उस भिखारी को बुलाकर यह अपरिचित चिड़ियावाला गीत लिख लेवें, किन्तु जैसे ही उसने उस भिखारी को अपने पास

बुलाने का विचार किया कि ठीक उसी समय उसके घर के सामने ही एक किराये की गाड़ी के ऊपर किसी रईस की बढ़िया गाड़ी के घोड़े आ पड़े और किराये की गाड़ी का एक पहिया तोड़ते हुये बड़ी तेजी से निकल गये, किराये की गाड़ी बिलकुल उलट तो नहीं गई पर टूट कर जहाँ की तहाँ ढेर हो गई। जिस रईस की गाड़ी से यह घटना हुई उसने नजर उठाकर इधर देखा तक भी नहीं।

विनय चटपट बरांडे से नीचे उतर कर सड़क पर गाड़ी के सामने आ खड़ा हुआ, उसने देखा गाड़ी के भीतर से एक १७-१८ साल की लड़की उतर आई है और भीतर से एक अधेड़ भद्र पुरुष उतरने की चेष्टा कर रहे हैं, विनय ने सहारा देकर उन्हें गाड़ी के बाहर निकाला और उनके मुख की ओर देख कर पूछा:—"आपको चोट तो नहीं लगी।" उन्होंने—"नहीं चोट तो नहीं आई" कहकर हंसने की चेष्टा की परन्तु वह हंसी की रेखा वैसे ही विलीन हो गई जब वह अचेत से होकर गिरने लगे। विनय ने उनको पकड़ लिया और उस घबड़ाई हुई लड़की से कहा:—"यह सामने ही मेरा घर है। भीतर चलिये कोई चिन्ता की बात नहीं है।"

वृद्ध को बिछौने पर लिटा चुकने के बाद लड़की ने एक बार इधर उधर नजर घुमाकर देखा। एक कोने में सुराही रक्खी थी। सुराही से गिलास में पानी लेकर वह वृद्ध के मुंह पर जल के छींटे देकर पंखा हांकने लगी। लड़की ने विनय से कहा—यदि आप कोई डाक्टर बुला सकें तो बड़ी कृपा होगी।

विनय के घर के पास ही एक डाक्टर रहते थे। विनय ने अपने नौकर को उन्हें बुला लाने के लिये भेजा। कमरे के भीतर एक मेज पर एक बड़ा आइना, तेल, शीशी, कंघी, ब्रश आदि सामान रक्खा हुआ था, विनय आइने के सामने कुर्सी पर बैठी उस लड़की के पीछे खड़ा मंत्र मुग्ध हो एकटक उस आइने में उसके रूप को देखने लगा।

विनय ने लड़कपन से ही कलकत्ते में किराये के मकान में रहकर पढ़ा लिखा है। संसार के साथ अब तक उसका जो कुछ परिचय हुआ है सो केवल पुस्तकों के ही साथ। किसी भले घराने की बहू बेटी के साथ कभी किसी दिन उसकी जान पहचान या मेल मुलाकात नहीं हुई थी।

आइने पर दृष्टि डालकर उसने देखा कि उसमें जिस मुख का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है वह बहुत ही सुन्दर है। उसकी आंखों में इतना ज्ञान नहीं था कि उसके सुन्दर मुख की प्रतीक रेखा को अलग अलग करके देखता, केवल उस घबराये हुये स्नेह के मारे झुके हुये उस तरुणी के तरुण मुख की कोमलता मंडित उज्वलता भर को ही विनय देख सका और जो उसे सृष्टि के तत्काल प्रकट हुये एक नवीन आश्चर्य की तरह जान पड़ी।

थोड़ी देर के बाद वृद्ध ने धीरे धीरे आंखें खोलीं और "बेटी" कहकर लम्बी सांस छोड़ी। लड़की की आंखों से आंसू छलक आये। उसने वृद्ध से पूछा—"पिता जी! तुम्हें कहां चोट लगी है।"

"यह मैं कहां आ गया" कहकर वृद्ध ने उठने की इच्छा प्रकट किया, पर विनय ने उसी क्षण उन्हें रोक कर कहा—"अभी आप उठियेगा नहीं कुछ देर ठहरिये डाक्टर साहब आते होंगे।"

तब वृद्ध को उस दुर्घटना की याद आई। उन्होंने कहा—"सिर में यहां पर कुछ पीड़ा सी हो रही है पर चोट भारी नहीं है। डाक्टर को बुलाने की तो कोई आवश्यकता न थी।"

कुछ देर के बाद डाक्टर साहब अपने डाक्टरी साज सामान के साथ कमरे में दाखिल हुये। वृद्ध की शारीरिक अवस्था को देखकर उन्होंने कहा—"विशेष कोई बात नहीं है। गर्म दूध के साथ थोड़ी सी ब्रान्डी मिलाकर पिलाने से सब ठीक हो जायगा।" यह कह दवा की एक छोटी सी शीशी देकर डाक्टर साहब चले गये। उनके जाते ही वृद्ध अत्यन्त संकुचित और व्यग्र हो उठे। लड़की उस वृद्ध के मन के भाव को समझकर कहने लगी—"पिता जी! आप चिन्तित क्यों होते हैं। डाक्टर की फीस और दवा के दाम घर से यहाँ भेज दिये जायगे।"

इतना कहकर उस लड़की ने विनय के मुख की ओर देखा। वे आंखें कैसी विचित्र थीं। उन्हें देखकर यह बात मन ही में नहीं आती कि वे आंखें बड़ी हैं या छोटीं, काली हैं या भूरी। पहली नजर पड़ते ही जान पड़ता है कि इस दृष्टि में एक ऐसा भाव है जिसमें सन्देह का लेशमात्र नहीं है। उस दृष्टि में संकोच नहीं है दुविधा नहीं है। वह दृष्टि एक स्थिर शक्तिसे पूर्ण है।

वह लड़की विनय के मुंह की ओर ताक रही थी इसलिये विनय कुछ कहना चाहता था पर मन के भाव को स्पष्ट शब्दों में प्रगट नहीं कर सका। वृद्ध ने विनय से कहा—"देखिये मेरे लिये ब्रान्डी की जरूरत नहीं है।" लड़की ने बीच ही में रोक कर कहा—"क्यों पिता जी डाक्टर साहब तो कह गये हैं।"

वृद्ध ने कहा—"डाक्टर लोग यों ही कहा करते हैं। उनकी तो ऐसी आदत ही है। मुझ में कुछ कमजोरी आ गई है वह केवल गर्म दूध के पीने से ही जाती रहेगी, और अब आप को क्यों तकलीफ देती हो। हमारा घर तो पास ही है। टहलते टहलते चले चलेगें।

लड़की ने कहा—"नहीं पिता जी यह नहीं हो सकता।'

वृद्ध इसके बाद फिर कुछ न कह सके। विनय स्वयं जाकर गाड़ी ले आया। गाड़ी पर चढ़ने से पहले वृद्ध ने विनय से पूछा—"आपका नाम क्या है।"

विनय ने कहा--"मेरा नाम विनय भूषण चट्टोपाध्याय और अपका।

वृद्ध ने कहा—"मेरा नाम परेश चन्द्र भट्टाचार्य है। पास ही ८७ नं० वाले मकान में रहता हूँ; कभी फुरसत होने पर मेरे घर पधारियेगा तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।"

लड़की ने विनय के मुख की ओर अपनी दोनों आंखें उठाकर चुपचाप इस अनुरोध का समर्थन किया, विनय उसी समय उस गाड़ी पर बैठकर उन लोगों के घर जाने को तैयार था पर ऐसा करना शिष्टाचार के अनुकूल होगा या नहीं यह ठीक निश्चय न कर सकने के कारण वह जहां का तहां

खड़ा रहा। गाड़ी रवाना होते समय उस लड़की ने दोनों हाथों से विनय को प्रणाम किया। विनय इस नमस्कार के लिए बिल्कुल ही तैयार नहीं था इसी कारण वह हतबुद्धि सा होकर उसके उत्तर में कुछ न कह सका। इतनी सी अपनी त्रुटि लेकर घर में लौट आ कर, वह बारबार अपने को धिक्कारने लगा। विनय ने इन लोगों से मुलाकात होने के समय से विदा होने के समय तक के अपने आचरण की आलोचना करके देखा-- उसे जान पड़ने लगा कि आदि से अंत तक उसके सारे व्यवहार में केवल असभ्यता ही प्रकट हुई है! किस समय क्या करना चाहिए था, क्या कहना चाहिए था, इन्हीं बातों को लेकर वह मन ही मन केवल वृथा आन्दोलन करने लगा। उसने अपने कमरे में लौट आ कर देखा, जिस रूमाल से उस लड़की ने अपने पिता का मुंह पोछा था, वह रूमाल बिस्तर पर पड़ा था। विनय ने चटपट वह रूमाल उठा लिया। उसके मन में वही भिक्षुक का गीत ध्वनित होने लगा—

"खाँचार भितर आचिन् पाखी केम्ने आसे जाय।"

दिन चढ़ चला, वर्षा की धूप तेज हो उठी, गाड़ियों का ताँता तेजी के साथ आफिसों की ओर जाने लगा विनय अपने दिन के किसी भी काम में मन नहीं लगा सका। उसकी दृष्टि में उसका यह छोटा सा घर और चारों ओर विस्तृत कुत्सित कलकत्तापुरी किसी मायापुरी की तरह हो उठी। इस वर्षा ऋतु के प्रभात की प्रदीप्त आभा ने उसके मस्तिष्क के भीतर प्रवेश किया, वह उसके रक्त में प्रवाहित हो उठी—उसके अन्तःकरण के सामने एक ज्योतिर्मय पर्दा सा पड़ गया, जिसने उसके प्रति दिन के जीवन-की सारी तुच्छता को ढंक दिया।

इसी समय विनय की दृष्टि सड़क पर पड़ी। उसने देखा, एक सात आठ वर्ष का लड़का खड़ा हुआ उसके घर का नम्बर देख रहा है। विनय ने ऊपर से कहा—यही है, यही घर है। उसके मन में इस बारे में बिल्कुल सन्देह नहीं हुआ कि लड़का उसी का घर ढूँढ़ रहा था। विनय चटपट सीढ़ियों पर स्लीपर चट्चट करता हुआ नीचे उतर गया, अत्यन्त आग्रह

के साथ लड़के को भीतर ले जा कर उसके मुंह की ओर देखने लगा। लड़के ने कहा—दीदी ने मुझे भेजा है। इतना कह कर उसने विनय के हाथ में एक पत्र दिया।

विनय ने पत्र लेकर पहले लिफाफे पर दृष्टि डाली। साफ स्पष्ट स्त्रियों की लिखावट में अंगरेजी अक्षरों में उसका नाम लिखा था। भीतर चिट्ठी पत्री कुछ न थी, सिर्फ कुछ रुपये थे।

लड़का जाने को उद्यत हुआ, लेकिन विनय ने उसे किसी तरह नहीं छोड़ा, उसे प्रेम से हाथ पकड़ कर दूसरे खण्ड में ले गया।

लड़के का रङ्ग बहन की अपेक्षा कुछ सांवला था, लेकिन मुख का ढङ्ग बहुत कुछ मिलता जुलता था। उसे देख कर विनय के मन में आप ही आप एक तरह का स्नेह और आनन्द उत्पन्न हुआ।

लड़का खूब तेज था: उसने कमरे में प्रवेश करते ही दीवार में एक चित्र देखकर प्रश्न किया—यह किसका चित्र है?

विनय ने कहा—यह मेरे एक मित्र का चित्र है।

लड़के ने कहा—मित्र का चित्र है? आपके मित्र कौन हैं?

विनय ने हँस कर कहा—तुम उन्हें नहीं पहचानते। मेरे मित्र का नाम गौरमोहन है। हम लोग उन्हें गोरा कहकर पुकारते हैं। हम दोनों मित्रों ने लड़कपन से एक साथ ही पढ़ा है।

लड़का—अब भी पढ़ते हैं?

विनय—ना, अब नहीं पढ़ता।

लड़का—आप सब पढ़ चुके?

विनय इस छोटे से बालक के आगे भी गर्व करने के प्रलोभन को न सम्भाल सका। बोला—हां, सब पढ़ चुका।

लड़के ने आश्चर्य चकित होकर एक साँस ली। शायद उसने यह सोचा कि वह भी कितने दिनों में इतनी विद्या पढ़ सकेगा।

विनय—तुम्हारा नाम क्या है भाई?

लड़का—मेरा नाम श्री सतीशचंद्र मुखोपाध्याय है।

विनय ने विस्मित होकर—मुखोपाध्याय ?

उसके बाद धीरे धीरे सब परिचय प्राप्त हुआ। परेश बाबू इन लोगों के पिता नहीं हैं। उन्होंने इन दोनों भाई बहनों को लड़कपन से ही पाला है लड़के की बहन का नाम पहले राधारानी था, परेशबाबू की स्त्री ने उसे बदल कर सुचरिता नाम रक्खा है।

देखते ही देखते विनय के साथ सतीश की खूब घनिष्टता हो गई। सतीश जब घर जाने को उद्यत हुआ, तब विनय ने कहा—तुम अकेले चले जा सकोगे ?

बालक ने गर्व के साथ कहा—मैं तो अकेले ही आया हूँ, जा क्यों न सकूंगा ?

फिर भी विनय ने कहा—मैं तुमको घर तक पहुँचा आऊं, चलो।

उसकी शक्ति के ऊपर विनय का यह सन्देह देखकर सतीश क्षुब्ध हो उठा। उसने कहा—क्यों, मैं अकेला जा सकता हूँ। इतना कहकर वह अकेले आने जाने के अनेक आश्चर्यजनक उदाहरणों का उल्लेख करने लगा। किन्तु अब भी विनय उसके घर के दरवाजे तक साथ क्यों गया, इसका ठीक कारण बालक की समझ में बिल्कुल ही नहीं आया।

सतीशने द्वार पर पहुँच कर पूछा—आप भीतर नहीं चलेंगे ?

विनय ने कहा—और किसी दिन आऊंगा।

घर लौट आकर विनय ने वह सरनामा लिखा हुआ लिफाफा जेब से निकाल कर बहुत देर तक देखा—हर एक अक्षर की रेखाएँ जैसे उसके हृदय में अंकित हो गईं। उसके बाद मय रुपयों के वह लिफाफा उसने बड़े यत्न से अपने बक्स में रख दिया। इन रुपयोंको किसी दुःसमय में भी खर्च करने की संभावना नहीं रही।

—०—

वर्षाऋतुकी संध्या में आकाशका अंधकार जैसे भीग कर भारी हो गया है। वर्णहीन वैचित्र्यहीन मेघ निःशब्द शासन के नीचे कलकत्ता शहर एक बड़े भारी निरानन्द कुत्ते की तरह दुममें मुंह डाले कुंडली बना कर चुपचाप पड़ा हुआ है। कल शाम से लगातार बूंदाबांदी हो रही है। उस वृष्टिने सड़कों पर कीचड़ तो कर दी है, लेकिन उस कीचड़ को धोकर वहाँ ले जाने का बल नहीं प्रगट किया है। आज चार बजे से बूँदोंका गिरना बंद है, लेकिन मेघका रङ्ग-ढङ्ग अच्छा नहीं है। इस तरह की जल्द होने वाली वर्षा की आशंका होने पर, संध्याके समय निर्जन घरके भीतर जब मन नहीं लगता और बाहर भी आराम नहीं मिलता, ठीक ऐसे ही समय में दो आदमी एक तिमंजिले घर की छत पर दो बेत के मोढ़ों पर बैठे हुए बातचीत कर रहे है।

ये दोनों मित्र जब छोटे थे, तब स्कूल से लौट आकर इसी छत पर दौड़े धूपे और खेले कूदे हैं; परीक्षाके पहले दोनों चिल्ला चिल्ला कर अपने पाठ को रटते हुए इसी छत पर पागलों की तरह घंटों टहले हैं; गर्मियों में कालेज से लौट आकर रात को इसी छत पर भोजन किया है, उसके बाद तर्क करते करते कभी कभी रात को सो गये हैं, और सवेरेके समय मुँह पर धूप पड़ने पर जाग कर देखा है कि रात को वही चटाई पर दोनों सो गये थे। जब कालेज की पढ़ाई बिल्कुल समाप्त हो गई, तबसे इसी छत पर महीने में एक बार करके जिस हिन्दूहितैषी-सभा के अधिवेशन होते आ रहे हैं इन दोनों मित्रों में एक उसका सभापति है और दूसरा उसका सेक्रेटरी है।

जो सभापति था, उसका नाम गौरमोहन है और उसके आत्मीय व मित्र लोग उसे संक्षेप में गोरा कहते हैं। वह जैसे अपने चारों ओर के

लोगों से बिल्कुल ही मेल नहीं खाता। उसकी लम्बाई-चौड़ाई भी आश्चर्यजनक है। कालेज के संस्कृताध्यापक उसे रजतगिरि कहकर पुकारा करते थे। उसका रङ्ग कुछ उग्र प्रकार का गोरा है—सुनहली आभाके अभाव ने उसे भी स्निग्ध कोमल नहीं होने दिया है। वह सिर से प्रायः-छः फुट लम्बा है। उसके हाथ चौड़े हैं दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बाघ के पंजे की तरह बड़ी हैं। गले की आवाज भी ऐसी मोटी और गंभीर है कि अचानक कान मे पड़ने से मनुष्य चौंक पड़े। उसके मुख की गठन भी आवश्यकता से अधिक बड़ी और दृढ़ है। भौंहें और ठोढ़ी की हड्डी जैसे दुर्गद्वार के दृढ़ अर्गल (जंजीर) की तरह हैं। आँखों के ऊपर भौंहों की श्याम रेखाएं जैसे हैं ही नहीं और वहाँ पर का कपाल कानों की तरफ चौड़ा हो गया है। दोनों ओठ पतले और सदा बंद रहने वाले हैं। उनके ऊपर नाक खाँड़े की तरह झुकी हुई है। दोनों आँखें छोटी किन्तु तीक्ष्ण हैं। उसकी दृष्टि जैसे तीर के अग्र भाग की तरह अति दूर अदृश्य की ओर लक्ष्य किये हुए है, साथ ही दम भर में भी लौट आकर पास की चीज पर भी बिजली की तरह चोट कर सकती है। गोरा को देखने से सुश्री नहीं कहा जा सकता, यह सही है। लेकिन उस पर ध्यान गये बिना नही रहा जा सकता। हजारों के बीच में भी आदमी की नजर उस पर अवश्य ही पड़ेगी।

और, उसका मित्र विनयभूषण एक सधारण बंगाली शिक्षित भद्र पुरुष की तरह नम्र किन्तु उज्वल है। स्वभाव की सुकुमारता और बुद्धि की तीव्रताने मिल कर उसके मुखकी श्रीमें एक विशेषता उत्पन्न कर दी है। वह कालेज में बराबर ऊँचे नम्बर और स्कालरशिप पाता रहा है। गोरा पढ़ने में और उसके फलमें किसी तरह विनय के साथ नहीं चल पाता था। असल बात यह है कि पढ़ने के विषयों में उस तरह उतना गोरा का मन ही नहीं लगता था। वह विनय की तरह न तो जल्दी समझ ही पाता था, और न याद ही रख सकता था। विनय

ही उसका वाहन होकर कालेज की परिक्षाओं में अपने पीछे खींचखाँच कर उसे पार कर लाया है।

उस समय गोरा कह रहा था—जो मैं कहता हुँ, सो सुनों। अविनाश ब्रह्मसमाजियों की निन्दा करता था, उससे यह समझ पड़ता है कि वह खूब सुस्थ स्वाभाविक अवस्था मे हैं। तुम उसकी इस हरकत से एकाएक इस तरह पागलों की माफिक बिगड़ क्यों उठे।

विनय—कैसा आश्चर्य है। मैं तो यह ख्याल भी अपने मनमें नहीं ला सकता था कि इस सम्बन्ध में कोई प्रश्न चल सकता है।

गोरा—अगर यह बात है तो तुम्हारे मनमे कुछ दोष हो गया है। एक दल के लोग समाज के बन्धन को तोड़कर सब विषयों में उल्टी चाल चलेंगे, और समाज के लोग अविचलित भाव से उनके प्रति सुविचार करेंगे, यह स्वभावका नियम नहीं है। समाज के लोग उनके बारे में भ्रान्त धारणा अवश्य ही धारण करेंगे, वे लोग सरलभाव से जो कुछ करेंगे, वह इनकी दृष्टि में अवश्य ही टेढ़ा प्रतीत होगा। उनका भला इनको बुरा ही जान पड़ेगा यही होना उचित है। इच्छा के अनुसार समाज को तोड़कर उससे निकल जाने के जितने दण्ड हैं, उन्हीं में यह भी एक है।

विनय—मैं नहीं कह सकता कि जो स्वाभाविक है वही भला है।

गोरा कुछ गर्म हो कर कह उठा—मुझे भले से कुछ काम नहीं है। पृथ्वी पर ऐसे भले अगर दो-चार आदमी हों तो रहें किन्तु बाकी सब स्वाभाविक ही बने रहें। मैं यही चाहता हूँ! नहीं तो काम भी नही चलेगा जान भी नहीं बचेगी! ब्रह्मसमाजी होकर बहादुरी दिखाने का शौक जिन्हें है उन्हें यह दुःख सहना ही होगा। जो ब्राह्म नहीं है वे उनके सभी कामों को भूल समझ कर उनकी निन्दा करेंगे ही। वे लोग भी अपनी बहादुरी पर छाती फुलाये घूमेंगे, और उनके प्रतिपक्षी भी उनसे पीछे पीछे उनकी वाहवाही की प्रशंसा के गीत गाते चलेंगे, यह मुमकिन नहीं। जगत् में ऐसा कहीं नहीं होता और अगर होता भी तो जगत् के लिए सुविधा न होती।

विनय—मैं दलकी निन्दाके बारे में नहीं कहता मैं व्यक्तिगत निन्दा की बात कहता हूं।

गोरा—किसी एक दल की निन्दा तो निन्दा ही नहीं है। वह तो मतामत का विचार है। व्यक्तिगत निन्दा ही चाहिये। अच्छा साधुपुरुष जी—"ब्राह्मोंकी पहले तुम निन्दा नहीं करते थे?"

विनय—करता था। खूब ही करता था—लेकिन उसके लिए मैं अब लज्जित हूं।

गोरा ने अपने दाहिने हाथ की मुट्ठी खूब कड़ी करके कहा—ना विनय, यह नहीं होगा किसी तरह नहीं।

विनय ने कुछ देर चुप रह कर कहा—क्यों क्या हुआ? तुम्हें भय काहे का है।

गोरा—मुझे स्पष्ट ही दिखाई पड़ रहा है कि तुम अपने हृदय को दुर्बल बना रहे हो।

विनय ने कुछ उत्तेजित होकर कहा—दुर्बल? तुम जानते हो, मैं चाहूँ तो अभी उन लोगों के घर जा सकता हूँ—उन्होंने मुझे बुलाया भी था लेकिन मैं नहीं गया। क्या इसे दुर्बलता कहोगे?

गोरा—किन्तु यह बात तुम किसी तरह नहीं भूल सकते हो कि तुम नहीं गये, यही दुर्बलता है। दिन रात केवल यही सोचते हो कि मैं नहीं गया—लेकिन मैं नहीं गया। इसकी अपेक्षा चले जाना ही अच्छा था।

विनय—तो क्या तुम जाने के लिए ही कहते हो?

गोरा ने अपनी जाँघ पर हाथ मार कर कहा—ना, मैं जाने को नहीं कहता। मैं तुमसे सत्य कहता हूं, जिस दिन तुम उनके घर जाओगे उस दिन एकदम पूर्णरूप से जाओगे। उसके दूसरे ही दिन उनके घर खाना पीना शुरू कर दोगे और ब्राह्मसमाज के रजिस्टर में नाम लिखाकर एक दम दिग्विजयी महोपदेशक हो उठोगे।

विनय—कहते क्या हो उसके बाद?

गोरा—उसके बाद और क्या मसल है, मरने को कहने से बढ़कर

कोई गाली नहीं ! ब्राह्मण के लड़के होकर तुम बूचड़खाने में मरोगे, तुम्हारा आचार विचार कुछ नहीं रहेगा। जिसका कम्पास टूट गया है उस जहाज के कप्तान की तरह तुम्हारा पूर्व पश्चिम का ज्ञान लुप्त हो जायगा तुम्हें उस समय जान पड़ेगा कि जहाज को बन्दरगाह में ले जाना ही कुसंस्कार है, संकीर्णता है। केवल नाहक सागर जल में बहते रहना ही यथार्थ जहाज चलाना है, समझे ? किन्तु इन सब बातों को लेकर बकबक करने में मेरा धैर्य नष्ट हो जाता है। मैं कहता हूँ, तुम जाओ ! इस तरह अधःपात के मुख के सामने पैर बढ़ाकर खड़े-खड़े हम सब को भी क्यो भय के आवर्त में डाल रक्खा है ?

विनय—हँस उठा बोला—यह बात नहीं है कि डाक्टर के आशा छोड़ देने पर सब समय रोगी की मृत्यु ही हो जाती हो। मुझे तो ऐसी धार्मिक मृत्यु के निकटवर्ती होने का कोई लक्षण अपने में नहीं देख पड़ता। कम से कम मैं नहीं देख पाता।

गोरा—नहीं देख पाते ?

विनय—न।

गोरा—तुम्हें नाड़ी छूटती नहीं जान पड़ती ?

विनय—ना, मेरी नाड़ी खूब सबल है और ठीक चल रही है।

गोरा—यह नहीं जान पड़ता कि वे श्री हाथ अगर परोसें तो म्लेच्छ का अन्न ही देवता का प्रसाद है ?

विनय अत्यन्त संकुचित हो उठा। उसने कहा"—गोरा बस अब चुप रहो।"

गोरा—इसमें तो इज्जत-आबरू की कोई बात नहीं है। वे श्री कर कमल असूर्यम्पश्य (जिन्हें सूर्य तक न देख सकें) तो हैं ही नहीं। जिस समाज में स्त्रियां मर्दों से हाथ मिला सकती हैं उस समाज के सुपवित्र कर-पल्लवों का उल्लेख तक जब तुमसे सहा नहीं जाता तब कहना ही पड़ता है कि "तदा न संशे मरणाय संजय।"

विनय देखो गोरा, मैं स्त्री जाति को भक्ति की दृष्टि से देखता हूं। हमारे शास्त्र में भी ऐसा ही लिखा है।

गोरा—तुम जिस भाव से स्त्री जाति को भक्ति की दृष्टि से देखते हो, उसके लिए शास्त्र की दुहाई न दो। उसे भक्ति नहीं कहते। उसे जो कुछ कहते हैं वह अगर ज़बान पर लाऊँगा तो शायद तुम मारने ही दौड़ोगे।

विनय—यह सब तुम शारीरिक बल के जोर पर कह रहे हो, जबर्दस्ती कर रहे हो।

गोरा—शास्त्र में स्त्रियों के लिए कहा है—"पूजार्हा गृहदीप्तयः।" स्त्रियां पूजा के योग्य हैं। कारण, वे गृह को प्रकाशित करती हैं। किन्तु मर्दों के हृदय को प्रकाशित या प्रदीप्त कर देती हैं, इसलिए विलायती विधान से उन्हें जो मान दिया जाता है उसे पूजा न कहना ही अच्छा है।

विनय—किसी किसी जगह ऐसी विकृति देखी जाती है, इसीलिए क्या एक ऊँचे दर्जे के भाव पर इस तरह का कटाक्ष करना उचित है?

गोरा ने अधीर हो कर कहा—विनय, इस समय जब तुम्हारी विचार करने की बुद्धि चली गई है, तब मेरी बात मान ही लो। मैं कहता हूँ, विलायती शास्त्र में स्त्री जाति के सम्बन्ध में जो सब अत्युक्तियां हैं, उनके भीतर की बात है वासना (विषय-भोग लालसा)। स्त्री जाति की पूजा करने का स्थान है माता का घर, सती लक्ष्मी-स्वारूपिणी गृहणी का आसन। उन्हें वहां से हटा ला कर जो उनकी स्तुति की जाती है, उसके भीतर अपमान निहित है, उसको निन्दास्तुति भी कह सकते हैं। जिस कारण से तुम्हारा मन पतङ्ग की तरह परेश बाबू के घर के इर्दगिर्द चक्कर लगा रहा उसे अँगरेजी में 'लव' (प्रेम) कहते हैं किन्तु मैं चाहता हूँ कि ऐसा पागलपन तुम्हारे सिर पर सवार न हो जाय कि अँगरेजों की नकल करके उस 'लव' को ही संसार चरम या परम पुरुषार्थ मान कर उसी की उपासना करने लगो।

विनय कोड़े की चोट खाये हुए बछड़े की तरह उछल पड़ा, और बोला—"आः गोरा; बस रहने दो, बहुत हो गया।"

गोरा—कहां बहुत हो गया ! कुछ भी नहीं हुआ ! हमने औरत और मर्द को उनकी अपनी जगह पर खूब सहज भाव से देखना नहीं सीखा इसीलिए हम लोगों ने कुछ कवित्व जमा कर लिया है ।

विनय—अच्छा मैं मानता हूँ कि स्त्री पुरुष का सम्बन्ध ठीक जिस जगह पर रहने से सहल हो सकता, उस सीमा को हम प्रवृत्ति की झोंक में नांघ जाते हैं और उसे मिथ्या कर डालते हैं, किन्तु यह अपराध क्या केवल विदेश ही का है ? इस सम्बन्ध में अँगरेजों का कवित्व अगर मिथ्या है तो हम लोग जो यह कामिनी-कान्चन के त्याग की बात ले कर सर्वदा बढ़ बढ़ कर बातें मारते हैं वह भी तो मिथ्या ही है ! मनुष्य की प्रकृति जिसे लेकर सहज ही आत्मविस्मृत हो जाती है, उसके हाथ से मनुष्य को बचाने के लिए कोई तो प्रेम के सौन्दर्य अंशको ही कवित्व के द्वारा उज्ज्वल कर देता है, उसके बुरे अंश को लजा देता है, और कोई उसके बुरे अंश या पहलू को ही बड़ा बनाकर कामिनी-काचंन-त्याग की व्यवस्था देता है । ये दोनों केवल दो भिन्न प्रकृतियों के लोगों की भिन्न प्रकार की प्रणालियां हैं । एक की अगर निन्दा करते हो, तो दूसरी के साथ भी रियायत करने से काम नहीं चलेगा ।

गोरा—ना, मैंने तुमको गलत समझा था । तुम्हारी हालत अभी वैसी खराब नहीं हुई है । जबकि अभी तक फिलासफी तुम्हारे मस्तिष्क के भीतर मौजूद है, तब तुम निर्भय हो कर लव (प्रेम) कर सकते हो । लेकिन हितैषी बन्धुओं का यही अनुरोध है कि समय रहते अपने को संभाल लेना।

विनय ने व्यस्त होकर कहा—आः तुम क्या पागल हो गये हो ? मैं लव (प्रेम) करूँगा ! मगर हाँ, यह बात तुम्हें स्वीकार करनी ही होगी कि परेश बाबू के परिवार का जो कुछ मैंने देखा है और उनके सम्बन्ध में जो कुछ सुना है, उससे उन लोगों के प्रति मेरे मन में यथेष्ट श्रद्धा उत्पन्न हो गई है । जान पड़ता है इसी से यह जानने के लिए मेरे हृदय में एक प्रकार का आकर्षण उत्पन्न हो गया था कि उनके घर के भीतर का जीवन कैसा है ।

गोरा—अच्छी बात है। उस आकर्षण को ही सम्भाल कर चलना होगा। उन लोगों के सम्बन्ध में प्राणिवृत्तान्त का अध्याय न हो अनाविष्कृत ही रहने दो। खास कर वे लोग ठहरे शिकारी जीव, उनके भीतर के मामलात को जानने जाकर अन्त को यहां तक भीतर जा सकते हो कि तुम्हारी यह चोटी तक देखने का कोई उपाय न रह जाय।

विनय—देखो, तुममें एक बड़ा दोष है। तुम समझते हो कि जो कुछ शक्ति है वह सब ईश्वर ने केवल तुमको ही दे दी है और हम सब दुर्बल प्राणी हैं।

विनय की यह बात गोरा को सहसा जैसे नई सी जान पड़ी। उसने उत्साह के वेग में आकर विनय की पीठ में एक हाथ मारकर कहा—ठीक कहा, यही मुझ में दोष है। बड़ा भारी दोष है।

विनय—ओः! इससे भी बढ़कर एक और दोष है! कौन मनुष्य तुम्हारे हाथ का कितना वेग सह सकता है इसका ख्याल तुम बिल्कुल नहीं रखते।

इसी समय गोरा के वैमात्र बड़े भाई महिम अपना स्थूल शरीर लिए हांफते-हांफते ऊपर आये। आते ही पुकारा—गोरा।

गोरा तुरन्त उठ खड़ा हुआ और बोला—जी, क्या आज्ञा है?

महिम—आज्ञा कुछ नहीं है, देखने आया हूँ कि बरसाती बादल क्या हमारे छत पर उतर कर गरज रहा है।—आज मामला क्या है? शायद अँगरेजो को इतनी देर में भारत सागर के आधी दूर नँघा आये हो। अँगरेजों की तो इससे कुछ विशेष हानि नहीं देख पड़ती, हाँ—नीचे कोठरी में तुम्हारी भावज सिरके दर्द की तकलीफ से बेहाल पड़ी हैं, उन्हीं को इस सिंहनाद से विशेष कष्ट पहुँच रहा है। इतना कह कर महिम नीचे उतर गये।

-:०:

[३]

गोरा और विनय दोनों छत से नीचे उतर ही रहे थे, इसी समय गोरा की मां ऊपर आकर उपस्थित हुई। विनय ने पैर छू कर प्रणाम किया।

गोरा की मां का नाम आनन्दमयी था। वह इकहरे बदन की थीं लेकिन हाथ-पैर गठे हुए थे। बाल कुछ पक गये थे, लेकिन अधिकांश बाल काले होने के कारण बाहर से देख नहीं पड़ते थे। एकाएक उन्हें देखने से जान पड़ता था, उनकी अवस्था चालीस साल से भी कम होगी। मुख मंडल अत्यन्त सुकुमार था। नाक, ओंठ, ठोड़ी और मस्तक आदि देखने में भले मालूम होते थे। चेहरे में एक सफाई और सतेज बुद्धि का भाव प्रतीत होता था। रङ्ग साँवला था—गोरा के रङ्ग के साथ कुछ भी मेल नहीं खाता था। उनको देखते ही एक चीज पर सबकी नजर पड़ती थी—वह साड़ी के साथ ही शेमीज पहने रहती थीं। अब तो स्त्रियों में शेमीज पहनने का रिवाज हो गया है, लेकिन हम जिस समय का जिक्र कर रहे हैं, उन दिनों यद्यपि नये सभ्य समाज में औरतों ने कुर्ता या शेमीज पहनना शुरू कर दिया था, लेकिन साधारणतः स्त्री-समाज में कुर्ता या शेमीज पहनना घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। प्रवीणा प्रौढ़ा गृहणी इसको बिल्कुल ही कृस्तानी पहनावा कहा करती थीं। आनन्दमयी के स्वामी कृष्ण दयाल बाबू कमसरियट में नौकर थे। आनन्दमयी विवाह के बाद से ही उनके साथ पश्चिमोत्तर प्रदेश में रही थीं। इसी लिए इस संस्कार या धारणा ने उनके मन में स्थान नहीं पाया कि अच्छी तरह अङ्ग ढँकने वाले कपड़ों का पहनाव लज्जा या हँसी की बात है। सवेरे उठकर वह घर बुहारतीं—साफ करतीं—और रसोई करती थीं। फिर सीना-परोना गृहस्थी के और काम धन्धे करना, उनका नित्य कर्म था। उसके बाद अपने

पास-पड़ोसियों की खबर लेती थीं। अगर कोई बीमार हुआ तो उसकी दवा आदि का प्रबन्ध करती थीं। इतना सब करके भी उनका बहुत सा समय बच रहता था, वह मानों काम काज की साक्षात् मूर्ति थी। उन्हें देखकर मन में उनके प्रति भक्ति और श्रद्धा होती थी।

गोरा की माँ ने ऊपर आकर विनय से कहा—कहो भैया! तबियत तो अच्छी है न! इधर कई दिन से तू आया क्यों नहीं?

विनय ने कुछ कुंठित होकर कहा—नहीं अम्मा तबियत तो खराब नहीं थी—इधर कई दिन से पानी बरस रहा था इसी से नहीं आ सका।

गोरा कह उठा—यही बात है! इसके बाद जब पानी न बरसेगा तब विनय कहेंगे कि धूप बड़ी कड़ी थी। असल मन की बात तो वह अन्तर्यामी ही जानते हैं।

विनय ने चिढ़ कर कहा—गोरा यह तुम क्या व्यर्थ बकते हो।

आनन्दमयी ने कहा—सच तो है गोरा, इस तरह की बात न कहनी चाहिये। मनुष्य का मन कभी अच्छा रहता है, कभी नहीं रहता। सब समय एक सी तबियत नहीं रहती। इस बात को लेकर अधिक छेड़ छाड़ करना दूसरे का दिल दुखाना है।—आ विनू, मेरी दालान में चल, मैंने तेरे लिए कुछ खाने का सामान तैयार कर रक्खा है।

गोरा ने जोर से सिर हिला कर कहा—ना माँ, यह न होगा। तुम्हारी दालान में मैं विनय को खाने न दूँगा।

आनन्दमयी ने कहा—क्यों गोरा? तुझसे तो मैं किसी दिन खाने के लिए नहीं कहती! तुम बाप-बेटे दोनों का अजब हाल है। उधर तेरे बाप भी तो एक दम भयंकर शुद्ध आचार के पक्षपाती हो उठे है। कुछ दिन से अपने हाथ का बनाया आप ही खाते हैं। लेकिन विनू मेरा बहुत ही सीधा लड़का है। उसमें तेरी तरह कट्टरपना नहीं है। तू ही उसे कट्टर सदाचारी का ढोंग सिखलाता है—जबर्दस्ती अपनी चाल पर चलाना चाहता है।

गोरा—हाँ यह ठीक है, मैं जबर्दस्ती ही उसे अपनी चाल पर चला-

ऊँगा। तुम जब तक अपनी इस दासी लछमिनिया को, जो ईसाई हो गई थी अपने यहाँ रक्खोगी, तब तक तुम्हारे दालान में मैं या विनय कोई नहीं खा सकता।

आनन्दमयी—अरे गोरा, तू ऐसी बात मुँह से मत निकाल। लड़कपन में सदा तू उसी के हाथ से खाता पीता था, सच पूछो तो लछमिनियाने ही तुझको पाल पोसकर इतना बड़ा किया है। अभी कुछ ही दिन हुए, लछमिनिया के हाथ की बनी हुई चटनी के बिना तू भोजन ही नहीं करता था। बचपन में जब तेरे चेचक निकली थी, तब लछमिनिया ने जैसी सेवा करके तेरी जान बचाई है उसे मैं कभी नहीं भूल सकती।

गोरा—उसे पेंशन दो, जमीन खरीद दो, घर बनवा दो, जो जी चाहे सो सलूक करो, लेकिन उसे घर में रखने से काम नहीं चलेगा माँ!

आनन्दमयी—गोरा, तू समझता है कि रुपये दे देने से सभी तरह के ऋणों से उद्धार हो जाता है! वह न रुपये चाहती है, न जमीन चाहती है, न घर चाहती है। चाहती है केवल तुझे देखना। वह तुझे न देख पावेगी तो मर जायगी।

गोरा—तुम्हारी खुशी है, उसे रक्खो; लेकिन विनय तुम्हारे दालान में नहीं खाने पावेगा। जो नियम है वह मानना ही होगा। किसी तरह उसके खिलाफ़ नहीं हो सकता। माँ तुम इतने बड़े प्रसिद्ध पण्डित के वंश की लड़की होकर सदाचार का पालन नहीं करती हो, यह तो एक बड़े आश्चर्य और खेद की बात है।

आनन्दमयी—अरे बेटा, तुम्हारी माँ पहले बहुत कुछ कट्टर थी और सदाचार का पालन करती थी। इस आचार पालन के लिए ही बहुधा मुझे रोना धोना तक पड़ता था। उस समय तुम थे भी नहीं। मैं रोज शिव की मूर्ति बनाकर पूजा करने बैठती थी, और तुम्हारे पिता जब देख लेते थे, तब मूर्ति को उठाकर फेंक देते थे। उस जमाने में तो अपरिचित ब्राह्मण के भी हाथ की बनी रसोई खाने में घिन मालूम होती थी। तब रेलगाड़ दूर-दूर तक नहीं फैली थी। तुम्हारे बाप के साथ यात्रा में बैल-

गाड़ी, घोड़ागाड़ी, पालकी, ऊँट वगैरह पर चढ़ कर जाना पड़ता था, और ऐसे अवसरों पर अक्सर दो दो दिन मैंने भूखे प्यासे ही बिता दिये हैं। तुम्हारे पिता क्या सहजमें मेरे आचार विचार को छुड़ा सके थे? उसके लिए उन्होंने बहुत दिनों तक चेष्टा की थी। वह स्त्री को साथ लेकर सर्वत्र जाते थे, इसीलिये साहब लोग उनकी तारीफ करते थे। उनकी तनख्वाह भी बढ़ गई। अब तो बुढ़ापे में नौकरी छोड़कर खूब रुपये जमा करके, वह खुद एकाएक कट्टर सदाचारी हिन्दू बन गये हैं। लेकिन मुझसे अब फिर यह नहीं हो सकता! मेरे सात पीढ़ियोंके संस्कार एक एक करके जड़से उखाड़ डाले गये हैं अब वे फिर से नहीं जम सकते।

गोरा—अच्छा तुम अपने पूर्व पुरुषोंकी बात जाने दो। वे तो अब कोई आपत्ति करने नहीं आते। किन्तु हम लोगों की खातिर से तो तुमको कुछ बातें मानकर चलना ही पड़ेगा। न हो शास्त्रका मान न रक्खो, स्नेह का मान तो रक्खोगी!

आनन्दमयी—अरे तू इस तरह इतना क्या मुझे समझाता है? मेरे मन की क्या दशा है; सो मैं ही जानती हूँ? मेरे स्वामी, मेरे लड़के, अगर मेरे कारण, मेरे आचरण से, पग पग पर केवल बाधा ही पाते हैं, तो फिर मुझे सुख काहेका? किन्तु तू यह नहीं जानता कि तुझे गोद में लेनेके दिनसे ही मैंने सब आचार विचार छोड़ दिया है। छोटे लड़केको गोदमें उठा लेने से ही समझमें आता है कि पृथ्वी पर कोई मनुष्य जाति लेकर नहीं पैदा होता। जातिकी कल्पना केवल कल्पना मात्र है। यह बात जिस दिन मैं समझी उसी दिनसे मुझे निश्चय हो गया है कि मैं अगर क्रिस्तान समझकर, नीच जाति समझकर, किसी से घृणा करूँगी तो ईश्वर तुझे भी मेरी गोदसे छीन लेंगे। तू मेरी गोदको, मेरे घरको, सुशोभित किये रह, मैं पृथ्वी भरकी सभी जातियोंके हाथका पानी पिऊँगी।

आज आनन्दमयीकी बातें सुनकर विनयके मनमें एकाएक किसी एक अस्पष्ट संशयका आभास दिखाई दिया। उसने एक बार आनन्द-

मयीके और एक बार गोराके मुखकी ओर दृष्टि डाली। किन्तु वैसे ही मनसे सब तरह के संदेहात्मक तर्कके उपक्रम को ठेल कर बाहर कर दिया।

गोरा ने कहा—माँ तुम्हारी युक्ति अच्छी तरह मेरी समझमें नहीं आई। जो लोग आचार मानते हैं, जातिका विचार रखते हैं, शास्त्रको मानकर चलते हैं, उनके घर में भी तो लड़के जीते जागते रहते हैं, फिर तुम्हें यह बुद्धि किसने दी कि ईश्वर तुम्हारे ही सम्बन्ध में इस विशेष नियम से काम लेंगे?—

आनन्दमयी—जिन्होंने मुझको तुझे दिया है, उन्होंने ही यह बुद्धि भी दी है। उसके लिए मैं क्या करूँ, तू ही बता इसमें मेरा कोई बश नहीं है। किन्तु अरे पागल, मैं सोचकर भी नहीं ठीक कर पाती कि तेरा पागलपन देख कर मैं हँसूं या रोऊँ। खैर, इन बातों को छोड़—तो फिर विनय मेरे यहाँ नहीं खायगा?

गोरा—वह तो मौका पावे तो अभी दौड़ा जाय, खाने का लोभ तो उसके मन में सोलहो आने है। किन्तु माँ, मैं उसे नहीं जाने दूँगा। दो मिठाई देकर उसे यह भुलाने से काम नहीं चलेगा कि वह ब्राह्मण का बालक है। उसे बहुत कुछ त्याग करना होगा, प्रवृत्तिको संभालना पड़ेगा, तभी वह अपने ब्राह्मण जन्म के गौरव की रक्षा कर सकेगा—लेकिन अम्माँ तुम कुछ बुरा न मानना, मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ।

आनन्दमयी—मैं भला तेरी बातका बुरा मानूंगी! तू कहता क्या है। मगर यह मैं तुझसे कहे देती हूँ कि तू यह जो कुछ कर रहा है, उसके बारेमें तुझे ज्ञान नहीं है। मुझे यह बात अवश्य कष्ट पहुंचाती है कि मैंने तुझे पाल पोस कर इतना बड़ा किया सही, लेकिन—खैर वह चाहे जो हो, तू जिसे धर्म कहता फिरता है, उसे मान कर मुझसे नहीं चला जा सकता। तू मेरे चौके में मेरे हाथ की बनी रसोई न खायगा, न सही, तुझे मैं अपनी आँखोंके आगे तो रख सकूँगी—यही मेरे लिए बहुत है। बेटा विनय, तुम उदास न होओ। तुम्हारा मन नरम है, तुम समझते हो—गोरा की बातो से मुझे दुःख हुआ। लेकिन

असलमें मुझे कुछ भी दुःख नहीं है भैया। और किसी दिन शुद्ध ब्राह्मणके हाथसे रसोई बनवा कर तुम्हें खिला दूँगी। तुम क्यों खिन्न होते हो? मगर हां, देखो, सबसे कहे रखती हूँ कि मैं लछमिनियाके हाथका जल पिऊँगी।

गोरा की मां उतर कर नीचे चली गईं। विनय चुपचाप कुछ देर तक खड़ा रहा, उसके बाद उसने धीरे धीरे कहा—गोरा, यह तो मुझे कुछ ज्यादती जान पड़ती है।

गोरा—ज्यादती! किसकी?

विनय—तुम्हारी।

गोरा—ना, रत्ती भर भी नहीं। जहाँ जिसकी सीमा है, उसे उसीके भीतर रखकर मैं चलना चाहता हूँ। किसी बहानेसे सुईकी नोक भर भी भूमि छोड़ना शुरू करनेसे अन्तको फिर कुछ भी नहीं बाकी रहता—समझे?

विनय—लेकिन फिर भी वह माँ हैं!

गोरा—माँ किसे कहते हैं, माँका क्या महत्व है, सो मैं खूब अच्छी तरह जानता हूँ। मुझे क्या इसकी याद दिलाने की जरूरत होगी। मेरी माँ जैसी कितने लोगोंकी है! लेकिन जो मैं सदाचारको न मानना शुरू कर दूँ। तो शायद एक दिन माँको भी न मानूँगा। देखो विनय तुम से एक बात कहता हूँ, याद रक्खो—हृदय एक अच्छी चीज है, लेकिन सर्वोपरि नहीं है।

विनयने कुछ देर बाद जरा संकोचके साथ कहा—देखो गोरा, आज माँकी बातें सुनकर मेरे हृदयके भीतर एक तरहकी हलचल सी हो रही है। मुझे जान पड़ता है, माँ के मनमें कोई बात ऐसी है, जिसे वह किसी कारणसे खोलकर हमें समझा नहीं सकती, और इसके लिए उन्हें कष्ट हो रहा है।

गोरा ने अधीर होकर कहा—आः विनय, कल्पनाको लेकर उसके

साथ इतना न खेलो—उसमें केवल समय ही नष्ट होता है, कुछ फल नहीं होता।

विनय—तुममें यही तो दोष है कि तुम पृथ्वीकी किसी चीजकी ओर कभी अच्छी तरह नहीं देखते। इसीसे जो तुम्हें नजर नहीं आता उसीको तुम कल्पना कहकर उड़ा लेना चाहते हो। किन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि मैंने कितने ही बार देखा है कि माँ ने जैसे न जाने किसके लिए इतनी चिन्ता हृदयमें रख छोड़ी है, जैसे कोई बात ऐसी है जिसे वह ठीक मेलसे नहीं मिला पाती। इसी कारण उनको गृहस्थीके भीतर एक प्रकारका दुःख पीड़ा पहुँचाता है। गोरा, तुम उसकी बात को जरा कान लगाकर ध्यान देकर सुनो।

गोरा—कान लगा कर और ध्यान देकर जितना सुना जा सकता है, उतना मैं सुना करता हूँ। उससे अधिक सुननेकी चेष्टा करनेसे गलत सुननेकी संभावना है, इसीलिये मैं उसकी चेष्टा नहीं करता।

—:०:—

[४]

गोराके घर से निकल कर अपने घरको लौटते समय विनय वर्षा ऋतु की संध्या में जब वह कीचड़ को बचाकर और धीरे रास्ते में जा रहा था तब पिछले दिन की गोरा और आनन्दमयी के बीच हुई बातें उसके हृदय में एक हलचल मचा दी थी।

समाज अगर इस जमानेके प्रकट और गुप्त आघात से आत्मरक्षा करके चलना चाहे तो, छुआछूत और खाने-पीने के बारे में उसे विशेषरूप से सावधान होना होगा, इस मतको विनयने गोराके मुखसे सुनकर बहुत ही सहजमें ग्रहण कर लिया था। इसी मतको लेकर उसने विरुद्ध लोगोंके साथ तीखे भावसे अनेक बार बहस भी की है।

किन्तु आज जो गोरा ने उसे आनन्दमयी के घर में खानेसे रोका उससे उसके हृदयको कड़ी चोट पहुँची। वह चोट भीतर ही भीतर उसे व्यथित करने लगी।

विनयके बाप नहीं थे। माँ भी बचपन हीमें उसे छोड़कर स्वर्ग सिधार गई थीं। चाचा थे, सो वह गाँवमें रहते थे। विनय बचपन से ही कलकत्ते में पढ़ने लिखने के लिये अकेले घरमें रहा है। गोराके साथ मित्रता होनेसे जिस दिन विनयने आनन्दमयीको देखा उसी दिनसे उसने उनको अपनी सगी माँकी जगह समझ लिया। अक्सर आनन्दमयीके घर जाकर छोटे बालकोंकी तरह ऊधम मचाया है। आनन्दमयी को यह अपवाद लगा कर कि माँ तुम तो गोरा को भोजन का अधिक अंश देकर उसके प्रति पक्षपात करती हो अनेक बार उसने बनावटी ईर्षा प्रकट की है। विनय को अच्छी तरह मालूम था कि वह अगर दो चार दिन नहीं जाता

तो आनन्दमयी कितना उत्कण्ठित हो उठती है, उसको पास बिठाकर खिलाने की प्रत्याशा से वह अक्सर उन लोगोंकी बात चीत खतम करके उठनेकी प्रतीक्षा उत्सुकताके साथ किया करती है। वही विनय सामाजिक घृणा के कारण आनन्दमयीकी दालान में जाकर भोजन नहीं करेगा इसे क्या आनन्दमयी सह सकती हैं, या विनय ही से यह सहा जायगा ?

उस समय माँ आनन्दमयी ने हँसकर अवश्य यह कहा था कि वह अब किसी अच्छे कुलीन ब्राह्मण के हाँथ से रसोई बनवाकर उसे खिलायेंगी; किन्तु इससे उनके हृदयका कैसा मर्म भेदी दुःख प्रकट हो रहा है। विनय अपने मनमें बार-बार यही सोचता हुआ अपने घरमें पहुँचा।

कमरे में अन्धकार था। दियासलाई खींचकर विनयने लैम्प जलाया। कमरे में पहुँच कर विनयका दम जैसे घुटने लगा। मनुष्य के संग और स्नेह के अभाव ने आज उसके हृदयको जैसे असह्य भारसे पीड़ा पहुँचाना शुरू किया। देशोद्धार, समाज रक्षा आदि सब कर्तव्योंको वह किसी तरह स्पष्ट और सत्य नहीं बना सका —उसे इनकी अपेक्षा अधिक सत्य वही "अचिन पाखी" (अपरिचित चिड़िया) प्रतीत होने लगी, जो एक दिन सावनके उज्जवल सुन्दर प्रातः काल में पिंजड़े के पास आकर फिर उस पिंजड़ेके पाससे उड़ गई। किन्तु उस 'अचिन पाखी' की बातको विनय किसी तरह अपने मन में न आने देगा—किसी तरह नहीं। इसी कारण मनको आश्रय देनेके लिये वह आनन्दमयी के उसी घर का चित्र अपने मन में अंकित करने लगा, जहाँसे गोरा ने उसको लौटा दिया है।

वह सोचने लगा, पक्का सफ़ेद पत्थरका फ़र्श चमचमा रहा होगा एक तरफ तख्तके ऊपर सफ़ेद बगुले के परकी तरह सफ़ेद कोमल बिछौना बिछा होगा। बिछौने के पासही एक छोटेसे स्टूल के ऊपर रेंड़ी के तेलका दिया जल रहा होगा। माँ अनेक रंगके डोरे लेकर उसी दीपकके पास झुकी हुई सुजनीके ऊपर सुईका काम बना रही होंगी। लछमिनिया नीचे फ़र्श पर बैठी अटपट उच्चारण के साथ बंगलामें लगातार तरह तरहकी चर्चा कर रही होगी, माँ उनमेंकी अधिकांश बातों पर ध्यान ही नहीं

देती होंगी! माँको जब मन में कोई कष्ट होता है, तब वह कोई न कोई शिल्प का काम लेकर बैठ जाती हैं। उनके उसी काम में लगे हुए चुप-चाप मुखके चित्रको विनय अपने मनमें देखने लगा। उसने अपने मनमें कहा—इस मुख की स्नेहपूर्ण दीप्ति मेरे मन के विक्षेप से मेरी रक्षा करे—मेरे मनके इस उत्पात भाव को दूर करे। यह मुखही मेरे लिये मातृभूमि की प्रतिमा हो, मुझको कर्त्तव्य की ओर ले जाय और कर्त्तव्य के पालन में दृढ़ रक्खे। उसने मनहीं मन एक बार आनन्दमयी को माँ कह कर पुकारा और कहा कि मैं इस बातको किसी भी शास्त्रके प्रमाण से स्वीकार नहीं कर सकता कि तुम्हारा दिया हुआ भोजन मेरे लिए अमृत नहीं है।

कमरे में सन्नाटा था। केवल घड़ी के चलने का खटखट शब्द हो रहा था। उस कमरेमें बैठना विनयके लिए असह्य हो उठा। लैंप के पास ही दीवाल पर एक छिपकली किसी कीड़ेको पकड़ने की घातमें लगी हुई थी—उसकी ओर कुछ देर ताकते रह कर विनय उठ खड़ा हुआ और छाता लेकर घर से निकल पड़ा।

उस समय भी विनय यह कुछ निश्चय न कर सका था कि कहाँ जायगा, क्या करेगा। जान पड़ता है, आनन्दमयी के पास फिर जाना ही उसके मनका अभिप्राय था। किन्तु बीच ही में एक बार उसे खयाल आ गया कि आज रविवार है, ब्राह्मसमाज में बाबू केशवचन्द्र सेन का व्याख्यान होगा, उसे सुनना चाहिये। इस खयाल का आना था कि वह फौरन सब दुविधा दूर करके जोरसे पैर बढ़ाता हुआ उधर ही चला। यह उसे मालूम था कि केशव बाबूका व्याख्यान अब समाप्त हो चुका होगा, क्योंकि देर अधिक हो गई थी, तो भी उसका संकल्प विचलित नहीं हुआ।

व्याख्यानके स्थान पर पहुँच कर देखा, उपासक लोग उपासना इत्यादि करके मन्दिरके बाहर निकल रहे हैं। वह सिर पर छाता लगाए रास्ता के किनारे एक कोने में खड़ा हो गया—उसी समय शान्त प्रसन्न मुख परेश बाबू मन्दिरके भीतरसे निकले। उनके साथ चार पाँच आदमी थे। विनय को उनमें से केवल एक आदमी का तरुण मुख, रास्ते के गैस के

प्रकाशमें, एक झलक देख पाया। उसके बाद गाड़ीके पहियोंका शब्द हुआ, और दम भरमें वह दृश्य अन्धकार के महासमुद्र में पानीके एक बुल्लेकी तरह गायब हो गया।

विनय का फिर गोरा के घर जाना नहीं हुआ। मन में अनेक बातोंकी उधेड़ बुन करता हुआ विनय घर को लौटा। दूसरे दिन तीसरे पहर जब वह घरसे निकलकर घूमते घूमते अन्त में गोरा के घर पहुँचा, तब वर्षा समाप्त हो चुकी थी, और सन्ध्या का अन्धकार घना हो आया था। गोरा उसी समय रोशनी जला कर लिखने बैठा था।

गोरा ने विनय की ओर बिना देखेही, कागज परसे दृष्टि बिना हटाए ही कहा—क्यों जी विनय हवा किस रुखकी है ?

विनयने उस बातको जैसे सुनाही नहीं, इस तरह कहा—गोरा, मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ,—भारतवर्ष क्या तुम्हारे नजदीक खूब सत्य है ? खूब स्पष्ट है ? तुम तो दिन रात उसे अपने मन में रखते हो, किन्तु मैं पूँछता हूँ कि किस तरह मनमें रखते हो ?

गोराने लिखना छोड़ कर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि डाल कर विनय के मुख की ओर ताका। उसके बाद कलम को रख कर कुर्सी की पीठके सहारे सीधे हो कर उसने कहा—जहाजका कप्तान जब यात्रा करता है तब जैसे खाते पीते काम के समय और विश्राम के समय समुद्र पार के बन्दरगाहको अपने मन में रखता है, वैसेही मैंने भी अपने भारतको मनमें रक्खा है।

विनयने पूँछा—तुम्हारा वह भारत कहाँ है ?

गोराने छाती पर हाथ रख कर कहा—मेरे यहाँ के कम्पास का कांटा दिन रात जिधर फिरा रहता है वहाँ है; तुम्हारे मार्सडन साहब की हिस्ट्री आफ इण्डिया में नहीं है।

विनयने कहा तुम्हारे कम्पासका कांटा जिधर है उधर क्या कुछ है भी ?

गोराने उत्तेजित होकर कहा—है नहीं तो क्या ? मैं राह भूल सकता हूँ, डूब कर मर सकता हूँ, किन्तु मेरा वह लक्ष्मीका बन्दरगाह मौजूद है। वही मेरा पूर्णस्वरूप भारतवर्ष है। वह भारतवर्ष जो धनसे भरा

ज्ञानसे संपन्न और धर्मसे परिपूर्ण है, कहीं भी नहीं है! है केवल चारों ओर का यह मिथ्या! यही तुम्हारा कलकत्ता शहर, यही आफिस, यही अदालतें, यही कुछ एक ईंट काठके बने बुदबुद!—छीः!

यों कह कर गोरा कुछ देर तक एक टक विनय के मुँहकी ओर ताकता रहा। विनय कुछ उत्तर न देकर सोचने लगा। गोराने कहा—यही जहाँ हम पढ़ते लिखते हैं, नौकरी की उम्मेदवारी में घूमते फिरते हैं, दस से पाँच बजे तक भूत की तरह जुट कर मेहनत करते हुए क्या करते हैं—उसका कुछ ठिकाना नहीं। इस जादूगर के मिथ्या भारत वर्ष को हमने सत्य समझ लिया है, इसी से हम इकतीस करोड़ मनुष्य मिथ्या मान को मान मान कर मिथ्या कर्म को कर्म मान कर, दिन रात विभ्रान्त हुए फिरते हैं। इस महामरीचिका के भीतर से क्या हम किसी तरह की चेष्टा से प्राण बचा सकेंगे! इसी से तो हम प्रति दिन भूखे मरते हैं। भैया, एक सत्य का भारतवर्ष—परिपूर्ण भारतवर्ष है, उस जगह स्थिति हुए बिना हम लोग क्या बुद्धि में और क्या हृदय में यथार्थ प्राण रसको खींच नहीं ले सकते। इसी से कहता हूँ कि और सब भूल कर—किताबी विद्या, खिताबका मोह, उच्छवृत्तिका प्रलोभन, यह सब झिटके से तोड़कर फेंक देना होगा और अपने जहाजको उसी बन्दरगाह की तरफ ले जाना होगा, उसमें डूबना होगा तो डूब जायँगे, मरना होगा तो मर भी जायँगे। क्या मैं यों ही भारतवर्ष की सत्य मूर्तिको, पूर्ण मूर्तिको, किसी दिन भूल नहीं सकता!

विनय—क्या ये सब केवल उत्तेजना की बातें नहीं हैं! क्या तुम यह सब सत्य कह रहे हो?

गोराने बादलकी तरह गरज कर कहा—मैं सत्य ही कहता हूँ।

विनय—अच्छा जो लोग तुम्हारी तरह नहीं देख पाते?

गोराने मुट्ठी बाँध कर कहा—उन्हें दिखा देना होगा। यही तो हमारा का है! सत्य की मूर्ति स्पष्ट देखे बिना लोग किस उपच्छाया के

आगे आत्म समर्पण करेंगे ? भारतवर्ष की सर्वाङ्गीन पूर्ण मूर्ति सब के आगे खड़ी कर दो, तो लोग उसके लिए पागल हो उठेंगे। तब क्या दरवाजे दरवाजे देशोद्धार के लिए चंदा उगाहते फिरना पड़ेगा ? तब देश के लिए प्राण देने को लोगों में रेल पेल मच जायगी ?

विनय—या तो मुझे संसार के और दस आदमियों की तरह बहते हुए चले जाने दो, और या मुझे भारत की वह मूर्ति दिखाओ।

गोरा—उसके लिए पहले साधना करो। अगर मन में विश्वास है तो तुम उसे कठोर साधना में ही सुख पाओगे। हमारे जो शौकीन पेट्रियट (देश-भक्त) हैं, उनमें सच्चा विश्वास बिल्कुल नहीं है, इसी से वे अपने और पराए के निकट जोरके साथ कुछ भी दावा नहीं कर सकते। स्वयं कुबेर अगर उन्हें खुश करने या वरदान देने आवें, तो जान पड़ता है, शायद वे लाट साहब के चपरासी की गिलटकी चमचमाती हुई चपरास से अधिक कुछ माँगने का साहस ही नहीं कर सकेंगे! उनमें आत्म विश्वास नहीं है, इसी से भरोसा भी नहीं है।

विनय—देखो गोरा सबकी प्रकृति एक सी नहीं है। तुमने अपना विश्वास अपने हृदय के भीतर ही पाया है और तुम अपने आश्रय को अपने ही जोर से खड़ा कर रख सकते हो, इसी से दूसरे की हालत को ठीक समझ नहीं सकते। मैं कहता हूँ कि तुम मुझको चाहे जिस किसी एक काम में लगा दो—दिन रात मुझसे काम कराओ, नहीं तो जब तक मैं तुम्हारे पास रहता हूँ तब तक जान पड़ता है, जैसे कोई चीज मैंने पाई उसके बाद तुमसे अलग दूर जाने पर ऐसी कोई चीज मुझे अपने हाथ के पास नहीं मिलती, जिसे पकड़ कर मैं रह सकूं।

गोरा—काम की बात कहते हो ? इस समय हम लोगों का एक मात्र कार्य यही है कि जो कुछ स्वदेश का है, उसी के प्रति संकोच और संशय से रहित सम्पूर्ण श्रद्धा प्रकट करके देश के अविश्वासी लोगों के मन में हम उसी श्रद्धा का संचार कर दें। देश के सम्बन्ध में लज्जा करके हमने अपने मन को दासता के विष से दुर्बल कर डाला है; हममें से हर एक जब अपने

दृष्टान्त से उसका प्रतिकार करेगा, तब उसके उपरान्त हम काम करने के ठीक मैदान को पावेंगे। इस समय हम जो कोई काम करना चाहते हैं; वह केवल इतिहास की स्कूलकी किताब पकड़ कर पराए कामकी नकल हो उठता है। उस झूठे काममें क्या कभी हम सत्य-भावसे अपने सम्पूर्ण हृदय और मन को लगा सकेंगे उससे तो अपने को केवल हीन बना देंगे।

इसी समय एक हुक्का हाथ में लिये महिम बाबू ने मृदुमंद गति और आलस भावसे आकर उस कमरेमें प्रवेश किया। नित्य आफिससे लौट कर जल-पान का आवश्यक काम समाप्त करके एक पान मुंह में दबाकर, पाँच छः पान बिलहरे में रखकर, सड़क के किनारे बैठकर तमाखू पीना ही महिमका इस समय का काम है। और कुछ देरके बाद ही एक एक करके महल्ले के इष्ट मित्र महिम के पास आकर जुट जायेंगे, तब सदर फाटक के पास की बैठक में एक महफिल सी लग जायगी।

महिमके कमरेमें दाखिल होते ही गोरा कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। महिम तमाखूका धुवाँ खींचते खींचते बोला—भारत का उद्धार करने में लगे हो मगर फिलहाल पहले भाई का तो उद्धार करो!

गोरा महिम के मुंहकी ओर ताकने लगा। महिम ने कहा—हमारे आफिस में जो नया बड़ा साहब (मैनेजर) आया है, उसका चेहरा बिल्कुल शिकारी कुत्ते के ऐसा है। वह बड़ा पाजी है! बाबुओं को बेबून (एक प्रकार का बन्दर) कहता है। किसी के माँ बाप भी मर जायँ तो भी वह छुट्टी नहीं देता कहता है, सब झूठ है। किसी महीनेकी पूरी तनख्वाह किसी हिन्दुस्तानी बाबूको नसीब नहीं होती। जरा जरा सी बातके लिये जुर्माना करके लगभग आधी तनख्वाह काट लेता है! अखबारमें उसकी शिकायतकी एक चिट्ठी छपी थी। चिट्ठीमें लेखकका नाम बनावटी था। उस सालेको विश्वास है कि वह मेरा ही काम है। उसका यह खयाल एकदम गलत भी नहीं है। सो अब मैं जो अपने नामसे उसका एक कड़ा प्रतिवाद लिखकर नहीं छपवाऊँगा तो वह मुझे वहाँ टिकने न देगा। तुम दोनों मित्र तो रत्न हो जो युनिवर्सिटी सागरको मथ

कर निकले हो। एक चिट्ठी तुम्हें जरा मन लगाकर अच्छी तरह लिख देनी होगी। उसमें even handed justice, never failing generosi y king courteousness इत्यादि इत्यादि की खूब भरमार कर देनी होगी।

गोरा चुप बैठ रहा। विनय ने हँस कर कहा—दादा इतनी झूठी बातें एक सांस में चला दोगे।

महिम ने कहा—सुना नहीं, "शठे शाठ्यं समाचरेत" बहुत दिन उन लोगों की सङ्गति में रहा हूँ; कुछ मुझसे छिपा नहीं है। वे लोग झूठका रंग ऐसा जमा सकते हैं कि उसके लिए उनकी तारीफ करनी पड़ती है। दरकार होने पर वे झूठ बोलने में नहीं हिचकते। एक अगर झूठ बोले तो सभी गोरे सियारोंकी तरह उसी सुरमें हुआ हुआ कर उठते हैं। हम लोगों की तरह एक आदमी दूसरेको झूठा साबित करके वाहवाही लूटना नहीं चाहता। यह निश्चय जानो कि अगर पकड़ लिया न जा सके, तो लोगों को प्रतारित करने में कुछ पाप नहीं है?

इतना कह कर महिम हँसने लगा। विनय से हँसे बिना नहीं रहा गया। महिम ने कहा—तुम लोग उन लोगों के मुंह पर सच्ची बात कहकर उन्हें अप्रतिभ करना चाहते हो! भगवान् अगर तुम्हें ऐसी बुद्धि न देंगे तो फिर देश की ऐसी दुर्दशा कैसे होगी! तुम लोगों को यह तो समझना चाहिये कि जिसके शरीर का जोर है उसकी चोरी को बहादुरी करके दिखाने की चेष्टा करो तो वह लज्जा से सिर नहीं झुका लेता। वह उलटे अपने सेंध लगाने के औजार को उठाकर बड़े भारी साधु ही की तरह ठुमक कर मारने दौड़ता है। बोलो सच है कि नहीं?

विनय—सच तो है ही।

महिम—उसकी अपेक्षा झूठी बातों की घानी से मुफ्त का जो तेल निकलता है, वही एक आध छटाँक लेकर उसके पैरों में मालिश करके अगर कहें कि "साधु जी परमहंस बाबा दया करके जरा अपनी झोली झाड़ दो उसकी धूल पाकर भी मैं कृतार्थ हो जाऊँगा," तो शायद तुम्हारे घरके,

माल का कम से कम कुछ हिस्सा मुमकिन है कि तुम्हारे घर में लौट आवे। उधर ऐसा करने से शांति भङ्ग का भी खटका नहीं रहता। अगर विचार कर देखो, तो इसी को असल पेट्रियाटिज्म (देशभक्ति) कहते हैं। किन्तु मेरे भैया साहब (गोरा) चिढ़ते हैं। यह जब से सनातन हिन्दू धर्म को मानने लगे हैं, तब से मुझे दादा (बड़ा भाई) कहकर बहुत मानते हैं। इनके सामने आज मैंने जो कुछ कहा है, वह ठीक बड़े भाई की सी बात नहीं हुई। लेकिन करूँ क्या, भैया झूठ बात के सम्बन्ध में भी तो सत्य ही बोलना होगा। विनय, तो फिर वह लेख मुझे चाहिए। अच्छा ठहरो, मेरे पास उसके नोट लिखे हुए हैं, उन्हे ले आऊँ।

यह कह कर तमाखू पीते पीते महिम वहाँ से चले गये।

गोरा ने विनय से कहा—विनय, तुम दादा के कमरे में जाकर वहाँ उन्हें थोड़ा रोक रक्खो, मैं तब तक लिख डालूँ।

"अजी सुनते हो ? डरो नहीं, मैं तुम्हारी पूजा की कोठरी में नहीं आऊँगी। सन्ध्या पूजा समाप्त करके जरा मेरी दालान में आना तुमसे कुछ कहना सुनना है। मै जानती हूँ कि दो नए सन्यासी आये हुए हैं इसी लिए कुछ समय तक तुम्हारे दर्शन दुर्लभ रहेंगे, इसी से तुमसे यह कहने के लिए आना पड़ा। भूलना नहीं, जरा हो जाना।" यह कह कर आनन्दमयी गिरस्ती के काम काज करने चली गई।

कृष्णदयाल बाबू का रङ्ग सांवला है। दोहरा हड्डी का शरीर है। माथा विशेष लम्बा नहीं है। चेहरे में उनके बड़े बड़े दोनों नेत्र ही एक ऐसी चीज हैं, जिस पर विशेष रूप से दृष्टि पड़ती है। बाकी सब चेहरा दाढ़ी मूछ के खिचड़ी बालों से ढका हुआ है। यह सदा गरुवा रँगा हुआ रेशमी वस्त्र धारण करते हैं। हाथ में पीतल का कमण्डल और पैरों में खड़ाऊँ रहता है। सिर पर सामने के हिस्से के बाल गिर गए हैं—बाकी हिस्से के बड़े बड़े बालों को गाँठ लगाकर एक जटाजूट सा बना रक्खा है।

एक जमाना था, जब यह पछाँह में रहते थे, और इन्होंने पल्टन में गोरों की सोहबत में मद्य-मांस का सेवन करके सब एकाकार कर दिया था। उस समय यह देश के पुजारी, पुरोहित, पंडे, वैष्णव और सन्यासी श्रेणी के लोगों के गले पड़कर उनका अपमान करने को परम पौरुष (मर्दानगी) समझते थे। किन्तु इस समय हिन्दू धर्म की ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसे यह न मानते हों। समय का फेर इसी को कहते हैं। इस समय यह हाल है कि किसी नये सन्यासी को देखते ही उसके पास कोई नवीन साधना का मार्ग सीखने बैठ जाते हैं। मुक्ति के निगूढ़ मार्ग और योग की निगूढ़ प्रणाली के लिए इन्हें बेहद लोभ हैं। कृष्णदयाल बाबू तांत्रिक साधना का अभ्यास करने के इरादे से कुछ दिन से उसके सम्बन्ध का उपदेश ले रहे थे, इसी समय एक बौद्ध पुरोहित का पता मिल गया और इस समय इसी ओर चलने के लिए उनका मन चंचल हो उठा है।

इनकी पहली स्त्री एक लड़का पैदा होने के बाद मर गई थीं। उस समय इनकी अवस्था तेईस वर्षकी थी। लड़केको माताकी मृत्यु का कारण मान-कर कृष्णदयाल ने क्रोध के मारे उसे अपनी ससुराल में छोड़ दिया और आप प्रबल वैराग्यकी झोंक में एक दम पछाँह चले गये। परन्तु छः महीनेमें ही वैराग्यका नशा उतर गया। उन्होंने काशी वासी सार्व भौम महाशय की पोती पितृहीना आनन्दमयी से ब्याह कर लिया।

पछाँहमें कृष्णदयालने नौकरी खोज ली, और अनेक उपायों से अपने मालिकों को प्रसन्न भी कर लिया। इसी बीच में सार्वभौमकी मृत्यु होगई और कोई अभिभावक न होने के कारण स्त्री को अपने पास ही लाकर रखना पड़ा।

उधर इसी अवस्था में सिपाही-विद्रोह हो गया! कृष्णदयाल ने कौशल से दो-एक ऊँचे ओहदे के अँङ्गरेजों की जान बचाई, जिसके बदले में इन्हें यश और जागीर भी मिली। गदर के कुछ दिन बाद ही इन्होंने नौकरी छोड़ दी और बच्चे गोरा को लेकर कुछ दिन काशी में रहे। गोरा जब पाँच साल का हुआ, तब कृष्णदयाल काशी से कलकत्ते चले आये। बड़े लड़के महिम को भी उसकी ननिहाल से बुला लिया। महिम को पाल पोस कर पढ़ा लिखा कर आदमी बनाया। इस समय महिम अपने पिता के मिलने वाले मुरब्बियों के अनुग्रह से सरकारी खज़ाने में नौकर है, और खूब तेज़ी के साथ अपना काम कर रहा है।

गोरा लड़कपन से ही अपने मुहल्ले के और स्कूल के लड़कों की सरदारी करता था। मास्टर और पण्डित के जीवन को असह्य बना देना ही उसका प्रधान काम और खेल था। वह उनके नाक में दम किए रहता था। कुछ सयाना होते ही वह छात्रों के क्लबमें "स्वाधीनताहीन होकर कौन जीना चाहता है" और "बीस करोड़ मनुष्य जहाँ रहें, वहाँ क्या नहीं किया जा सकता" इत्यादि भावोंकी कविताएँ सुनाकर, अँगरेजीमें गर्मागरम लेक्चर देकर क्षुद्र विद्रोहियोंका दलपति (सरदार) हो उठा। अन्तमें जब एक समय छात्रसभा स्वरूप अण्डेके खोलको तोड़कर गोराने सयानोंकी सभामें कल काकली (बच्चोंका शब्द) सुनाना शुरू किया, तब कृष्ण-

दयाल बाबूको वह अत्यन्त कौतुकका विषय हो जान पड़ा।

देखते देखते बाहरके लोगोंमें गोराकी प्रतिष्ठा बढ़ने लगी मगर घरमें उसे कोई कुछ नहीं गिनता था। महिम उस समय नौकरी करता था। उसने गोराको कभी "पेट्रियट् दादा" और कभी "हरिशनुखर्जी दि सेकिंड" कह कर व्यंगके द्वारा दबानेकी चेष्टा की थी। उस समय अक्सर बीच बीचमें दादाके साथ गोरा की हाथापाई हो जानेकी नौबत आ जाती थी। आनन्दमयी गोराके अँङ्गरेजी-विद्वेषको देखकर बहुत चिन्तित होती थी—उसे अनेक प्रकारसे शान्त करनेकी चेष्टा करती थीं, लेकिन कुछ फल न होता था। गोरा रास्तेमें बाजारमें कहीं कोई मौका पाकर किसी अंङ्गरेजके साथ मारपीट कर सकता तो अपने जीवनको धन्य समझता।

इधर बाबू केशवचन्द्र सेनके व्याख्यानोंपर रीझ कर गोरा ब्रह्म-समाजकी ओर विशेष रूपसे आकृष्ट हो गया। उधर कृष्णदयाल बाबू इसी समय बहुत ही अधिक आचारनिष्ठ हो उठे। यहाँ तक कि गोरा अगर उनके कमरेमें चला भी जाता था, तो वह व्यतिव्यस्त हो उठते थे। दो तीन कोठरी कमरे लेकर उन्होंने अपनी जगह घरमें अलग कर ली। उस अपने स्वतन्त्र आश्रमके द्वार पर एक बोर्ड लटका दिया, जिसपर "साधनाश्रम" लिखा हुआ था।

बापकी इन हरकतोंसे गोराका मन विद्रोही हो उठा। उसने कहा—मैं यह सब मूढ़ता सह नहीं सकता—यह मेरे लिये चक्षुशूल है। इसी उपलक्षमें गोराने अपने बापके साथ सब तरहका सम्बन्ध तोड़कर एकदम घरसे बाहर हो जानेका उपक्रम किया था। आनन्दमयीने किसी तरह समझा बुझा कर बहला कर उसे रोक-रक्खा।

बाप के पास जिन ब्राह्मण पण्डितों का आना-जाना होने लगा, उनके साथ मौका मिलते ही गोरा बहस करने लगता था। उसे बहस नहीं, बल्कि घूसेबाजी के लगभग कहना ठीक होगा। उन ब्राह्मण पंडितों में अधिकाँश ऐसे थे जिनमें पांडित्य की मात्रा तो अत्यन्त साधारण ही थी, मगर धन का लोभ अपरिमित था। वे बहस में गोरा से पेश नहीं पाते थे, और इसीलिए उससे वैसे ही

डरते थे जैसे कोई बाघ से डरे। उनमें केवल हरिश्चन्द्र विद्यावागीश ही ऐसे थे जिनके ऊपर गोरा के मन में श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुआ।

कृष्णदयाल ने विद्यावागीश जी को वेदान्त चर्चा करने के लिए नियुक्त किया था। पहले ही इनके साथ उद्गतभाव से वाग्युद्ध करनेके लिए जाकर गोरा ने देखा, उनसे उस तरह युद्ध नहीं किया जा सकता। वह केवल पंडित ही नहीं थे, उनके मतकी उदारता भी अत्यन्त अद्भुत थी। गोरा इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि केवल संस्कृत में बढ़ कर ऐसी तीक्ष्ण और प्रशस्त बुद्धि हो सकती है। विद्यावागीश के चरित्र में क्षमा और शान्ति से पूर्ण ऐसा एक अविचलित धैर्य और गम्भीरता थी कि उनके निकट अपने को संयत शान्त न बनाना गोरा के लिए असम्भव था। गोरा ने हरिश्चन्द्र के पास वेदान्त पढ़ना शुरू कर दिया। गोरा किसी काम को अधूरा नहीं करता था, इसी कारण वह दर्शन शास्त्र की तह तक पहुँचने के लिए उसकी आलोचना में एकदम डूब गया।

दैव संयोग से इसी समय एक अंगरेज पादरी ने किसी समाचार पत्र में हिन्दू शास्त्र और हिन्दू समाज पर आक्रमण करके देश के आदमियों को तर्क युद्ध के लिए ललकारा। गोरा तो एकदम आग बबूला हो उठा। यद्यपि वह खुद अवकाश पाते शास्त्र और लोकाचार की निन्दा कर विरुद्ध मत के आदमी को जितनी तरह से हो सकता था, पीड़ा पहुँचाता था, तथापि हिन्दू समाज के प्रति एक विदेशी आदमी की अवज्ञा उसके जी में बर्छी सी लगी।

गोरा ने समाचार पत्र में लेख लिख कर तर्क युद्ध छेड़ दिया। दूसरे पक्ष ने हिन्दू समाज पर जितने दोष लगाए थे, उनमें से एक भी या जरा सा भी दोष गोरा ने स्वीकार नहीं किया। दोनों ओर से अनेक उत्तर प्रत्युत्तर छपे। उसके बाद संपादक ने कह दिया—बस, अब हम इसकी चिट्ठी पत्री नहीं छापेगें।

किन्तु गोरा को उस समय धुन लग गई थी। उसने "हिन्दू इज्म" (हिन्दुत्व) नाम देकर अंगरेजी में एक किताब लिखना शुरू कर दिया। उसमें अपनी शक्ति भर सब युक्तियां देकर और सब शास्त्रों को मथ कर

वह हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज की अनिन्दनीय श्रेष्ठता का प्रमाण संग्रह करने लगा।

इस तरह पादरी के साथ झगड़ा कर गोरा ने धीरे धीरे अपनी वकालत के निकट आप ही हार मान ली। गोराने कहा—हम अपने देशको विदेशीकी अदालतमें अभियुक्तकी तरह खड़ा करके विदेशीके आईनके अनुसार उसका विचार करने ही न देगें। काट छाँट करके विलायतके आदर्शके साथ उसका मेल करके हम लज्जित न होंगे और गौरवका अनुभव भी नही करेगें। जिस देशमें जन्म लिया है, उस देशके आचार, विश्वास, शास्त्र और समाजके लिए अपने और दूसरों के निकट जरा भी संकुचित होकर नहीं रहूँगा। देश का जो कुछ, अच्छा या बुरा है, वह सभी बल और गर्वके साथ शिरोधार्य करके देशको और अपनेको अपमानसे बचाऊँगा।

यह कह कर गोरा नित्य गंगा स्नान और संध्या पूजा करने लगा, शिखा रखाई, खाने पीने और छुआ छूतके बारेमें विचार करके चलने लगा। अबसे वह नित्य सवेरे उठ कर माता पिताके पैर छूता है, जिस महिमको वह बात बातमें अँगरेजी भाषामें "कैड्" और "स्नाब" कहता था, उसे देखकर उठ खड़ा होता है, प्रणाम करता है। महिम इस सहसा उत्पन्न होने वाली भक्तिके लिए उसे जो मुँहमें आता है वही कहता है, किन्तु गोरा उसका कुछ भी जवाब नहीं देता।

गोराने अपने उपदेश और आचरणसे देशके लोगोंके एक दलको जैसे जगा दिया। वे जैसे एक प्रकार की खींचतानके हाथसे छुटकारा पा गए। वे दम लेकर कह उठे—हम भले हैं या बुरे, सभ्य हैं या असभ्य, इसके लिए किसीके आगे जवाबदेही करना नहीं चाहते। हम सोलहो आने केवल स्वयं अनुभव करना चाहते हैं कि हम हम ही हैं!

किन्तु कृष्णदयाल बाबू गोराके इस नवीन परिवर्तनसे खुश हुए नहीं ज्ञान पड़े, यहाँ तक कि उन्होंने एक दिन गोराको बुला कर कहा—"देखो भैया, हिन्दूशास्त्र बहुत ही गम्भीर पदार्थ है ऋषि लोग जिस धर्मकी

स्थापना कर गये हैं। उसकी तह तक पहुँचना, उसे पूर्णरूपसे जानना हर एकका काम नहीं है। मेरी समझ में बिना समझे धर्मको लेकर आंदोलन न करना ही अच्छा है। तुम अभी लड़के हो, अब तक अंगरेजी ही पढ़ते रहे हो तुम जो ब्रह्मसमाजकी तरफ झुके थे सो तुमने ठीक अपने अधिकार के माफिक ही काम किया था। इसी कारण उसके लिए मैं तुम पर नाराज नहीं हुआ था, बल्कि खुश ही हुआ था। किन्तु इस समय तुम जिस राह पर चले हो, वह मुझे तुम्हारे लिए ठीक नहीं है।"

गोराने कहा—आप कहते क्या हैं बाबू जी? मैं हिन्दू हूँ। हिन्दू धर्मके गूढ़ मर्मको आज न समझूंगा तो कल समझूंगा। और, अगर कभी न समझूं तो भी चलना तो इसी राहसे होगा। हिन्दू समाजके साथ पूर्व जन्मके सम्बन्धको तोड़ नहीं सका, इसीसे तो इस जन्ममें ब्राह्मणके घर पैदा हुआ हूँ। इसी तरह से अनेक जन्ममें हिन्दू धर्म और हिन्दू समाजके भीतर होकर अन्तको इसकी चरम सीमामें उत्तीर्ण होऊँगा।

कृष्णदयालने केवल सिर हिलाते हुए कहा—लेकिन भैया, हिन्दू कह देनेसे ही हिन्दू नहीं हुआ जा सकता। मुसलमान होना सहज है, क्रिस्तान हर कोई हो सकता है—लेकिन हिंन्दू! बस भैया! यह बड़ी कठिन बात है!

गोरा—सो तो ठीक है, किन्तु मैं जब हिन्दू होकर हिन्दूके घर पैदा हुआ हूँ तब तो फाटक पार हो आया हूँ अब ठीक तौर पर साधना करता रहूँगा तो थोड़ा आगे बढ़ सकूँगा।

कृष्णदयाल—भैया बहसके द्वारा मैं तुमको ठीक ठीक नहीं समझा सकूँगा। मगर हाँ, तुम जो कहते हो वह भी सत्य है। जिसका जो कर्मफल है, निर्दिष्ट धर्म है उसे एक दिन घूम फिर कर उसी धर्मके मार्ग में ही आना होगा—कोई रोक नहीं सकेगा। भगवान् की इच्छा! हम क्या कर सकते हैं, हम तो केवल उपलक्ष्य मात्र हैं।

कर्मफल और भगवान् की इच्छा, सोऽहं वाद और भक्ति तत्व सभी कुछ कृष्णदयाल बाबू समान भावसे ग्रहण करते हैं। इसका अनुभव भी नहीं करते कि इनमें परस्पर किसी प्रकारके समन्वय या सामंजस्यका प्रयोजन है।

[६]

आज पूजा पाठ आदि नित्य कर्म और स्नान भोजन से छुट्टी पाकर कृष्णदयाल बहुत दिनोंके बाद आनन्दमयीके कमरेके फर्श पर अपने कम्बल का आसन बिछा कर बेफिक्री से जैसे अलग होकर बैठे।

आनन्दमयीने कहा—अजी सुनते हो, तुम तो तपस्या करते हो, घरकी बात कुछ सोचते नहीं, किन्तु मैं गोराके लिए सदा डरते डरते अधमरी हो रही हूँ।

कृष्ण—क्यों, भय काहे का है ?

आनन्द०—सो तो मैं ठीक बता नहीं सकती। मगर मुझे जान पड़ता है गोराने आजकल जो हिन्दू आचारसे चलना शुरू किया है, वह उसके लिए अभी अच्छा न होगा, उसे नहीं फलेगा। मेरा मन कहता है कि इस ढङ्गसे चलते चलते अन्तमें कोई एक विपत्ति अवश्य उपस्थित होगी। मैंने तो तुमसे तभी कहा था कि उसका जनेऊ न करो मगर उन दिनों तो तुम हिन्दू धर्मको कुछ भी मानते नहीं थे। तुमने कहा—गलेमें एक सूत पहना देने से किसी का कुछ बनता बिगड़ता नहीं। लेकिन केवल सूत ही तो नहीं है—अब उसे किस तरह संभालोगे किस तरह रोकोगे ?

कृष्ण०—खूब ! सब दोष शायद मेरा ही है। शुरूमें तो तुमने ही गलती की। तुमने उसे किसी तरह छोड़ना ही नहीं चाहा। उन दिनोंमें मेरा भी गंवारू ढङ्ग था—धर्म का कुछ ज्ञान तो था ही नहीं। आजकलका जमाना होता तो क्या मैं ऐसा काम कर सकता !

आनन्द०—लेकिन चाहे जो कहो, मैं यह किसी तरह नहीं मान सकती कि मैंने ऐसा करके कुछ अधर्म किया। तुम्हें तो याद ही होगा लड़का होनेके लिए मैंने क्या नहीं किया। जिसने जो बताया, वही

किया। कितने ही तावीज गंडे मंत्र मानता करके थक गई। एक दिन सपनेमें देखा जैसे एक डलिया भर बेलेके फूल लेकर ठाकुरजी की पूजा करने बैठी हूँ—फिर देखा तो डलिया में फूल नहीं हैं, फूलोंकी जगह फूल सा गोरा एक छोटा सा लड़का था। आहा, वह क्या देखा था, क्या बताऊँ—मेरी दोनों आँखोंसे आनन्दके आँसू बहने लगे। बस चटपट उस लड़केको गोदमें उठा लेनेका इरादा किया कि आँखें खुल गईं। उसके बाद दस दिन भी नहीं बीतने पाये कि गोराको मैंने पाया। वह तो मेरे ठाकुरजी का दान है। वह क्या और किसीका है कि उसे किसीको फेर देती! दूसरे जन्ममें उसे गर्भमें धारण करके शायद बहुत कष्ट पाया था, इसीसे इस जन्ममें वह मुझे माँ कहने आया है। तुम्हीं सोच कर देखो वह कहाँसे किस तरह आया था? उन दिनों चारों ओर मार काट खून खराबी मची हुई थी। हम लोग अपने ही प्राणोंके लिए भयसे अधमरे हो रहे थे कि एक दिन आधी रातको एक गर्भवती मेम आकर हमारे घरमें छिप रही। तुम तो मारे भयके उसे घरमें ही रखना न चाहते थे—मैंने तुमसे छिपाकर उस बेचारीको एक एकान्त कोठरी में रख दिया। उसी रातको उसके लड़का पैदा हुआ और वह मर भी गई। उस बे माँ बापके लड़केको अगर मैं न पालती तो क्या वह जिन्दा रह सकता! तुम्हारा क्या! तुमने तो उसे पादरीके हाथमें सौंप देना चाहा था। क्यों पादरीको क्यों देने जाँय! पादरी क्या उसका मा-बाप है, या पादरीने उसके प्राण बचाए हैं? इस तरह जो मैंने लड़केको पाया, तो क्या वह गर्भमें रखकर पानेसे कम है! तुम चाहे जो कहो इस लड़केको जिन्होंने मुझे दिया है, वही खुद अगर न लेलें तो मैं अपने प्राण रहते यह लड़का और किसी को नहीं लेने दूँगी।

कृष्ण०—सो तो जानता हूँ। तुम अपने गोराको लेकर रहो। मैंने तो उसमें कभी कोई रुकावट नहीं डाली। समाज में अपना लड़का कहकर उसका परिचय देने पर जनेऊ किए बिना बात नहीं बनती थी, इसीसे जनेऊ करना ही पड़ा—उसके लिए तो लाचारी थी। अब केवल दो बातें

सोचनेकी हैं। न्यायसे मेरी सारी जमा और जायदाद महिमको ही मिलनी चाहिए—यही है।

आनन्द०—तुम्हारी जमा और जायदाद का हिस्सा कौन लेना चाहता है। तुमने जो रुपये जमा किए हैं, सो सब तुम महिमको दे जाना—गोरा उसमेंसे एक पैसा भी नहीं लेगा। वह मर्द बच्चा है, लिखा पढ़ा है खुद मेहनत करके कमा खायगा—वह पराए धनमें हिस्सा लगाने क्यों जायेगा। वह जीता रहे, यही मेरे लिए बहुत है—मुझे और किसी सम्पत्ति की दरकार नहीं है।

कृष्ण०—ना, मैं उसे कुछ भी न दूँ, यह न होगा। जागीर उसी को दे दूँगा। किसी समय उसका मुनाफा एक हजार रुपए साल तक हो सकेगा। अब चिन्ताकी बात सिर्फ यह है कि उसके व्याहका क्या होगा! पहले जो कुछ मैंने किया, सो किया; लेकिन अब तो हिन्दू मतके अनुसार ब्राह्मण के घर उसका ब्याह नहीं कर सकूँगा—इसमें चाहे क्रोध करो या चाहे जो करो।

आनन्द०—हाय हाय! तुम समझते हो कि मैं तुम्हारी तरह पृथ्वी भर पर गङ्गाजल और गोबरसे चौका नहीं लगाती फिरती, इसलिए मुझे धर्मका ज्ञान भी नहीं है। ब्राह्मणके घरमें उसका ब्याह क्यों करूँगी। और नाराज ही क्यों हूँगी।

कृष्ण०—कहती क्या हो! तुम तो ब्राह्मणकी लड़की हो।

आनन्द०—ब्राह्मणकी लड़की हूं तो क्या हुआ! ब्राह्मणके आचारका पालन करना तो मैंने छोड़ ही दिया है। महिमके ब्याहके अवसर पर भाई बिरादरी और नातेदार लोगों ने मेरी क्रिस्तानी चाल बता कर काम बिगाड़ना चाहा था, इसीसे अपनी खुशीसे मैं अलग हो गई, कुछ नही कहा। दुनिया भर के लोग मुझे क्रिस्तान बताते है, और भी न जाने कितनी कौन कौन सी बाते कहते है। मैं उनकी सब बातें माने लेती हूँ। मेरा कहना यह है कि क्रिस्तान क्या मनुष्य नहीं है! तुम हिन्दू ही अगर इतनी ऊँची जातिके हो, और भगवान् के इतने आदरकी चीज हो, तो फिर

वही भगवान् कभी मुगलोंके और कभी क्रिस्तानोंके पैरोंमें इस तरह तुम्हारा सिर क्यों झुका दे रहे हैं ?

कृष्ण०—ये सब बड़ी और बहुत बातें है, तुम स्त्री की जाति उन सब बातोंको नहीं समझ सकोगी। किन्तु हमारा समाज एक है, यह तो समझती हो, उसे तो मानकर चलना ही तुमको उचित है।

आनन्द—मुझे यह सब समझनेसे कुछ मतलब नहीं है। मैं यही समझती हूं कि जब मैंने गोरा को अपना लड़का मानकर पाला पोसा है, तब आचार-विचारका आडम्बर करनेसे, समाज रहे या न रहे, धर्म नहीं रहेगा मैंने केवल उसी धर्मके भयसे किसी दिन कुछ छिपाया नहीं मैं। कुछ भी नहीं मानती, यह बात सबको जानने देती हूँ। और सबकी घृणा बटोर जर चुबचाप पड़ी रहती हूँ। मैंने केवल एक ही बात छिपाई है और उसके लिए भयके मारे अधमरी हो गई हूँ कि ठाकुर जी न जाने कब क्या करें देखो मैं सोचती हूँ गोरासे सब हाल खुलासा कह दूँ, उसके बाद जो भाग्यमें बदा होगा, वही होगा।

कृष्णदयाल घबराकर कह उठे—ना ना, मेरी जिन्दगीमें किसी तरह यह नही हो सकता। गोरा को तुम जानती ही हो। नहीं कहा जा सकता कि यह बात सुनकर वह क्या कर बैठेगा। उसके बाद समाजमें एक हलचल मच जायगी। सिर्फ इतना ही न होगा, उधर गवर्नमेन्ट यह खबर पाकर क्या करेगी सो भी नहीं कहा जा सकता। यद्यपि गोराका बाप लड़ाई में मारा गया है, और यह भी मैं जानता हूँ कि उसकी मां भी मर गई है, किन्तु सब हँगामा खतम हो जाने पर हमें मजिस्ट्रेटके यहाँ इसकी खबर देना उचित था। इस समय अगर इस बातको लेकर कुछ गड़बड़ उठ खड़ी हुई तो मेरा साधन भजन सब मिट्टीमें मिल जायगा, और भी क्या आफत सिर पर आवेगी सो कुछ कहा नहीं जा सकता।

आनन्दमयीने कुछ उत्तर नहीं दिया, चुपचाप बैठी रहीं। कुछ देरके बाद कृष्णदयालने कहा—मैंने गोरा के ब्याह के बारेमें मन ही मन एक

उपाय सोचा है। परेश भट्टाचार्य मेरे साथ ही पढ़ते थे। स्कूल इन्स्पेक्टरीके कामसे पेंशन लेकर वह इस समय कलकत्तेमें ही आकर रहे हैं। वह कट्टर ब्रह्म समाजी हैं। सुना है उनके यहाँ कई लड़कियाँ भी हैं। गोराको उनकी घरमें अगर आने जाने दिया जाय, तो वहाँ आते जाते संभव है कि उनके कोई लड़की गोराको पसन्द आ जाय। उसके बाद जैसी ईश्वरकी इच्छा होगी।

आनन्द०—कहते क्या हो! गोरा एक ब्राह्मके घर आये जायेगा? उसका अब वह समय नहीं है। अब वह कट्टर हिन्दू है—ब्राह्मोंसे उसे घोर घृणा है।

बात पूरी भी नहीं होने थी कि खुद गोरा अपने मेघ गर्जन सदृश स्वरसे "माँ" कह कर वहाँ आ गया। कृष्णदयालको वहाँ बैठे देख कर उसे कुछ आश्चर्य हुआ। आनन्दमयी चटपट उठकर गोराके पास गई और दोनों आँखों से स्नेहकी वर्षा करती हुई बोली—क्यों बेटा क्या चाहिए?

ना, कोई खास बात नहीं है, इस समय रहने दो!—कहकर गोराने लौट जानेका विचार किया।

कृष्णदयालने कहा—जरा बैठ जाओ, तुमसे एक बात कहनी है। मेरे एक ब्राह्म मित्र अभी कलकत्ते आये हैं। वह हेदोतला मुहल्लेमें रहते हैं

गोरा—परेश बाबू तो नहीं?

कृष्ण०—तुमने उन्हें कैसे जाना?

गोरा—विनय उनके घरके पास ही रहता है। उसी से मैंने उनका हाल सुना है।

कृष्ण—मेरी इच्छा है कि तुम उनसे मिलकर उनकी खैर खबर ले आओ।

गोराने अपने मनमें जरा सोचा उसके बाद एकाएक कह उठा—अच्छा मैं कल ही जाऊँगा?

आनन्दमयीको इससे कुछ आश्चर्य हुआ ?

गोराने जरा सोचकर फिर कहा--ना कल तो मेरा जाना न हो सकेगा ?

कृष्ण---क्यों ?

गोरा—कल मुझे त्रिवेणी जाना है।

कृष्णदयालने विस्मित होकर कहा—त्रिवेणी ?

गोरा—जी हाँ कल सूर्यग्रहणका नहान है।

आनन्द०—तेरी तो अजब बातें हैं गोरा। स्नान करना चाहता है तो कलकत्ते की गङ्गा है। त्रिवेणीके बिना तेरा स्नान ही न होगा ? तू तो देश भरके आदमियोंसे बढ़ा जाता है।

गोरा इसका कुछ उत्तर न देकर चला गया।

गोराने जो त्रिवेणी स्नान करनेका विचार किया उसका कारण यही था कि वहाँ अनेक तीर्थ यात्री एकत्र होंगे। गोरा जहाँ जरा भी मौका पाता है वहीं वह सब संकोच और पूर्व संस्कारको बलपूर्वक त्याग कर देशके सर्वसाधारण लोगोंके साथ समान क्षेत्रमें खड़े होकर जैसे कहना चाहता है कि "मैं तुम लोगों का हूँ और तुम लोग मेरे हो।"

——:o:——

[७]

सबेरे उठकर विनयने देखा प्रातःकालका प्रकाश दुधमुँहे बच्चेकी हँसी की तरह निर्मल होकर खिल उठा है ! दो एक सफेद बादल बिलकुल ही बिना प्रयोजनके आकाशमें इधर उधर उड़ रहे हैं ।

बरामदेमें खड़ा होकर और एक निर्मल प्रभातके स्मरणसे जिस समय वह पुलकित हो रहा था इसी समय उसे देख पड़ा परेश बाबू एक हाथ में छड़ी और दूसरे हाथमें सतीशका हाथा पकड़े सड़क पर धीरे धीरे चले जा रहे हैं । सतीशने जैसे ही बरामदेमें विनयको देख पाया वैसेही खुशीसे ताली बजाकर विनयका नाम लेकर चिल्ला उठा । परेश बाबूने भी सिर उठा कर देखा बरामदेमें विनय खड़ा हुआ था । विनय चटपट ऊपरसे नीचे उतरा वैसे ही सतीशको लिए हुए परेशने भी उसके घर में प्रवेश किया ।

सतीशने विनयका हाथ पकड़ कर कहा--विनय बाबू आपने उस दिन हमारे घर आनेके लिए कहा था—मगर आये नहीं ?

स्नेह पूर्वक सतीशकी पीठ पर हाथ रख कर विनय हँसने लगा । परेश बाबू सावधानीके साथ अपनी छड़ी को टेबिलके सहारे खड़ा करके कुर्सी पर बैठ गए और कहने लगे—उस दिन आप न होते तो हम लोगोंके लिए बड़ी मुश्किल होती । आपने हमारा बड़ा उपकार किया ।

विनयने व्यस्त हो कर कहा--आप कहते क्या हैं ! मैंने किया ही क्या ?

सतीश अचानक उससे पूछ बैठा--विनय बाबू आपके कुत्ता नहीं है ?

विनयने हँसकर कहा—कुत्ता ? ना कुत्ता नहीं है ।

सतीशने फिर पूछा—क्यों, आप कुत्ता क्यों नहीं रखते ?

विनयने — कहा—कुत्तेके पालनेका कभी ख्याल नहीं आया ।

परेशने कहा—सुना उस दिन सतीश आपके यहाँ आया था। जान पड़ता है आपको बहुत परेशान कर गया है? यह इतना बकता है कि इसकी दीदीने इसे बख्तियार खिलजीका टाइटिल दे रक्खा है।

विनयने कहा—मैं भी खूब बक सकता हूँ इसीसे हम दोनों में खूब हेल मेल हो गया है। क्यों सतीश बाबू?

सतीशने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया; किन्तु पीछे कहीं उसके नवीन नामके कारण विनयके निकट उसका गौरव घट न जाय, इसी लिए वह व्यस्त हो उठा और कहने लगा खूब तो है, अच्छा तो है—बख्तियार खिलजी नाम बुरा क्या है! अच्छा विनय बाबू बख्तियार खिलजीने तो लड़ाई लड़ी थी? उसने तो बंगालको जीत लिया था?

विनयने हँसकर कहा—पहले वह लड़ाई लड़ा करता था लेकिन अब लड़ाईकी जरूरत नहीं पड़ती, इसलिए इस समय वह सिर्फ लेक्चर ही देता है और बंगालको जीत भी लेता है।

इसी तरह बहुत देर तक बातचीत होती रही। परेश बाबूने सबसे कम बातें कीं—वह प्रसन्न शान्त मुखसे बीच बीचमें केवल हँस देते थे। दो एक बातोंमें बोले भी, मगर बहुत थोड़ा। विदा होने के समय कुर्सीसे उठ कर उन्होंने कहा—हमारे घर का नम्बर अठत्तर है यहाँसे बराबर दाहने हाथकी तरफ जाकर—

सतीश बीच ही में बोल उठा—वह हमारा घर जानते हैं। उस दिन मेरे साथ हमारे दरवाजे तक गये थे।

इस बात से लज्जित होने का कोई प्रयोजन न था किन्तु विनय मन ही मन लज्जित हो उठा। जैसे उसकी कोई चोरी पकड़ ली गई।

वृद्धने कहा—तब तो आप हमारा घर जानते हैं। खैर फिर कभी अगर आपको...।

विनय उसके लिए आपको कहना नहीं पड़ेगा—कलकत्ता जैसा शहर होनेके कारण ही अब तक हमारी आपकी जान पहचान नहीं हुई थी।

विनय सड़क तक परेशबाबू को पहुँचा आया। दरवाजेके पास वह कुछ देर तक खड़ा रहा। परेशबाबू छड़ी टेकते हुये धीरे धीरे चले—और सतीश लगातार बातें करता हुआ उनके साथ साथ चला।

विनय अपने मनमें कहने लगा—परेश बाबूके समान ऐसा वृद्ध मैंने कोई नहीं देखा—देखते ही मनमें भक्तिका संचार होता है और पैर छूनेको जी चाहता है! और सतीश लड़का भी कैसा अच्छा और तेज है। भविष्यमें एक योग्य पुरुष होगा—जैसी बुद्धि है वैसा ही भोलपन है।

वह वृद्ध और बालक, दोनों चाहे जितने भले हों, उतनी थोड़ी देरके परिचयसे उनके सम्बन्धमें इतनी भक्ति और स्नेहका उमड़ पड़ना साधारणतः कभी सम्भव न हो सकता। किन्तु विनयका मन ऐसी हालतमें था कि उसने अधिक परिचयकी अपेक्षा नहीं रक्खी।

उसके बाद विनय अपने मनमें सोचने लगा—परेश बाबूके घर जाना ही होगा। न जाना शिष्टाचार और भद्रताके विरुद्ध होगा।

किन्तु गोराके मुख द्वारा उसके दल का भारतवर्ष उससे कहने लगा कि वहाँ तुम्हारा आना जाना नहीं हो सकता! खबरदार!

विनय पग पग पर अपने दलके भारतवर्षका निषेध माना है—अनेक समय मनमें दुबधा आने पर भी माना है। किन्तु आज उसके मनमें एक प्रकार का विद्रोह दिखाई दिया। उसे जान पड़ने लगा, भारतवर्ष जैसे केवल निषेधकी ही मूर्ति है।

नौकरने आकर खबर दी, भोजन तैयार है—किन्तु विनयने अभी तक स्नान ही नहीं किया। बारह बज गए थे। अचानक विनयने जोरसे सिर हिला कर कहा—मैं नहीं खाऊँगा तुम लोग जाओ। यह कह छाता कन्धे पर रख कर वह घरसे बाहर निकल गया।

सीधा गोराके घर आकर पहुँचा। विनय जानता था कि अम्हर्स्ट स्ट्रीटमें एक मकान किराए पर लेकर हिन्दू हितैषी कार्यालय स्थापित हुआ है। नित्य दोपहरको गोरा उस कार्यालयमें जाकर बंगाल भरमें उसके दलके लोग जहाँ-जहाँ हैं उन सबको सजग और तत्पर रखनेके लिए अपने

हाथसे पत्र लिखता है। वहाँ उसके भक्त लोग उसके मुखसे उपदेश सुननेके लिए आते हैं, और उसके सहकारी होकर अपनेको धन्य मानते हैं।

उस दिन भी गोरा उस समय उसी कार्यालयमें काम करने गया था। विनय एक दम जैसे दौड़ कर ही आनन्दमयीके कमरेमें पहुंचा। आनन्दमयी उस समय भोजन करने बैठी थीं और लछमिनिया उनके पास बैटी हुई पंखेसे हवा कर रही थी।

आनन्दमयीने आश्चर्यमें आकर कहा—क्योंरे विनय, आज तुझे हुआ क्या है?

विनय उनके सामने बैठ गया, और कहने लगा—मा बड़ी भूख लगी है, मुझे खाने को दो।

आनन्दमयी व्यस्त हो उठी बोलीं—तब तो तूने मुशकिलमें डाल दिया। रसोई बनानेवाला महाराज तो चला गया—तुमलोग फिर।

विनयने कहा मैं क्या महाराजके हाथकी रसोई खाने आया हूँ? महराजके हाथकी रसोई खाना होता तो घरके महराजने क्या दोष किया था? मैं तुम्हारी थालीका प्रसाद खाऊँगा माँ। लछमिनिया ला एक गिलास पानी तो दे?

लछमिनिया जैसे पानी ले आई वैसेही विनय एक साँसमें घट घट उसे पी गया। तब आनन्दमयी ने और एक थाली मँगा कर स्नेहपूर्वक अपनी थाली का अन्न रख दिया। विनय जैसे बहुत दिनोंका भूखा था इस तरह बैठ कर खाने लगा।

आनन्दमयी के मनकी एक वेदना आज दूर हो गई। उसके मुखकी प्रसन्नता देखकर विनय की छाती परका एक बोझ जैसे उतर गया। आनन्दमयी तकियेका गिलाफ बैठकर सीने लगीं। विनय आनन्दमयीके पैरोंके पास ऊपर उठे हुए एक हाथ पर सिर रखकर लेट गया और संसारका और सब कुछ भूलकर ठीक पहलेके दिनोंकी तरह आनन्दपूर्वक बातें करने लगा।

[८]

आनन्दमयी के घरसे निकलकर विनय रास्तेमें जैसे एकदम उड़ता हुआ चला जा रहा था; उसके पैर जैसे जमीन पर ही नहीं पड़ते थे। उसका जी चाहने लगा कि मनकी जिस बातको लेकर वह इन कई दिनों तक संकोच से पीड़ित हुआ है उसको आज सिर ऊँचा करके सबके आगे कह दें।

विनय जिस घड़ी ७८ नम्बरके घरके दरवाजेके पास पहुँचा ठीक उसी समय परेश बाबू भी दूसरी तरफ से आकर उपस्थित हुए।

"आओ आओ विनय बाबू मैं बहुत खुश हुआ।" यह कह कर परेश बाबू विनयको भीतर ले गए और सड़कके किनारे ही जो उनकी बैठक थी उसमें बिठलाया। एक छोटा टेबिल रक्खा था उसके एक तरफ पीठदार बेंच और दूसरी तरफ काठ और बेंतकी दो कुर्सियाँ थीं। दीवालमें एक तरफ ईसाका एक रंगीन चित्र और दूसरी तरफ केशवचन्द सेनका फोटो लगा हुआ था! टेबिलके ऊपर दो चार दिनके अखबार तह किए हुए रक्खे थे। कोने में एक छोटी आलमारी थी जिसके ऊपर एक ग्लोब कपड़ेसे ढका हुआ था।

विनय बैठा था। उसका हृदय चंचल हो उठा,जान पड़ने लगा, मानो उसकी पीठकी तरफके खुले हुए दरवाजेसे कोई बैठकके भीतर आकर प्रवेश कर रहा है।

परेश बाबूने कहा—सोमवारको सुचरिता मेरे एक मित्रकी लड़कीको पढ़ाने जाती है। वहाँ सतीशकी हमजोलीका एक लड़का है, इसीसे सतीश भी उसके साथ गया है। मैं उन्हें पहुँचाकर अभी लौटा आ रहा हूँ। और जरा देर हो जाती तो फिर आपसे मुलाकात न होती।

परेश बाबूके साथ खुलकर उसकी बात चीत होने लगी। बातें करते करते एक एक करके परेश बाबूको आज विनय का सब हाल मालूम हो गया। विनय के मां बाप कोई नहीं है; चाचीके साथ चाचा गाँवमें रह कर जमीन जायदाद देखते हैं। दो चचेरे भाई उसके साथ एक ही घरमें रह कर कलकत्तेमें पढ़ते थे। उनमेंसे बड़ा भाई वकालत पास करके उस जिलेके अदालतमें वकालत करता है, और छोटा भाई कलकत्तेमें ही हैजेकी बीमारीसे मर गया। चाचाकी इच्छा है कि विनय डिपुटी कलेक्टरीके लिए कोशिश करे, लेकिन कोई भी कोशिश न करके अनेक व्यर्थ के कामोंमें लगा हुआ है।

इस तरह लगभग एक घंटा बीत गया। बिना कामके और अधिक देर तक ठहरना ठीक न समझकर विनय उठ खड़ा हुआ। उसने कहा—बन्धु सतीशके साथ मेरी भेंट नहीं हुई, इसका दुःख है; उससे कह दीजिएगा कि मैं आया था।

परेश बाबूने कहा—और जरा देर ठहरते तो उन लोगोंसे भेंट हो जाती। उनके लौटनेमें अब अधिक देर नहीं है।

इसी बात पर निर्भर करके फिर बैठ जानेमें विनयको लज्जा मालूम हुई। और जरा आग्रह करनेसे वह बैठ सकता था—किन्तु परेश बाबू अधिक बोलने या आग्रह करनेवाले आदमी ही नहीं थे, इससे चल ही देना पड़ा। परेशबाबूने कहा – आप फिर आयें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।

सड़क पर आकर विनयने अपने घरकी तरफ लौटनेकी कोई जरूरत नहीं देखी। वहाँ कोई काम न था। विनय अखबारोंमें लिखा करता है। उसके अँग्रेजी लेख की लोग खूब तारीफ करते हैं। किन्तु पिछले कई दिनोंसे जब वह लिखने बैठता था तो कुछ सूझता ही नहीं था। टेबिलके सामने अधिक समय तक बैठना ही मुश्किल होता था—मन उच्चाट और व्याकुल सा हो जाता, इसीसे आज वह अकारण ही उलटी तरफ चला।

दो-चार कदम जाते ही एक बालक-कंठकी ध्वनि सुन पड़ी—"विनय बाबू! ओ विनय बाबू!"

सिर उठा कर देखा एक गाड़ीकी खिड़की पर झुका हुआ सतीश उसे पुकार रहा है। गाड़ीके भीतर गद्दी पर थोड़ी सी साड़ी और थोड़ी सी सफेद कुर्तेकी आस्तीनको देखकर उसे यह समझनेमें कुछ भी सन्देह नहीं रहा कि उसमें कौन बैठा है।

बंगाली भद्रताके अनुसार गाड़ीकी तरफ देखना विनयके लिए कठिन हो उठा। इसी बीचमें वहीं गाड़ीसे उतर कर सतीशने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—चलिए हमारे घर।

विनयने कहा—मैं तो तुम्हारे ही घरसे अभी आ रहा हूँ।

सतीशने कहा वाह, हम लोग तो थे ही नहीं, फिर चलिए।

सतीशकी जिद्दको विनय टाल नहीं सका। विनयको लेकर घरमें प्रवेश करते ही सतीशने उच्च स्वरसे कहा—बाबा, विनय बाबूको लाया हूँ।

वृद्धने घरसे निकल कर जरा हँस कर कहा—बड़े कड़ेके हाथ आप पड़ गये हैं। आप, जल्दी छुटकारा न पाइएगा।—सतीश अपनी दीदीको बुला दे।

विनय घरमें आकर बैठ गया, उसका हृदय वेगसे धड़कने लगा। परेश बाबूने कहा—जान पड़ता है, आप थक गये। सतीश बड़ा ऊधमी लड़का है।

घरमें सतीशने जब अपनी दीदीको लेकर प्रवेश किया, तब विनयने पहले एक हलकी सुगन्धका अनुभव किया—उसके बाद सुना, परेश बाबू कहते हैं—राधे, विनय बाबू आये हैं इनको तो तुम जानती ही हो।

विनय चकित हो सिर उठा कर देखा, सुचरिता उसे नमस्कार करके सामनेकी कुर्सी पर बैठ गई। अबकी विनय उसके प्रति नमस्कार करना नहीं भूला।

सुचरिताने वृद्धसे कहा—वह रास्तेमें जा रहे थे। सतीश उन्हें देखते ही फिर रोके नहीं रुका। वह गाड़ीसे उतरकर उन्हें पकड़कर खींच लाया।

फिर विनयकी ओर देख कर कहा—आप शायद किसी कामसे जारहे थे विनय बाबू ?—आपको कोई असुविधा तो नहीं हुई।

सुचरिता विनयको सम्बोधन करके कोई बात कहेगी, विनयने इसकी प्रत्याशा ही नहीं की थी। वह कुंठित और व्यस्त हो उठा, कहने लगा—ना, मुझे कुछ भी असुविधा नहीं हुई।

सतीशने सुचरिताका कपड़ा खींचकर कहा—दीदी, चाभी लाओ न। अपना वह आर्गन (बाजा) लाकर विनय बाबूको दिखाऊँ।

सुचरिताने हँसकर कहा—यह लो शुरू हो गया ! जिसके साथ बक्तियारकी दोस्ती होगी, उसकी फिर जान नहीं बच सकती—आर्गन तो सुनना ही पड़ेगा—और भी अनेक तरहसे आपको तंग करेगा—विनय बाबू, आपका यह मित्र छोटा है, किन्तु इसकी मित्रताका उत्पात बहुत बड़ा है। मालूम नहीं, उसे आप सह सकेंगे या नहीं।

विनयने संकोच भावसे उत्तर दिया—ना, आप कुछ भी खयाल न करें। मुझे यह सब खूब अच्छा लगता है।

सतीश अपनी दीदीके पाससे चाभी लेकर आर्गन बाजा और कुछ खिलौने उठा लाया। और बहुत देर तक अपने अभ्यास किये हुये अनेक खेल और बाजेसे सबोंका मनोरंजन करने लगा।

कुछ देर बाद लीलाने वहाँ आकर कहा—बाबू जी माँ तुम लोगोंको ऊपर बुला रही हैं।

—****—

[९]

ऊपर बरामदेमें टेबिल पर सफेद कपड़ा बिछा हुआ था—टेबिलके चारों ओर कुर्सियाँ रक्खी थी। रेलिंग के बाहर कार्निसके ऊपर छोटे-छोटे टबोंमें पाम और अन्य फूलोंके पेड़ थे। बरामदे के ऊपरसे रास्तेके किनारेके मौलसिरी और कृष्णचूड़ा वृक्षोंकी पवित्र स्निग्धता दिखाई पड़ती थी।

सूर्य उस समय भी अस्त नहीं हुए थे—पश्चिम आकाश से फीकी धूप सीधी होकर बरामदेके एक किनारे में आ पड़ी थी।

उस समय छत पर कोई नहीं था। दम भर बाद ही सतीश एक सफेद और काले रङ्गके छोटे कुत्तेको लेकर उपस्थित हुआ। उस कुत्ते का नाम था—टेनी। टेनीमें जितनी और जितने प्रकारकी विद्या थी; सो सब सतीशने विनयको दिखा दी। कुत्ते ने एक पैर उठा कर सलाम किया फिर दो पैर से खड़ा होकर नाचने लगा।

किसी एक कमरेसे बीच बीचमें लड़कियोंके गलेकी हँसीकी खिल-खिलाहट और कौतुकपूर्ण कंठ स्वर और उसके साथ ही एक मर्दकी आवाज भी सुनाई पड़ रही थी। वह थोड़ा बहुत हास्य कौतुकका शब्द विनयके मनके भीतर एक अपूर्व मधुरताके साथ साथ जैसे एक प्रकार की ईर्षाकी वेदना भी ले आया। विनय जबसे सयाना हुआ तबसे उसने घरके भीतर लड़कियोंके गलेकी ऐसी आनन्दकी कलध्वनि इस तरह कभी नहीं सुनी। यह आनन्दकी माधुरी उसके इतने निकट उच्छ्वसित हो रही है, तो भी वह उनसे इतना दूर है! सतीश विनयके कानोंके पास न जाने क्या क्या कहता जाता था; मगर विनय जैसे उसे सुन ही नहीं रहा था। उसका मन और ही तरफ था।

परेश बाबूकी स्त्री अपनी तीनों लड़कियोंको साथ लिये छत पर

आई। साथमें एक युवक भी आया; वह उनका दूरके नातेका कोई आत्मीय था।

परेश बाबूकी स्त्रीका नाम बरदासुन्दरी है। उनकी अवस्था कम नहीं है, किन्तु उन्हें देखते ही यह समझमें आ जाता है कि वह विशेष यत्न के साथ सजावट करके आई हैं। अधिक अवस्था दिहातकी औरतोंकी तरह बिता कर एक दम एक समयसे वह एक नये जमाने के साथ चलनेके लिये व्यस्त हो पड़ी है। इसी कारण उनकी रेशमी साड़ी जरा अधिक खसखसाती है, और ऊँची एड़ीका जूता खूब खट खट बोलता है। पृथ्वीमें कौन चीज ग्राह्य है और कौन अग्राह्य है इसीके भेद को ले कर वह सदा अत्यन्त चौकन्नी रहती है। इसी कारणसे तो उन्होंने राधारानी के नामको बदल कर सुचरिता रख दिया है!

उनकी बड़ी लड़कीका नाम लावण्य है। वह खूब मोटी ताजी और हंसमुख है। लोगोंसे बात-चीत अधिक करना पसन्द करती हैं। उसका चेहरा गोल, दोनों आखें बड़ी और रंग उज्ज्वल श्याम हैं। साज सिंगारके बारेमें वह स्वभावसे ही कुछ ढीली ढाली हैं, लेकिन इस मामलेमें उसे अपनी माँकी आज्ञा मान कर चलना होता है। ऊँची एड़ीका जूता पहनने में उसे सुविधा नहीं मालूम होती तब भी पहनना ही पड़ता है। तीसरे पहर सिंगार करने के समय माँ अपने हाथ से उसके मुँहमें पाउडर और गालोंमें रङ्ग लगा देती है। वह जरा मोटी है, इसलिए बरदासुन्दरी उसका सलूका ऐसा कसा बनवाती है कि लावण्य जब पहन ओढ़ कर बाहर निकलती है, तब जान पड़ता है जैसे उसे पाटके बोरे की तरह कलमें दबाकर कसकर बांध दिया गया है।

मँझली लड़कीका नाम ललिता है। उसे बड़ी लड़कीके विपरीत कहना ही ठीक होगा। अपनी बहन की अपेक्षा उसका सिर लम्बा है, रोगीसी जान पड़ती है; रंग जरा और साँवला है, बातचीत अधिक नहीं करती। वह अपने मन के माफिक चलती है। जी चाहे तो कड़ी से कड़ी

बातें सुना दे सकती है। बरदासुन्दरी जैसे उसे मनमें डरती है। सहज ही उससे बात करनेका साहस नहीं करती।

छोटी लड़कीका नाम लीला है। उसकी अवस्था दस सालके लगभग होगी। वह दौड़ धूप और उपद्रव करनेमें खूब तेज है—सतीशके साथ धक्की धक्का और सदा मारपीट किया करती है।

बरदासुन्दरीके आते ही विनय उठकर खड़ा हो गया फिर उसने झुक कर उन्हें प्रणाम किया। परेश बाबूने कहा—इन्हींके घरमें उस दिन हम लोग···।

बरदासुन्दरीने कहा—ओह! आपने बड़ा उपकार किया—आपको मैं हृदयसे अनेक धन्यवाद देती हूँ।

यह सुनकर विनय इतना संकुचित होगया कि ठीक तौरसे उत्तर भी न दे सका।

लड़कियोंके साथ जो युवक आया था, उसके साथ भी विनयका परिचय हो गया। उसका नाम था सुधीर। वह कालेज में बी० ए० क्लासमें पढ़ता है। उसका चेहरा देखने में सुन्दर और प्यारा मालूम होता था। रंग गोरा था। आँखोंमें सुनहरी कमानीका चश्मा था। स्वभाव अत्यन्त चंचल था। वह घड़ी भर भी स्थिर बैठना नहीं चाहता—कुछ न कुछ करनेके लिए व्यग्र रहता है। सदा लड़कियों के साथ ठट्ठा करके खिझाकर उन्हें अस्थिर किए रहता है। लड़कियों के साथ सुधीरका संकोचहीन दोस्ताना बर्ताव और हेल मेलका भाव विनयको बिल्कुल नया और आश्चर्यजनक जान पड़ा। पहले उसने इस तरहके व्यवहारकी मनही मन निन्दा ही की, लेकिन फिर उस निन्दाके साथ जैसे कुछ ईर्षा का भाव मिलने लगा।

वारदासुन्दरीने कहा—खयाल आता है, मैंने जैसे आपको एक दो बार समाज-मंदिरमें देखा है।

विनयको जान पड़ा, जैसे उसका कोई अपराध पकड़ लिया गया।

उसने अनावश्यक लज्जा प्रकट करके कहा—हाँ; कभी कभी केशव बाबूकी वक्तृता सुनने जाता हूँ।

वरदासुन्दरीने पूछा—आप शायद कालेजमें पढ़ते हैं?

विनयने कहा—ना, अब कालेज में नहीं पढ़ता।

वरदाने पूछा—आपने कालेजमें कहाँ तक पढ़ा है?

विनयने कहा—एम० ए० पास कर चुका हूँ।

यह सुनकर उस बालक के ऐसे चेहरेवाले युवकके ऊपर वरदासुन्दरीके मन में श्रद्धा उत्पन्न हुई। उन्होंने एक साँस लेकर परेशबाबूकी ओर देखकर कहा—मेरा मनुआ अगर होता, तो वह भी आज एम० ए० पास कर चुका होता।

वरदासुन्दरीकी पहली संतान मनोरंजन नौ बरसकी अवस्थामें ही मर गया था। वरदासुन्दरी जिस किसी युवकको कोई बड़ा दर्जा पास करते, बड़ा पद पाते, अच्छी किताब लिखते या कोई अच्छा काम करते देखतीं सुनती तो उन्हें उसी समय यह जान पड़ता कि उसका मनुआ अगर जीता होता तो वह भी ठीक यही सब कर चुका होता। खैर, जब वह नहीं है, तब इस समय जनसमाजमें अपनी तीनों लड़कियोंके गुणोंका प्रचार करना ही वरदासुन्दरीका एक विशेष कर्तव्य हो उठा था। वरदाने विनयको विशेष रूपसे यह बात बताई कि उनकी लड़कियाँ खूब पढ़ती-लिखतीं हैं और बहुत ही तेज हैं। विनयसे यह भी छिपा नहीं रहा कि मेमने लड़कियोंकी बुद्धि, गुण और निपुणताके बारेमें कब क्या कहा था। यह भी विनयने सुना कि जब गर्ल्स स्कूलमें इनाम देनेके मौके पर लेफ्टिनेन्ट गवर्नर और उनकी लेडी आई थीं, तब उन्हें हार पहनानेके लिए स्कूलकी सब लड़कियोंमें लावण्य ही खास करके चुनी गई थी।

अन्तमें वरदाने लावण्य से कहा—जिस सिलाईके कामके लिए तुमने इनाम पाया था, वह ले तो आओ बेटी।

एक रेशम की कामदार तोतेकी मूर्ति इस घरके परिचित आत्मीय

बन्धुओं के निकट विशेष विख्यात हो उठी थी। बहुत दिन हुए जब लावण्यने मेमकी सहायतासे यह अद्भुत वस्तु बनाई थी। इस रचनामें लावण्य का अपना कुछ विशेष हाथ तो नहीं था। किन्तु जिससे नई नई जान पहचान होती थी। उसीको यह नुमायशी तोता अवश्य दिखाया जाता था। यह एक निश्चित बात हो गई थी। उस तोते की रचनामें जो कारीगरी दिखाई गई थी; उसके लिये जिस समय विनयके नेत्र विस्मयसे देख रहे थे, ठीक उसी समय नौकर ने आकर एक चिट्ठी परेश बाबूके हाथमें दी।

चिट्ठी पढ़ कर परेश बाबू प्रफुल्ल हो उठे। बोले बाबूको ऊपर ले आ।

वरदाने पूछा—कौन है?

परेश बाबू ने कहा—मेरे बचपनके मित्र कृष्णदयालने अपने लड़केको हम लोगोंके साथ परिचित कराने के लिये भेजा है।

एकाएक विनयका हृदय उछल पड़ा और उसका मुख विवर्ण हो गया। किन्तु उसके बाद ही वह मुट्ठी बाँधकर खूब जी कड़ा करके बैठ गया, जैसे वह किसी प्रतिकूल पक्षके विरुद्ध अपने को दृढ़ रखनेके लिये तैयार हो उठा। गोरा इस परिवारके लोगोंको अश्रद्धाके साथ देखेगा और अश्रद्धाके साथ उनका विचार करेगा, इस ख्याल ने जैसे पहले ही से विनयको कुछ उत्तेजित कर दिया।

— *** —

[१०]

एक तश्तरीमें कुछ मिठाई और चाय आदि सब सामान सजाकर एक नौकरके हाथमें दे सुचरिता छतके ऊपर आ बैठी, उसी समय दरवान के साथ गोरा भी वहाँ आ पहुँचा। उसका लम्बा डील डौल गोरा शरीर और हिन्दुस्तानी लिबास देखकर सभी विस्मित हो उठे।

गोराके माथेमें गोपी-चन्दनका तिलक लगा था। मोटे कपड़ेकी धोती, अँगरखा, मोटे सूतकी चादर, और पैरमें देशी जूता, यही सब उसका पहनावा था। वह मानो वर्त्तमान कालके विरुद्ध एक मूर्तिमान् विद्रोहकी भाँति आ उपस्थित हुआ। उसका ऐसा भेष विनयने भी इसके पूर्व कभी नहीं देखा था।

आज गोरा के मनमें एक विरोधकी आग विशेष रूपसे जल रही थी। उसका कारण भी था।

ग्रहण-स्नानके उपलक्ष्यमें कोई स्टीमर कल सवेरे यात्रियों लेकर त्रिवेणी को रवाना हुआ था। रास्ते में जहाँ-जहाँ स्टीमर ठहरता था वहाँ वहाँ अधिकाधिक स्त्रियाँ दो एक अभिभावक पुरुषोंके साथ त्रिवेणी जानके लिए जहाज पर सवार हो जाती थीं। जहाजमें अधिक यात्री हो जानेके कारण और कहीं बैठनेको जगह न रहनेसे, लोगोंमें धक्का मुक्की होने लगी। एक दूसरे को ठेलने लगा। कीचड़ भरे पैरोंसे, जहाज पर चढ़नेके तख्ते पर यात्रियोंकी भीड़ होनेके कारण कोई लड़खड़ाकर नदीके जलमें गिरता था, किसीको खलासी ढकेलकर जहाजसे बाहर कर देता था, और कोई किसी तरह जहाज पर चढ़ भी जाता तो अपने साथीके पिछड़ जानेसे वह व्याकुल होता था। बीच बीचमें क्षणिक वृष्टि आकर उन यात्रियोंको भिगो देती थी। जहाज में उन सबोंके बैठनेकी जगह कीचड़से भर गई। उन सबोंके चेहरे पर एक त्रास भरी दीनताका भाव छा गया था। वे लोग ऐसे सामर्थ्यहीन और अभागे थे

कि जहाज के मल्लाह से लेकर कप्तान तक किसीसे भी अपने दुःखमें सहायताकी आशा नहीं करते थे; और यह जानकर वे चेष्टासे एक कातर भाव और भय प्रकाशित कर रहे थे। ऐसी अवस्थामें गोरा अपने भरसक यात्रियोंकी सहायता कर रहा था। ऊपर फर्स्ट क्लास के डेक पर एक अँग्रेज और एक नई रोशनीके बंगाली बाबू जहाजका रेलिङ्ग पकड़े परस्पर हास्यालाप करते और चुरुटका धुआं उड़ाते हुए तमाशा देख रहे थे। बीच बीचमें किसी यात्रीकी कोई विशेष दुर्गति देख अंग्रेज हँस उठता था और बङ्गाली बाबू भी अपनी निर्दयतासूचक हँसीसे उसका साथ देता था।

दो तीन स्टेशन इस प्रकार पार हो जाने पर गोराको यह दुर्दशा सहन न हो सकी। उसने ऊपर आ गरज कर कहा—धिक्कार है तुम लोगोंको, जरा शरम तक नहीं आती। अँग्रेज ने कड़ी दृष्टिसे गोराको सिरसे पैर तक देखा। बंगालीने कहा—शरम कैसी! देशके इन पशु समान मूर्खोंके ही लिए शरम।

गोराने मुँह लाल कर कहा—मूढ़की अपेक्षा वह बड़ा भारी पशु है, जिसके हृदय नहीं है; जिसके मनमें दया नहीं है।

बङ्गालीने खिसियाकर कहा—यह तुम्हारी जगह नहीं है, यह फर्स्ट क्लास है, तुम नीचे जाओ।

गोराने कहा—ठीक है, तुम्हारे साथ रहनेकी यह जगह कदापि मेरे योग्य नहीं। मेरी जगह इन यात्रियों के साथ है। किन्तु मैं कहे देता हूँ, तुम फिर मुझे अपने इस फर्स्ट क्लासमें आनेके लिए मत कहना। यह कहकर गोरा तेजीसे नीचे चला गया।

चन्दरनगर पहुँचकर जहाजसे उतरते समय साहबने सहसा गोराके पास जा अपने सिरसे टोपी उठाकर कहा—"मैं अपने निर्दय व्यवहारके लिए लज्जित हूँ। आशा करता हूँ आप क्षमा करेंगे।" यह कह वह झटपट चला गया।

किन्तु शिक्षित स्वदेशवासी बाबू साधारण लोगोंकी दुर्गति देख विदेशीके साथ मिलकर अपनी श्रेष्ठताके अभिमानसे हँसता है, यह पैशाचिक लीला गोराको जलाने लगी। देशके सर्वसाधारण लोगोंने इस प्रकार अपनेको सर्वथा अपमान और दुर्व्यवहारके अधीन कर रक्खा हैं। इन्हें पशुवत् समझने पर भी वे अपना पशुत्व स्वीकार करते हैं और सबके यहाँ यह बात स्वाभाविक और संगत समझी जाती है। इस विचारकी जड़में जो एक देशव्यापी गहरा अज्ञान भरा है, उसके लिए गोरा का हृदय मानों फटने लगा। किन्तु सबकी अपेक्षा अधिक खेद उसके मनमें यह हुआ कि देशके इस चिरकालिक अपमान और दुर्गति को पढ़े-लिखे लोग अपने ऊपर न लेकर अपनेको निष्ठुर भावसे अलग रखनेमें निःसंकोच हो अपनी इज्जत समझते हैं। इसीसे शिक्षित लोगोंकी पढ़ी हुई विद्या और नकल करने के संस्कारकी एकदम उपेक्षा करनेही के लिए आज गोरा माथे में गोपी-चन्दनका तिलक लगा और देशी जूता पहन छाती फुलाकर ब्राह्मसमाजी के घर आया है।

विनय मन ही मन समझ गया कि गोराका आजका यह पोशाक साधारण नहीं, सामरिक है। गोरा क्या जाने क्या कर बैठे, यह सोचकर विनयके मनमें कुछ भय, संकोच और विरोध का भाव उदित हुआ।

वरदासुन्दरी जब विनयके साथ बातचीत करती थी तब सतीश छतके एक कोनेमें लट्टू घुमाकर खेल रहा था। गोरा को देखकर उसका लट्टू घुमाना बन्द हो गया। वह धीरे धीरे विनयके पास खड़ा होकर टकटकी बाँध गोराकी ओर देखने लगा और विनयके कानमें धीरे से कहा—क्यों यही तुम्हारे मित्र हैं?

विनय—हाँ।

गोराने छत पर पहुँचते ही एक बार विनयके मुंहकी ओर इस तरह देखा, मानो उसे देखा ही नहीं। परेश बाबूको नमस्कार करके वह मेजके पाससे एक कुरसी खींचकर बैठ गया। लड़कियोंको यहाँ एक तरफ बैठी हुई देखना गोराने मर्यादाके विरुद्ध समझा।

वरदासुन्दरी इस असभ्यके पाससे लड़कियोंको ले जाना चाहती थी इसी समय परेशबाबूने उसकी ओर देखकर कहा—इनका नाम गौरमोहन है, ये मेरे मित्र कृष्णदयाल बाबूके लड़के हैं।

तब गोराने उनकी ओर देखकर प्रणाम किया। यद्यपि विनयके मुँह से प्रसंगवश सुचरिताने गोराकी बात पहलेही सुनी थी तो भी इस बात का उसे विश्वास न हुआ कि यही विनय का मित्र होगा। गोराका भेष देखतेही सुचरिताको उसपर कुछ घृणा उत्पन्न हुई। अंगरेजी पढ़े लिखे किसी आदमी में बनावटी हिन्दूपन देखकर उसे सहन कर सकनेका संस्कार या सहिष्णुता सुचरितामें न थी।

परेश बाबू गोरासे अपने लड़कपनके साथी कृष्णदयालका कुशल समाचार पूछा। फिर अपनी छात्रावस्थाकी बातको सोचकर बोले—उस समय कालेजमें हम दोनों एक मतके थे। दोनों मनमौजी थे। हमलोग आचार व्यवहार कुछ न मानते थे—होटलमें बैठकर मौजसे खाना ही हम लोगों का काम था। हम दोनों कभी कभी शामको गोलदिग्घी में मुसलमान की दूकान पर बैठकर कबाब खाया करते थे, और फिर आधीरात तक बैठकर हिन्दूसमाज के सुधारकी समालोचना किया करते थे।

वरदासुन्दरीने पूछा—अब वे क्या करते हैं?

गोरा—अब वे हिन्दू आचार विचार से रहते हैं।

हिन्दू आचार विचार का नाम सुनते ही वरदासुन्दरीका सारा शरीर क्रोधसे जल उठा। वह बोली—उन्हें लज्जा नहीं आती?

गोरा ने मुसकुराकर कहा लज्जा करना दुर्बल स्वभावका लक्षण है। कोई कोई बापका परिचय देने ही में लजाते हैं।

वरदा०—पहले तो वे ब्राह्म थे न?

गोरा—मैं भी तो किसी समय ब्राह्म था।

वरदा०—अब आप साकार उपासना में विश्वास करते हैं?

गोरा—मेरे मनमें ऐसा कुसंस्कार नहीं है कि मैं साकार पर बिना

कारण अश्रद्धा करूँ। आकारकी निन्दा करनेसे क्या वह छोटा हो जायगा? आकारके रहस्यका भेद कौन पा सका है?

परेश बाबूने नम्रभावसे कहा आकार तो नाशवान् है; उसका अन्त अवश्यम्भावी है।

गोरा—जिसका आदि होगा उसका अन्त भी अवश्य होगा, इसमें आश्चर्य क्या है? अन्त न रहनेसे प्रकाश न होगा। अनन्त ब्रह्मने अपने को प्रकाशित करने हीके लिए अन्तका आश्रय ग्रहण किया है। अन्त उसी अनन्तके अन्तर्गत है। अन्त ही उससे प्रकाशका विधायक है। उदय अस्त के भीतर ही प्रकाशकी स्थिति है। किसी वस्तुके प्रकाश से ही सम्पूर्णताका बोध होता है। वाक्यके भीतर जैसे भाव रहता है वैसे ही आकारके भीतर निराकार भी सम्पूर्ण रूपसे मौजूद है।

वरदासुन्दरीने कहा—निराकारसे बढ़ कर आकार है, यह आप क्या कहते हैं?

गोरा—अगर मैं न भी कहूँ तो इससे कुछ न होता। जो जैसा है वह वैसा ही रहेगा। संसारमें आकार मेरे कहनेके ऊपर निर्भर थोड़े ही है। यदि निराकारकी ही यथार्थ परिपूर्णता होती तो आकारको कहीं जगह न मिलती।

सुचरिता मन ही मन कहने लगी, कोई ऐसा होता जो इस उद्दण्ड युवकको विवादमें एकदम हराकर इसे ऐसा गिराता कि फिर वह कभी आकारका नाम न लेता। विनयको चुपचाप गोराकी बातें सुनते देखकर वह भीतर ही भीतर कुढ़ने लगी। गोरा इस उत्तेजना के साथ बातें कर रहा था कि उस उत्तेजनाको दबा देनेके लिए सुचरिता मनही मन उत्तेजित हो उठी।

इसी समय नौकर चाय बनानेके लिए केटली में गरम पानी लाया। सुचरिता उठकर चाय तैयार करने लगी। विनयने बीच-बीच में दो एक बार चकित दृष्टिसे सुचरिताके मुंहकी ओर देखा। यद्यपि उपासनाके सम्बन्ध में गोराके साथ विनयका विशेष मतभेद न था तो भी गोरा जो इस ब्राह्म

परिवारके बीच बिना बुलाए आकर बड़ी ढिठाईके साथ विरुद्ध मतकी आलोचना कर रहा है, इससे विनयका जी दुखने लगा। गोराकी इस उद्दण्डताके आगे परेशबाबूके प्रशान्त भाव और सब प्रकारके तर्कसे रहित उनकी गम्भीर प्रसन्नताकी झलकने विनयके हृदयको भक्तिसे भर दिया। वह मन में कहने लगा—मतामत कुछ नहीं है, मनके भीतर पूर्ण आनन्दका विकास और शान्त भावही सबकी अपेक्षा दुर्लभ है। क्या सच है और क्या झूठ, इस बातके विषयमें लोग भलेही वाद-विवाद करें, परन्तु जो सत्य है सो सदा सत्य है। परेशबाबूका स्वभाव था कि सब प्रकारकी कथा-वार्ता में एकाध बार बीच में आँखें मूंदकर अन्तःकरण में प्रस्तुत-विषयका अनुशीलन कर लेते थे। उनके उस समयके ध्याननिमग्न प्रसन्न मुखको विनय टकटकी लगाकर देख रहा था। गोरा जो इस समय परेशबाबू के प्रति भक्ति न करके बढ़ बढ़कर बातें कहता ही जा रहा था, इससे विनयके मनमें बड़ी चोट लग रही थी।

सुचरिताने कई प्याले चाय बना करके परेशबाबू के मुँहकी ओर देखा। किससे वह चाय पीनेका अनुरोध करे और किससे न करे, इस दुबिधामें उसका मन पड़ा था। वरदासुन्दरी गोराके मुँहकी ओर देखकर सहसा बोल उठी—आप तो यह सब कुछ न खायँगे ?

गोरा०—जी नहीं।

वरदासुन्दरी—क्यों ? जाति चली जायगी ?

गोरा०—जी हाँ।

वरदा०—आप जाति पाँतिको मानते हैं।

गोरा०—जाति क्या मेरी बनाई है उसे न मानूंगा ? जब समाज को मानता हूँ तब जातिको भी जरूर मानता हूँ।

वरदासुन्दरी—तो समाजकी सभी बातें माननी ही होती है ?

गोरा०—जी हाँ, न मानना समाज तोड़ना हुआ।

वरदा०—समाज तोड़नेमें हर्जही क्या है ?

गोरा०—जिस डाल पर सब लोग बैठे हों, उसको काट गिरानेही में क्या दोष है ?

सुचरिता मनही मन कुढ़कर बोली—माँ झूठ ।मूठ इनके साथ क्यों बहस कर रही हो ? ये हम लोगोंके हाथका छुआ न खायँगे ।

गोराने सुचरिताकी ओर एक बार देखा । सुचरिताने विनयकी ओर देखकर कुछ सन्देह मिले स्वरमें कहा—क्या आप—

विनय कभी चाय न पीता था । मुसलमानकी बनाई पावरोटी और बिस्कुट खाना भी उसने, बहुत दिन हुए, छोड़ दिया है; किन्तु आज सुचरिताके हाथकी चाय कैसे न पियेगा । उसने कहा—हाँ, क्यों न पिऊँगा ! यह कहकर उसने गोराके मुंहकी ओर देखा । गोराके होठोंमें कुछ व्यङ्गकी हँसी दिखाई दी । विनयको चाय पीनेमें कुछ अच्छी न लगी । किन्तु उसने पीना न छोड़ा । वरदासुन्दरीने मनही मन कहा—अहा, यह विनय लड़का बड़ा अच्छा है ।

तब वह गोराकी ओर से मुंह फेरकर विनयकी ओर स्नेह दृष्टिसे देखने लगी । वह देखकर परेश बाबू धीरे-धीरे अपनी कुरसी खिसकाकर गोराके पास ला उसके साथ बातचीत करने लगे ।

इसी समय रास्तेमें से चीना बादामवाला गरम चीनाबादामकी आवाज लगाता हुआ जा रहा था । चीना बादाम का नाम सुनते ही लीलावती ताली बजाती हुई उठ खड़ी हुई और बोली—सुधीर भैया चीना बादामवालेको पुकारो ।

यह सुनतेही छतके बरामदेसे जाकर सतीश चीनाबादाम वालेको पुकारने लगा ।

इतनेमें इस मंडलमें एक सज्जन और वहाँ आकर उपस्थित हुए । सबने पानू बाबू कहकर उनसे सम्भाषण किया पर उनका असली नाम हारान चन्द्र नाग है । समाजमें इनकी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ताके कारण इनका विशेष यश फैला है । यद्यपि स्पष्ट रूपसे कोई यह बात नहीं कहता था, तथापि इन्हींके साथ सुचरिता के व्याह होनेकी भावना लोगोंके मनमें

न जाने क्यों बनी है। पानू बाबूका हृदय सुचरिताकी ओर आकृष्ट था, इसमें किसीको कुछ सन्देह नहीं था और इसीसे सखियाँ सुचरिताके साथ हँसी किया करती थीं।

पानू बाबू हरिश्चन्द्र स्कूलमें मास्टरी करते थे। वरदासुन्दरी उन्हें स्कूलका मास्टर जानकर उनपर कुछ विशेष श्रद्धा नहीं रखती थी। वह अपनी चेष्टासे बराबर दिखाती कि पानू बाबू जो उसकी किसी लड़की पर अनुराग प्रकट करनेका साहस नहीं करते, सो वह अच्छा ही करते हैं। उसके भावी जमाता लोग डिप्टी मैजिस्ट्रेटी लक्ष्यबेधरूपी अत्यन्त कठिन प्रणसे बँधे हैं अर्थात् वह अपने जमाईके योग्य उसीको चुनेगी जो कम से कम डिप्टी होनेकी हैसियत रखता होगा।

सुचरिताको पानू बाबूके आगे एक प्याला चाय रखते देख लावण्य दूरसे उसके मुँहकी ओर देख कुछ मुँह टेढ़ा करके हँसी। वह हँसी विनयसे छिपी न रही। बहुत थोड़े समयमें ही दो-एक बातोंमें विनयकी दृष्टि बड़ी तेज और सतर्क हो गई है। किसी चीजको देखकर उसके तत्त्वावधानमें पहले वह इतना चतुर न था।

ये हारान बाबू और सुधीर इस घरकी लड़कियोंके साथ बहुत दिनोंसे परिचित हैं और इस परिवारके साथ ऐसे मिल-जुल गये हैं कि ये इन लड़कियोंके बीच परस्पर इङ्गितके विषय हो पड़े हैं। यह देखकर विनयके हृदय में विधाता का अविचार गड़ने लगा।

इधर हारान बाबूके आगमनसे सुचरिताका मन कुछ आशान्वित हो उठा। गोराको किसी तरह तर्कमें हरा दे तो सुचरिता को प्रसन्नता हो। अन्य समय हारानबाबूके मत-सम्बन्धी वाद-विवादसे वह कई दफे खफा हो चुकी है किन्तु आज इन तर्क वीरको देखकर उसने बड़ी खुशीके साथ चाय और पावरोटी देकर उनका सत्कार किया।

परेश बाबूने कहा—पानू बाबू ये हमारे—

हारान—मैं इनको भली भाँति जानता हूँ। ये किसी समय हमारे ब्राह्मसमाज के बड़े उत्साही युवक थे।

यह कह कर और गोराके साथ कुछ गप शप न कर हारान बाबूने चायके प्याले की ओर मन लगाया।

उस समय दो एक इने गिने बङ्गाली सिविल सर्विस परीक्षा में उत्तीर्ण होकर इस देश में आये थे। सुधीरने उन्हींमें से एक व्यक्ति की अभ्यर्थना की बात छेड़ी। हारान बाबूने कहा—परीक्षा में बङ्गाली चाहे कितना ही पास करलें, किन्तु उनके द्वारा कोई काम न होगा।

कोई बङ्गाली मैजिस्ट्रेट या जज जिले का भार लेकर कभी काम न चला सकेगा, इसको साबित करनेके लिये हारान बाबू बङ्गालियोंके चरित्र-सम्बन्धी नाना दोष और दुर्बलताकी व्याख्या करने लगे।

सुनते-सुनते गोराकी भौंहें चढ़ गईं, मुँह लाल होगया! उसने अपने सिंहनादको यथा साध्य रोककर कहा—यदि सत्य ही यह आपका मत है तो आप आरामसे कुरसी पर बैठे पाव रोटी किस मुँहसे चबा रहे है?

हारानबाबूने भौंहें सिकोड़कर कहा—तो आप क्या करनेको कहते हैं?

गोरा०—हो सके तो बङ्गालियों के चरित्रगत दोषों को दूर कीजिए, नहीं तो गले में फाँसी लगाकर मर जाइए। हमारी जाति के द्वारा कभी कुछ न होगा, यह बात क्या यों ही सहज कह देने की है? यह बात कहते समय आपके गले में रोटी क्यों न अटक गई?

हारानबाबू—सच बोलने में क्या डर है?

गोरा—आप क्रोध न करें, यदि यह बात आप यथार्थ में ही सच-सच जानते तो इस प्रकार अहंकारसे न बोलते। आप हृदयसे इस बात को असत्य जानते हुए भी किसी कारणवश सत्य मान बैठे हैं, इसी से इतनी शीघ्र यह बात आपके मुँहसे निकल गई। हारानबाबू, झूठ पाप है झूठी निन्दा और भी बड़ा पाप है; अपनी जातिकी झूठी शिकायतसे बढ़कर तो शायद ही कोई पाप होगा।।

हारानबाबू क्रोधसे अधीर हो उठे। गोराने कहा—क्या आप ही एक

अपनी समग्र जातिकी अपेक्षा बड़े हैं ? आप क्रोध करेंगे, और हम लोग आपके मुँह से अपने बाप दादों की निन्दा सुनेंगे !

इसके बाद हारानबाबूको चुप होकर बैठे रहना और भी कठिन हो गया। वह और भी बुलन्द आवाजसे बङ्गालियोंकी निन्दा करने में प्रवृत्ति हो गये। उन्होंने बङ्गाली समाजकी अनेक प्रकारकी कुप्रथाओं का वर्णन करके कहा कि इन कुप्रथाओं के रहते बङ्गाली जाति की उन्नतिकी कोई आशा नहीं।

गोराने कहा—आप जिसे कुप्रथा कहते हैं वह केवल अँग्रेजी किताबें पढ़कर कहते हैं आप उस सम्बन्धमें स्वयं कुछ भी नही जानते। अँगरेजों की समस्त कुप्रथाओंकी भी जब अब ठीक इसी तरह अवज्ञा करें तब आप इस सम्बन्धमें बात करें।

परेश बाबूने इस प्रसङ्गकी बातें बन्द कर देनेकी चेष्टाकी, किन्तु क्रोधमें भरे हारान बाबू निवृत्त न हुए। इसी समय सूर्यास्त हो गया? पश्चिम आकाश में सर्वत्र लालिमा छा गई। चिड़ियोंने अपने घोंसलोंका रास्ता लिया। इस जातीय समालोचनासे विनयके मनमें भाँति-भाँतिके बेसुरे तार बजने लगे। परेश बाबू अपनी सायङ्कालीन उपासनाके लिए छतसे उतर कर बागके बीच एक पत्थरके बने चबूतरे पर जा बैठे।

वरदासुन्दरीका मन जैसे गोरासे फिर गया था वैसे ही वह हारान बाबूसे भी कुछ विशेष प्रसन्न न थी। इन दोनोंका वाद प्रतिवाद जब उसे एकदम असह्य हो गया तब उसने पुकारकर कहा—चलो विनय बाबू, हम लोग उस कमरे में चलें।

वरदासुन्दरीका यह सस्नेह पक्षपात स्वीकार करके विनयको छत छोड़ कर उसकासाथ देना पड़ा। वरदासुन्दरीने अपनी लड़कियोंको बुला लिया और अब वरदासुन्दरी विनयको अपनी बेटियोंका गुण सुनाने लगी। लावण्यसे कहा—बेटी उठो, तुम अपनी वह कापी लाकर विनय बाबूको दिखाओ तो।

घर में नये आने वाले लोगोंको कापी दिखानेका लावण्यको अभ्यास

सा हो गया था। किसी नये व्यक्तिके आते ही वह समझ जाती थी कि वह कापी दिखलानी होगी, बल्कि वह इसके लिये प्रतीक्षा करने लगी थी। आज तर्ककी बातोंमें उलझ जानेसे वह उदास हो गई थी।

विनयने कापी खोलकर देखा, उसमें कवि सूर और लांगफेलो की अँगरेजी कविता लिखी थी। अक्षर खूब बना बनाकर लिखे गये थे। कविताओं के शीर्षक और आरम्भ के अक्षर रोमन अक्षरों में लिखे गये थे।

यह लिपि देखकर विनयके मनमें बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन दिनों सूरकी कविताको कापीमें हाथसे लिख डालना स्त्रियोंके लिए कम बहादुरीकी बात न थी। विनयके मनको यथार्थ रूपसे समाविष्ट देख वरदासुन्दरीने अपनी मँझली बेटी ललिता से कहा—मेरी लक्ष्मी, बेटी ललिता, तुम्हारी वह कविता—

ललिता कठोर स्वरमें बोल उठी—"नहीं माँ, यह मुझसे न होगा, मुझे ठीक-ठीक याद भी तो नहीं है।" यह कहकर वह एक खिड़कीके पास खड़ी हो सड़ककी ओर देखने लगी।

वरदासुन्दरीने विनयको समझा दिया, इसको सब कुछ याद है, किन्तु इसकी प्रकृति बड़ी गूढ़ है। अपने गुणको छिपाये रहती है। किसीके निकट अपनी विद्याका प्रकाश करना नहीं चाहती। यह कहकर उसने ललिताकी विचित्र विद्या-बुद्धिके परिचयके प्रमाणस्वरूप दो एक घटनाएँ विस्तार पूर्वक कह सुनाई कि ललिता बचपन से ही ऐसी है। यह किसीके साथ बहुत बोलचाल नहीं करती। शोकके अवसर पर भी शायद किसीने इसकी आँखोंमें आँसू न देखे होंगे। इस सम्बन्धमें पिताके साथ इसका सादृश्य बताया गया अर्थात् इस लड़कीमें यह गुण पिताके अनुरूप ही है।

अब लीलाकी बारी आई। उससे कुछ पढ़नेका अनुरोध करतेही वह पहले खूब जोरसे खिलखिला उठी, पीछे ग्रामोफोनकी तरह बिना कुछ अर्थ समझे "Twinkle-Twinkle stars" कविता एक ही दममें पढ़ गई।

अब संगीत विद्याका परिचय देनेका समय आया जान ललिता उस कमरेसे बाहर हो गई।

बाहरकी छत पर तब खूब जोर-शोरकी बहस चल रही थी। हारान बाबू मारे क्रोधके तर्क छोड़कर गाली देने पर उद्यत हो गये थे। उनकी असहिष्णुतासे लज्जित और क्रुद्ध होकर सुचरिताने गोराका पक्ष ले लिया यह भी हारानके लिये कुछ सान्त्वना या शान्तिदायक न हुआ।

सन्ध्याके अन्धकार और सावनके बादलोंसे आकाश घिर गया। बेला चमेली की मालाओंसे सड़कको सुवासित करता हुआ फेरीवाला चला गया। सामनेकी सड़क पर मौलसिरीके पत्तों पर जुगनुए जगमगाने लगीं। पासके बागीचेवाले तालाब पर गहरा अन्धकार छा गया।

सन्ध्याकी ब्रह्मोपासना करके परेश बाबू फिर छत पर आ उपस्थित हुए। इनको देखकर गोरा और हारान बाबू दोनों लज्जित होकर चुप हो गये। गोरा उठकर खड़ा हुआ और बोला—रात हो गई, अब मैं जाता हूँ

विनय भी कमरेसे निकल कर छत पर आया। परेश बाबूने गोरासे कहा—जब तुम्हारी इच्छा हो, यहाँ आया करो। कृष्णदयाल मेरे भाईके बराबर हैं। उनके साथ मेरा मत नहीं मिलता, भेंट भी नहीं होती, पत्र व्यवहार भी बन्द है किन्तु लड़कपनकी मित्रता रक्तमाँस में मिल जाती है, वह क्या कभी छूट सकती है? कृष्ण बाबूके सम्पर्कसे तुम्हारे साथ मेरा बहुत निकट का सम्बन्ध है।

परेश बाबूके शान्ति और स्नेह भरे स्वरसे गोराका इतनी देर के तर्कसे सन्तप्त हृदय मानो ठंडा हो गया। उसके हृदयकी जलन बुझ गई। पहले आकर गोराने परेश बाबूको कुछ विशेष श्रद्धा या भक्तिसे अभिवादन न किया था। किन्तु जाते समय उसने सच्ची भक्तिके साथ उनको प्रणाम किया। चलते समय गोराने सुचरितासे कुछ भी न कहा। सुचरिताने, जो सामने खड़ी थी, यह स्वीकार करना ही एक प्रकारकी अशिष्टता समझी। विनयने परेश बाबूको विनयपूर्वक प्रणाम करके सुचरिताकी ओर देखा

और उसे नमस्कार करके वह झटपट गोराके पीछे हो लिया।

हारान बाबू इस समय वहाँ न थे। वह पहले ही वहाँ से हट कर कमरेके भीतर चले गये और टेबुलके ऊपरसे एक ब्रह्म संगीत की पोथी ले उसके पन्ने उलटने लगे।

विनय और गोराके चले जाने पर हारान बाबू फिर झट छत पर आये। उन्होंने परेश बाबूसे कहा—देखिये सभीके साथ बहू-बेटियों को बातचीत करने देना मैं अच्छा नहीं समझता।

सुचरिता पहले ही से भीतर ही भीतर बहुत खफा थी। इसीसे वह अपने मनको रोक न सकी, बोली—अगर बाबूजी इस नियमको मानते तब तो आपके साथ भी हम लोगोंकी बातचीत न हो सकती।

हारान०—बातचीत या मेल-मुलाकात अपने समाज के भीतर ही होना ठीक है।

परेश बाबूने हँसकर कहा—आप पारिवारिक अन्तःपुरको और कुछ बड़ा करके सामाजिक अन्तःपुर बनाना चाहते हैं। किन्तु मैं समझता हूं कि नाना मतके सज्जनोंसे लड़कियोंका मिलना उचित ही है इससे उनकी बुद्धिका अच्छा विकास होता है। इसमें बाधा देनेसे वे संसारकी बहुतेरी अच्छी बातोंको नहीं जान सकतीं। इसमें भय या लज्जाका कोई कारण नहीं देखते।

हारान—भिन्न मतके लोगोंके साथ बहू-बेटियाँ न मिलें, यह मैं नहीं कहता, किन्तु इनके साथ कैसा व्यवहार करना होता है, उस शिष्टताको तो ये लोग नहीं जानते।

परेश—नहीं, नहीं! यह क्या कहते हैं! आप जिसे भद्रताका अभाव कहते हैं, यह एक संकोचमात्र है। पराई बहू-बेटियों के साथ बातचीत करनेमें बहुत लोग सकुचाते हैं। स्त्रियोंके साथ हेलमेल किये बिना वह संकोच मिट नहीं सकता।

उस दिन गोराको बहसमें हराकर सुचरिताके सामने अपनी विजय-पताका उड़ानेकी हारान बाबूको बड़ी इच्छा थी। शुरू में सुचरिताको भी इसकी आशा थी। पर दैवयोगसे ठीक इसका उलटा हुआ। धर्म-विश्वास और सामाजिक मतमें सुचरिताके साथ गोराका मेल न था, किन्तु स्वदेशके प्रति ममता और स्वजाति के लिए दुःखका अनुभव उसके लिए स्वाभाविक था। यद्यपि देशकी बातोंके विषय में वह कभी विशेष आलोचना नहीं करती थी तो भी उस दिन अपनी जातिकी निन्दा सुनकर गोरा जब एकाएक गरज उठा तब सुचरिताके मनमें उसके अनुकूल प्रतिध्वनि होने लगी। ऐसे जोरसे ऐसे दृढ़ विश्वासके साथ देशके सम्बन्धमें उसके आगे किसीने आज तक ऐसी बात न कही थी।

इसके बाद जब हारान बाबूने गोरा और विनयके परोक्षमें सामान्य ईर्ष्या वश उन पर अभद्रताका दोषारोपण किया तब भी सुचरिताको इस अन्यायके विरुद्ध गोरा और विनयका ही पक्ष लेना पड़ा।

इससे यह न समझना चाहिये कि गोराके विरुद्ध सुचरिताके मनका विद्रोह एकदम शान्त हो गया। नहीं, गोराका गले पड़ा उद्धत हिन्दुत्व अब भी सुचरिताके मनमें आघात पहुँचा रहा था। वह एक प्रकारसे यह समझ रही थी कि इस हिन्दूपनके भीतर अवश्य कुछ प्रतिकूलताका भाव है। यह अपने भक्ति विश्वास में पर्याप्त नहीं है। यह दूसरेको दबानेके लिए सदा ही उग्र भावसे उद्यत रहता है।

उस दिन शामको सब बातोंमें, सब कामोंमें भोजन करनेके समय लीलासे बात करते समय सुचरिताके मनमें किसी तरहकी एक पीड़ा कष्ट देने लगी। वह किसी तरह उसे दूर न कर सकी। काँटा किस जगह गड़ा

है यह जानने पर काँटा निकाला जा सकता है। मनके काँटेको खोज निकालनेके लिए वह रातको छत पर अकेली बैठी रही।

उसने अपने मनके अकारण तापको उसी अन्धकारकी निर्मल धारासे धो डालनेकी चेष्टाकी, किन्तु कोई फल न हुआ। अपने हृदयके एक अनिर्दिष्ट बोझके लिये उसने रोना चाहा, किन्तु रुलाई न आई।

एक अपरिचित युवक माथेमें टीका लगाकर आया, किसी ने उसे तर्कमें हराकर उसका घमंड न चूर किया इसीलिए सुचरिता इतनी देर तक खेद कर रही है। फिर उसने सोचा कि इससे बढ़कर हँसीकी बात और क्या हो, सकती है, इसीलिये इस कारणको सर्वथा असम्भव जान उसने मनसे दूर कर दिया। तब उसे असल कारण याद हो आया और याद होते ही उसे बड़ी लज्जा हुई। आज तीन-चार घंटे तक सुचरिता उस युवक के सामने ही बैठी थी और बीच बीच में उसका पक्ष लेकर कुछ बोलती भी थी; परन्तु उस युवकने एकबार भी उसकी ओर न देखा। जाते समय भी उसने सुचरिता की ओर नजर तक नहीं डाला। इस कठोर उपेक्षाने सुचरिताके मनमें गहरी चोट पहुँचायी इसमें सन्देह नहीं। पराये घरकी स्त्रियोंके साथ मिलने जुलनेका अभ्यास न रहनेसे जो एक प्रकार का संकोच उत्पन्न होता है उस सकोचका परिचय विनयके व्यवहार में पाया जाता है पर उस संकोचके भीतर कुछ नम्रता भी है। किन्तु गोराके आचरणमें उस संकोचका चिह्नमात्र भी न था। उसकी वह कठोर और प्रबल उदासीनता सहन करना या उसको हँसीमें उड़ा देना सुचरितके लिए आज क्यों ऐसा असम्भव हो गया? इतनी बड़ी उपेक्षाके समाने भी उसने जा अपनेको न रोक कर तर्कमें योग दिया था इसलिए अपनी वाचालताके कारण वह मरी जा रही थी। हारान बाबूके अनुचित तर्कसे जब सुचरिता एक-बार अत्यन्त उत्तेजित हो उठी थी तब गोराने उसकी ओर देखा था। उस दृष्टि में संकोचकी गन्धमात्र न थी। किन्तु उस दृष्टि के भीतर क्या था यह भी जानना कठिन था। तब क्या वह मन ही मन कह रहा था—यह स्त्री बड़ी निर्लज्ज है अथवा इसको अभिमान कुछ काम नहीं

है ? पुरुषोंके वाद विवादमें यह बिना बुलाये योग देने आती है। अगर उसने ऐसा ही सोचा हो तो इसमें क्या आना जाना है ? भले ही इसमें कुछ हानि लाभ की बात न हो तो भी न मालूम सुचरिता क्यों मन ही मन विशेष कष्टका अनुभव करने लगी। इन सब बातोंको मनसे टाल देनेके लिए उसने बड़ी चेष्टा की परन्तु किसी तरह वह टाल न सकी। गोराके ऊपर उसका क्रोध बढ़ने लगा। गोराको कुसंस्कार-ग्रस्त उद्धत युवक समझ कर मनके सर्वतोभावसे उसने निरादर करना चाहा, किन्तु उस कनक-भूधराकार शरीरका वज्र-कण्ठ पुरुषकी उस निःसङ्कोच दृष्टिका अनुसरण होते ही सुचरिता मन ही मन सकुचा गई। वह किसी तरह उस पुरुष-सिंहके आगे अपने गौरवकी रक्षा न कर सकी।

इस प्रकार मनके साथ [illegible] रात बहुत बीत गई। चिराग बुझाकर घरके सब लोग सोने गये। सदर दर्वाजा बन्द होनेका शब्द सुन पड़ा। उससे ज्ञात हुआ कि दरवान भोजन करके अब सोने को जा रहा है। इसी समय ललिता अपने रातके कपड़े पहिनकर छत पर आई। सुचरिता से बिना कुछ कहे वह उसके पास से जा छतके एक कोनेमें रेलिंग पकड़कर खड़ी हुई। सुचरिता मन ही मन कुछ हँसी, वह समझ गई कि ललिताने मुझ पर कोप किया है। ललिताके साथ आज उसके सोनेकी जो बात थी सो एकदम वह भूल गई। किन्तु भूल जानेकी बात कहनेसे ललिताके निकट अपराध क्षमा नहीं हो सकता। क्योंकि भूल जाना ही उसके आगे सबसे बढ़कर भारी दोष है। वह समय पर प्रतिज्ञाकी बात याद दिला देनेवाली लड़की नहीं। इतनी देर तक वह पत्थरकी तरह कठोर होकर बिछौने पर पड़ी थी। जितना ही समय बीतता जाता था उतना ही उसका क्रोध बढ़ता जाता था। आखिर जब क्रोध नितान्त असह्य हो गया तब वह चारपाईसे उठकर चुपचाप यह जतानेको आई कि मैं अब तक जाग रही हूँ।

सुचरिता कुरसीसे उठ कर धीरे-धीरे ललिताके पास जाकर उसके गलेसे लिपट गई और बोली—मेरी लक्ष्मी, बहिन ललिता, क्रोध न करो।

ललिताने उसका हाथ हटाकर कहा—नहीं, क्रोध क्यों करूँगी ? तुम बैठो ना ।

सुचरिताने उसका हाथ पकड़ कर खींचा और कहा—चलो बहिन सोने चलें ।

ललिता कुछ उत्तर न दे चुपचाप खड़ी रही । अन्तमें सुचरिता उसको जबर्दस्ती खींचकर सोनेके कमरे में ले गई ।

ललिताने अनख कर कहा— तुमने क्यों इतनी देर की ? जानती नहीं, ग्यारह बज गये । मैं बड़ी देर तक तुम्हारे आनेकी राह देखती रही ! तुम न आईं तब हार कर मैं उठी और छत पर गई । अब तो तुम सो रहोगी ।

सुचरिताने ललिताको अपनी छातीसे लिपटा कर कहा—बहिन, आज मुझसे भारी अन्याय हो गया क्षमा करो ।

इस प्रकार सुचरिताके अपराध स्वीकार करने पर ललिता के मनसे क्रोध जाता रहा । वह एकदम विनीत होकर बोली—बहिन तुम इतनी देर तक अकेली बैठकर किसकी बात सोच रहीं थीं ? हारान बाबू की बात तो नहीं ?

सुचरिता उसके गालमें हलका सा तमाचा मार कर बोली—दूर । हारान बाबूसे ललिता की नहीं बनती थी, यहाँ तक कि उसकी अन्य बहिनोंकी तरह हारान बाबूकी बात छोड़कर सुचरिता के साथ ठठोली करना भी ललिताके लिये असाध्य था । हारान बाबू सुचरिता से व्याह करना चाहते हैं, इस बातका स्मरण होनेसे भी उसे क्रोध हो जाता था ।

कुछ देर चुप रह कर ललिता फिर बोली - अच्छा बहिन, विनय बाबू तो अच्छे जान पड़ते हैं ?

सुचरिता के मनका भाव जानने ही के अभिप्रायसे शायद प्रश्न किया गया था ।

सुचरिता—हाँ, विनय बाबू अच्छे क्या, बड़े अच्छे हैं ।

ललिताने जिस आशासे यह पूछा था, वह पूर्ण रूपसे फलित न हुई ! तब उसने फिर कहा—अच्छा, कहो तो बहिन, गौरमोहन कैसा था ? मेरे मनमें तो वह अच्छा न लगा ! उसका चेहरा और भेष विचित्र था । तुम्हें वह कैसा जान पड़ा ?

सुचरिता—उसके रोम रोम में हिन्दूपन भरा था ।

ललिता—नहीं, नहीं, हमारे मौसा महाशय भी तो बड़े भारी हिन्दू हैं परन्तु उनकी चाल और ही प्रकार की है । इसकी चाल कैसी है, यह मैं न जान सकी ।

सुचरिता ने हँसकर कहा—"कैसी ही हो !" यह कहते ही उसके ऊँचे चमकीले माथे पर दिये हुए तिलकका स्मरण कर सुचरिता को क्रोध हुआ । क्रोध करने का कारण यही था कि इस तिलक के द्वारा गोराने मानो अपने माथे पर बड़े-बड़े अक्षरों में यह लिख रक्खा है कि मैं तुम लोगों से अलग हूँ । यदि उस विभिन्न भावके प्रचण्ड अभिमानको सुचरिता मिट्टीमें मिला सकती तभी उसके अङ्गकी ज्वाला मिटती ।

धीरे धीरे करके दोनों सो गईं । जब रातके दो बज गये तब सुचरिता ने जागकर देखा, बाहर खूब पानी बरस रहा है बीच बीचमें उसकी मसहरीसे होकर बिजली की छटा चमक जाती है । घरके कोनेमें जो चिराग रक्खा था वह बुझ गया । उस रातके सन्नाटे गाढ़े अन्धकार और अविश्राम वर्षाके झर-झर शब्दसे सुचरिताके हृदयमें एक प्रकारकी पीड़ा सी मालूम होने लगी । उसने कभी इस करवट, और कभी उस करवट बदल कर सोनेकी चेष्टा की । पास ही ललिताको गहरी नींदमें निमग्न देख उसे ईर्ष्या हुई, पर किसी तरह उसको नींद न आई । अन्तमें वह रूठकर बिछौनेसे उठी और बाहर आई । खुली खिड़कीसे पास खड़ी होकर सामने छतकी ओर देखने लगी । बीच-बीचमें हवाके झोंकेसे पानीके छींटे उसके बदन पर पड़ रहे थे । घूम-फिरकर फिर वही सन्ध्या समय की सब बातें उसके मनमें एक-एक कर आने लगीं । सूर्यास्त समय

के रागसे रञ्जित गोराका चमकता हुआ चेहरा स्पष्ट चित्रकी भाँति उसके स्मृति-पथ पर प्रकट हो गया। गोराका गम्भीर कण्ठस्वर उसे स्पष्ट सुनाई देने लगा—"आप जिन्हें अशिक्षित समझते हैं मैं उन्हींके दलमें हूँ। आप जिसे कुसंस्कार कहते हैं मैं उसीको संस्कार कहता हूँ। जब तक आप देशको प्रिय न समझेंगे, देशके लोगोंके साथ एक जगह आकर खड़े न होंगे, जब तक उनके दुःखमें सहानुभूति प्रकट न करेंगे तब तक मैं अपके मुँहसे देशकी निन्दाका एक अक्षर भी न सुन सकूँगा।" इसके उत्तरमें हारान बाबूने कहा—"ऐसा करनेसे देशका सुधार कैसे होगा?" गोराने गरजकर कहा—"सुधार! सुधार दूसरी बात है। सुधारसे भी बढ़कर स्वदेश-प्रेम है—स्वदेशी वस्तुओं पर श्रद्धा है। जब हम लोगोंका एक मन होगा, एक विचार होगा तब समाजका सुधार आप ही आप हो जायगा। आप तो अलग होकर देशको अनेक खण्डोंमें बाँटना चाहते हैं। इससे देशका सुधार होना कब संभव है। आप कहते हैं, देशके लोग कुसंस्कारसे जकड़े हैं। अतएव हम सुसंस्कार दलवाले अलग हो रहेंगे। मैं यह कहता हूँ कि मैं किसीकी अपेक्षा श्रेष्ठ होकर किसीसे अलग न रहूँगा, यह मेरी बड़ी इच्छा है। इसके बाद एक हो जाने पर कौन संस्कार रहेगा और कौन संस्कार न रहेगा, यह मेरा देश जाने या देशके जो विधाता हैं वे जानें।" हारान बाबूने कहा—"देश में ऐसी कुप्रथा और कुसंस्कार छाया है जो एक होने नहीं देता।" गोराने कहा—"यदि आप यह सोचें कि पहले उन सब प्रथाओं और संस्कारोंको एक एक कर दूर कर लेंगे तब देश एक होगा, तो यह आपकी समझ वैसी ही है जैसे कोई समुद्रको उलचकर उस पार जाना चाहे। 'अपमान और अहङ्कार को करके नम्र होकर सबको अपना सा समझना इस सर्व प्रियताके सामने सैकड़ों त्रुटियाँ और अनैक्यताएँ झख मारेंगी। सभी देशोंके समाजोंमें कुछ त्रुटि और अपूर्णता अवश्य है किन्तु देशके लोग जबतक स्वजातिके प्रेम-सूत्रमें बँधे रहते हैं तब वे त्रुटियाँ कुछ विशेष हानि नहीं पहुँचा सकतीं। सड़ानेका कारण हवा में है।

जीवित दशामें हम उससे बचे रहते हैं किन्तु मरते ही सड़ जाते हैं। यदि आपमें स्वदेशानुराग नहीं है तो आपसे देशकी त्रुटियों का संशोधन होना कदापि सम्भव नहीं। इस प्रकार समाजसे विरुद्ध हो आप संशोधन करना चाहेंगे तो यह बात हम लोग सह्य न करेंगे, चाहे आप लोग हों या पादरी हों।' हारान बाबूने कहा—'क्यों न कीजिएगा ?" गोराने कहा—"न करनेका कारण है—माँ बापकी नसीहत सह्यकी जाती है किन्तु पहरेवाले नौकरकी नसीहतमें फलकी अपेक्षा अपमान बहुत बढ़कर है। वैसा संशोधन स्वीकार करनेमें मनुष्यत्व नष्ट होता है। पहले आप आत्मीय हो लें पीछे संशोधक हों, नहीं तो आपके मुँहकी भली बातसे भी हमारा अनिष्ट ही होगा।" इस प्रकार गोरा और हारान बाबू के बीच जो बातें हुई थीं वे एक एक कर सब सुचरिताके मनमें आने लगीं। और इसके साथ साथ उसे एक अनिर्दिष्ट दुःखका अनुभव भी होने लगा। थककर वह बिछौने पर लौट आई और इन चिन्ताओंको मन से दूर कर सोनेकी चेष्टा करने लगी पर उसे नींद न आई।

[१२]

विनय और गोरा दोनों परेश बाबूके घरसे निकल कर सड़क पर आये। विनयने गोराको तेजीसे चलते देखकर कहा—गोरा, जरा धीरे धीरे चलो भाई—तुम्हारे दोनों पैर हमारे पैरोंसे बहुत बड़े हैं। अगर अपनी चाल जरा कम न करोगे, तो तुम्हारे साथ चलने में मैं तो थक जाऊँगा।

गोराने जाते-जाते कहा—मैं अकेले ही जाना चाहता हूँ। मुझे आज बहुत कुछ सोचना विचारना है!

इतना कहकर वह अपनी स्वाभाविक चालसे तेजीके साथ चला गया।

विनयके हृदयको चोट लगी। उसने आज गोरा के विरुद्ध विद्रोह करके नियमको तोड़ा है। इसके बारे में अगर गोरा उसका तिरस्कार करता तो वह खुश होता और जैसे उसकी छाती पर का बोझा हलका हो जाता।

गोरा जो विनयका साथ छोड़ कर नाराज हो कर चला गया, उस नाराजगीको विनय अन्याय नहीं समझ सका। इन दोनों मित्रोंके बहुत दिनोंके सम्बन्ध में इतने दिन बाद आज सचमुच विघ्न उपस्थित हुआ है।

बरसातकी रातके सन्नाटेके अन्धकारको कँपा कर बीच-बीच में बादल गरज उठता था। विनयके मन में एक बोझ सा जान पड़ने लगा। उसे जान पड़ा, वह इतने दिनसे जिस रास्ते में चला आ रहा था, आज उसने उसे छोड़ कर और एक नई राह पकड़ी है। इस अन्धकारके बीच गोरा कहाँ गया और वह कहाँ चला जा रहा है।

दूसरे दिन सबेरे उठने पर विनयका मन हलका हो गया। रातको कल्पनाके द्वारा उसने अपनी वेदना को अनावश्यक अत्यन्त बढ़ा दिया था। सबेरे उसे गोरा के साथ मित्रता और परेशबाबूके परिवारके साथ

मेल जोल परस्पर उतना विरोधी नहीं जान पड़ा ! मामला क्या ऐसा ही था, बात क्या ऐसी ही चिन्ताकी थी । कभी नहीं ! यों कह कर कल रातकी मानसिक पीड़ाका ख्याल करके आज विनय आप अपनी बेवकूफी पर हँसने लगा।

विनय कंधे पर एक चादर डाल कर तेजीके साथ गोराके घर में आकर उपस्थित हुआ । गोरा उस समय नीचेकी बैठक में बैठा हुआ अखबार पढ़ रहा था । विनय जिस समय रास्ते में था, तभी गोराने उसे देख लिया था । किन्तु आज विनयके आने पर भी अखबार के ऊपरसे गोराकी दृष्टि नहीं हटी । विनयने आते ही कुछ कहे सुने बिना चटसे गोराके हाथसे अखबार छीन लिया।

गोराने कहा—शायद तुम भूलते हो—मैं हूँ गौरमोहन—एक कुसंस्कारोंसे घिरा हुआ हिन्दू।

विनयने कहा—भूलते शायद तुम्ही हो । मैं हूँ श्रीयुत विनय—उक्त गौरमोहनके कुसंस्कारोंसे घिरा हुआ मित्र।

गोरा—किन्तु गौरमोहन इतना बड़ा बेहया है कि वह अपने कुसंस्कारके लिये कभी किसीके आगे लज्जा का अनुभव नहीं करता।

विनय—विनय भी ठीक वैसा ही है । मगर हाँ फर्क इतना ही है कि वह अपने संस्कारको लेकर दूसरे पर हमला करने नहीं जाता।

देखते ही देखते दोनों मित्रों में करारी बहस छिड़ गई । यहाँ तक कि अड़ोसी-पड़ोसी और महल्ले भर के लोग समझ गये कि आज गोरासे विनयकी भेंट हुई है।

गोराने कहा अच्छा तुम परेश बाबूके घर आते जाते हो; यह बात उस दिन मेरे आगे अस्वीकार करने की क्या जरूरत थी ?

विनय—किसी जरूरतके कारण मैंने स्वीकार नहीं किया था। मैं आता जाता था ही नहीं और इसीसे आना जाना अस्वीकार किया था । इतने दिनके बाद कल ही पहले पहल मैंने उस घर में पैर रक्खा था।

गोरा—मुझे सन्देह होता है कि तुम अभिमन्यु की तरह प्रवेश करने की राह जानते हो—निकलने की राह नहीं जानते।

विनय—सो—हाँ—यह तुम्हारा खयाल ठीक भी हो सकता है। यही शायद मेरा जन्मका स्वभाव है मैं जिसे श्रद्धा या प्यार करता हूँ, उसे फिर छोड़ नहीं सकता। मेरे इस स्वभाव का परिचय तुमने भी पाया है।

गोरा—तो अबसे वहाँ बराबर आना जाना जारी रहेगा?

विनय—ऐसी तो कोई बात नहीं है कि अकेले मेरा ही आना जाना जारी रहेगा। तुममें भी तो चलने फिरनेकी शक्ति है, तुम एक दम स्थावर पदार्थ तो हो ही नहीं।

गोरा—खैर, मैं तो आऊँ जाऊँगा, लेकिन तुम्हारे जो लक्षण मैंने देखे, उनसे तो यही जान पड़ता है कि तुम बिल्कुल जड़-मूलसे ही जाने को तैयार हो। गरम चाय कैसी लगी थी?

विनय—कुछ कड़ी लगी थी।

गोरा—तो फिर?

विनय—न पीना उससे भी कड़ा लगता।

गोरा—तो समाजके नियमों का पालन क्या केवल भलमन्सी पालन मात्र है।

विनय—सब समय यह बात नहीं है। किन्तु देखो गोरा समाज के साथ जहाँ हृदयकी टक्कर हो, वहाँ पर मेरे लिए...।

गोरा अधीर हो उठा। उसने विनयको अपनी बात पूरी ही नहीं करने दी। बीच ही में गरजकर कहने लगा—क्या कहा—हृदय! तुम समाजको छोटा, तुच्छ, देखते हो, इसीसे बात बातमें समाजके साथ तुम्हारे हृदयकी टक्कर होती है। किन्तु समाजको चोट पहुँचानेसे उसकी वेदना कितनी दूर तक जाकर पहुँचती है, इसका जो तुम अनुभव करते, तो तुम्हे अपने इस हृदयकी बात उठाते लज्जा मालूम होती। परेश बाबू की लड़कियोंके मनको जरा सी चोट पहुँचाने से तुमको बड़ा कष्ट

मालूम होता है, किन्तु उतने के लिए जब तुम अपने सम्पूर्ण देश को अनायास कष्ट पहुँचा सकते हो, तब तुमसे कहीं अधिक कष्ट मालूम होता है।

विनय—तो सच बात कहूँ भाई गोरा, एक प्याली चाय पीने से अगर वह सम्पूर्ण देशको चोट पहुंचाना है, तो मेरी समझ में वह चोट ऐसी है कि उससे देश का उपकार ही होगा। उस आघातसे देशको बचाकर चला जायगा तो उससे देश अत्यन्त दुर्बल और बाबू बन जायगा।

गोरा—अजी जनाब इन सब युक्तियोंको मैं जानता हूँ। मुझे एकदम इतना नादान न समझना। किन्तु ये सब इस समय की बातें नहीं हैं। रोगी लड़का जब दवा खाना पीना नहीं चाहता तब शरीर स्वस्थ होने पर भी माँ खुद दवा खा पीकर उसे जताना चाहती है कि तेरी और मेरी एक ही दशा है। यह तो व्यक्ति की बात नहीं है - यह प्यार की बात है। प्यार अगर न रहे, तो चाहे जितनी युक्ति क्यों न हो, लड़के के साथ माता का सम्बन्ध नष्ट हो जाता है ऐसा होने पर कार्य भी नष्ट होता है। मैं भी उस चायकी प्यालीको ले कर बहस नहीं करता—किन्तु देश के साथ सम्बन्ध-विच्छेदको मैं सहन नहीं कर सकता। चाय न पीना उसकी अपेक्षा बहुत सहज है—परेश बाबू की लड़की के मन को कष्ट देना उसकी अपेक्षा बहुत छोटा है। समस्त देशके संग एकात्म रूपसे मिलना ही हम लोगोंकी इस समय की अवस्था में सब कामोंकी अपेक्षा प्रधान कार्य है—जब वह मिलन हो जायगा, तब चाय पीना चाहिए या न पीना चाहिए, इसे तर्क मीमांसाकी दो बातों में मालूम ही हो जायगा।

विनय—तब तो देखता हूँ, मेरे दूसरी प्याली चाय पीनेमें बहुत देर है।

गोरा—न, अधिक देर करनेकी दरकार नहीं है। किन्तु विनय, मुझे तब क्यों घेरते हो? हिन्दू समाजकी अनेक अप्रिय चीजोंके साथ ही

मुझे भी छोड़ देनेका समय आगया है। नहीं तो परेश बाबूकी लड़कियोंके मनको चोट पहुंचेगी।

इसी समय अविनाशने आकर बैठक में प्रवेश किया। वह गोराका शिष्य है। वह गोराके मुखसे जो सुनता है, उसीको अपनी बुद्धिके द्वारा छोटा और अपनी भाषाके द्वारा विकृत करके चारों ओर कहता फिरता है। गोराकी बातोंको जो लोग जरा भी नहीं समझ पाते, वेही अविनाशकी बातों को खूब अच्छी तरह समझते हैं, और प्रशंसा करते हैं।

विनयके ऊपर अविनाशके मनमें एक अत्यन्त ईर्षाका भाव है। इसीसे वह मौका पाते ही विनयके साथ मूर्खकी तरह तर्क वितर्क करनेकी चेष्टा करता है। विनय उसकी मूर्खतासे अत्यन्त अधीर हो उठता है—तब गोरा अविनाशके पक्षको खुद लेकर विनयके साथ बहस करने लगता है। अविनाश उस समय यही समझता है कि उसीकी युक्तियाँ जैसे गोराके मुखसे निकल रही हैं।

अविनाशके आ जानेसे गोराके साथ बात करनेमें विनयको बाधा पहुंची। तब वह उठकर ऊपर चला गया। आनन्दमयी भंडार घरके सामने बरामदेमें बैठी तरकारी काट रही थीं।

आनन्दमयीने कहा—बहुत देरसे तुम्हारी आवाज सुन रही हूँ विनय। आज इतने सवेरे कैसे आ गया? जलपान करके तो चले थे?

और दिन होता तो विनय कह देता कि नहीं, कुछ नहीं खाया-पिया, और आनन्दमयीके सामने बैठ कर उनसे माँग कर मजेसे भोजन करता। किन्तु आज उसने कहा—नहीं माँ, खाऊंगा नहीं। जलपान करके घर से आया हूँ।

आज विनयने गोराके निकट अपना अपराध बढ़ाना नहीं चाहा। परेश बाबूके साथ उसका जो संसर्ग हुआ है, उसके लिए गोराने अभी तक उसको क्षमा नहीं किया। उसे वह जैसे अपनेसे कुछ दूर ठेल रखना चाहता है, यह अनुभव करके विनय अपने मनके भीतर एक तरह के

क्लेशका अनुभव कर रहा था। विनय जेबसे चाकू निकालकर आलू छीलने बैठ गया।

पन्द्रह सोलह मिनटके बाद नीचे जाकर देखा, गोरा अविनाशको साथ लेकर चल दिया है। गोराकी बैठकमें बहुत देर तक विनय चुप बैठा रहा। फिर एक लम्बी सांस छोड़कर बाहर निकला और घर चल दिया। दोपहरको भोजनके बाद गोराके पास जानेके लिए फिर विनयका मन चंचल हो उठा। विनयने कभी किसी दिन गोराके आगे अपने को झुकाने में संकोचका अनुभव नहीं किया, किन्तु अपना अभिमान न रहने पर भी बन्धुत्व के अभिमानको धोका देना कठिन है। परेश बाबूके निकट गोराके प्रति इतने दिन की निष्ठासे अपनेको कुछ विचलित सा समझ कर विनय अपनेको अपराधी अवश्य समझ रहा था, और इसके लिए उसने यहाँ तक आशा की थी कि गोरापरिहास और भर्त्सना करेगा। पर विनयको स्वप्न में भी यह ख्याल न था कि गोरा इतनी सी बातके लिए उसे इस तरह अपनेसे अलग ठेल कर दूर रहने की चेष्टा करेगा। घरसे कुछ दूर जाकर विनय फिर लौट आया; बन्धुत्वका पीछे अपमान न हो, इस भयसे वह गोराके घर जा नहीं सका।

इसी तरह कई दिन बीतने के बाद, एक दिन दोपहरको भोजन के उपरान्त गोराको एक चिट्ठी लिखनेके विचारसे कागज़ कलम लेकर विनय बैठा था इसी समय नीचेसे किसीने "विनय" कह कर पुकारा विनय कलम फेंक कर चटपट नीचे उतरा, और आगन्तुकको देख कर बोला—महिम दादा, आइये, ऊपर चलिए।

महिमने ऊपर आकर विनयके पलंग पर अच्छी तरह आसन जमाया। घरके साज सामानको एक बार सरसरी तौरसे अच्छी तरह देख कर महिम-ने कहा—देखो आज जो रविवारके दिन की नींद को बिल्लकुल मिट्टी करके तुम्हारे यहाँ आया हूँ इसका एक विशेष कारण है। तुमको मेरा एक उपकार करना होगा।

विनयने पूछा—क्या उपकार? महिमने कहा—पहले बचन दो, तब कहूँगा।

विनय—मुझसे उसका होना अगर सम्भव होगा तभी तो?

महिम—हाँ, केवल तुम्हारे ही द्वारा सम्भव है। और कुछ नहीं करना है तुम्हारे एक बार "हाँ" भर कह देने से हो जायगा।

विनय—तो फिर मुझसे इस तरह क्यों आप कहते हैं? आप तो जानते हैं, मैं आप लोगोंके घरका ही आदमी हूँ! यह तो हो ही नहीं सकता कि संभव होने पर मैं आपका उपकार करनेसे मुँह मोड़ जाऊं!

महिमने जेबसे एक पत्तेकी पुड़िया निकाली और उससे दो पान निकाल कर विनयको दिए। शेष चार पान अपने मुखमें रख कर उन्हें चबाते-चबाते कहा—मेरी शशिमुखी को तो तुम जानते ही हो। देखने सुननेमें कुछ बुरी नहीं है, अर्थात् बापको बिलकुल नहीं पड़ी है। उसकी अवस्था दस सालके लगभग हो आई है। अब उसका ब्याह कर देनेका

समय आ पहुँचा है। क्या जाने किस अयोग्य या बदमाश लड़केके हाथ पड़ जाय यही सोचकर मुझे तो रातको नींद नहीं पड़ती।

विनयने कहा—आप इतना घबराते क्यों हैं अभी तो अच्छा लड़का ढूंढनेके लिए समय है।

महिम—अपने अगर कोई लड़की होती तो समझते कि क्यों इतना घबड़ा रहा हूँ। साल-साल करके उमर आप ही बढ़ती है लेकिन वर तो आप ही से घर पर आ नहीं जाता! इसीसे जितने ही दिन बीतते हैं, उतना ही मन व्याकुल हो उठता है। अब तुम अगर जरा भरोसा दो, तो न हो कुछ दिन धैर्य भी धारण कर सकता हूँ।

विनय—मेरा तो बहुत लोगोंसे यहाँ आलाप परिचय नहीं है—कलकत्तेमें आपके घर सिवा और किसीका घर नहीं जानता यह कहना भी गलत न होगा। तो भी मैं तलाश करके देखूँगा।

महिम—शशिमुखीके स्वभाव और चरित्रको तो जानते हो।

विनय—जानता क्यों नहीं। उसे बचपनसे देखता आता हूँ—बड़ी भोलीभाली लड़की है।

महिम—तो फिर और जगह तलाश करनेकी क्या जरूरत है भैया! यह लड़की मैं तुम्हारे ही हाथ में समर्पण करूंगा।

विनयने व्यस्त हो उठ कर कहा—आप कहते क्या हैं?

महिम—क्यों बेजाँ क्या कहता हूँ! अवश्य ही कुलमें तुम हम लोगोंसे बहुत बड़े हो—लेकिन विनय इतना पढ़ लिख कर भी अगर तुम कुलका ढोंग मानोगे तो बस फिर हो चुका!

विनय—ना ना, कुलकी बात नहीं है, लेकिन अवस्था तो...।

महिम—वाह? शशीकी अवस्था क्या कम है? हिन्दूके घरकी लड़की मेम साहब तो है नहीं। हमारे समाजमें तो इसी अवस्थामें लड़की ब्याह दी जाती है। फिर शास्त्र में भी तो लिखा है—कन्याया द्विगुणो वरः।

महिम सहज में छोड़ देनेवाला आदमी नहीं था। विनयको उसने

अस्थिर कर दिया। अन्तमें लाचार होकर विनयने कहा—मुझको जरा सोचने विचारनेका समय दीजिए।

महिम—मैं आज ही रातको तो ब्याह करने के लिए नहीं कहता।

विनय—तो भी घर के आदमियों की...।

महिम–हाँ सो तो है ही। उनकी राय तो लेनी ही होगी। तुम्हारे चाचा मौजूद हैं, उनकी सलाहके बिना तो कुछ हो नहीं सकता।

इतना कह कर पाकेटसे पानोंका दूसरा दोना भी निकाल कर उसे समाप्त कर और ऐसा भाव दिखा कर जैसे बात बिल्कुल पक्की हो गई है महिम चल दिया।

कुछ दिन पहले आनन्दमयीने एक बार शशिमुखीके साथ विनयके ब्याहका प्रस्ताव स्पष्ट रूपसे इशारेसे उठाया था। किन्तु विनयने जैसे उसे सुनाही नहीं। आज भी यह बात नहीं थी कि यह प्रस्ताव विनयको विशेष संगत या उचित जान पड़ा हो, किन्तु तो भी इस बातने उसके मनमें जैसे कुछ जगह पाई। विनयने सोचा यह विवाह हो जाने पर गोरा किसी दिन उसे आत्मीयताके सम्बन्धसे ठेल कर दूर नहीं कर सकेगा। विवाह व्यापारको हृदयके आवेगके साथ शामिल करने को अँगरेजी ढंग समझ कर ही अब तक विनय इस बातको एक दिल्लगी समझता आया है। और यही कारण है कि शशिमुखीके साथ ब्याह करना उसे आज उतना असम्भव नहीं जान पड़ा है। सच तो यह है कि उसने विवाहको कभी उतना महत्व ही नहीं दिया। महिम के इस प्रस्तावको लेकर गोराके साथ सलाह करनेका एक बहाना मिल गया, यह सोचकर फिलहाल विनय खुश ही हुआ। विनयकी इच्छा है कि गोरा इस बातके लिए उस पर जरा जोर डाले। विनयको इसमें जरा भी सन्देह नहीं था कि महिमको सहजसे स्वीकृति न देने से महिम गोराके द्वारा उसके अनुरोध करानेकी अवश्य चेष्टा करेगा।

इन्हीं सब बातोंकी आलोचना करके विनयकी चिन्ता दूर हो गई। वह उसी समय गोराके घर जानेको तैयार होकर घरसे निकल पड़ा।

कुछ दूर जाते पीछेसे किसीने पुकारा—विनय बाबू ! विनयने घूमकर देखा सतीश उसे पुकार रहा है।

सतीशको साथ लेकर विनय फिर घर आया। सतीशने जेबसे रुमाल की पोटली निकाल कर कहा—

रंगून में मेरे एक मामा हैं, उन्होंने वहाँके ये फल माँके पास भेजे हैं। उन्हीं में से ये पाँच-छः फल माँने सौगातके तौर पर आपके पास भेजे हैं। विनयने फल ले लिया।

उसके बाद दोनों असमान अवस्थाके मित्रोंमें कुछ देर तक कौतुक-मय वार्तालाप जब होचुका, तब सतीशने कहा—विनय बाबू माँने कहा है, यदि फुरसत हो तो आप एक बार हमारे घर अवश्य आवें; आज लीला की वर्षगाँठका दिन है।

विनयने कहा—आज, भाई मुझे समय नहीं मिलेगा—और एक जगह जरूरी कामसे जारहा हूँ।

सतीश—कहाँ जरहे हैं ?

विनय—अपने मित्रके घर।

सतीस – आपके वही मित्र।

विनय —हाँ।

विनय मित्रके घर जा सकता है, लेकिन उसके घर नहीं जा सकता, इस बातका युक्तिसंगत होना सतीशकी समझ में नहीं आया, विशेष कर विनयके वह मित्र सतीशको अच्छा नहीं लगा था। सतीश की दृष्टि में वह जैसे स्कूलके हेडमास्टरसे भी कड़ा आदमी है। उसे कोई आर्गन बाजा सुना कर यश प्राप्त कर सके, वह ऐसा आदमी ही नहीं है। विनयका ऐसे आदमी के पास जानेका कुछ भी प्रयोजन समझना सतीशको बिल्कुल ही अच्छा नहीं लगा। उसने कहा—नहीं विनय बाबू, आप हमारे ही घर चलिये।

विनय को हार मानते अधिक देर नहीं लगी। दुबिधा करते-करते मनके भीतर आपत्ति करते-करते अन्त में बालकका हाथ पकड़ कर

विनय उस अठत्तर नंबरके घरकी राह पर ही चला। वर्मासे आए हुए उन दुर्लभ फलों का कुछ अंश भेजनेके लिए विनयका खयाल रखने और वह सौगात भेजनेसे जो अपनापन प्रकट हुआ, उसकी खातिर न करना विनयके लिए असम्भव था।

विनयने परेश बाबू के घरके पास पहुँच कर देखा, पूर्वोक्त पानू बाबू और अन्य कई अपरिचित आदमी परेश बाबूके घरसे निकल रहे हैं। लीलाके जन्म दिनकी दावत में दोपहर को उनको भोजनका निमन्त्रण दिया गया था। पानू बाबू इस तरह चले गये, जैसे उन्होंने विनयको देखा ही नहीं।

घरमें घुसते ही विनयने खूब जोरकी हँसी और दौड़ धूपका शब्द सुन पाया।

थोड़ी देर बाद सुचरिताने कमरेमें आकर विनयसे कहा—माँने आपसे जरा बैठनेके लिये कहा है, वह अभी आती हैं। बाबूजी अनाथ बाबूके घर गये हैं, वह भी जल्दी ही आ जायँगे। सुचरिताने विनयका संकोच दूर करनेके लिए गोराका जिक्र छेड़ा। हँसकर कहा—जान पड़ता है वो हमारे यहाँ फिर कभी न आवेंगे ?

विनयने पूछा—क्यों ?

सुचरिताने कहा—हम मर्दोंके सामने निकलती बैठती हैं, यह देख निश्चय ही वह सन्नाटे में आ गये होंगे। घर गिरस्तीके कामको छोड़ कर औरतोंको और कहीं देखनेसे शायद वह उनको श्रद्धाकी दृष्टिसे नहीं देख सकते।

इसका उत्तर देनेमें विनय कुछ मुश्किल में पड़ गया। इस बातका प्रतिवाद कर सकनेसे ही वह खुश होता, किन्तु झूठ कैसे बोले ? विनयने कहा गोराका मत यही है कि औरतें घरके काममें पूर्ण रूपसे मन लगावें तो उनके कर्त्तव्यके सम्बन्धमें एकाग्रता, नष्ट नहीं होती है।

सुचरिताने कहा—तो फिर औरत-मर्द मिल कर बाहरको एकदम बाँट लेते तो अच्छा होता। मर्दोंको घरमें घुसने दिया जाता है, इसलिए

सम्भव है कि उनका बाहरका कर्त्तव्य अच्छी तरह सम्पन्न न होता हो। आप भी क्या अपने मित्र की रायसे सहमत हैं?

नारी-नीतिके बारेमें अब तक तो विनय गोरा के मतका ही साथ देता आ रहा था। इस विषयको लेकर उसने पत्रों में लेख भी लिखे हैं। किन्तु इस समय यह बात उसके मुखसे निकलना नहीं चाहती थी कि उसका मत भी यही है। उसने कहा—देखिये, असलमें इन सब बातोंमें हम लोग अभ्यासके दास हैं अर्थात् प्राचीन संस्कारके पक्षपाती हैं। इसी कारण औरतोंको बाहर निकलते देखतेही मनमें खटका सा लगता है। यह तो हम केवल जोर करके जबरदस्ती प्रमाणित करनेकी चेष्टा करते हैं कि अन्याय या अकर्तव्य होने के कारण औरतोंका घरसे बाहर निकलना खराब लगता है। युक्ति यहाँ उपलक्ष्य मात्र है, संस्कार ही असल चीज है।

सुचरिताने धीरे-धीरे खोद खोद कर गोराके सम्बन्धकी आलोचनाको बन्द न होने दिया। विनय भी, गोराके पक्षमें उसे जो कुछ कहना था सो खूब अच्छी तरह स्पष्ट रूपसे कहने लगा। गोरा भी शायद अपने मतको इस तरह स्पष्ट करके न कह सकता। इस अपूर्व उत्तेजनामें विनय की बुद्धि और विनयके प्रतिपादनकी—हृदयके भाव को व्यक्त करनेकी—क्षमतासे सुचरिताके मनमें एक अपूर्व आनन्द उत्पन्न होने लगा।

विनयने कहा—देखिए, शास्त्र में कहा है, आत्मानं विद्धि—अपने को जानो। नहीं तो मुक्ति किसी तरह नहीं है। मैं आपसे कहता हूं, मेरा मित्र गोरा भारतवर्ष के उसी आत्मबोधके प्रकाश रूप से प्रकट हुआ है। मैं उसे साधारण आदमी नहीं समझ सकता। हम सब लोगोंका मन जब तुच्छ आकर्षणके फेर में पड़कर नवीनके प्रलोभन में बाहरकी ओर विक्षेप में पड़ा है, तब वही एक आदमी ऐसा है, जो उस सारी विक्षिप्तताके बीचमें अटल भावसे खड़े हो कर सिंहकी तरह गरज कर वही पुरातन मंत्र कह रहा है—आत्मानं विद्धि।

विनय आज परेश बाबूके घरसे सबेरे ही बिदा होकर गोराके यहाँ जानेका निश्चय करके आया था। खास कर गोराकी चर्चा करते

करते, गोराकी बातें कहते कहते, गोरा के पास जानेका उत्साह भी उसके मन में प्रबल हो उठा। इसीसे वह घड़ी में टन-टन करके चार बजते सुनकर ही चटपट कुर्सीसे उठ खड़ा हुआ।

सुचरिता ने कहा—आप अभी चल दिये? माँ आपके लिए भोजन बना रही हैं। और जरा देरके बाद जानेसे क्या कुछ हर्ज होगा?

विनयके लिए यह तो प्रश्न नहीं है, यह तो हुक्म है। वह वैसेही बैठ गया। लावण्य रंगीन रेशमी कपड़ोंसे सजावट किये हुए कमरे में दाखिल हुई और बोली—दीदी, भोजन तैयार है। माँने छत पर बुलाया है।

छत पर आकर विनय भोजन करने लगा। वरदासुन्दरी अपने सब बच्चोंके जीवन-वृत्तान्त की चर्चा करने लगीं। ललिता सुचरिताको घरके भीतर घसीट ले गई। लावण्य एक चौकी पर बैठ कर गर्दन झुका कर दो लोहे की सलाइयोंसे अपना बुनने का काम करने लगी। किसीने कभी कहा था कि बुनने का काम करते समय उनकी कोमल उंगलियों की क्रीड़ा बहुत सुन्दर देख पड़ती है। बस तभीसे लोगोंके सामने बिला जरूरत बुननेका उसे अभ्यास सा हो गया था।

परेश बाबू आ गये। सन्ध्या हो आई थी। आज रविवार को समाज-मन्दिर में उपासनाके लिए जाने की बात तय हो चुकी थी वरदासुन्दरीने विनयसे कहा—अगर कुछ आपत्ति न हो, तो क्या आप हमारे साथ समाज में चलेंगे?

इसके ऊपर कोई उज्र नहीं किया जा सकता। दो गाड़ियों में बैठकर सब लोग उपासना के लिए गये। लौटते समय जब ये लोग गाड़ी पर चढ़ रहे थे, सुचरिता एकाएक जैसे चौंक उठी और बोली—यह गौरमोहन बाबू जा रहे हैं।

इसमें किसीको सन्देह नहीं था कि गोराने इस दल को देख लिया था। किन्तु जैसे देख नहीं पाया, ऐसा भाव दिखाकर वह तेजीसे चला गया। गोराके इस उद्गत अशिष्ठ व्यवहारसे परेश-परिवारके निकट लज्जित

हो कर विनयने सिर नीचा कर लिया। किन्तु अपने मन में उसने स्पष्ट समझ लिया कि मुझे ही इस दलकी दलदल में देख कर गोरा ऐसे प्रबल वेग से विमुख होकर चला गया। इतनी देर तक विनयके मन में जो एक आनन्द का प्रकाश जल रहा था, वह एकदम जैसे बुझ गया। सुचरिताने विनयके मनके भाव और उसके कारणको उसी समय ताड़ लिया, और विनय ऐसे मित्र के प्रति गोराका यह अविचार तथा ब्रह्म लोगों पर उसकी यह अन्यायपूर्ण अश्रद्धा देखकर गोराके ऊपर सुचरिता-को क्रोध आ गया। उसने मन ही मन किसी तरह गोराके परास्त होनेकी इच्छा की।

—— · :※:——

[१४]

गोरा जब दोपहर को भोजन करने बैठा, तब आनन्दमयीने धीरे धीरे जिक्र छेड़ा—आज सवेरे विनय आया था। तुमसे भेंट नहीं हुई ?

गोराने थालीसे सिर उठाये विना ही कहा—भेंट हुई थी।

आनन्दममयी बहुत देर तक चुपचाप बैठी रही। उसके बाद बोलीं—उससे मैंने ठहरनेको कहा था, लेकिन वह न जाने कैसा अनमना सा होकर चला गया।

गोराने कुछ उत्तर न दिया। आनन्दमयीने कहा—उसके मनमें न जाने कौन सा कष्ट है, गोरा मैंने उसे इस तरह उदास कभी नहीं देखा। उसकी यह दशा देख कर मुझे बड़ा खेदहो रहा है।

गोरा चुपचाप खा रहा था। आनन्दमयी अत्यन्त स्नेह करती थीं, इसीलिये गोरासे मन ही मन डरती थीं। वह जब खुद ही उसके ही आगे अपने मनका भाव व्यक्त नहीं करता था, तब वह उससे किसी बातके लिए अधिक जिद नहीं करती थीं। और दिन होता, तो यहीं पर वह चुप हो जातो, किन्तु आज विनयके लिए उसके मनमें बड़ी पीड़ा हो रही थी, इसीसे उसने फिर कहा—देखो गोरा एक बात कहती हूँ नाराज न होना—विनय तुमको प्राणोंसे बढ़कर चाहता है, इसीसे तुम्हारी सभी बातें सहता है, किन्तु तुम जो उससे अपनी ही राह पर चलनेके लिए जबरदस्ती करोगे, तो वह सुखकी बात न होगी।

गोराने बात टालनेके लिए कहा—माँ, और थोड़ा दूध ले आओ।

बात वहीं पर खतम हो गई। भोजनके उपरान्त आनन्दमयी अपने तख्तके ऊपर बैठ कर चुपचाप सिलाईका काम करने लगीं। लछमिनियां घरके किसी खास नौकरके दुर्व्यवहारके सम्बधकी आलोचनामें आनन्दमयी-को खींचनेकी वृथा चेष्टा करके फ़र्शके ऊपर ही लेट कर सोने लगी।

गोराने चिट्ठी-पत्री लिखनेमें बहुत-सा समय बिता दिया। विनय आज सवेरे यह स्पष्ट देख गया है कि गोरा उस पर नाखुश है, तो भी गोरा

यह जान कर कि उस नाराजीको दूर करनेके लिए विनयका उसके पास न आना किसी तरह सम्भव ही नहीं है, अपने सारे काम-काजमें भी विनय के पैरोंकी आहटके लिए कान खड़े किए हुये उसकी प्रतीक्षामें बैठा था।

समय निकल गया—विनय न आया। लिखना छोड़ कर गोरा उठने ही वाला था, इसी समय महिम आकर उपस्थित हुए। आते ही कुर्सी पर बैठ गये, और बिना किसी प्रकारकी भूमिकाके कहने लगे—शशिमुखीके ब्याहके बारेमें क्या सोचा, गोरा?

गोराने किसी दिन इस विषय पर ध्यान ही नहीं दिया था, इसीसे उसे अपराधीकी तरह चुप रह जाना पड़ा।

गोरासे जब कोई उचित उत्तर महिमा को न मिला तब उन्होंने गोरा को इस चिन्ता सङ्कट से उबारने के लिए विनयकी बात उठाई।

इस प्रसंगमें विनयकी बात उठ सकनेको गोरा ने कभीस्वप्न में भी नहीं सोचा था। विशेष करके गोरा और विनयने यह निश्चय किया था कि वे विवाह न कर के देश के काममें ही जीवन अर्पण कर देंगे। इसीसे गोराने कहा—विनय क्यों ब्याह करेगा?

महिमने कहा—जान पड़ता है, यही तुम्हारा कट्टर हिन्दूपन है। हजार चोटीं रक्खो और तिलक लगाओ, साहबी ढङ्ग तुम्हारी हड्डियोंमें बसा हुआ है। जानते हो, शास्त्र के मतसे विवाह ब्राह्मण के लड़केका एक जरूरी संस्कार है?

महिम बाबू आजकलके लड़कोंकी तरह आचार लंघन भी नहीं करते, और उधर शास्त्रकी पर्वाह भी नहीं करते। होटलमें भोजन करके बहादुरी दिखानेको भी वह बहुत बढ़ जाना समझते हैं, और उधर गोराकी तरह श्रुतिस्मृतिके मतको लेकर रगड़-झगड़ करना भी प्रकृतिस्थ आदमी-का लक्षण नहीं समझते। किन्तु यस्मिन देशे यदा चरः;के वह कायल है। इसीसे गोराके आगे उनको कार्य सिद्धिके लिहाजसे शास्त्रकी दुहाई देनी पड़ी।

यह प्रस्ताव अगर दो दिन पहले आगे आता तो शायद गोरा इस पर बिल्कुल ध्यान ही न देता। किन्तु आज उसे जान पड़ा कि बात

बिल्कुल उपेक्षाके योग्य भी नहीं है। कमसे कम इसी प्रस्ताव को लेकर अभी विनयके घर पर जानेका एक बहाना तो मिल गया।

अंतमें गोराने कहा —अच्छा, विनयका भाव क्या है, यह तो पहले देख सुन लूं।

महिमने कहा—उसके देखने सुनने की अब जरूरत नहीं है। तुम्हारी बातको वह किसी तरह टाल नहीं सकेगा। वह ठीक हो गया है, अब तुम्हारे कहने भरकी कसर है।

उसी सन्ध्याके समय गोरा विनयके घर पर आकर उपस्थित हुआ। आँधीकी तरह घरमें प्रवेश करके गोराने देखा, वहाँ कोई नहीं है। नौकरको बुलाकर पूछने पर उसने कहा बाबू ७८ नंबरके घरमें गये हैं।

परेश बाबूके परिवारके विरुद्ध, ब्रह्म समाज के विरुद्ध, गोराका अंतःकरण एकदम विषाक्त हो उठा। वह अपने मनमें एक भारी विद्रोह का भाव लेकर परेश बाबूके घरकी तरफ तेजीसे चला। इच्छा थी कि वहाँ वह ऐसी सब बातें उठावेगा, जिन्हें सुनकर इस ब्रह्म-परिवारमें आगसी लग जायगी, और विनय भी बेचैन हो उठेगा।

परेश बाबूके घर जाकर सुना, कोई घरमें नहीं है, सब उपासना-मन्दिरमें गये हैं। बड़ी भरके लिए मनमें संशयका उदय हुआ कि शायद विनय वहाँ नहीं गया—वह शायद इस समय उसीके घर गया हुआ है। रहा नहीं गया। गोरा अपनी स्वाभाविक आँधी-की सी चालसे मन्दिर ही की ओर गया। द्वारके पास जाकर देखा, विनय वरदासुन्दरीके पीछे उन्होंकी गाड़ी पर चढ़ रहा है—खुली सड़कके बीच निर्लज्जकी तरह अन्य परिवार की औरतोंके साथ एक ही गाड़ीमें जाकर बैठ रहा है! —मूढ़! नागपाशमें इसी तरह अपने को फँसाना होता है? इतनी जल्दी! इतने सहजमें! तो फिर मित्रता अब भद्र पुरुषके साथ नहीं रही। गोरा आँधी की तरह वहाँसे चल दिया। और विनय, वह गाड़ी के अंधकार के भीतर सड़ककी ओर ताकता हुआ चुपका बैठ रहा।

[१५]

रातको घरमें लौट आकर गोरा अंधकारमें ही छत पर टहलने लगा।

महिम छत पर आकर हाँफते हुए कहने लगे हाँ जी, विनयके पास गये थे ?

गोराने इसका स्पष्ट उत्तर न देकर कहा—विनयके साथ शशिमुखीका ब्याह न हो सकेगा।

महिम—क्यों, क्या विनयकी राय नहीं है !

गोरा—मेरी राय नहीं है।

महिमने हाथ उलटा कर कहा—खूब, यह तो और नया झँझट देख पड़ता है। तुम्हारी राय नहीं है क्यों ? कुछ कारण भी तो सुनूं।

गोरा—मैंने खूब समझ लिया है कि विनयको अपने समाजमें रोक रखना हमें कठिन होगा। उसके साथ हमारे घरकी लड़की का ब्याह नहीं चल सकता।

महिम—बहुत-बहुत कट्टर हिन्दू भी देखे हैं, किन्तु ऐसा और कहीं नहीं देखा। तुम भविष्य देख कर विधानकी व्यवस्था देते हो।

बहुत बक झक के बाद महिम ने कहा—तुम कुछ भी कहो, लड़कीको मैं किसी मूर्ख के हाथमें तो सौंप नहीं सकता। उसका व्याह बंद करके मेरी लड़की को क्यों अथाह में ढकेलते हो ? तुम्हारे सभी उलटे विचार हैं।

महिमने नीचे आकर आनन्दमयीसे कहा—माँ अपने गोराको तुम समझाओ।

आनन्दमयीने घबरा कर पूछा—क्या हुआ ?

महिम—विनयके साथ शशिमुखीके व्याहकी बातको मैं एक तरह से पक्की ही कर चुका था। गोराको भी आजसे पहले राजी कर लिया था। लेकिन इतने ही समयमें गोरासे स्पष्ट मालूम हो गया कि विनयमें हिन्दूपनकी यथेष्ट मात्रा नहीं है। इसीसे गोरा इस विवाहका विरोधी बन गया है। अब तुम यत्न करो तो लड़कीका ठिकाना लग जाय। ऐसा लड़का और खोजनेसे भी नहीं मिलेगा।

इतना कहकर छत पर आ गोराके साथ जो बात चीत हुई थी सो सब माहिमने मांको सुना दी। विनयके साथ गोराका विरोध गहरा होता जा रहा है, यह समझ कर आनन्दमयीका मन बेचैन हो उठा।

आनन्दमयीने ऊपर आकर देखा, गोरा छत पर टहलना बन्द करके एक कुर्सी पर बैठ कर दूसरी कुर्सी पर पैर रक्खे कोई पुस्तक पढ़ रहा है। आनन्दमयी एक कुर्सी खींच कर गोराके पास ही बैठ गईं। गोराने सामनेकी चौकीसे उतर कर सीधे माताके मुख की ओर देखा।

आनन्दमयीने कहा—बेटा गोरा, मेरी एक बात मान। विनयके साथ झगड़ा या मनमैली मत कर। मेरी निगाह में तुम दोनों दो भाई हो; तुम्हारा परस्पर बिछुड़ना मुझसे सहा न जायगा!

गोराने कहा—मित्र अगर स्नेहका बन्धन काटना चाहता है, तो उसके पीछे दौड़नेमें मैं अपना समय नष्ट न कर सकूंगा।

आनन्दमयीने कहा—भैया, मुझे नहीं मालूम, तुम दोनोंके बीच क्या झगड़ा है, लेकिन अगर तुम यह बिश्वास करो कि विनय तुम्हारे स्नेह-बन्धनको तोड़ना चाहता है, तो फिर तुम्हारा मित्रताका जोर कहाँ रहा।

गोरा—मैं सीधे चलना पसन्द करता हूँ। दो नावोंमें पैर रखना जिसका स्वभाव है, उसे अवश्य मेरी नावसे पैर उठा लेना होगा, इसमें चाहे मुझे कष्ट हो और चाहे उसे कष्ट हो।

आनन्दमयी—अच्छा हुआ क्या, बताओ तो। ब्राह्म लोगोंके घरमें वह आता जाता है, यहीं तो उसका अपराध है?

गोरा—इसमें बहुत सी बातें हैं, मां।

आनन्दमयी—होंगी बहुत बातें—किन्तु मैं केवल एक बात कहती हूँ। सभी बातोंमें तुम्हारी ऐसी और इतनी जिद है कि तुम जो पकड़ते हो उसे कोई तुमसे छुड़ा नहीं सकता। फिर बिनयसे ही तुम इतना क्यों चिढ़ते हो? क्यों उसे इतने सहजसे छोड़ देना चाहते हो? तुम्हारा अबिनाश अगर दल छोड़ना चाहता तो क्या उसे तुम इस तरह सहजमें छोड़ देते? तुम्हारा मित्र होने ही के कारण क्या विनय तुम्हारी दृष्टिमें उन सबसे कम या निकम्मा है?

गोरा चुप होकर सोचने लगा। आनन्दमयीकी इस बातने उसकी आंखें जैसे खोल दीं, उसे अपना मन अच्छी तरह स्पष्ट दिखाई देने लगा। अब तक वह सोच रहा था कि मैं कर्त्तव्यकी खातिरसे विनयके बन्धुत्वको विसर्जन करने जा रहा हूँ, किन्तु इस समय उसे स्पष्ट जान पड़ा कि असल में बात बिलकुल इससे उलटी है। उसके बन्धुत्वके अभिमानमें धक्का लगा है—उसे वेदना पहुँची है—इसीसे वह विनयके बन्धुत्वको चरम दण्ड देनेके लिए उद्यत हुआ है। वह मनमें जानता था कि विनय को बांध रखने के लिए बन्धुत्वका बन्धन ही यथेष्ट है अन्य कोई चेष्टा प्रणयका असम्मान है।

आनन्दमयीने जैसे ही समझा कि उनकी बात गोराके मनमें कुछ अपना असर कर गई है; वैसे ही वह फिर कुछ न कह कर धीरे धीरे उठनेको उद्यत हुईं। गोरा भी एकाएक वेगसे उठ बैठा और अरगनीसे चादर उतार कर कंधे पर डाली।

आनन्दमयीने पूछा—कहाँ जाते हो गोरा?

गोराने कहा—मैं विनयके घर जा रहा हूं।

आनन्दमयी और कुछ न कह कर नीचेकी तरफ चलीं, सीढ़ियों पर पैरोंकी आहट सुनकर एकाएक रुक कर बोलीं—लो, विनय आप ही आ गया।

कहते ही विनय आ पहुंचा। आनन्दमयीकी आंखोंमें आँसू भर आये। उन्होंने स्नेहसे विनयके शरीर पर हाथ फेर कर कहा—विनय भैया, तुम खाकर नहीं आये?

विनयने कहा—नहीं, माँ।

आनन्द०—आज तुम यहीं खाना।

विनयने एक बार गोराके मुंहकी ओर देखा। गोरा ने कहा विनय, तुम्हारी बड़ी उम्र है। मैं तुम्हारे ही यहाँ जा रहा था।

आनन्दमयी—की छातीका बोझ जैसे उतर गया। वह चटपट नीचे चली गईं।

दोनों मित्र बैठकमें आकर बैठे। गोराने जो जबानमें आया, वही कह कर मौन भङ्ग किया।

दोनों जब खानेको बैठ गये, तब आनन्दमयीको उनकी बातचीतसे मालूम हुआ कि अभी तक उनके दिल साफ नहीं हुए! दोनों ओरसे सफाई नहीं हुई; पर्दा नहीं हटा, रुकावट मौजूद है। उन्होंने कहा—विनय रात अधिक हो गई है, तुम आज यहीं सो रहो। मैं तुम्हारे घर पर खबर भेजे देती हूँ।

विनयने एक चकित दृष्टि गोराके मुँह पर डाली और बोला—"भुक्त्वा राजवदाचरेत"—खाकर राजोंकी तरह रहे। खाकर राह चलना नियम विरुद्ध है ही। खैर तो आज यहीं सोना होगा।

भोजनके बाद दोनों मित्र छत पर आकर चटाई बिछा कर बैठे।

गिर्जे की घड़ीमें ग्यारह बज गये। गाड़ियोंके चलनेकी घरघराहट धीमी पड़गई। गोरे अँग्रेजोंके मुहल्ले और गलीमें किसीके जागनेका कोई लक्षण नहीं देख पड़ता था केवल पड़ोसीके अस्तबलमें काठके फर्श पर घोड़ेकी टापका शब्द कभी-कभी सुन पड़ता था, या कभी-कभी कुत्ते भूकने लगते थे।

दोनों बहुत देर तक चुप रहे। उसके बाद बिनयने कहा—भाई गोरा, मेरा हृदय भर उठा है, किन्तु तुमसे कहे बिना मुझसे नहीं रहा जायगा।

मैं भला बुरा कुछ समझ नहीं पाता, लेकिन यह निश्चय है कि इसके साथ कोई चातुरी नहीं चलेगी। किताबोंमें बहुत सी बातें पढ़ी हैं, और अब तक यही कहता आया हूं कि मैं सब जानता हूँ। ठीक जैसे चित्र में जल देखकर समझता था कि तैरना खूब सहज है, मगर आज जलके भीतर गिरकर दम भरमें समझ गया हूँ कि यह तो मिथ्या नहीं है।

यह कहकर विनय अपने जीवनकी इस विचित्र घटनाको बड़ी धीरता से गोराके सामने प्रकट करने लगा।

वह कहने लगा—आजकल मेरे लिए दिन रातमें कुछ अन्तर नहीं है, समस्त आकाश-मंडलमें मानो रत्ती भर जगह कहीं खाली नहीं है। सारा आकाश मानों किसी एक कठिन पदार्थसे भर गया है। मधु मासमें मधुका छत्ता जैसे मधुसे भरकर फटना चाहता है, वही दशा मेरी है! आज सभी पदार्थ एक अपूर्व भाव से मेरे सामने प्रतीयवान हो रहे हैं। मैं नहीं जानता था कि संसार की सभी वस्तुओंको मैं इतना प्यार करता हूँ, आकाश ऐसा विचित्र होता है, प्रकाश ऐसा अपूर्व होता है। रास्तेके अपरिचित पथिकका प्रभाव भी ऐसी गम्भीरता से सत्य होता है। मेरा जी चाहता है सबके लिए मैं कुछ करूँ; मैं अपनी सम्पूर्ण शक्तिको आकाशके सूर्यकी भांति संसारकी एक चिरस्थायी वस्तु बना डालूँ।

विनय किसी व्यक्ति विशेष के प्रसंगमें यह सब बातें कह रहा है, यह स्पष्ट रूपसे समझमें नहीं आता। मानों वह किसीका नाम मुँह पर नहीं ला सकता। संकेतसे भी नाम सूचित करनेमें वह कुण्ठित हो पड़ता है। वह जिस मानसिक भावकी आलोचना कर रहा है इसके लिए मानों वह किसीके निकट अपने अपराधका अनुभव कर रहा है। इसे वह एक प्रकार का अन्याय और किसी के प्रति गुप्त अपमान करना समझता है। किन्तु आज इस निःशब्द रात में निःस्तब्ध आकाशमें सूनी जगहमें मित्रके पास बैठकर वह इस अन्यायको किसी तरह छिपा न सका।

"अहा! वह मुख क्या है मानो निष्कलङ्क पूर्ण चन्द्र है। उसके निर्मल प्राणोंकी आभा उसके भालकी कोमलतामें क्या ही मनोहर भाव से

विकसित हो रही है। मुसकुराते ही उसका चेहरा कमल सा खिल उठता है। उस मुखके सौन्दर्य की उपमा चन्द्रमासे दूँ या कमलसे! उसकी वह चिकुर राशि उसके वे दोनों कटीले नेत्र! उसकी वह सीधी चितवन चित्त को चुराये लेती है। मानों वह मधुर मूर्ति मेरी आँखोंके सामने खड़ी है मानो वह मुझसे बातें कर रही है।" विनय अपने जीवनको और युवत्व को धन्य मान रहा है। इस नूतन आनन्दसे उसका हृदय रह रहकर फूल उठता है। संसार के अधिकाँश लोग जिसे न देखकर ही जीवन को बिता डालते हैं। उसे विनय इस तरह आँखोंके सामने मूर्त्तिमान् देख सकता है इससे बढ़कर आश्चर्य की बात और क्या हो सकती है।

किन्तु यह कैसा पागलपन हैं! कैसा अन्याय है? जो हो पर यह अब किसी तरह मनमें रोका नहीं जा सकता है। इस प्रेम प्रवाहका यदि कोई किनारा बता दे तो अच्छा है। नहीं तो यदि किसीने उसमें ढकेल दिया, किसी तरह उसके भीतर धँस पड़ा तो फिर बाहर निकलने का उपाय क्या है!

कठिन तो यह कि उसमें से बाहर होने की इच्छा भी नहीं होती। इतने दिनों के समस्त संस्कार और सारी मर्यादाको खो देना ही मानो जीवन का सार्थक परिणाम जान पड़ता है।

गोरा चुपचाप सुनने लगा। इस छत पर ऐसे सन्नाटेकी चांदनी रातमें और कितने ही दिन इन दोनोंमें कितनी ही बातें हो गई हैं। साहित्य, काव्यालाप और लोक चरित्र की कितनी ही आलोचना हुई है; समाज की कितनी ही आलोचना और भविष्यत जीवन यात्राके सम्बन्धमें कितने ही संकल्प हुए हैं; परन्तु ऐसी बात इसके पूर्व किसी दिन न हुई थी। मनुष्य हृदयका ऐसा एक सत्य पदार्थ ऐसा एक प्रबल प्रकाश इस प्रकार गोराके सामने कभी नहीं पड़ा था। इन व्यापारियोंको वह कविका चमत्कार समझकर इतने दिन तक सम्पूर्ण रूपसे उनकी उपेक्षा करता आया है। किन्तु आज इन्हें प्रत्यक्ष देख वह किसी तरह अस्वीकार न कर सका। इतना ही नहीं, इसके प्रबल वेगने उसके मनको चंचल कर दिया। उसके

सारे शरीर में रोमांच हो आया; एक छिपी हुई शक्ति उसकी नस-नसमें बिजलीकी तरह दौड़ गई। उसकी जवानीके एक अज्ञात अंशका पर्दा कुछ देर के लिए हट गया और उस—इतने दिनकी बन्द—कोठरीके भीतर इस शरत्कालिक निशीथ चन्द्रिकाने प्रवेश करके एक अपूर्व मायाका विस्तार कर दिया।

चन्द्रमा किस समय पश्चिमकी ओर झुका, किस समय छतों से नीचे उतर गया यह इन दोनोंने नहीं जाना। देखते देखते पूरब की ओर आसमानमें सफेदी छा गई। तब विनयका जी कुछ हलका हुआ और मनमें कुछ लज्जा हुई। वह कुछ देर चुप रहकर बोला—मेरी ये बातें तुम्हारे समीप बड़ी तुच्छ हैं, तुम मन ही मन मेरी निन्दा करते होगे; किन्तु तुम्हीं कहो मैं क्या करूँ, मैंने तुमसे कभी कोई बात छिपाई नहीं, आज भी कुछ नहीं छिपाया। तुम समझो या न समझो।

गोरा ने कहा—विनय, मैं नहीं कह सकता कि मैं इन बातोंको ठीक-ठीक-समझ गया। दो दिन पहले तुम भी इन्हें नहीं समझते थे। इतनी बड़ी उम्रमें आज तक ये आवेग और आवेश बड़े ही तुच्छ जँचते थे, इस बातको भी मैं अस्वीकार नहीं कर सकता। इससे मैं अब यह नहीं कह सकता कि यथार्थमें ही यह इतना तुच्छ विषय है। मैंने इसकी शक्ति और गम्भीरताको कभी प्रत्यक्ष नहीं देखा, इसी कारण यह मेरे पास अपदार्थकी भाँति मिथ्या प्रतीत होता था। किन्तु तुम्हारे इतने बड़े अनुभव को मैं झूठ कैसे कहूँ? असल बात यह है कि जो व्यक्ति जिस मंडलीके भीतर है, उस मंडलीके बाहरका सत्व पदार्थ यथार्थ यदि उसकी दृष्टिमें छोटा न जान पड़े तो उससे उसकी मंडलीका कोई काम नहीं हो सकता; वह कोई काम कर ही नहीं सकता। इसी लिए ईश्वरने दूरकी वस्तु मनुष्यकी दृष्टिमें छोटी कर दी है। सम्पूर्ण सत्यके समान दिखाकर वह लोगों को महा विपत्ति में डालना नहीं चाहता। हम लोगों को कोई एक दिशा निर्दिष्ट कर उस ओर जाना ही होगा। एकसाथ सब ओर दौड़ने की लालच छोड़नी होगी। नहीं तो—"एकै साधे सब सधे सब साधे सब

जाय"—की कहावत चारितार्थ होगी । किसी एक मार्ग का अवलम्बन करना ही ठीक है; नहीं तो सत्यकी प्राप्ति न होगी । तुम जिस जगह खड़े होकर आज सत्यकी जिस मूर्ति को आँखों देख रहे हो, मैं उस मूर्तिका अभिवादन करनेके लिए वहाँ तक न पहुँच सकूंगा । इससे मैं अपने जीवनके सत्यको भी खो डालूँगा । इस ओर सत्य और उस ओर असत्य ।

विनय—सत्य तुम्हारी ओर, और असत्य मेरी ओर । में अपने को पूर्ण करना चाहता हूँ और तुम अपना जीवन उत्सर्ग करने के लिए खड़े हो ।

गोराने कुछ तीव्र होकर कहा—विनय, तुम बात-बात में काव्य मत करो । तुम्हारी बातें सुनकर मैं यह स्पष्ट समझ गया हूँ कि तुम आज अपने जीवनमें एक प्रबल सत्यके सामने मुँह करके खड़े हुए हो, उसके साथ कपट चल नहीं सकता । सत्यकी रक्षा करनेसे उसके पास आत्म समर्पण करना ही होगा । इसमें अन्यथा हो नहीं सकता । मैं जिस समाज के भीतर हूँ, उस समाजके सत्यको मैं भी एक दिन इसी तरह प्रत्यक्ष देखूँ, यही मेरी इच्छा है । तुम इतने दिन तक काव्यमें पड़े हुए प्रेमके परिचयसे ही तृप्त थे—मैं भी पुस्तकोंमें उल्लिखित स्वदेश-प्रेमको ही जानता हूँ । आज प्रेम जब तुम्हारे पास प्रत्यक्ष हुआ तब तुम समझ सके हो कि पुस्तकों में पठित विषयकी अपेक्षा यह कितना सत्य है । उसने तुम्हारे समस्त चराचर जगत्को अधिकारमें कर लिया है, तुम इसके हाथसे अब उद्धार नहीं पा सकते । इसके अधिकारसे बाहर आनेकी अब तुम्हें कोई जगह नहीं है । स्वदेश प्रेम जिस दिन मेरे सामने इस प्रकार पूरे तौर से प्रत्यक्ष होगा उस दिन मेरी भी यही गति होगी मैं भी इसी तरह संसार को एक और ही रूप में देखूँगा । उस दिन वह मेरे धन-प्राण मेरे मांस, मेरे आकाश-विकाश और मेरे जो कुछ हैं, सभीको अनायास ही अपनी ओर खींच लेगा । स्वदेश की वह सत्यमूर्ति क्या ही आश्चर्य स्वरूप है । उसके आनन्द और विषाद दोनों बड़े ही प्रबल पचंड हैं,

है, जो बाढ़के तीव्र वेगकी भाँति जीवन मृत्युको बातकी बातमें पार कर जाते हैं। तुम्हारी बात सुनकर आज मन ही मन उनका कुछ-कुछ अनुभव कर सका हूँ। तुम्हारे जीवनकी इस अभिज्ञताने मेरे जीवनको चोट पहुंचाई है। तुमने जो अनुभव किया है, वह मैं किसी दिन समझ सकूंगा या नहीं यह मैं नहीं जानता किन्तु मैं जो पाना चाहता हूँ उसके स्वादका कुछ अनुभव मानों तुम्हारे अन्तःकरण के ही द्वारा मैंने किया है।

यह कहता हुआ गोरा चटाईसे उठकर छत पर टहलने लगा। पूर्व दिशा की उषःकालिक स्वच्छता उसके पास मानो एक प्राकृतिक वाक्यकी भाँति प्रकट हुई। मानो तपोवनका एक वेदमन्त्र उसके सामने प्रत्यक्ष हुआ। उसका सम्पूर्ण शरीर कण्टकित हो गया। कुछ देर तक वह ठिठक कर खड़ा हो रहा। क्षण भर के लिए उसे ऐसा लगा मानो उसके ब्रह्म रन्ध्रको भेदकर एक ज्योतिरेखा, सूक्ष्ममृणाल की तरह, उठकर ज्योतिर्मय शतदल में—समस्त आकाशमे—परिव्याप्त होकर विकसित हो गई। उसके प्राण, समस्त चेतना और शारी शक्ति सब मानों इससे एकाएक परम आनन्दमें निःशेष हो गये।

कुछ देर पीछे जब वह प्रकृतिस्थ हुआ तब सहसा बोल उठा—विनय तुम्हें इस प्रेमको भी लाँघकर मेरा साथ देना होगा। मैं कहता हूं कि वहाँ उलझनेसे काम न चलेगा। मुझे जो महाशक्ति अपनी ओर बुला रही है, वह कितनी बड़ी प्रभावशालिनी है, और कितनी सत्य है यह किसी दिन मैं तुमको दिखाऊँगा। मेरे मन में आज बड़ा हर्ष हो रहा है। मैं अब तुमको किसीके हाथमें जाने न दूँगा। अब मैं तुम्हें छोड़ नहीं सकता।

विनय चटाई को छोड़कर गोराके पास आ खड़ा हुआ। गोराने उसे एक अपूर्व उत्साहके साथ दोनों हाथोंसे आलिंगन कर कहा—विनय, हम तुम दोनों एक साथ जिएँगे-मरेंगे; हम दोनों एक होकर रहेंगे। हम दोनोंको कोई जुदा नहीं कर सकेगा।

गोरा के इस गम्भीर उत्साह का वेग विनय के हृदय में भी तरङ्गित होने लगा;---उसने अपने आपको बिना कुछ कहे-सुने गोराके आकर्षणमें छोड़ दिया।

गोरा और विनय दोनों पास ही चुपचाप घूमने लगे। पूर्व आकाशमें लालिमा छा गई। गोराने कहा—भाई, मैं अपनी देवीको जहाँ देख रहा हूं, वह सौन्दर्यके बीचकी जगह नहीं है। वहीं तो दुर्भिक्ष और दरिद्रताका निवास है, वहाँ केवल कष्ट और अपमान भरा है। वहाँ गीत गाकर और फूल चढ़ाकर पूजा करनेसे क्या होगा? वहाँ प्राण देकर पूजा करनी होगी। देवी की अराधनाके लिए बलिदान की आवश्यकता है। आत्म समर्पणको ही मैं सबसे बढ़कर पूजाका उपकरण समझता हूँ। इस प्रकारकी पूजामें मुझे जितना हर्ष होता है उतना और किसी में नहीं। वहाँ सुखके द्वारा भूलनेकी कोई सामग्री नहीं। वहाँ अपनी शक्ति भर जागना होगा—सब कुछ देना होगा। वहाँ माधुर्यका लेश नहीं, वहाँ एक दुर्जय दुःसह साहसका आविर्भाव है। इसके भीतर एक ऐसा कठिन झङ्कार है जिससे हाथ में एक साथ सातों सुर बोल उठते हैं और तार टूटकर गिर पड़ते हैं। इसके स्मरण मात्रसे मेरे हृदयमें उल्लास जाग उठता है। मेरे मनमें होता है, यह आनन्द ही पुरुष का आनन्द है—यही जीवन का ताण्डव नृत्य है। पुरातन प्रबल यज्ञकी अग्निशिखाके ऊपर नई अद्भुत मूर्त्ति देखने ही के लिए पुरुषार्थ साधन की आवश्यकता है। रक्तिमा भरे आकाश क्षेत्रमें एक बन्धन रहित ज्योतिर्मय भविष्यतको मैं देख रहा हूं। देखो मेरे हृदयके भीतर कौन डमरू बजा रहा है—यह कहकर गोराने विनयका हाथ लेकर अपनी छाती के ऊपर दबा रक्खा।

विनय ने कहा—मैं तुम्हारे ही साथ चलूँगा। किन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि मुझे कभी किसी ओर बहकने मत देना। तुम जिधर जाओ उधर मुझे भी, विधाता की तरह, निर्दय होकर खींचें लिए चलो। हमारा [illegible]—दोनोंका मार्ग एक ही होगा—किन्तु मेरी और तुम्हारी शक्ति तो बराबर नहीं है।

गोरा—हम लोगों की प्रकृतिमें भेद है, किन्तु एक महान् आनन्दसे हम अपनी भिन्न प्रकृतिको एक कर देंगे। तुममें और हममें जो प्रेम है वह सामान्य प्रेम है, इसकी अपेक्षा जो बड़ा प्रेम है, उसके द्वारा हम तुम दोनों मिलकर एक हो जायँगे! वह अखण्ड प्रेम जब तक सत्यरूपमें परिणत न होगा तब तक हम दोनोंके बीच पग-पगमें अनेक आघात-संघात, विरोध बिच्छेद होते ही रहेंगे। इसके बाद एक दिन हम लोग सब भूलकर, अपनी विभिन्नता और अपनी मित्रता को भी भूलकर एक बहुत बड़े आत्मत्याग के भीतर अटल बल से मिलकर खड़े हो सकेंगे। वह निविड़ आनन्द ही हम लोगों की मित्रताका अन्तिम परिणाम होगा।

विनयने गोराका हाथ पकड़कर कहा—यही।

गोरा—उतने दिन तक मैं तुमको अनेक कष्ट दूँगा! मेरे सब अत्याचार तुमको सहने पड़ेंगे। हम लोग क्या अपनी मित्रताको जीवनके अन्तिम लक्ष्य तक न निभा सकेंगे? जैसे होगा, उसे बचाकर चलेंगे, कभी उसका अनादर न करेंगे। इतने पर भी यदि मित्रता न रहेगी तो उपाय क्या है, किन्तु यदि बच रही तो वह अवश्य एक दिन सफल होगी।

इसी समय दोनोंने किसीके पैरों की आहटसे चौंककर पीछेकी ओर देखा, आनन्दमयी छत के ऊपर आई है। उसने दोनोंके हाथ पकड़ कमरे की ओर खींचकर कहा—चलो, सोनेको चलो, रात भर जागते रहे हो, अब जाकर सो जाओ।

दोनोंने कहा—माँ अब नींद न आवेगी।

"आवेगी जरूर" यह कहकर आनन्दमयी जबरदस्ती दोनोंको कमरेके भीतर ले आई और दोनों को बिछौने पर पास सुलाकर कमरेका द्वार बन्द कर दिया और दोनों के सिहराने बैठकर पंखा झलने लगी।

विनय ने कहा—माँ, तुम यहाँ बैठकर पंखा झलोगी तो हमें नींद न आवेगी।

आनन्द—देखूँगी कैसे नींद नहीं आती है। मेरे चले जाने पर फिर तुम दोनों बातें करना आरम्भ करोगे, मेरे रहने से वह न होगा।

कुछ देर में दोनों सो गये। आनन्दमयी धीरे-धीरे कमरेसे बाहर चली गईं। सीढ़ी परसे उतरते समय देखा कि महिम ऊपर आ रहे हैं। आनन्दमयीने कहा—अभी लौटो, कल ये दोनों सारी रात जागते रहे हैं। मैं अभी उन्हें सुलाकर चली आ रही हूं।

महिम—वाह! इसी का नाम मित्रता है। ब्याह की बात कुछ चली थी, जानती हो?

आनन्दमयी—नहीं जानती।

महिम—मालूम होता है कुछ ठीक हो गया है। कब नींद टूटेगी? शीघ्र ब्याह न होने से अनेक विघ्न उपस्थित होंगे।

आनन्दमयी ने हंसकर कहा—उन दोनोंको भली भाँति सोने दो। विघ्न न होगा। आज दिन में ही नींद टूटेगी।

— :o:— —

[१६]

वरदासुन्दरीने कहा—आप सुचरिताका ब्याह कहीं करेंगे या नहीं ?

परेश बाबूने अपने स्वाभाविक शान्त गम्भीर भाव से कुछ देर तक पकी दाढ़ी पर हाथ फेरा पीछे कोमल स्वरमें कहा—कहीं लड़का मिले भी तो।

वरदासुन्दरी—क्यों पानू बाबू के साथ उसके ब्याहकी बात तो ठीक हुई है। हम सब पहले से यह बात जानते हैं—सुचरिता भी जानती है।

परेश—मैं जहाँ तक जानती हूं सुचरिता पानू बाबू को पहले से नहीं चाहती।

वरदासुन्दरी—यह बात मुझे अच्छी नहीं लगती। सुचरिता को मैं अपनी लड़कियोंसे कभी अलग करके नहीं देखती। इसीसे मैं यह साहस करती हूं कि वे भी तो कुछ ऐसे वैसे नहीं हैं। पानू बाबू के समान विद्वान धार्मिक पुरुष अगर उसे चाहते हैं तो क्या यह उसके लिए कम सौभाग्यकी बात है ? यह अवसर क्या हाथसे जाने देने योग्य है ? आप चाहे जो कहें मेरी लावण्य तो देखनेमें उससे कहीं अच्छी है किन्तु मैं आप से कहे देती हूँ कि हम जिसे पसन्द करेंगी वह उसी के साथ ब्याह करेगी कभी "नाहीं" न करेगी। आप यदि सुचरिताके दिमाग़ को आसमान पर चढ़ा दें तो फिर उसके लिए वर मिलना कठिन होगा।

परेश बाबू इस पर कुछ न बोले। वरदासुन्दरी के साथ वे कभी विवाद न करते थे। विशेषकर सुचरिता के सम्बन्ध में।

सतीशको जनमाकर जब सुचरिता की माँ मर गई तब सुचरिता सात वर्ष की थी। उसका पिता रामशरण हवलदार, स्त्रीकी मृत्यु के बाद, ब्रह्म समाजमें जा मिला। बाद में लोगों के अत्याचारसे तङ्ग आकर, वह ढाका चला गया। वह जब वहाँके डाकघरमें काम करता था तब परेशबाबू

के साथ उसकी गाढ़ी मैत्री हुई। सुचरिता तबसे परेश बाबू को अपने पिता के समान मानने लगी।

रामशरण अचानक मर गया। उसके पास जो कुछ जमापूंजी थी, वह अपने बेटे और बेटीको बाँट देने का भार परेश बाबूको दे गया था। तबसे सतीश और सुचरिता दोनों परेश बाबू के घर रहने लगे।

पाठक पहले ही जान चुके हैं हारानचन्द्र उर्फ पानू बाबू बड़े उत्साही ब्राह्म थे। ब्राह्म समाजके सभी उनके हाथमें थे। वह रात्रि पाठशाला के शिक्षक, समाचार पत्र सम्पादक और स्त्री विद्यालयके मन्त्री थे। किसी भी काममें उनकी शिथिलता नहीं पाई जाती थी। सभी के मनमें यही आशा थी कि यही युवक एक दिन ब्राह्म समाज का ऊँचा आसन ग्रहण करेगा। विशेष कर अँगरेजी भाषामें पानू बाबू के अधिकार और दर्शन शास्त्रमें उनकी पारदर्शिताके सम्बन्धमें उनका यश विद्यालयके छात्रोंके द्वारा ब्राह्म समाजके बाहर भी दूर दूर तक फैल गया था।

इन सब गुणों के कारण अन्यान्य ब्राह्मणोंकी भांति सुचरिता भी हारान बाबू पर विशेष श्रद्धा रखती थी। ढाकेसे कलकत्ते आते समय हरान बाबूके साथ परिचय होनेके लिए उसके मनमें विशेष उत्सुकता भी उत्पन्न हुई थी।

अन्तमें प्रसिद्ध हारान बाबूके साथ केवल परिचय होकर ही नहीं रहा किन्तु थोड़े ही दिनों में, सुचरिताके प्रति अपने हृदयका अनुराग दिखलाने में हारान बाबूने कुछ संकोच न किया। स्पष्ट रूपसे उन्होंने सुचरिताके निकट प्रेम भले ही प्रकट न किया हो किन्तु सुचरिता की सब तरह की कमियोंको पूर्ण करने में, उसकी त्रुटियोंके संशोधनमें, उसके उत्साहको बढ़ाने में उसकी उन्नति में उन्होंने ऐसा मन लगाया—ऐसा ध्यान दिया—कि यह बात सबको स्पष्ट विदित हो गई कि सुचरिताको विशेष रूपसे अपने लायक सहधर्मिणी या जीवनसंगिनी बनाने की उनकी प्रबल इच्छा है।

सुचरिताने जब जाना कि मैंने प्रसिद्ध हारान बाबूके मन पर विजय प्राप्तकी है तब वह मनमें कुछ-कुछ भक्तिके साथ गर्वका अनुभव करने लगी। लड़की की वालेओर से कोई प्रस्ताव उपस्थित न होने पर भी हारान

बाबूके ही साथ सुचरिताका विवाह होना जब सभीने निश्चय समझ लिया तब सुचरिताने भी मन ही मन उसमें योग दिया था। सुचरिताकी एक विशेष इच्छा यह थी कि हारान बाबूने ब्राह्म समाजके जिस हित-साधनके लिए अपना जीवन उत्सर्ग किया है उनके सभी कर्य में मदद दे संकूगी। विवाहकी यह कल्पना उसके लिए भय, आवेग और कठिन उत्तरदायित्व ज्ञान द्वारा बने हुए पत्थरके दुर्गकी भांति अभेद्य मालूम होने लगी! वह केवल सुखसे रहनेका किला नहीं है, वह तो युद्ध करनेके ही लिये रचा गया है। उस किले पर अधिकार करना सहज नहीं है।

इसी अवस्थामें यदि विवाह हो जाता तो किसी तरह कन्यापक्ष वाले इस व्याहको सौभाग्य ही मानते! किन्तु हारान बाबू अपने उत्सर्ग किये हुये महान् जीवनकी जिम्मेदारीको इतनी ऊँची दृष्टिसे देखते थे कि केवल प्रेमसे आकृष्ट होकर व्याह करना उन्होंने अपने लिए अयोग्य समझा। इस विवाह से ब्राह्म समाजको कहाँ तक लाभ पहुँचेगा, यह भली भांति बिना सोचे इस कार्यमें प्रवृत्ति न हो सकें इस कारण प्रेम की दृष्टिसे नहीं बल्कि ब्रह्म समाजकी दृष्टिसे सुचरिता की परीक्षा करने लगे।

इस तरहसे परीक्षा करनेमें परीक्षा देनी भी पड़ती है। हारान बाबू परेश बाबूके घरमें सुपरचित हो उठे। यहाँ तक कि उन्हें उनके घरके लोग जिस पानू बाबू के नामसे पुकारते थे, उनके उस नामका प्रचार इस परिवारमें भी हो गया। अब उन्हे केवल अङ्गरेजीके भण्डार तत्व ज्ञान के आधार और ब्राह्मसमाज के मंगलके अवतार के रूपसे देखना असम्भव हो गया। वह भी मनुष्य ही हैं, उनका यही परिचय सब प्रकारके परिचयोंसे बढ़ कर निकटवर्ती और सहज हो उठा। तब वह केवल श्रद्धा और सम्मानके अधिकारी न होकर अच्छे और बुरे लगने के भाव से वशवर्ती हो गये।

आश्चर्य की बात तो यह है कि हारान बाबूके जिस भावने पहले दूरसे सुचरिता के मन में भक्तिका संचार किया था; और उसे अपनी ओर अधिकाधिक आकृष्ट करना शुरू किया था; वही भाव घनिष्टता और निकटवर्ती होने पर उसे चोट पहुँचाने लगा। ब्राह्मसमाजके भीतर जो कुछ

सत्य है, मंगल और सुन्दर है, उसके अविभावक-स्वरूप हो कर हारान बाबूने उसकी संरक्षताका भार ले लिया था, इसी कारण उन्हें अत्यन्त असंगत रूपसे छोटा देखना पड़ा। सत्यके साथ मनुष्यका जो यथार्थ सम्बन्ध है, भक्ति का सम्बन्ध है, और वह मनुष्य को स्वभावसे ही विनम्र विनीत बना देना है। किन्तु विनम्र न बन कर जहाँ मनुष्य उद्धत और अहंकारी बन जाता है, वहाँ वह अपनी क्षुद्रताको उस सत्यकी ही तुलनामें अत्यन्त सुस्पष्ट रूपसे प्रकट करता है। यहीं पर परेश बाबूके साथ हारानका भेद सुचरिताने देखा और मन ही मन उसकी आलोचना किये बिना उससे नहीं रहा गया। परेश बाबू के मुखमंडलकी शाँत छवि देखते ही उस सत्य का महत्व नजर आता है, जिसे वह हृदय में धारण किये हुए हैं। किन्तु हारान बाबू का हाल वैसा नहीं है। ब्राह्मसमाजीपनकी पोशाकके भीतर अपनेको प्रकट करने की उनकी उच्च प्रवृत्ति और सब कुछ ढक कर उनकी सभी बतों और कामोंमें अशोभन अभद्र रूप से जाहिर हुआ करती है।

हारान बाबू जब ब्राह्मसमाजकी भलाई पर लक्ष्य करके विचारके समय परेश बाबूको भी अपराधी बताना चाहते थे, उन्हें भी कोरा नहीं छोड़ते थे, तभी सुचरिता जैसे चोट खाई हुई नागिन की तरह ऐंठने लगती थी। उससे यह व्यवहार नहीं सहा जाता था। उस समय बङ्गदेश के बीच शिक्षित मण्डलीमें भगवद्गीता का पठना पाठना प्रचलित न था। काली सिंह बाबूका बङ्गानुवाद महाभारत भी प्रायः सभी उन्होने पढ़कर सुचरिताको सुना दिया था। हारान बाबू को यह अच्छा न लगता था। वह ब्राह्मपरिवार में इन सब ग्रन्थों के बायकाटके पक्षपाती थे! उन्होंने खुद भी कभी ये ग्रन्थ नहीं पढ़े। वह रामायण, महाभारत, गीता आदिको गपोड़े- पसन्द गँवार पुराने ख्यालके कुसंस्काराच्छन्न हिन्दुओं की चीज समझ कर उन्हें दूर रखना चाहते थे। धर्मशास्त्रोंमें केवल बाइबिल

ही उनका एकमात्र सहारा थी। परेश बाबू जो अपनी शास्त्र चर्चा और छोटे-मोटे अन्य अनेक मामलों में अब्राह्मकी हद बाँधकर नहीं चलते थे, यह बात हारान बाबूको बहुत बुरी मालूम होती थी; जैसे कोई उनके शरीरमें काँटे चुभोता था। परेश बाबूके आचरण पर कोई जाहिरा य मनही मन किसी तरह का दोषारोपण करे, ऐसी स्पर्द्धा को सुचरिता कभी सह नहीं सकती। और ऐसी स्पर्द्धा प्रकट हो पड़नेसे ही हारान बाबू सुचरिता की नजरों में हेच हो गये थे। यहाँ तक कि इस ओछेपनके आचरण से उसे उन पर अश्रद्धा सी हो चली थी।

हारान बाबूके सांप्रदायिक उत्साहके अत्याचार और संकीर्ण रूखेपनसे यद्यपि सुचरिताका मन भीतर ही भीतर प्रतिदिन उनकी ओरसे बिमुख होता जा रहा था; तथापि हारान बाबूके ही साथ सुचरिताका ब्याह होनेके बारेमें किसी पक्षके मनमें कोई तर्क या सन्देह नहीं था। धर्म समाजकी दूकानमें जो व्यक्ति अपने ऊपर खूब बड़े बड़े अक्षरोंमें उच्च मूल्यका चिट चिपका रखता है, अन्य लोग भी क्रमशः उसके महँगेपनकी —मूल्यकी अधिकता को—स्वीकार कर लेते हैं। यहाँ तक कि परेश बाबूने भी मन ही मन सुचरिताके सम्बन्धमें हारान बाबूके दावेको अग्राह्य नहीं किया। सभी लोग हारान बाबूको ब्राह्मसमाजका भावी कर्णधार अथवा अवलम्बन स्वरूप जानते थे, और वह भी इसके विरुद्ध विचार न करके इसीका अनुमोदन करते थे, इसी कारण परेश बाबू यही सोचा करते थे, इसीकी उनको चिन्ता थी, कि सुचरिता हारान बाबू जैसे मनुष्यके लिये उपयुक्त अर्धाङ्गिनी हो सकेगी या नहीं। यह ख्याल तो कभी उनके मनमें भी नहीं आया कि सुचरिताके लिये हारान बाबू कहाँ तक उपादेय होंगे।

जैसे इस विवाह के प्रस्तावमें किसीने सुचरिताकी ओरसे विचार करना जरूरी नहीं समझा; वैसे ही स्वयं सुचरिताने भी अपनी सुविधा असुविधा की बात कभी नहीं सोची बिचारी। ब्राह्मसमाजके और सब लोगोंकी तरह उसने भी यही निश्चय कर लिया था कि हारान बाबू जिस

दिन कहेंगे, मैं इस कन्या को ग्रहण करनेके लिए प्रस्तुत हूँ, उसी दिन वह इस विवाह रूपी महत्कार्य को स्वीकार कर लेगी।

इसी तरह यह प्रसंग चला आ रहा था। इसी बीच में उस दिन, गोराको उपलक्ष करके हारान बाबूके साथ सुचरिताकी दो चार गर्मागर्मी की बातें होगई थीं उनको सुन सुन कर ही परेश बाबूसे मनमें संशय उपस्थित हुआ कि शायद सुचरिता हारान बाबू पर यथेष्ठ श्रद्धा नहीं रखती—शायद दोनों की प्रकृतिमें/परस्पर मेल न खाने का कोई कारण मौजूद है। इसी कारण वरदासुन्दरी जब व्याहके लिए ताकीद कर रही थी, उस समय परेश बाबू पहलेकी तरह उसका अनुमोदन नहीं कर सके। उसी दिन वरदासुन्दरीने सुचरिताको एकान्त में सूनी जगह बुला कर कहा—तुमने तो अपने बाबू जीको चिन्तामें डाल दिया सूची।

यह सुनकर सुचरिता चौंक उठी। वह अगर भूलकर धोखे से भी परेश बाबूकी चिन्ताका कारण हो उठे, तो उसके लिये इससे बढ़कर कष्टका और कोई कारण हो ही नहीं सकता। उसका चेहरा उतर गया। उसने सटपटा कर पूछा—क्यों मैंने क्या किया?

वरदासुन्दरी—क्या जाने बच्ची। उन्हें शायद किसी तरह जान पड़ाहै कि तुम पानू बाबू को पसन्द नहीं करती हो ब्राह्मसमाज के सभी लोग जानते हैं कि पानू बाबू के साथ तुम्हारा व्याह एक तरहसे पक्का है। ऐसी अगरहालत में तुम—

सुचरिताने व्यग्र हो कर कहा—कहाँ, मां मैंने तो इस सम्बन्ध में कभी किसीसे कोई बात ही नहीं कही-सुनी फिर यह कैसी बात है।

सुचरिताको विस्मित होनेका कारण था? वह हारान बाबूके व्यवहारसे बराबर खीझती आती थी सही, किन्तु विवाहके प्रस्तावके विरुद्ध उसने किसी दिन मनमें भी कुछ नहीं सोचा! कारण, वह यही जानती थी कि सुख दुखकी दृष्टिसे यह विवाह विचारणीय ही नहीं है।

तब उसे खयाल आया कि उस दिन परेश बाबूके सामने ही उसने हारान बाबूके प्रति विराग प्रकट किया था। उसीसे परेश बाबूके चिन्तित

होने का खयाल करके उसके हृदयको चोट लगी। उसने पहले तो कभी किसी दिन ऐसे असंयमका भाव नहीं प्रकट किया। अन्तको मनमें यह पक्का इरादा कर लिया कि आगे अब कभी ऐसी गलती नहीं होगी।

आज हारान बाबूके आते ही बरदासुन्दरीने उन्हे आड़में ले जाकर कहा—अच्छा पानू बाबू आप हमारी सुचरिता से व्याह करेंगे, यह बात सभी के मुँह से सुन पड़ती है, लेकिन आपके मुँह से तो इस बारे में कभी कोई बात नहीं सुनने को मिलती। अगर सचमुच आपका ऐसा इरादा हो तो उसे स्पष्ट करके क्यों नहीं कहते?

हारान बाबू अब और देर न कर सके। इस समय वह सुचरिता को किसी तरह अपने हाथमें कर सकें तो फिर निश्चित हो जायँ। सुचरिता की अपने ऊपर भक्ति और ब्रह्म समाज की हितचिन्तना के बारेमें योग्यता, दोनों बातों की परीक्षा तो पीछे भी की जा सकती है। हारानबाबूने बरदासे कहा—इसके कहने की जरूरत नहीं थी, इससे नहीं कहा। सुचरिताकी अवस्था अठारह सालकी हो जानेकी राह देख रहा था—बस।

बरदाने कहा—आप हर बात में जरा जरूरत से ज्यादा बढ़ जाते हैं। हम लोग तो लड़की की शादी के लिये चौदह बरस ही काफी समझते हैं।

उस दिन चाय पीनेके टेबिल पर सुचरिता का ढँग देखकर परेश बाबू दङ्ग हो गये। सुचरिताने बहुत दिनों से इधर हारानबाबूकी इतनी खातिर और इज्जत नहीं की थी। यहाँ तक कि आज जब हारान बाबू जानेके लिए उठनेका उपक्रम कर रहे थे, उस समय सुचरिताने लावण्य की एक नई शिल्प कला का परिचय देने के बहाने पानू बाबूसे और जरा बैठे रहने का अनुरोध किया।

परेश बाबूका मन इधर से निश्चिन्त हो गया। जो खटका पैदा हो गया था वह जाता रहा। उन्होंने सोचा, मेरी भूल थी। यहाँ तक की वह मन ही मन जरा हँसे भी। सोचा इन दोनों जनों के बीच शायद कुछ गूढ़ प्रणय पैदा हो गई थी और अब वह मिट गई।

उसी दिन जानेके समय हारान बाबूने परेश बाबू के आगे विवाहका प्रस्ताव किया। उन्होंने कहा—कि इस सम्बन्धमें विलम्ब करने की मेरी बिलकुल इच्छा नहीं है।

परेश बाबूको कुछ आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा—लेकिन आपकी राय यह जो है कि अठारह वर्षसे कम अवस्था में लड़कियोंका ब्याह होना अन्याय है! आपने किसी पत्र में लेख भी तो इसी विषय पर लिखकर छपाया था।

हारान ने कहा—मगर सुचरिता के सम्बन्धमें यह नियम लागू न, होना चाहिए। कारण, इसी अवस्था में उसके मन की ऐसी स्थिति हो गई है कि अनेक बड़ी उमर की लड़कियों में भी वह बात नहीं देख पड़ती।

परेश बाबूने प्रशान्त दृढ़ताके साथ कहा—यह बात भले ही हो पानू बाबू, मगर मेरी समझ में जब अभी ब्याह न होनेमें कोई अहितका कारण नहीं देखा जाता, तब आपके-सिद्धान्तके अनुसार सुचरिताको विवाह के योग्य अवस्था हो जाने तक ठहरना ही हमारा कर्त्तव्य है।

हारान बाबूने अपनी मानसिक दुर्बलता प्रकट हो जानेसे लज्जित हो कर कहा—निश्चय ही कर्त्तव्य है। मेरी इच्छा केवल यही है कि एक दिन सब मण्डलीको बुला कर ईश्वरका नाम लेकर सम्बन्ध पक्का कर डाला जाय।

परेश बाबूने कहा—हाँ, यह तो बहुत अच्छा प्रस्ताव है।

——:०:——

[१७]

दो-तीन घन्टे सोने के बाद नींद टूटने पर जब गोराने देखा कि पास ही विनय सो रहा है तब उसका हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हो गया। स्वप्न में किसी एक प्रिय वस्तुको खोकर जागने पर देखा जाय कि वह खो नहीं गई है तो उस समय जैसा आनन्द जान पड़ता है वैसा ही गोराको भी हुआ। विनयको छोड़ देनेसे गोराका जीवन कितना निर्बल हो जाता इसका अनुभव आज वह सोकर उठने के बाद विनयको पासमें देखकर कर सका। इस आनन्दके आवेशमें चंचल हो गोराने विनयको हाथसे हिलाकर जगा दिया और कहा—चलो आज एक काम है।

गोराका प्रतिदिन सवेरेका एक नियमित काम था। वह अड़ोस पड़ोस के छोटे लोगोंके घर जाता आता था। उन लोगोंका उपकार करने या उन्हें उपदेश देनेके लिए नहीं वरन उन सबोंसे केवल भेंट करने ही के लिए वह जाता था। शिक्षित दलमें उसका इस प्रकार जाने-आनेका व्यवहार न था। गोराको वे लोग बाबाजी कहते और हाथ में हुक्का देकर उसका आदर करते थे। केवल उन लोगोंका आतिथ्य ग्रहण करने ही के लिए गोराने जबर्दस्ती तम्बाकू पीनेकी आदत लगा ली थी।

इस दल में गोराका सबसे पक्का भक्त नन्द था। नन्द बढ़ईका लड़का था। बाईस वर्षकी उसकी उम्र थी। वह अपने बापकी दूकान में लकड़ीके संदूक बनाया करता था। शिकारियोंके दलमें नन्दकी तरह बन्दूकका अचूक निशाना किसी का न था। गोराने अपने खेलने वाले दलमें भद्र छात्रोंके साथ इन बढ़ई और लुहारके लड़कों को मिला लिया था। इस मिले हुए दलमें नन्द सब प्रकार के खेल और व्यायाममें सबसे बढ़ा-चढ़ा था। कोई कोई कुलीन छात्र उससे डाह रखते थे; किन्तु गोरा के दबावसे सभी उसको अपने दल का सरदार मानते थे।

इसी नन्दके पैर पर, कई दिन हुए, रुखानी गिर पड़नेसे घाव हो गया था जिससे वह क्रीड़ास्थलमें न जा सकता था। विनयके सम्बन्धमें गोराका

मन कई दिनोंसे विकल था अतः वह अपने उन साथियोंके घर न जा सकता था। आज सवेरे ही विनयको साथ ले वह बढ़ईके टोलेमें जा पहुंचा।

नन्दके दोमञ्जिले खुले घरके फाटकके पास आतेही उसे भीतरसे स्त्रियोंके रोने का शब्द सुन पड़ा। नन्द का बाप या और कोई बन्धु-बान्धव घर पर न था। एक तमाखू की दुकान थी। उस दूकानदार ने आकर कहा—नन्द आज सवेरे मर गया, सब लोग उसे दाह करने के लिए ले गये हैं।

नन्द मर गया? ऐसा स्वस्थ, ऐसा हट्टा-कट्टा जवान, ऐसा तेज, ऐसी शक्ति, ऐसा प्रौढ़ हृदय, इतनी थोड़ी उम्र—वही नन्द आज सवेरे मर गया है। गोराके सारे बदन में सन्नाटा छा गया। वह पत्थर की मूर्त्ति की भाँति खड़ा रहा। नन्द एक साधारण बढ़ई का लड़का था। उसके अभावमें उसके साथियों को कुछ कालके लिए संसार सूना सा दिखाई देने लगा है। उसकी मृत्यु पर शोक करने वालोंकी संख्या अवश्य कम होगी; किन्तु आज गोरा की दशा विचित्र हो गई है। उसे नन्द की मृत्यु बिलकुल असंगत और असम्भव मालूम हुई। गोराने उसे बड़ा ही दिलेर देखा था, वह वास्तव में एक प्रौढ़ हृदय का मनुष्य था—इतने लोग जीते हैं किन्तु नन्दका दृढ़ जीवन कहीं देखनेमें नहीं आता।

उसकी मृत्यु कैसे हुई! इस बातके पूछने पर मालूम हुआ कि उसे पक्षाघात रोग हो गया था। नन्दके पिताने डाक्डर को बुलाना चाहा, किन्तु नन्दकी माँ ने कहा कि बेटे को भूत लगा है। भूत झाड़नेवाला ओझा सारी रात उसके पास बैठकर झाड़ फूँक और मार-पीट करता रहा। पर भूत ऐसा प्रबल था कि वह उसे पकड़कर ले ही गया। बीमारीके आरम्भ में गोरा को खबर देने के लिए नन्दने एक बार अनुरोध किया था। किन्तु इससे कि वह आकर डाक्टरी मतसे इलाज करनेके लिए जिद करेगा, नन्द की माँ ने किसी तरह गोराके पास खबर न भेजने दी।

वहाँ से लौटते समय विनयने कहा—कैसी मूर्खता है। रोग क्या और इलाज क्या।

गोरा—इस मूर्खताकी बातको अपनेको इसके बाहर समझ कर तुम शान्ति लाभ न करो। यह मूर्खता कितनी बड़ी है और इसकी सजा क्या है, इसे यदि तुम स्पष्ट रूपसे देख सकते तो इसे एक मामूली सी बात समझ कर इसको अपने पास से अलग कर डालने की चेष्टा न करते।

मनकी उत्तेजनाके साथ गोरा की गति धीरे धीरे बढ़ने लगी। विनय उसकी बातका कोई उत्तर न देकर उसके साथ तेजी से चलने लगा।

गोरा कुछ देर चुपचाप चलकर सहसा बोला—नहीं, यह न होगा कि मै इस विषय को सहज ही सह लूँ। यह जो भूतका ओझा आकर मेरे नन्दको नार गया है, उसकी सख्त चोट मेरे कलेजे में लगी है—मेरे सारे देशको लगी है। मैं इन कामों को साधारण समझकर छोड़ नहीं सकता। इससे देशका विशेष अनिष्ट होनेकी सम्भावना है।

विनय इस पर भी जब कुछ न बोला तब गोराने गरजकर कहा—विनय, तुम जो मनमें सोच रहे हो वह मैं अच्छी तरह समझ गया हूं। तुम सोच रहे हो इसका प्रतिकार नहीं है, या इसके प्रतिकार का समय आने में अभी बहुत विलम्ब है। किन्तु मैं ऐसा नहीं सोचता। यदि सोचता तो मैं जी न सकता। जो कुछ मेरे देश पर दुख पड़ रहा है उसका प्रतिकार अवश्य है, चाहे वह कितना ही कठिन या प्रबल क्यों न हो। और एक मात्र हमीं लोगों के हाथ में उसका प्रतिकार है यह भावना मेरे मन में खूब दृढ़ है। इसी कारण मैं चारों ओरके इतने दुःख, दुर्गति और अपमानको सहन कर रहा हूं।

विनय—इतनी बड़ी देश-व्यापिनी दुर्गतिके आगे विश्वासको खड़ा रख सकने के लिए मेरा साहस नहीं होता।

गोरा—दुर्गति या दुःख बराबर रह सके इसे मैं किसी तरह नहीं मान सकता—सारे संसार की ज्ञान-शक्ति और प्राण-शक्ति उसे भीतर या बाहर से केवल आघात पहुँचा रही है। विनय, मैं तुमसे बराबर कहता आता हूँ कि मेरा देश मुक्त होगा ही इस बातको तुम कभी स्वप्न में भी असम्भव न समझो। इस पर दृढ़ विश्वास रख कर ही

हमें सदा सावधान रहना होगा। भारतवर्ष स्वाधीन होने के लिए भविष्य में किसी दिन लड़ाई करेगा इसी पर निर्भर होकर तुम निश्चिन्त बैठे हो। मैं कहता हूं, लड़ाई आरम्भ हो गई है, पल पल पर उद्योग चल रहा है। इस समय यदि तुम हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहो तो इससे बढ़कर कायरता और हो ही क्या सकती है?

विनय—देखो गोरा तुमसे मेरा एक मतभेद है। मैं यह देखता हूँ कि हमारे देशमें जहाँ तहाँ जो काम बराबर हो रहा है और जो बहुत दिनोंसे होता आया है उसे तुम रोज रोज नई दृष्टिसे देख रहे हो। हम अपने श्वास-प्रश्वास—को जिस तरह भूले हुए हैं वैसे ही इन सबों को भी। इनसे हम न किसी तरहकी आशा करते हैं और न निराशा ही। इनसे न हमको सुख है न दुःख। समय बड़ी उदासीनता के साथ बीता जा रहा है। चारों ओरके घेरेमें पड़कर हम न अपनी ही बात सोच सकते हैं और न अपने देशकी ही।

एकाएक गोरा का मुँह लाल हो गया, मस्तक की नस तन गईं। वह बड़ी तेजी से एक गाड़ी वाले के पीछे अपनी तेज आवाज से सड़कके लोगोंको चकित करके बोला—"गाड़ीको रोको!" एक मोटा बाबू घड़ी चेन लगाये गाड़ी हाँकता जा रहा था। उसने एक बार पीछे फिर कर देखा। एक आदमीको दौड़ते हुए आते देख वह दोनों तेज घोड़ोंको चाबुक मारकर पल भरमें गायब हो गया।

एक बूढ़ा मुसलमान सिर पर एक टोकरीमें फल तरकारी, अण्डा-रोटी और मक्खन आदि खाद्य-सामग्री लिये जा रहा था। चेन-चश्माधारी बाबूने उसको गाड़ीके सामनेसे हट जानेके लिये जोरसे पुकार कर कहा था। उसको वृद्धने न सुना, गाड़ी उसके ऊपरसे निकल जाती, परन्तु एक आदमीने झट उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींच लिया। इस तरह उसके प्राण तो बच गये। पर टोकरी उसके सिर परसे गिर पड़ी और उसमें की सभी चीजें इधर-उधर लुढ़क गईं। बाबूने क्रुद्ध होकर कोचबक्स से घूम उसे डैम सुअर कहकर गाली दी और तड़से उसके मुँह पर एक

चाबुक जमा दिया और घोड़ों की रास ढीली कर दी। चाबुक की चोट से उसके सिर पर लोहू निकल आया। बुड्ढे ने अल्ला कहकर लम्बी साँस ली और जो चीजें खराब न हुई थीं, उन्हें चुनकर वह टोकरी में रखने लगा। गोरा आगे न बढ़ बिखरी हुई चीजों को बटोरकर उसकी टोकरी में रखने लगा। बूढ़े मुसलमानने सज्जन पथिक के इस व्यवहारसे अत्यन्त संकुचित होकर कहा—बाबू आप क्यों तकलीफ कर रहे हैं ? ये चीजें तो खराब हो गईं अब ये किसी काम में न आयेंगी। गोरा भी इस कामको अनावश्यक समझता था और वह यह भी जानता था कि जिसको मदद दी जा रही है वह सकुचा जा रहा है। ठोकरी भर जाने पर गोराने उससे कहा—जो चीज तुम्हारी नुक्सान हो गई है उसका दाम तुम्हें मालिक से न मिलेगा। इसलिए मेरे घर चलो, मैं पूरा दाम देकर तुमसे ये सब चीजें मोल ले लूँगा। किन्तु एक बात तुमसे कहता हूं, बिना कुछ कहे-सुने तुमने जो अपमान सह लिया है, इसके लिए तुमको अल्ला माफ न करेगा।

जो कसूरवार होगा उसीको अल्ला सजा देगा, मुझे क्यों देगा ?

गोरा—जो अन्याय सहता है वह भी दोषी है। क्योंकि अन्याय सहने ही से संसार में अन्यायकी सृष्टि होती है अन्याय न सहने से कोई किसीके ऊपर अनुचित व्यवहार न कर सकेगा। मेरी बातका मतलब समझो इतना याद रक्खो कि सहिष्णुता गुण नहीं है उसे एक प्रकारका दोष ही समझो। सहनशील लोग दुष्टोंकी संख्या बढ़ाते हैं। तुम्हारे मुहम्मद साहब इस बातको जानते थे, इसीसे वे सहनशील बनकर धर्मका प्रचार नहीं करते थे।

वहांसे गोराका घर पास न था, इसलिए वह बृद्ध मुसलमानको विनय के घर ले गया। विनयकी टेबलके पास, दराज के सामने खड़े होकर उसने विनयसे कहा—रुपया निकालो।

विनय—तुम इतने व्यग्र क्यों होते हो ? बैठो, 'मैं अभी देता हूँ।' यह कहकर विनय चाभी खोजने लगा, पर चाभी न मिली। गोराने कुञ्जी

का इन्तजार न कर झट बन्द दराजको जोरसे खींचा। ताला टूट जानेसे दराज बाहर निकल आया।

दराज खुलते ही उसमें रक्खे हुए परेश बाबूके घरके सब लोगोंके पूरे चित्र पर सबसे पहले उसकी नजर गई। यह चित्र विनयने अपने छोटे मित्र सतीश के द्वारा प्राप्त किया था। रुपया लेकर गोराने उस बूढ़े मुसलमानको दे बिदा किया, किन्तु फोटोके सम्बन्ध में कुछ न कहा। गोराके इस विषयमें चुप रहते देख विनयने भी उसका कोई जिक्र न किया। चित्रके सम्बन्धमें दो-चार बातें हो जातीं तो विनयका मन हलका हो जाता।

गोरा एकाएक बोल उठा—अच्छा, मैं चलता हूं।

विनय—वाह! तुम अकेले जाओगे! मांने मुझको तुम्हारे ही यहाँ खानेको बुलाया है, इसलिए मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ।

दोनों घरसे बाहर हुए। रास्तेमें गोरा अबकी बार कुछ न बोला। दराजके चित्रने उसको स्मरण करा दिया कि विनयके मनकी एक धारा ऐसे गुप्त मार्गसे बह रही है जिसके साथ गोरा के जीवनका कोई सम्पर्क नहीं है।

घरके पास आते ही उन्होंने देखा कि महिम फाटकके पास खड़े-खड़े रास्तेकी ओर देख रहे हैं। दोनों मित्रोंको एक साथ देख उन्होंने कहा—क्या मामला है? कल तो तुम दोनों सारी रात जागते रहे। मैं सोच रहा था, शायद तुम दोनों सड़कके किनारे कहीं सो गये होंगे। दिन तो बहुत चढ़ आया। जाओ विनय बाबू तुम नहा लो।

विनयको इस तरह ताकीद करके नहानेके लिए भेज कर महिम गोरासे कहने लगे, देखो गोरा तुमसे जो बात कही थी, उस पर तनिक विचार करो। विनयके ऊपर अगर तुमको यह सन्देह है कि वह हिन्दू धर्मके आचार-विचारको नहीं मानता, उनके विरुद्ध चलताहै तो तुम्ही बताओ, आजकल कट्टर हिन्दू पात्र मिल कहाँ सकता है? केवल कट्टर हिन्दू होनेसे ही तो कुछ होगा नहीं, लड़का सुशील और पढ़ा लिखा भी तो होना

चाहिए ! ऊँची शिक्षा और कट्टर हिन्दूपन इन दोनों के मिलने से पदार्थ तैयार होता है, वह हमारे हिन्दू मतके अनुसार ठीक शास्त्रीय न होगा, किन्तु बुरा भी नहीं। अगर तुम्हारी लड़की होती तो इस बारेमें मेरे साथ तुम्हारा मत बिलकुल ठीक मिल जाता इसमें सन्देह नहीं।

गोराने कहा—सो अच्छा तो है—जान पड़ता है इसमें विनयको भी कुछ उजर न होगा।

महिम—लो सुनो ! विनयको आपत्तिके लिए किसे चिन्ता है ! मैं तो तुम्हारी ही 'नाहीं-नूहीं' को डरता हूं ! तुम एक बार अपने मुँहसे विनयसे इसके लिए अनुरोध करो; बस मैं और कुछ नहीं चाहता। उससे अगर कुछ फल न होगा तो फिर मैं नहीं कहूंगा।

गोराने कहा—अच्छा।

महिमने मन ही मन कहा—अब क्या है, मार लिया ! हलवाईके यहाँ मिठाईके लिए और अहीरके यहाँ दही दूधके लिए बयाना दे सकता हूँ।

गोराने मौका पाकर विनयसे कहा—शशिमुखीके साथ तुम्हारे व्याहके लिए दादाने बहुत जोर डालना शुरू किया है। अब क्या कहते हो ?

विनय—पहले तुम बताओ, तुम्हारी इच्छा क्या है ?

गोरा—मैं तो कहता हूँ, बुरा क्या है !

विनय—पहले तो बुरा ही कहते थे ! हम दोनों व्याह न करेंगे, इतना तो एक तरह से ठीक ही हो गया था।

गोरा—लेकिन अब यह तय हुआ कि तुम व्याह करो, और मैं न करूँ।

विनय—क्यों, एक स्थानकी यात्रा में दो रातें या दो फल क्यों।

गोरा—दो रातें या दो फल होने के भयसे ही तो यह व्यवस्था की जाती है। विधाता किसी किसी आदमीका सहजही अधिक भार ग्रस्त करके गढ़ा करते है, और कोई कोई सहज ही भार हीन होते हैं। उक्त दोनों प्रकारके जीवों को एक साथ मिलकर चलाना हो, तो एकके ऊपर बाहरसे बोझ डालकर दोनों का वजन बराबर कर लेना होता है। तुम

ब्याह करके जरा जिम्मेदारीके बोझसे दबोगे, और तब मैं और तुम दोनों एक चालसे चल सकेंगे।

विनयने जरा हँसकर कहा--अगर तुम्हारा यही मतलब हो, तो इधर भी बटखरा रक्खो।

गोरा—बटखरेके बारे में कुछ आपत्ति तो नहीं है न ?

विनय—वजन बराबर करनेके लिए जो कुछ मिल जाय, उसीसे काम चलाया जा सकता है। वह चाहे पत्थर हो चाहे ढेला, जैसी खुशी हो।

यह विनय के जानने को बाकी नहीं रह गया कि गोराने इस विवाह के प्रस्ताव में क्यों इतना उत्साह प्रकट किया। गोराके मनमें यह सन्देह हुआ है कि विनय कहीं परेश बाबूके परिवारमें व्याह न कर बैठे, यह अनुमान करके विनय मनहीमन हँसा। दोपहरको भोजनके उपरान्त रात की नींदका ऋण चुकानेमें ही दिन बीत गया। उस दिन दोनों मित्रों में और कोई बात नहीं हुई। जब जगतके ऊपर सन्ध्याके अन्धकार का पर्दा पड़ गया, जिस समय प्रणयी लोगोंके बीच मनका पर्दा उठ जाता है, तब, उसी समय, छतके ऊपर बैठे हुए विनयने सीधे आकाश की ओर ताक कर कहा—देखो गोरा मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ। मुझे जान पड़ता है, हम लोगों के स्वदेश प्रेमके भीतर कोई बहुत बड़ी कमी है। हम लोग भारतवर्षको आधा करके देखते हैं।

गोरा—कैसे, बताओ ?

विनय—हम लोग भारतवर्षको केवल पुरुषोंका ही देश समझते और उसी दृष्टिसे देखते हैं। स्त्रियों की ओर हमारी दृष्टि ही नहीं है।

गोरा—तुम अंग्रेज की तरह शायद औरतोंको घर, बाहर, जलमें स्थल में, शून्य में, आहार-आमोद में, काम काजमें; सभी जगह देखना चाहते हो। मगर इसका फल यह होगा कि तुम पुरुषोंकी अपेक्षा औरतोंको ही अधिक करके देखते रहोगे।

विनय—ना, ना, मेरी बातको इस तरह उड़ा देनेसे काम नहीं चलेगा। मैं औरतोंको अंग्रेजोंकी तरह देखूँगा या नहीं, तुम यह बात क्यों उठाते

हो ? मैं कहता हूँ यह सर्वथा सत्य है कि हम लोग स्वदेशके अन्तर्गत स्त्रियों वाले आधे अंश को अपनी चिन्ता के भीतर यथेष्ट परिणाम में नहीं लाते । तुम्हारी ही बात मैं कह सकता हूँ, तुम औरतोंके बारेमें घड़ी भर भी नहीं सोचते—तुम देशको जैसे रमणी-रहित ही जानते हो। किन्तु इस तरहका जानना कभी ठीक या सत्य जानना नहीं है।

गोरा—मैंने जब अपनी माँको देखा, अपनी माँको जाना, तब अपने देशकी सभी स्त्रियोंको उसी एक स्थान में देख लिया और जान लिया। कम से कम मेरी तो यही धारणा है।

विनय—यह तो तुमने अपनेको भुलानेके लिये गढ़ कर एक बात कह भर दी है। घरके काजके भीतर घरका आदमी अगर घरकी औरतोंको अत्यन्त परिचित भावसे देखे तो यथार्थ देखना है ही नहीं—इस तरह यथार्थ देखना हो ही नहीं सकता मैं जानता हूँ कि अंगरेजों के समाजके साथ किसी तरहकी तुलना करते ही तुम आगबबूला हो उठोगे। इसीसे मैं तुलना करना नहीं चाहता। मैं नहीं जानता कि हमारी औरतें ठीक कितना और किस तरह समाज में प्रकट हों तो मर्यादा का उल्लघन न होगा, किन्तु यह तो स्वीकार ही करना होगा कि इस तरह औरतोंके प्रच्छन्न या ढके रहने से हमारा स्वदेश हमारे निकट अर्द्ध-सत्य बना हुआ है। वह हमारे हृदय में पूर्ण प्रेम और पूर्ण शक्ति नहीं दे पाता।

गोरा—दिन और रात जैसे समय के दो भाग है वैसे ही पुरुष और स्त्री ये समाजके दो अंश हैं। समाजकी स्वाभाविक अवस्था में स्त्रियाँ रात्रि ही की तरह प्रच्छन्न होंगी—उनके सभी काम निगूढ़ और एकान्तमें होंगे। किन्तु जहाँ समाज की अस्वभाविक अवस्था है वहाँ वह रातको जबरदस्ती दिन बना डालता है—वहाँ गैस जलाकर कल चलाई जाती है, रोशनी करके रात भर नाचना गाना होता है। उसका फल क्या होता है। फल यही होता है कि रात्रिका जो स्वाभाविक सन्नाटे का—एकान्त का काम है वह नष्ट हो जाता है, क्लान्ति बढ़ती रहती है, मनुष्य उन्मत्त हो उठता है ! औरतो को भी अगर

उसी तरह हम प्रकाश्य कर्म-क्षेत्र में खींच लाते हैं तो उनके निगूढ़ कर्म की व्यवस्था नष्ट हो जाती है, – उससे समाजका स्वास्थ्य बिगड़ता है, उसकी शांति में खलल पड़ता है। समाजमें एक तरह का मतवाला मन घुस आता है! साधारण दृष्टिसे देखने में वह मत्तता शक्ति सी प्रतीत होती है, किन्तु असल में वह अगर शक्ति है तो विनाश करने ही की। नर और नारी दोनों समाज-शक्तिके दो पहलू हैं। पुरुष ही व्यक्त (देख पड़ने वाला) है किन्तु व्यक्त होने के कारण ही वह बड़ा नहीं है। नारी अव्यक्त है। इस अव्यक्त शक्ति को अगर केवल व्यक्त करने की चेष्टा की जाय, तो वह सारी पूँजी को खर्च में डाल कर समाज को तेजीके साथ दिवालिया कर देनेकी ओर ले जाना होगा। इसी कारण तो कहता हूँ कि हम मर्द लोग अगर यज्ञ के क्षेत्रमें रहें और औरतें रहें घरके भण्डार की देखरेख में, तभी स्त्रियों के अदृश्य रहने पर भी यज्ञ सुसम्पन्न होगा। जो लोग सारी शक्तिको एक ही तरफ, एक ही जगहमें, ही एक ही तरहसे खर्च करना चाहते हैं, वे उन्मत्त हैं।

विनय०—गोरा, तुमने जो कहा, उसका मैं प्रतिवाद करना नहीं चाहता—लेकिन मैं जो कुछ कह रहा था, उसका तुमने भी प्रतिवाद नहीं किया। असल बात –

गोरा—(बात काटकर) देखो विनय इसके आगे अगर इस बात को लेकर अधिक बकबक की जायगी तो वह बहसका रूप धारण कर लेगी। मैं स्वीकार करता हूँ कि आजकल हाल ही में तुम औरतों के सम्बन्ध में जितना सचेत सतर्क हो उठे हो, मैं उतना नहीं हुआ। बस, तुम जो अनुभव करते हो, वही अनुभव मुझे भी करानेकी तुम्हारी चेष्टा कभी सफल न होगी। इस कारण इस बारे में फिलहाल हम दोनों में मत भेद रह जाना ही क्यों न मान लिया जाय? यही अच्छा होगा।

गोराने बात उड़ा दी। किन्तु बीज को हवा में उड़ा देने से भी वह मिट्टी में गिरता है और मिट्टी में गिरने से मौका पाकर उसके अँकुरित होनेमें कोई रुकावट नहीं रह जाती। गोराने अबतक जीवन के क्षेत्र से

स्त्री जातिको एकदम दूर हटा रक्खा था, और उसने कभी स्वप्न में भी इस बात का अनुभव नहीं किया कि वह एक अभाव है। आज विनय की बदली हुई हालत देख कर, संसार में स्त्रीजाति की विशेष सत्ता और प्रभाव उसके आगे प्रत्यक्ष हो उठा। लेकिन इसका स्थान कहाँ है इसका प्रयोजन क्या है, इस प्रश्नका उत्तर वह कुछ भी नहीं ठीक कर सका। इसी कारण इस बात पर विनयसे बहस करना उसे अच्छा नहीं लगता। इस विषय को वह अस्वीकार भी कर सकता, और अच्छी तरह उसे समझ भी नहीं पाता। अतएव उसे आलोचना के बाहर रखना चाहता है।

रातको विनय जब अपने घरको लौट रहा था, तब आनन्दमयी ने उसे पुकार कर कहा—विनय भैया, शशिमुखीके साथ क्या तेरा ब्याह पक्का हो गया है?

विनयने लज्जायुक्त मुसकान के साथ कहा—हाँ माँ,—गोरा इस शुभ कर्म का संयोजक है। आनन्दमयी ने कहा—शशिमुखी लड़की तो बहुत अच्छी है, लेकिन भैया, लड़कपन न कर। मैं मनको अच्छी तरह रत्ती-रत्ती जानती हूँ—तू आज कल कुछ दुचित्ता हो रहा है, इसीसे चटपट यह काम किये डालता है। देख, अभी सोच कर देखने का समय है। तू अब सयाना हो आया है भैया—इतना बड़ा काम अश्रद्धा के साथ, तुच्छ समझ कर, न कर डालना।

यों कह कर वह विनय के शरीर पर हाथ फेरने लगी। विनय कुछ न कह कर धीरे-धीरे चला गया।

—— —:*:——

[१८]

विनय आनन्दमयीकी ऊपर लिखी बातों को सोचता हुआ घरको गया। आनन्दमयीकी कही एक बात की भी उपेक्षा आज तक कभी विनय ने नहीं की। उस रातको उसके हृदय पर जैसे एक बोझ रक्खा रहा।

दूसरे दिन सवेरे उठने पर विनयको अपनी तबियत हलकी सी जान पड़ी—उसे जान पड़ा, जैसे वह किसी भारी बोझके दबावसे छुटकारा पा गया है। विनयको समझ पड़ा, उसने जैसे गोरा की मित्रताको बहुत बड़ी कीमत देकर चुका दिया है। एक तरफ शशिमुखीसे ब्याह करने के लिये राजी होकर उससे जीवन भरके लिये जो एक बन्धन स्वीकार किया है, उसके बदलेमें दूसरी तरफ उसे गोराकी मित्रता का बन्धन अलग कर देने का अधिकार हो गया है। गोराने विनयके ऊपर यह जो सन्देह किया है कि वह अपनी समाजको छोड़कर ब्राह्म परिवारमें ब्याह करने को ललचा उठा है, सो इस मिथ्या सन्देहके पास शशिमुखीके विवाह को सदाके लिये जमानतके रूपमें जमा करके उसने अपने को छुड़ा लिया। इसके बाद विनय बिना किसी संकोचके परेश बाबूके घर अधिकताके साथ जाने आने लगा।

जिनको विनय पसन्द करे उनके निकट घरका—सा अपना सा आदमी बन जाना विनयके लिये कुछ भी कठिन नहीं। उसने जैसे ही गोरा की तरफका संकोच अपने हृदयसे दूर कर दिया वैसे ही, देखते—ही देखते कुछ ही दिनोंके भीतर, वह परेश बाबू के घरके सभी आदमियोंकी दृष्टि में जैसे बहुत दिनोंकी जान पहिचानवाले आत्मीयके समान हो उठा। उसकी प्रकृति और व्यवहार ही ऐसा था।

केवल ललिताके मनमें जिन कई दिनों तक यह सन्देह रहा कि शायद सुचरिताका मन विनयकी ओर कुछ खिंच गया है, उन्हीं कई दिनों तक उसका मन अवश्य विनयके विरुद्ध जैसे खड्ग-हस्त हो उठा था। किन्तु जब उसने स्पष्ट ही समझ लिया कि उसकी धारणा भ्रम मात्र थी, सुचरिताको

विनयका विशेष भावसे पक्षपात नहीं है, तब उसके मनका वह विद्रोह दूर हो गया, उसे चैन पड़ी। फिर तो उसे भी विनय बाबूको असाधारण भलो आदमी मानने में कोई बाधा नहीं रही।

हारान बाबू विनयसे विमुख नहीं हुए।, उन्होंने जैसे सबकी अपेक्षा कुछ अधिक मात्रामें यह स्वीकार किया कि विनयको भलमंसी या भले आदमियोंके शिष्टाचार व्यवहारका ज्ञान है। इस स्वीकृत की खास ध्वनि यही थी कि गोरा इस ज्ञानसे बिल्कुल शून्य है।

विनय कभी हारान बाबूके सामने कोई बहसकी बात नहीं उठाता था सुचरिताकी भी यही चेष्टा देखी जाती थी कि ऐसा कोई तर्क उनके सामने ना उठया जाया। इसी कारण इस बीचमें विनयके द्वारा चायके टेबिल पर शान्ति भंग नहीं होने पायी।

मगर हारान बाबूकी गैरहाजिरमें सुचरिता आपही छेड़कर विनयको उसके अपने समाज सम्बन्धी मतकी चर्चा और आलोचनामें प्रवृत्त करती थी। सुचरिताके मनमें यह जाननेका जो कौतूहल था कि गोरा और विनय के ऐसे शिक्षित पुरुष कैसे देशके प्राचीन कुसंस्कारोका समर्थन कर सकते हैं उसे वह किसी तरह दमन नहीं कर सकती थी। गोरा और विनयको वह अगर न जानती होती तो उन सब मतोंका समर्थक जान लेने पर दूसरी कोई बात न सुन कर उन्हें अवज्ञाके योग्य ठहरा लेती। किन्तु गोराको जबसे उसने देखा तबसे वह गोराको अश्रद्धाके साथ अपने हृदयसे दूर नहीं कर पाती। इसीसे सुयोग पाते ही वह घुमा फिराकर विनयके आगे गोराके मन और जीवनकी आलोचना शुरू कर देती है, और बीच बीचमें विनयकी बातोंका प्रतिवाद करके सब बातें अन्त तक उसके पेटसे बाहर निकाल लेती हैं। परेश बाबू समझते थे कि सब सम्प्रदायोंका मत सुनने देना सुचरिताकी सर्वतोमुखी सुशिक्षाका सहज उपाय है। इसी कारण वह ऐसे सब तर्क बितर्कोंसे कभी शङ्कित नहीं हुए, और न बाधा ही दी।

एक दिन सुचरिताने पूछा—गौर बाबू क्या सचमुच जाति भेद मानते

हैं या केवल देशानुराग दिखानेके लिये ही ऐसा करते हैं ?

विनयने कहा—आप क्या सीढ़ीके स्तरोंको मानती हैं ? ये भी तो सब वैसे ही विभाग हैं—कोई ऊपर है कोई नीचे ।

सुचरिता—नीचे से ऊपर चढ़नेके लिये मानना ही पड़ता है—नहीं तो मानने का कोई प्रयोजन नहीं था ।

समतल भूमि में सीढ़ी न माननेसे भी काम चल सकता है ।

विनय—ठीक कहा आपने—हमारा समाज भी एक सीढ़ी है इस जाति-भेद या वर्णाश्रम विभाग का एक उद्देश्य था और वह है नीचेसे ऊपर उठा देना—मानव जीवनके एक परिणाम में ले जाना । यदि हमारी यह धारणा होती कि समाजका परिणाम यह संसार ही है तो किसी विभागकी व्यवस्थाका प्रयोजन ही नहीं था; तब तो योरुपियन समाज की तरह हममें से हरएक दूसरे की अपेक्षा अधिक पर अधिकार जमाने के लिये छीना झपटी और मार काट करता रहता ।

सुचरिता—आपकी बातें मेरी समझ में नहीं आई । मेरा प्रश्न यह कि आप जिस उद्देश्यसे समाजमें वर्ण भेदका प्रचलित होना बता रहे हैं क्या उस उद्देश्यको आप सफल हुआ देख रहे हैं ?

विनय—पृथ्वी पर सफलताकी सूरत देख पाना बड़ा कठिन है । भारत ने जो जाति भेदके नामसे समाजिक समस्या का एक महत्वपूर्ण उत्तर दिया है वह उत्तर अभी मरा नहीं है—वह अब भी पृथ्वीके सामने मौजूद है । योरप भी समाजिक समस्याका कोई ठीक और अच्छा उत्तर अभी तक नहीं दे सका । वहाँ केवल ठेला-ठेली और हाथा-पाई हो रही है भारतवर्षका पूर्वोक्त उत्तर मानव- समाजमें भी सफलताके लिए प्रतीक्षा किए हुए हैं ।

सुचरिता ने संकोचके साथ पूँछा—आप नाराज न हो, सच कहिएगा; ये सब बातें आप गौर बाबू की प्रतिध्वनिकी तरह—मरे हुये ग्रामोफ़ोन की तरह—कह रहे हैं, या स्वयं इनपर सम्पूर्ण विश्वास भी रखते हैं ?

विनयने हँसकर कहा—गोराकी तरह मेरा विश्वास जोरदार नहीं है ।

जाति-भेद का कूड़ा और समाजके विकार जब मैं देख पाता हूँ, तभी तरह—तरहके संदेह प्रकट किया करता हूँ। किन्तु गौर बाबू कहते हैं कि "बड़ी वस्तुको छोटा करके देखने से ही संदेह उत्पन्न होता है; वृक्षकी टूटी शाखा और सूखे पत्तों को ही वृक्षकी चरम प्रकृति मानकर देखना बुद्धि की असहनशीलता है।" मैं टूटी हुई शाखा की प्रशंसा करनेको नहीं कहता; किन्तु मेरा कहना यह है कि तुम समग्र वनस्पतिको देखो और उसका तात्पर्य समझने की चेष्टा करो।

सुचरिता ने कहा—वृक्षके सूखे पत्तों पर ध्यान न दिया जाय न सही, किन्तु वृक्षके फलको तो देखना होगा। जाति-भेद का फल हमारे देशके लिए कैसा है?

विनय—आप जिसे जातिभेद का फल कहती हैं वह अवस्थाका फल है, केवल जाति भेदका फल नहीं है। हिलते हुए दाँतसे किसी चीजको चबाने में जो व्यथा होती है, उसमें सब दातोंका कोई अपराध नहीं है; वह अपराध केवल हिलते हुए दाँतका ही है। अनेक कारणोंसे हम लोगों में अनेक विकार और दुर्बलता का प्रवेश हो गया है; इसीसे हम भारतवर्ष के उद्देश्य को सफल न बना कर विकृत करते हैं। गौर बाबू इसी कारण बराबर कहते हैं। स्वस्थ होओ सबल होओ।

सुचरिता—अच्छा तो फिर आप क्या ब्राह्मण-जातिको नर-देव मानने के लिये कहते हैं? आप क्या सचमुच यह विश्वास करते हैं कि ब्राह्मणके पैरों की धूल से मनुष्य पवित्र होता है?

विनय—पृथ्वीतल पर अनेक सम्मान हो तो हमारी अपनी सृष्टि है। ब्राह्मणको यदि हम यथार्थ ब्राह्मण बना दे सकें, तो क्या वह समाज के लिये साधारण लाभ होगा? हम नरदेव चाहते हैं? हम अगर नरदेव को यथार्थ ही हृदय के साथ बुद्धि-पूर्वक चाहें, तो अवश्य नरदेव को पावेंगे। और, अगर मूढ़की तरह आँखे मूँद कर नरदेवको चाहेंगे, तो जो सब अपदेवता सब तरह के दुष्कर्म करने रहते हैं, और हमारे मस्तकमें पैरों की धूल लगाना जिनकी जीविकाका उपाय या पेशा है,

उनका दल बढ़ाकर पृथ्वीका भार ही केवल बढ़ाते रहेंगे !

सुचरिता—अच्छा, यह आपके यथार्थ नरदेव क्या आज कल कहां हैं ? मिल सकते हैं ?

विनय—बीजके भीतर जैसे वृक्ष है, वैसेही वे भी भारतवर्ष के आंतरिक अभिप्राय और प्रयोजन के भीतर मौजूद हैं। अन्य देश वेलिंग्टनके समान सेनापति, न्यूटन के समान वैज्ञानिक, रथचाईल के समान लखपती चाहते हैं, किन्तु हमारा देश यथार्थ ब्राह्मण को चाहता है। वह ब्राह्मण, जिसे भय नहीं है, जो लोभको घृणा करता है, जो दुःखको सहन शक्ति से जीतता है, जो अभाव पर लक्ष्य नहीं करता जिसने अपने विशुद्ध चित्तको परब्रह्मसे लगा रक्खा है। जो अटल है, जो शान्त है, मुक्त है, उसी ब्राह्मण को भारतवर्ष चाहता है —वैसे ही ब्राह्मण को यथार्थ भाव से जब पावेगा, तभी भारतवर्ष होगा। हम भारतवासी क्या राजाके आगे सिर झुकाते हैं, या अत्याचारोंका बन्धन अपने गलेमें डालते हैं ? हमारा सिर अपने ही भयके आगे झुका हुआ है, हम अपने लोभ के जालमें जकड़े हुए हैं हम अपनी मूढ़तासे ही दासानुदास हैं ! ब्राह्मण तपस्या करें—उस भय से, लोभसे मूढ़तासे हमें मुक्त करें—हम उनके निकटसे युद्ध नहीं चाहते, वाणिज्य नहीं चाहते, और उनसे हमारा और कोई प्रयोजन नहीं है।

परेश बाबू सब चुपचाप सुन रहे थे। वह धीरे धीरे कहने लगे - यह तो नहीं कह सकता कि मैं भारतवर्ष को जानता हूँ और यह भी निश्चय ही नहीं जानता कि भारतने क्या चाहा था, और किसी दिन उसे पाया था या नहीं; किन्तु प्रश्न यह है कि जो दिन बीत गये जो जमाना गुजर गया, उन्हीं दिनोंमें—उसी जमाने में—क्या कभी कोई फिर लौट कर जा सकता है ? वर्तमानमें जो सम्भव है, वही हम लोगों की साधनाका विषय है—अतीतकी ओर दोनों हाथ बढ़ा कर समय नष्ट करनेसे क्या कुछ काम हो सकता है !

विनयने कहा—आप जो कुछ कह रहे हैं अक्सर मैंने भी यही सोचा और अनेक बार कहा भी है- गौर बाबू कहते हैं, हम अतीतको अतीत

(गुजरा हुआ) होनेके कारण बरखास्त किये बैठे हैं, इसीसे क्या वह अतीत हो गया है ? कोई सत्य कभी अतीत हो ही नहीं सकता।

सुचरिताने कहा—आप जिस तरह ये सब बातें कह रहे हैं, उस तरह साधारण आदमी नहीं कहते—इसी कारण आपके मनको समग्र देशकी चीज मान लेने में मनमें संशय होता है !

विनयने कहा—हमारे देश में साधारणतः जो लोग अपनेको हिन्दू कहकर उसका अभिमान करते हैं, मेरे मित्र गौर बाबूको आप उस दिल का आदमी न समझियेगा। वह हिन्दू-धर्मको भीतरकी ओरसे और बहुत बड़े रूपमें देखते हैं। वह कभी यह मनमें भी नहीं लाते कि हिन्दू धर्मका प्राण निहायत शौकीन प्राण है—वह थोड़ी-सी छुआछूतसे ही सूख जाता है और साधारण बात-प्रत्याघातसे ही उसकी मृत्यु हो जाती है।

सुचरिता—लेकिन जान तो यही पड़ता है कि वह खूब सावधान रह कर छूआ-छूतको मान कर चलते हैं।

विनय—उनकी यह सतर्कता एक अद्भुत वस्तु है। उनसे अगर प्रश्न किया जाय, तो वह फौरन कह देंगे—"हाँ मैं यह सब मानता हूं कि छू जानेसे जाति जाती है, खा लेनेसे पाप होता है; यह सब अभ्रान्त सत्य है", लेकिन मैं जानता हूं, ये सब उनकी जबर्दस्ती की बातें हैं। ये सब बातें जितनी असंगत होती हैं, उतना ही वह सबको सुनाकर जोर से कहते हैं ! कहीं वर्तमान हिन्दू आचार की साधारण बातको भी अस्वीकार करनेसे अन्य मूढ़ लोग हिन्दू-आचारकी बड़ी बात का भी असम्मान न कर बैठें और जो लोग हिन्दू आचारको कुसंस्कार कह कर अश्रद्धा की दृष्टिसे देखते हैं, वे उसे अपनी जीत न मान बैठें, इसी भयसे गौर बाबू, बिना कुछ बिचार किये, सभी बातें मानकर चलना चाहते हैं। मेरे आगे भी इस सम्बन्धमें अपनी कुछ भी शिथिलता नहीं दिखलाना चाहते।

परेश बाबू ने कहा—ब्राह्म लोगों में भी इस तरह के आदमी बहुत हैं। इस शंकासे कि कहीं बाहर का कोई आदमी भूलकर यह न समझ बैठे कि वे हिन्दू धर्म की कुप्रथाओंको भी स्वीकार करते है, वे हिन्दू

आचार का सभी तरह का संसर्ग, बिना किसी विचारके, छोड़ देना चाहते हैं, ऐसे लोग संसार में खूब सहज भावसे नहीं चल सकते—वे या तो ढोंग रखते हैं, और या हर काम में हद दर्जेकी ज्यादती करते हैं। समझते हैं सत्य दुर्बल है, और केवल कौशल करके अथवा जोर करके सत्यकी रक्षा करना जैसे कर्तव्यका अंग है। मेरे ऊपर सत्य निर्भर है, मैं सत्य पर निर्भर नहीं हूं—इस तरहकी जिनकी धारणा होती है। उन्हींको कट्टर कहते हैं। मेरी सदा ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि चाहे ब्राह्म लोगों की सभा हो और चाहे देवमन्दिर हो, मैं सर्वत्र सत्य को सिर झुका कर बहुत ही सहजमें बिना विद्रोहके प्रणाम कर सकूँ—बाहर कोई बाधा मुझे उससे रोक न रख सके।

परेश बाबूने इतना कह कर चुप चाप जैसे हृदयमें अपने मनका समाधान कर लिया। उन्होंने कोमल स्वरसे पूर्वोक्त जो शब्द कहे, उन्होंने इतनी देरकी सम्पूर्ण आलोचनाके ऊपर जैसे एक बड़ा 'सुर' गुँजा दिया—वह सुर केवल ऊपर कहीं गई कुछ बातोंका ही सुर नहीं, बल्कि परेश बाबूके अपने जीवनका एक प्रशांत गम्भीर तार (उच्च) सुर है। सुचरिता और ललिताके मुख पर जैसे आनन्द-मिश्रित -भक्तिकी दीप्ति उज्ज्वल प्रकाश डाल गई। विनय चुपका बैठा रहा। वह भी मन-ही-मन जानता था कि गोराके भीतर, उसके कामोंमें एक प्रचण्ड जबर्दस्ती है—सत्यका प्रचार करने वालों को वाक्य मन और कर्ममें जो एक सहज और सरल शान्ति रहनी चाहिए, वह गोरामें नहीं है। परेश बाबू की बातें सुन कर उस खयालने उसके मन पर जैसे और भी स्पष्ट आघात किया।

सुचरिता रातको आकर लेट रही, ललिता उसके पलंगपर एक किनारे आकर बैठ गई। सुचरिता समझी, ललिताके मनके भीतर कोई बात निकलने के लिए हलचल डाले हुए है। यह भी सुचरिता समझ गई कि वह बात विनयके ही सम्बन्धमें है इसीलिये सुचरिताने आप ही कहा—विनय बाबू, मुझे बड़े भले मालूम पड़ते हैं।

ललिताने कहा – वह सिर्फ गौर बाबूकी बातें घुमा फिराकर कहते हैं न, इसीसे तुम्हें रुचते हैं।

सुचरिता इस कथनके भीतर छिपे हुये इशारेको समझ कर भी टाल गई, जैसे समझी ही नहीं। उसने एक सरल भाव धारण करके कहा—यह तो सच है, उनके मुख से गौर बाबू को प्रत्यक्ष देख पाती हूं।

ललिताने कहा—मुझे तो बिलकुल अच्छा नहीं लगता।

सुचरिताने विस्मयके साथ कहा—क्यों?

ललिताने कहा—गोरा, गोरा, गोरा, दिन-रात सिर्फ गोरा ही गोरा! मान लिया, उनके मित्र गोरा खूब बड़े और अच्छे आदमी हैं, अच्छी बात है—लेकिन वह खुद भी तो मनुष्य हैं।

सुचरिताने हँसकर कहा – सो तो हैं ही, लेकिन उनके मनुष्यत्व में कमी क्या हुई?

ललिता – उनके मित्रने उनको इस तरह ढक लिया है वह अपने तईं प्रकट नहीं कर सकते। जैसे किसीके सिर पर भूत सवार होगया हो। ऐसी दशामें मुझे उस मनुष्य पर भी क्रोध आता है, और उस भूत पर भी श्रद्धा नहीं होती।

ललिताकी झल्लाहट देख कर सुचरिता चुपचाप हँसने लगी।

ललिताने कहा—दीदी; तुम हँसती हो, लेकिन मैं तुमसे कहे देती हूँ, मुझे कोई इस तरह आच्छन्न कर रखने की चेष्टा करता, तो मैं एक दिन भी सह न सकती। मान लो तुम हो – लोग चाहे जो समझें तुमने मुझे अपने प्रभावसे आच्छन्न नहीं कर रक्खा है; तुम्हारी प्रकृति ही इस तरहकी नहीं है—तुम मुझे ढक रखनेकी चेष्टा नहीं करती, इसीसे मैं तुमको इतना चाहती और मानती हूं। असल बात यह है कि बाबूजी से ही तुम्हें यह शिक्षा मिली है—वह हर एकको उसका 'स्थान' छोड़ देते हैं।

इस परिवारमें सुचरिता और ललिता दोनों परेश बाबूकी अनन्य भक्त हैं। "बाबूजी कहते ही उनकी छाती जैसे फूल उठती है।

सुचरिताने कहा—बाबूजी के साथ भला कही और किसी की तुलना हो सकती है ? मगर चाहे जो कुछ कहो बहन, विनय बाबूमें बोलनेकी शक्ति बहुत विलक्षण हैं। वह खूब बोल सकते हैं।

ललिताने कहा—वे विचार खास उनके हृदयके नहीं हैं, इसीसे वह उन्हें इस अद्भुत आलंकारिक ढँग से कहते हैं। वह अगर खास अपने हृदयके विचारोंको कहते, तो वह उनकी बातचीत खूब सहज और स्वभाविक होती है। यह न जान पड़ता कि वह खूब सोच-सोच सँभाल-सँभाल करकह रहे है। मुझे तो ऐसी अद्भुत बातोंकी अपेक्षा वे सहज सरल स्वभाविक बातें ही बहुत अच्छी लगती है।

सुचरिता—खैर नाराज क्यों होती है बहन ? गौर मोहन बाबूकी बातें वास्तवमें विनयकी अपनी ही बातें है। दोनों अभिन्न हृदय मित्र हैं।

ललिता—अगर ऐसा है, तो वह बहुत ही बुरा है। ईश्वरने क्या बुद्धि इसलिए दी है कि पराए विचारोंका बखान करें—पराई बातोंकी व्याख्या करें ? मुँह क्या इसलिए ईश्वरने बनाया है कि हम पराई बातोंकों बहुत अच्छी तरह बनाकर वर्णन करें ? मुझे ऐसी अद्भुत बातें न चाहिए।

सुचरिता—लेकिन यह तू नहीं समझ पाती कि विनय बाबू गौरबाबू पर स्नेहका भाव रखते हैं। दोनोंका मन मिला हुआ है—हृदय एक हो गया है ?

ललिता को जैसे असह्य हो उठा। वह कह उठी—ना, ना, यह बात नही है—दोनोंके हृदयों सम्पूर्ण मेल नहीं है। असल बात यह है कि गोरा बाबू को बड़ा मानना, उनका अनुगमन करना विनय बाबूकी आदत में दाखिल हो गया है—इसका उन्हें अभ्यास-सा हो गया है। यह उनकी गुलामी है, स्नेह नहीं है। वह जबरदस्ती यह समझना चाहते हैं कि गौर बाबू के मत से उनका मत ठीक मिलता है। प्रीति अगर होती है तो प्रीति-पात्रके साथ मतभेद रहने पर भी उसको कोई आँच नहीं पहुँचती। मनुष्य अन्धभक्त हुए बिना-भी आत्म त्याग कर सकता है, दूसरे को मान

कर चल सकता है ! किन्तु विनय बाबू में तो यह बात नहीं है । वह गौर बाबूको मानते हैं शायद प्रेमसे ही मगर उसे स्वीकार नहीं कर पाते । यह बातें उनकी बातें सुननेसे ही स्पष्ट समझमें आ जाती है—अच्छा दीदी, तुम यह नहीं समझी थी, सच कहना ?

सुचरिताने ललिताकी तरह इस प्रकार यहां तक उस बातको सोचा ही नहीं था, लक्ष्य ही नहीं किया था । कारण गोराको सम्पूर्ण रूपसे जानने के लिए ही उसका कौतूहल व्यग्र हो रहा था—विनयको गोरासे अलग करके देखने के लिए उसे आग्रह ही नहीं था । सुचरिताने ललिता के प्रश्नका स्पष्ट उत्तर न देकर कहा—अच्छा, अच्छी बात है, तेरी ही बात मैं माने लेती हूँ—तो बता, क्या करना होगा ?

ललिता—मेरा जी चाहता है विनय बाबूको बन्धु के बन्धनसे छुड़ा कर स्वाधीन कर दूँ ।

सुचरिता—अच्छा तो है बहन चेष्टा करके देख न ।

ललिता—मगर यह काम मेरी चेष्टासे न होगा—तुम जरा मन पर धरो तो जरूर हो सकता है ।

सुचरिता भीतर-ही-भीतर समझ लिया कि विनय उस पर अनुरक्त है, तो भी उसने ललिता की इस बात को हँसकर उड़ा देनेकी चेष्टा की ।

ललिता ने कहा—तथापि वह जो गौर बाबूके शासनपाशको ढीला करके तुम्हारे पास इस तरह अपनेको आश्रद्ध करनेके लिये आते हैं तुम्हारे प्रति आत्म समर्पण का भाव प्रकट करते हैं इसीसे मुझे भले लगते हैं । उनकी अवस्थामें अगर कोई और होता, तो वह अवश्य ही ब्राह्मसमाजी महिलाओंको भला-बुरा कहकर एक नाटक लिख डालता । लेकिन उनका मन अब भी उदार है । इसका प्रमाण यही है कि बाबूजी पर भक्ति रखते हैं और तुम्हें भी चाहते हैं । सचमुच दीदी विनय बाबूको उनके अपने भावसे खड़ा करना होगा—परावलम्बी और स्वाभिमानी बनाना होगा । वह जो केवल गौर मोहन बाबू का मत फैलाते फिरते हैं उनका गुणगान करते रहते हैं यही मुझे असह्य जान पड़ता है ?

इसी समय दीदी—दीदी कहता हुआ सतीश वहां दाखिल हुआ। विनय आज उसे किले के मैदान में सर्कस दिखाने ले गया था। यद्यपि अधिक रात बीत चुकी थी; तो भी बालक सर्कस देखने के उत्साह खुशी और विस्मयको सभाँल नहीं पाता था। सर्कस का वर्णन करके उसने कहा—विनय बाबूको आज मैं अपने ही यहाँ सोनेके लिये पकड़े लाता था। वह दरवाजे के भीतर आये थे मगर वैसे ही लौटे गये। दीदी, मैंने उनसे एक दिन तुम्हें भी सर्कस दिखाने के लिये ले जाने को कहा है।

ललिताने पूछा—उस पर उन्होंने क्या कहा ?

सतीशने कहा—उन्होंने कहा औरतें बाघ देखकर डर जायँगी। लेकिन दीदी मैं तो बिलकुल नहीं डरा। कहकर सतीश पौरुषके अभिमान से छाती फुलाकर बैठ गया।

ललिताने कहा—सो तो ठीक ही है ? तुम्हारे मित्र विनय बाबूका साहस कितना बड़ा है यह खूब मेरे समझ में आ रहा है।—ना भाई हम लोगों को साथ लेकर तुम्हे सर्कस दिखाने ले जाना ही पड़ेगा।

सतीशने कहा—कल तो दिन को सर्कस होगा।

ललिताने कहा—यह भी अच्छा है। हम दिन ही को आयँगी।

दूसरे दिन विनयके आते ही ललिता कह उठी—लो ठीक समय पर ही विनय बाबू आये हैं!—चलिए।

विनय—कहाँ चलना होगा ?

ललिता—सर्कस

सर्कस ! दिनके समय हजारों मर्दोंके सामने औरतोंको लेकर सर्कस जाना ! विनय तो हतबुद्धि हो गया।

ललिताने कहा—शायद गौर बाबू हमें ले जानेसे खफा होंगे—क्यों विनय बाबू यही बात है न ?

ललिता के इस प्रश्नसे विनय कुछ चौंक उठा।

ललिता ने फिर कहा—सर्कस में औरतोंको ले जानेके सम्बन्धमें गौर मोहन बाबूकी क्या कोई राय है !

विनय—निश्चय है।

ललिता—क्या राय है? आप जरा उसकी व्याख्या कहिये। मैं दीदी को बुला लाऊँ; वह भी सुनेगी।

विनय ठहाकेसे हँस पड़ा। ललिता ने कहा—हंसते क्यों हैं विनय बाबू? आपने कल सतीश से कहा था कि औरतें बाघसे डरती हैं।

इसके बाद उस दिन औरतों को लेकर विनय सर्कस में गया था। केवल यही गोरा के साथ उसका सम्बन्ध ललिताको और शायद इस घर की अन्य स्त्रियों को कैसा प्रतीत हुआ है यह ख्याल भी बार-बार विनय के मनमें हलचल मचाने लगा।

फिर जिस दिन विनयसे भेंट हुई उस दिन ललिता ने जैसे बहुत ही लापरवाहीके साथ कौतूहलका भाव दिखा कर प्रश्न किया—गौर बाबू से आपने उस दिन सर्कस जाने का जिक्र किया था!

इस प्रश्न की गहरी चोट विनय के मन पर लगी क्योंकि उसे कहना पड़ा—ना अभी तक तो नहीं किया। यह उत्तर देते समय उसके कानों की जड़ तक चेहरा तमतमा उठा, शायद शर्मके मारे।

इतनेमें लावण्य आ गई। उसने कहा—विनय बाबू चलिए न

ललिताने कहा—कहाँ? सर्कसमें क्या!

लावण्यने कहा—वाह आज सर्कस कहाँ है! मैं बुलाती हूँ इसलिए कि विनय बाबू चलकर मेरे रूमालमें चारों ओर एक किनारे की बेल पेंसिल से खींच दें—मैं उसे काढ़ लूँगी।

लावण्य विनयको पकड़ ले गई।

—:०:—

सबेरेके पहर गोरा कोई लेख लिख रहा था। विनयने एकाएक उसके पास आकर अव्यवस्थित भावसे कहा—मैं उस दिन परेश बाबू की लड़कियोंको सर्कस दिखाने ले गया था।

गोरा लिखते बोला—हाँ सुना है।

विनयने विस्मित होकर कहा—तुमने किससे सुना?

गोरा अबिनाशसे। वह भी उस दिन सर्कस देखने गया था।

गोराने पहले ही यह सुन लिया, सोभी अविनाशके मुँहसे, इसलिए उसमें टीका-टिप्पणी की कोई बात न रही। इससे चिरसंस्कार-वश विनयके मनमें विशेष सङ्कोच हुआ। सर्कसमें जानेकी यह बात इस प्रकार जन समाजमें प्रकट न होती तो वह खुश होता।

इसी समय उसे स्मरण हो आया कि कल रातको देर तक जागते रहकर वह मन ही मन ललितासे झगड़ता रहा है। ललिता समझती है कि गोराको विनय उतना ही मानकर चलता है जितना कि विद्यार्थी अपने मास्टरको। ऐसा अन्याय करके भी एक मनुष्य दूसरे को ठीक-ठीक नहीं समझ सकता। गोरा और विनयकी घनिष्ठमित्रता है। असाधारण गुणके कारण गोरा पर उसकी भक्ति है सही किन्तु इसी लिए ललिताने जो कुछ समझ रक्खा है वह गोरा और विनय दोनोंके साथ अन्याय है न तो विनय ही नाबालिक है और न गोरा ही उसका अभिभावक है।

गोराने लिखने में मन लगाया। विनय ने ललिताके दो तीन तीखे प्रश्नोंका मन ही मन स्मरण करने लगा। वह सहज ही उन प्रश्नोंको मनसे न हटा सका।

सोचते ही सोचते विनयके मनमें विद्रोहने सिर उठाया। सर्कस देखने गये तो क्या हुआ? अविनाश कौन है जो उन बातोंके विषय में गोराके साथ आलोचना करने आता है! अथवा गोरा ही मेरी गति विधिके सम्बन्धमें उस अकार्य-भाजन के साथ क्यों बातें करता है? क्या मैं गोरा

का नौकर हूँ या उसका कैदी हूँ, जो उसकी आज्ञाके अनुसार चलूँगा? मैं किसीसे मिलूँगा किसीके साथ बात चीत करूँगा; या कहीं जाऊंगा तो क्या मुझे गोरा को इन बातों की कैफियत देनी होगी?

विनय यदि अपनी भीरुताको इस प्रकार अपने भीतर स्पष्ट रूपसे न देख पाता तो उसे गोरा और अविनाश के ऊपर इतना क्रोध न होता। गोराके पास वह कोई बात क्षण भरके लिये भी छिपा नहीं सकता, इस-लिए वह आज मनही मन गोराको ही अपराधी बनानेकी चेष्टा कर रहा है। गोराने ही उसे पर-वश बना रक्खा है। मित्रता में ऐसी परवशता क्यों? सर्कस जानेकी बातके लिए यदि गोरा विनयको दो एक खरी-खोटी बातें सुनाता तो उससे भी मित्रत्व भावकी समता जानकर विनयको सान्त्वना मिलती। किन्तु गोरा गम्भीर भावसे बहुत बड़े विचारकका रूप धारण कर मौन द्वारा विनयका अपमान कर रहा है इससे, ललिताकी बात काँटेकी तरह उसके मनमें चुभने लगी।

इतनेमें महिमने कमरे के भीतर प्रवेश किया। पानोंकी डिबियासे एक बीड़ा पान विनयके हाथमें देकर कहा—विनय, इधर तो सब ठीक है। अब तुम्हारे चाचाके हाथकी चिट्ठी आने भरकी देर है। वह मिलते ही मैं निश्चिन्त हो जाऊंगा। तुमने तो उनको पत्र लिख ही दिया होगा?

इस विवाह की चर्चा आज विनयको बहुत बुरी लगी, परन्तु वह जानता था कि इसमें महिमका कोई दोष नहीं है। उनको बचन दे दिया गया है। किन्तु वचन देनेके भीतर उसने अपनी एक हीनता समझी। आनन्दमयीने तो उसे एक प्रकार से रोका था—उसका स्वयं भी इस विवाहके प्रति कुछ विशेष झुकाव न था तो यह बात इस प्रकार झट-पट पक्की क्योंकर हो गई? गोराने जल्दी की है, यह भी नहीं कहा जा सकता। विनय यदि किसी तरह अस्वीकृति का भाव दिखाता तो गोरा इसके लिए हठ करता, यह भी सम्भव नहीं, किन्तु तो भी—इसी तोभी के ऊपर फिर ललिता की व्यङ्गोक्ति आकर विनयके मनको दुखाने लगी, मानों वह उसके हृदयके भीतर नश्तरका काम करने लगी। उस दिनकी

ऐसी कोई विशेष घटना न थी, किन्तु बहुत दिनके प्रभुत्वकी बात सोचकर ही विनयकी यह अवस्था हो रही है। वह केवल घनिष्ट प्रेम और नितान्त भलमनसीके कारण गोराकी झिड़की और हुकूमत सहनेको अभ्यस्त सा हो गया है। इस कारण यह प्रभुत्वका सम्बन्ध ही मित्रताके सिर पर चढ़ बैठा है। इतने दिन तक विनयने इसका अनुभव नहीं किया था, किन्तु अब अनुभव करने ही से क्या हो सकता है? अब इसे अस्वीकार करते भी तो नहीं बनता। तो क्या शशिमुखीके साथ ब्याह करना ही होगा? विनयने कहा—जी नहीं, चाचाजी पास तो अभी तक चिट्ठी नहीं भेजा।

महिम—यह मेरी ही भूल है। यह चिट्ठी तो तुम्हारे लिखनेकी नहीं है—यह मैं ही लिखूँगा। उनका नाम और पूरा पता क्या है?

विनय—आप घबराते क्यों हैं? आश्विन या कार्त्तिकमें तो विवाह हो नहीं सकेगा। रहा अगहन—सो उसमें भी एक वाधा है। मेरे वंशमें, बहुत समय पहले, अगहनमें न मालूम कब क्या दुर्घटना हुई थी। तबसे मेरे कुल में अगहन में विवाह आदि कोई शुभ कर्म नहीं होता।

महिमने हाथ का हुक्का घरके कोनेमें रखकर कहा—विनय, तुम लोग यदि ये बातें मानोगे तो इतना पढ़-लिखकर क्या किया? एक तो इस मनहूस देशमें शुभ मुहूर्त्त खोजने से भी नहीं मिलता इस पर फिर घर-घर पत्रा खोलकर बैठनेसे संसार का काम कैसे चलेगा?

विनय—तो आप भादों या आश्विनको ही क्यों निषिद्ध मानते हैं?

महिम—कौन कहता है कि मैं मानता हूँ! कभी नहीं। परन्तु मैं करूँ क्या। इस देशमें भगवानको न माननेसे कोई हर्ज नहीं किन्तु भादों, आश्विन, शनि, बृहस्पति, तिथि और नक्षत्र न माननेसे कोई घरमें भी न रहने देगा। फिर भी मैं जो कहता हूँ कि मैं नहीं मानता सो ठीक है; किन्तु कोई काम करते समय मुहूर्त्त ठीक न होनेसे मन अप्रसन्न हो जाता है। देशकी बिगड़ी हवासे जैसे मलेरिया होता है, वैसे ही यह डर भी। इसे मैं किसी तरह दूर नहीं कर सकता।

विनय—मेरे वंशमें अगहन का डर कोई न मिटा सकेगा। और लोग मान भी सकते हैं; परन्तु मेरी चाची किसी तरह राजी न होंगी।

इस तरह उस दिन विनयने किसी ढंग से विवाह की बातको टाल दिया।

विनयकी बातोंके रङ्ग-ढङ्गसे गोरा समझ गया कि इसके मनमें कुछ भावान्तर उपस्थित हुआ है। गोराको यह भी पता लग गया था कि विनय अब पहले की अपेक्षा परेश बाबूके घर अधिक जाने आने लगा है। उस पर भी आज इस विवाहके प्रस्तावमें फन्दा काटकर उसके निकल जाने की चेष्टा देख गोराके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ।

गोराने कहा—विनय, एक बार जब तुम भाई साहबको वचन दे दे चुके हो तब क्यों इनको दुविधा में डालकर नाहक कष्ट दे रहे हो?

विनय सहसा असहिष्णु होकर बोला—मैंने वचन दिया है—या जबरदस्ती मुझसे वचन ले लिया गया है?

विनयका यह आकस्मिक विद्रोह भाव देखकर गोरा विस्मित हुआ। उसने खड़े होकर कहा—किसने तुमसे जबरदस्ती वचन कहलाया है।

विनय—तुमने।

गोरा—मेरी तुम्हारे साथ इस सम्बन्धमें दो एक बातोंसे अधिक बातचीत नहीं हुई। इसीको तुम वचन कहलाना कहते हो!

वस्तुतः विनय के पास कोई विशेष प्रमाण न था। गोरा जो कहता है वही सत्य है। बात चीत बहुत थोड़ी हुई थी और उसमें कोई ऐसे आग्रहका भाव न था जिसे जबर्दस्ती कहा जाय। तो यह बात सच है कि गोराने विनयके पेट से उसकी सम्मति मानों लूटकर बाहर निकाल ली थी? जिस मुकदमेका बाहरी सबूत कम है उस मुकदमे में मनुष्यको क्षोभ भी कुछ अधिक होता है। इसीसे विनयने कुछ लड़खड़ाती हुई जबान से कहा—जबरदस्ती कहलानेके लिये बहुत बातोंकी जरूरत नहीं होती।

गोराने कुर्सी से खड़े होकर कहा—तो, अपनी बात फेर ली! यह बात इतनी बेशकीमती नहीं कि मैं इसे तुमसे माँगकर या जबरदस्ती लूँ।

पासके कमरेमें महिम थे। गोराने उच्च स्वरसे पुकारा—भाई साहब।

महिम हड़बड़ा कर दौड़ आये। गोराने कहा—मैं शुरू से ही कहता आया हूँ कि शशिमुखीके साथ विनयका व्याह न होगा।

महिम—हाँ, कहा तो था! तुम्हारे सिवा और कोई ऐसी बात कह नहीं सकता। दूसरा कोई भाई होता तो भतीजी के विवाह के प्रस्तावमें पहले ही से उत्साह दिखाता।

गोरा—आपने मेरे द्वारा विनयसे अनुरोध क्यों कराया?

महिम—सोचा था, उससे काम हो जायगा और कोई बात नहीं।

गोराने आँखें लाल करके कहा—मैं इन सब बातोंमें नहीं रहता। विवाह की बिचवानी करना मेरा काम नहीं मेरा काम कुछ और है।

यह कहकर गोरा घरसे चला गया, महिम हतबुद्धि से खड़े ही रहे। इसके कुछ कहने के पहले ही विनय भी घरसे चलता हुआ। महिम कोने से हुक्का उठाकर चुपचाप बैठ गये और पीने लगे।

गोराके साथ इसके पहले विनयके कई बार झगड़े हो गये हैं किन्तु ऐसे प्रचण्ड दावानलकी तरह झगड़ा कभी नहीं हुआ। विनय अपनी करतूत पर पहले दुखी हो उठा, किन्तु पीछे घर जाने पर उसके हृदयमें बाण विंधने लगा। घड़ी भरके भीतर ही मैंने गोरा को कितनी बड़ी चोट पहुँचाई है इसका स्मरण करके उसे बहुत पश्चात्ताप हुआ। खाना, पीना और सोना उस दिन उसे कुछ न रुचा। विशेषकर इस घटनामें गोराको दोष देना नितान्त अनुचित है, यही उसको सन्तप्त करने लगा। वह अपने को बार-बार धिक्कारने लगा।

दो बजे दिनको आनन्दमयी सबको खिला पिलाकर और आप भी खाकर जब सिलाई करने को बैठी थी तब अचानक विनय उसके पास आकर बैठा। आज सवेरेको कितनी ही बातें आनन्दमयी ने महिम से सुनी थीं। भोजनके समय गोरा के मुंहका गम्भीर भाव देखकर भी वह ताड़ गई गई थी कि आज कुछ खटपट जरूर हुई है।

विनयने आते ही कहा—माँ, शशिमुखीके साथ व्याहके सम्बन्धमें मैंने आज सवेरे गोरासे जो कुछ कहा है उसका कोई अर्थ नहीं।

आनन्दमयीने कहा—एक जगह रहनेसे आपसमें कभी कभी खटपट हो ही जाती है। मनके भीतर किसी व्यथा का बोझ होने से वह इसी तरह बाहर निकल पड़ता है। यह अच्छा ही हुआ। मनका मैल निकल जाना ही अच्छा है। इस झगड़े की बात दो दिन बाद तुम भी भूल जाओगे, गोरा भी भूल जायगा।

विनय—किन्तु मां, शशिमुखीके साथ ब्याह करने में मुझे कोई उज्र नहीं है यही मैं तुमसे कहने आया हूँ।

आनन्दमयी—पहले इस झगड़े को मिटा लो; जब तक झगड़ेकी, बात नहीं मिटती तब दूसरे झंझटमें मत पड़ो। ब्याह गुड़िया का खेल तो है नहीं, वह सम्बन्ध सदाके लिये होगा। झगड़ा तो दो दिन का है।

विनयने इस बात को न माना। वह इस प्रस्ताव को लेकर गोरा के पास न जा सका, परन्तु महिमसे जाकर बोला—विवाहके प्रस्तावमें कोई बाधा नहीं—माघ महीनें में यह कार्य हो जायगा। चाचाजीकी इसमें असम्मति न होगी, यह भार मैं अपने ऊपर लेता हूँ।

महिमने कहा—तो फल दान हो जाय।

विनय—अच्छा, वह आप गोरा से सलाह लेकर करें।

महिम—फिर गोरा से सलाह लेने को कहते हो?

विनय—बिना उससे सलाह किये काम न चलेगा।

महिम—न चलेगा, तब तो आखिर सलाह लेनी ही होगी। किन्तु"—यह कर उन्होंने डिब्बेसे पान निकालकर मुँहमें रक्खा।

——:o:——

[२०]

महिम ने उस दिन गोरासे कुछ न कहा। वे दूसरे दिन उसके कमरे में गये। उन्होंने सोचा था, गोराको फिर राजी करने में बहुत कहना सुनना पड़ेगा। किन्तु उन्होंने ज्योंही आकर कहा कि विनय कल शामको आकर विवाहके सम्बन्ध में पक्का वचन दे गया है और फल दान के विषय में तुमसे सलाह लेने को कहा है, त्योंही गोरा ने अपनी सम्मति प्रकट कर कहा—अच्छा तो फल दान हो जाय।

महिम ने अचम्भित होकर कहा—अभी तो कहते हो, अच्छा, पीछे फिर कहीं लड़ न बैठना।

गोरा—मैंने रोकनेके अभिप्रायसे तो झगड़ा किया नहीं। अनुरोध का ही झगड़ा है।

महिम—इसी लिए हम तुमसे हाथ जोड़कर यह विनय करते हैं कि न तुम इसमें बाधा दो और न अनुरोध ही करो; न तो हमें कुरु पक्ष की नारायणी सेना की ही जरूरत है और न पाण्डव पक्ष के नारायण को ही। मैं अकेला जो कर सकूँगा वही अच्छा होगा। मैंने भूल की थी जो तुमसे अनुरोध करनेको कहा था। पहले मैं यह न जानता था कि तुम्हारी सहायता भी उलटी होती है। जो हो; यह जो कार्य हो रहा है इसमें तुम्हारी इच्छा तो है?

गोरा—जी हाँ, इच्छा है।

महिम—यही चाहिये। तुम इस विषयमें अब कुछ उद्योग न करना।

गोराने अब समझा कि विनयको दूरसे खींच रखना कठिन होगा। जहाँ आशंकाकी जगह है वहीं पहरा देना चाहिए। उसने मनमें सोचा कि यदि परेश बाबू के घर बराबर जाया आया करूँ तो विनयको घेरेके भीतर रख सकूँगा।

उसी दिन अर्थात् झगड़ेके दूसरे दिन तीसरे पहरको, गोरा विनय के घर आ पहुँचा। विनयको यह आशा न थी कि गोरा आज ही आवेगा। इस कारण उसके मनमें खुशीके साथ साथ आश्चर्य भी हुआ।

इससे भी बढ़कर आश्चर्यका विषय यह था कि आनेके साथ ही गोराने परेश बाबूकी लड़कियोंकी चर्चा छेड़ दी। फिर उस पर चमत्कार यह कि उसमें आक्षेपकी किंचित्मात्र गन्ध न थी ! यह आलोचना विनय को उत्तेजित करने के लिए यथेष्ट थी, किसी विशेष चेष्टा की आवश्यकता न हुई।

दोनों मित्रोंमें उस दिन घूम फिरकर परेश बाबूकी लड़कियोंके विषय में वार्तालाप होते होते रात हो गई।

गोरा अकेला घर लौटते समय रास्ते में इन सब बातों को मन ही मन सोचने लगा और घर आकर जब तक उसे बिछौने पर जाकर नींद न आई तब तक वह परेश बाबू की लड़कियोंकी बातको मनसे दूर न कर सका। गोरा के जीवन में यह आज नई घटना है। इसके पहले आज तक कभी उसके मन में स्त्रियोंकी बातने स्थान नहीं पाया था। अनेक साँसारिक व्यवहारोंमें यह भी एक चिन्ताका विषय है, इसे विनयने इस दफे प्रमाणित कर दिया। यह बात अब किसी तरह उड़ाई नहीं जा सकती। या तो इसकी रक्षा करनी होगी या इसके विरुद्ध युद्ध करना होगा।

दूसरे दिन विनयने जब गोरासे कहा—परेश बाबूके घर एक बार चलो न, बहुत दिनसे नहीं गये हो; वे बराबर तुम्हारी बात पूछा करते हैं तब गोरा बिना कुछ उज्र किये जानेको राजी हो गया ? सिर्फ राजी ही नहीं हुआ, उसके साथ कुछ उत्सुकता भी थी। पहले सुचरिता और परेशबाबूकी कन्याओं के स्थिति के सम्बन्ध में यह बिलकुल उदासीन था, किन्तु अब उसके मनमें एक नये कुतूहलका भाव उत्पन्न हुआ है। विनयके चित्तको वे कैसे इस तरह अपनी ओर खींच रही हैं यह जाननेके लिए उसके मनमें विशेष आग्रह हुआ।

जब दोनों परेश बाबूके घर पहुँचे तब साँझ हो गई थी। छतके ऊपर वाले कमरेमें दिया जलाकर हारानबाबू अपना एक अंगरेजी लेख परेश बाबू को सुना रहे थे। यहाँ परेशबाबू एक उपलक्ष मात्र थे, असल में सुचरिताको सुनाना ही उनका उद्देश्य था। आंखों पर रोशनी न आने देने के लिए सुचरिता मुँहके सामने ताड़का पङ्खा किये टेबलके कुछ दूर एक तरफ चुप बैठी थी। वह अपने स्वाभाविक सरल भाव से निबन्ध सुनने के लिए विशेष चेष्टा कर रही थी, किन्तु रह रहकर उसका-मन हठात् दूसरे ओर चला जाता था।

इसी समय नौकर ने आकर जब गोरा और विनय के आने की खबर दी तब सुचरिता एकाएक चौंक उठी। वह कुरसीसे उठ खड़ी हुई उसे उठकर जाते देखकर परेश बाबूने कहा—सुचरिता कहाँ जाती हो? बैठो, और कोई नहीं है, हमारे विनय और गौरमोहन आ रहे हैं।

सुचरिता सकुचाकर फिर बैठ गई। हारानबाबूके लम्बे अंगरेजी लेखके पाठमें विघ्न पहुंचनेसे सुचरिताका जी हलका हुआ। गोरा के आनेकी बात सुनकर उसके मन में किसी प्रकारका उल्लास न हुआ हो सो नहीं, किन्तु हारानबाबू के सामने गोरा के आनेसे उसके मनमें एक तरहकी बेचैनी और संकोच मालूम होने लगा—दोनोंमें पीछे झगड़ा न हो, यह सोचकर या अन्य किसी कारणसे, यह कहना कठिन है।

गोराका नाम सुनते ही हारान बाबूका मन उदास सा हो गया। गोराके नमस्कार का किसी तरह उत्तर देकर वह मुँह लटकाये बैठे रहे। हारान बाबू को देखते ही उसीके साथ बादविवाद करने के लिये गोराका जी फड़क उठा। वरदासुन्दरी अपनी तीनों लड़कियों को लेकर कहीं नेवते में गई थीं। तय हो गया था कि शाम को परेश बाबू जाकर उन सबोंको ले आवेंगे। परेशबाबूके जानेका समय हो गया है। ऐसे समय में गोरा और विनयके आ जाने से उनके जाने में बाधा हुई किन्तु अब अधिक विलम्ब करना उचित न समझकर वे सुचरिता और हारानबाबू के

कान में कह गये—तुम इनके साथ कुछ देर बैठो; जहाँ तक होगा मैं शीघ्र ही आता हूँ।

देखते ही देखते गोरा और हारान बाबू के बीच भारी शास्त्रार्थ छिड़ गया। जिस विषय पर तर्क चला था वह यह था;—कलकत्तेके निकटवर्त्ती किसी जिले के मैजिस्ट्रेट ब्राउंला साहबसे परेश बाबूकी ढाके में भेंट हुई थी। परेश बाबूकी स्त्री और लड़कियाँ पर्देका लिहाज न रखकर बाहर निकलती थीं, इससे खुश होकर साहब और मेम दोनों उनकी बड़ी खातिर करते थे। साहब अपने जन्म-दिनको हरसाल कृषि प्रदर्शिनी का मेला कराते थे। इस दफे बरदासुन्दरीने ब्राउंला साहबकी मेमसे भेंट करके उसके आगे अंग्रेजी काव्य-साहित्य में अपनी लड़कियोंकी विशेष योग्यता का वर्णन किया। यह सुनकर मेम साहबाने कहा—'अबकी बार के मेले में छोटे-लाट साहब अपनी मेम के साथ आवेंगे। आपकी लड़कियाँ यदि उनके सामने एक आध छोटा सा कोई अँग्रेजी नाटक खेलें तो बड़ा अच्छा हो।' इस प्रस्ताव पर वरदासुन्दरी अत्यन्त उत्साहित हो उठीं। आज वह अपनी लड़कियों के अभ्यास की जाँच करानेके लिये किसी मित्र के घर गई हैं। इस मेलेमें गोरा आवेगा या नहीं? यह पूछने पर गोरा कुछ अनावश्यक उग्रता के साथ बोला—"नहीं।" इस प्रसंग पर, इस देशके अँग्रेजों और बङ्गालियोंके बीच क्या सम्बन्ध है और परस्पर सामाजिक सम्मेलनमें कौन सी बाधा है इस विषय पर दोनोंमें प्रचण्ड वादविवाद उपस्थित हुआ।

हारान बाबूने कहा—बङ्गालियोंका ही दोष है। हम लोगोंमें इतने कुसंस्कार और कुप्रथाएं हैं कि हम लोग अँग्रेजके साथ मिलने योग्य नहीं रहे।

गोरा—अगर यही सच है तो उस अयोग्यता के रहते भी अँगरेजके साथ मिलनेके लिए लार टपकाते फिरते हमारे लिए बड़ा लज्जाका विषय है।

हारान—किन्तु जो योग्य हैं वे अँगरेजोंके यहाँ यथेष्ट सम्मान पा रहे हैं—जैसे ये लोग।

गोरा—एक व्यक्ति के आदर से जहाँ और सभी व्यक्तियों का विशेष अनादर हो वहाँ उस आदरको हम भारी अपमान में गिनते हैं।

यह उत्तर पा हारान बाबू अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे; गोरा उनको ठहर-ठहरकर वाक्य बाण से वेधने लगा।

दोनों में जब इस प्रकार बातें हो रही थी तब सुचरिता टेबलके पास बैठकर पंखे की आड़ से गोराको टकटकी बाँधे देख रही थी। जो बात होती थी सो उसके कानमें आती अवश्य थी, किन्तु उस ओर उसका मन नहीं था। पूछने पर शायद वह न बता सकती कि मैंने क्या सुना है! सुचरिता जो स्थिर दृष्टिसे गोराको देख रही थी, सो उस सम्बन्धमें यदि उसका मन अपने हाथसे बाहर न हो गया होता तो वह अपनी इस धृष्टता पर लज्जित होती किन्तु वह मानो अपनेको भूलकर गोराको निहार रही थी। गोरा अपनी मजबूत बाँहोंको टेबलके ऊपर रक्खे हुए सामने झुका बैठा था। दिये की रोशनीमें उसका उन्नत ललाट चमक रहा था। उसके मुँह पर कभी घृणा, कभी व्यङ्गकी हँसी और कभी उत्साहका चिह्न दिखाई दे रहा था। उसके मुँहके प्रत्येक भावसे एक आत्म-मर्यादा का गौरव लक्षित होता था। वह जो कह रहा था सो केवल सामयिक वितर्क या आक्षेपकी बात नहीं थी। प्रत्येक बात उसकी पहलेकी सोची हुई सी जान पड़ती थी। उसमें किसी तरहकी दुर्बलता, दुविधा या विचित्रता नहीं थी। उसके कण्ठसे जो कुछ निकलता था, सुदृढ़ भावसे भरा हुआ निकलता था। मानों उसके अङ्ग-प्रत्यङ्गसे सुदृढ़ताका भाव प्रकाशित होता था। सुचरिता उसको आश्चर्यके साथ देखने लगी। सुचरिताने अपनी उम्र भर में इतने दिन बाद मानों पहले-पहल एक व्यक्तिको एक विशेष पुरुषके रूपमें देखा। उसकी जोड़का और कोई पुरुष उसकी दृष्टिमें न आ सका। इस वितर्कमें गोराके विरुद्ध खड़े होनेसे ही हारान बाबू सुचरिताकी दृष्टिमें, हलके जँचने लगे। उसके शरीरकी आकृति, उसका चेहरा, उसकी चेष्टा और उसकी पोशाक तक मानों भाईके साथ दिल्लगी करने लगी। इतने दिन बारम्बार विनयके साथ

गोराके सम्बन्धमें आलोचना करके सुचरिताने गोराको एक विशेष दल और विशेष मतका असाधारण मनुष्य मान लिया था। उसके द्वारा देशका कोई कल्याण साधन कभी हो सकता है, यही कल्पना केवल मन में कर ली थी। आज सुचरिता उसके मुँहकी ओर एकाग्र मनसे देखते देखते समस्त दल, समस्त मन और समस्त उद्देशसे अलग कर गोराको केवल गौरमोहन समझने लगी। जैसे समुद्र कोई प्रयोजन या व्यवहारकी अपेक्षा न रहकर चन्द्रमाको देखते ही बिना कारण आनन्दसे फूल उठता है उसी तरह आज सुचरिता भी गोराको देखकर फूल उठी। मनुष्यके साथ मनुष्यकी आत्माका क्या सम्बन्ध है, इस ओर सुचरिता का ध्यान आकर्षित हुआ, और इस अपूर्व अनुभव से वह अपने अस्तित्वको एकदम भूल गई।

हारान बाबू ने सुचरिताके मनका ये भाव समझ लिया। इसीसे तर्क में उसकी युक्ति जोरदार न होती थी। मन अधीर हो जानेसे बुद्धि भी मन्द पड़ जाती है। आखिर वह नितान्त धैर्य हीन होकर अपनी जगह से उठ खड़े हुए और सुचरिता को अपनी परम आत्मीय की भाँति पुकार कर बोले—सुचरिता जरा इस कमरे में आओ, तुमसे एक बात करनी है।

सुचरिता एकदम चौंक उठी। हारान बाबूके साथ सुचरिता का जैसा चिर-परिचय था उससे वह कभी उसको इस तरह पुकार नहीं सकते थे सो बात नहीं है। यदि और समय वह इस तरह पुकारते तो सुचरिता कुछ मन में न लाती। किन्तु आज गोरा और विनय के सामने उसने इस बात से अपने को अपमानित समझा। विशेष कर गोराने उसके मुँहकी ओर ऐसे भाव से देखा कि वह हारान बाबूको इस अशिष्टता के लिए क्षमा न कर सकी। पहले तो जैसे उसने कुछ सुना ही न हो ऐसा भाव करके चुप बैठी रही। फिर हारान बाबू ने कुछ क्रोध भरे स्वर में कहा—सुचरिता, सुनती नहीं! मुझे कुछ कहना है, एक बार इस कमरेके भीतर न आओगी?

सुचरिताने उसके मुँह की ओर न देखकर कहा—अभी ठहरिए बाबूजी को आने दीजिए तब सुन लूँगी।

विनय ने खड़े होकर कहा—अच्छा तो हम जाते हैं।

सुचरिता झट बोल उठी—नहीं विनय बाबू आप अभी न जाएँ। बाबूजीने आप लोगोंसे ठहरने को कहा है। वे अब आते ही होंगे।

"तो मैं अब पल भर भी ठहर नहीं सकता," यह कहकर हारान बाबू वहाँ से चले गये। उस समय वे क्रोधमें आकर वहाँसे निकल तो पड़े, किन्तु बाहर आकर जब उनके होश ठिकाने आये तब उन्हें पश्चात्ताप होने लगा, परन्तु उस समय लौटने का कोई बहाना उन्हें खोजने पर भी न मिला।

हारानबाबू के चले जाने पर सुचरिता एक अपूर्व लज्जा से सिकुड़कर, सिर झुकाकर, बैठी रही। क्या करूँ, क्या बोलूँ, यह मन ही मन सोच रही थी, पर कुछ निश्चय न कर सकती थी। तब तक गोरा ने उसके मुँह की ओर अच्छी तरह देखने का अवकाश पा लिया। गोरा ने शिक्षित स्त्रियों में जिस उद्धत स्वभाव और निर्लज्जता की कल्पना कर रक्खी थी, उसका आभास तक सुचरिता की मुख-शोभा में न था। बुद्धि की उज्ज्वलता से उसका चेहरा अवश्य प्रकाश पा रहा था किन्तु लज्जा और नम्रता से आज वह क्या ही सुन्दर और कोमल मालूम हो रहा था। उसके मुख पर क्या ही लावण्य और कोमलता छाई है। धनुष सी टेढ़ी भौंहों पर आयत ललाटकी कैसी अपूर्व शोभा है। नवीन रमणीके वेष-विन्यास और उसके भूषण-वसन की ओर गोराने इसके पूर्व कभी अच्छी तरह से नहीं देखा था, और न देखने का उसे एक रोग सा था। स्वभावतः उसे उस पर घृणा थी! आज सुचरिता के शरीर पर नये ढङ्ग की साड़ी पहिरने का चमत्कृत भाव देखने में उसको बड़ा अच्छा लगा। सुचरिता का एक हाथ टेबल पर था। गोरा की दृष्टि उस पर भी जा पड़ी। वह भी उसे एक अपूर्व रूप में दिखाई दिया। आज उसकी दृष्टि में कुछ विशेषता है। वहाँ पर वह जो कुछ देखता है अपूर्व

देखता है। घर की कड़ी, छत और दीवार तक उसकी दृष्टि में नई सी हो उठी है। आखिर वह क्रम क्रम से सुचरिता के सिर से पैर तक सभी अङ्गों की शोभा देख चकित हो रहा।

कुछ देर तक कोई कुछ न कहकर संकुचित से हो रहे। तब विनयने सुचरिताकी ओर देखकर कहा—"उस दिन आप क्या कहती थीं?" और यह कह कर उसने एक बात छेड़ दी।

उसने कहा—मैं आपसे तो कह चुका हूँ कि पहले मेरे मनमें कुछ और ही धारणा थी। मेरे मनमें विश्वास था कि हमारे देश के लिए, समाजके लिए, कुछ आशा नहीं है—हम लोगों को बहुत दिनों तक नाबालिगकी तरह रहना होगा और अँगरेज हम लोगोंके निरीक्षक नियुक्त रहेंगे। हमारे देशके अधिकाँश लोगों के मनका भाव ऐसा ही है। ऐसी अवस्थामें मनुष्य या तो अपना स्वार्थ लिए रहता है या उदासीन भावसे समय बिताता है। मैंने भी एक समय चाहा था कि गोरा के पितासे कह सुनकर कहीं नौकरी का प्रबन्ध करा लूँगा। उस समय गोराने मुझसे कहा—नहीं, तुम सरकारी नौकरी कभी नहीं कर सकोगे।

इस बातसे सुचरिताके मुँह पर एक आश्चर्य का आभास देखकर गोराने कहा—आप यह न समझें कि गवर्नमेंट के ऊपर क्रोध करके मैंने ऐसा कहा है। जो लोग सरकारी काम करते हैं वे गवर्नमेंट की शक्ति को अपनी शक्ति समझ गर्व करते हैं और देशी लोगोंकी श्रेणीमें अपनेको भिन्न मानते हैं। जितने ही दिन बीतते हैं हम लोगोंका यह भाव उतना ही प्रबल होता जाता है। मेरे एक आत्मीय पुराने जमाने में डिपटी थे—अब वे उस कामको छोड़ बैठे हैं। उनसे जिला मैजिस्ट्रेटने पूछा था—बाबू आपके इजलास से इतने लोग रिहाई क्यों पाते हैं? उन्होंने उत्तर दिया—"साहब उसका एक कारण है। आप जिनको जेल भेजते हैं वे आपके लिए कुत्ते-बिल्लीसे बढ़कर नहीं हैं और मैं जिन्हें जेल भेजता हूँ उन्हें अपना भाई समझता हूँ।" इतनी बात बोलने वाला डिपटी तब भी था और उस बात को सुन लेनेवाले अँगरेज हाकिमका भी उस समय अभाव

न था। परन्तु जितना ही समय बीतता जाता है उतने ही लोग नौकरीको भूषण समझते जा रहें हैं और आजकलके डिपटी बाबूके सामने उनके देश का आदमी क्रमशः कुत्ता-बिल्ली होता जा रहा है। किन्तु इस प्रकार पदकी उन्नति होते होते जो केवल उनकी अवनति हो रही है इस बातका कभी उनके मनमें अनुभव तक नहीं होता। लोग दूसरे के कन्धे पर भार रखकर अपने घरके लोगोंको तुच्छ समझेंगे और तुच्छ जानकर उनके प्रति अविचार करने को बाध्य होंगे। इससे देशका कोई कल्याण नहीं हो सकता।—यह कहकर गोराने टेबल पर हाथ पटका जिससे चिराग हिल गया। यदि कुछ जोरसे और हाथ पटका जाता तो चिराग जरूर लुढ़क जाता।

विनयने कहा—गोरा यह टेबल गवर्नमेंट की नहीं और यह चिराग भी परेश बाबू का ही है।

यह सुनकर गोरा ठहाका मार कर हँस पड़ा। उसकी प्रबल हास्यध्वनिसे सारा मकान गूँज उठा। दिल्लगी की बात सुनकर गोरा लड़के की तरह ऐसे जोर हंस उठा, इससे सुचरिता को आश्चर्य हुआ और उसके मन में एक विशेष आह्लाद हुआ। जो लोग बड़ी बड़ी बातें सोचते हैं वे जी खोलकर खूब हंस भी सकते हैं यह बात मानों वह न जानती थी।

गोरा ने उस दिन बहुत बातें कीं? सुचरिता यद्यपि चुप थी, किन्तु उसकेमुँहके भावसे गोरा ने एक ऐसी तृप्ति पाई कि उत्साहसे उसका हृदय फूल उठा। अन्त में मानो उसने सुचरिताकी ओर लक्ष्य करके कहा—एक बात याद रखने की है। यदि हम लोगों का ऐसा गलत संस्कार हो कि जब अंगरेज प्रबल हो उठे हैं तब हम लोग भी ठीक उन्हींकी तरह न हों तो कदापि प्रबलता प्राप्त न कर सकेंगे; तो यह भूल है। हम लोग उनका अनुकरण करते करते और भी बरबाद हो जायँगे। न हिन्दू रहेंगे न मुसलमान। प्रबलता क्या होगी खाक! आपसे मेरा

यह अनुरोध है कि आप भारतवर्ष के भीतर आवें। इसके भले-बुरे व्यवहारों के बीच में खड़ी हों और यदि कोई त्रुटि देख पड़े तो भीतर से ही उसका संशोधन करलें। सबके साथ मिलकर एक हों। इसके विरुद्ध खड़े होकर बाहर से कृस्तानी संसार में शामिल होकर रग रग में उस धर्म की दीक्षा पाने से इस हिन्दू मत का तत्व आप न समझ सकेंगी। जब-तब इस पर चोट ही करेंगी, आपके द्वारा इसका कोई उपकार न हो सकेगा।

गोरा ने कहा सही कि यह मेरा अनुरोध है—किन्तु यह तो अनुरोध नहीं है, यह तो एक प्रकार की आज्ञा है। बात ऐसी बलवती है और उसके भीतर एक ऐसी ताकीद है कि वह दूसरेकी सम्मतिकी अपेक्षा नहीं रखती। सुचरिता ने सिर नीचा किये ही सब सुना। इस प्रकार एक प्रबल आग्रह के साथ गोरा ने जो उसीको विशेष भावसे सम्बोधन करके ये बातें कहीं इससे सुचरिता के मनमें एक आन्दोलन उपस्थित हुआ। सुचरितामें अपना सब संकोच दूर करके बड़ी नम्रता के साथ कहा मैंने देशकी बातोंको कभी इस प्रकार महत्व भरे भावसे नहीं सोचा था। परन्तु मैं आपसे एक बात पूछती हूं—धर्मके साथ देशका क्या सम्बन्ध है? धर्म क्या देशसे भिन्न विषय नही है।

गोराके कानमें सुचरिताके कोमल कण्ठ का यह प्रश्न बड़ाही मधुर लगा। सुचरिताकी बड़ी-बड़ी आँखोंके बीच यह प्रश्न और भी माधुर्यमय देख पड़ा। गोरा ने कहा—जिस धर्मको आप देशसे भिन्न विषय समझती हैं वह देशकी अपेक्षा कितना बड़ा है, यह आप देशके भीतर प्रवेश करके ही जान सकती हैं। ईश्वरने ऐसे ही विचित्र भावसे अपने अनन्त स्वरूपको व्यक्त किया है। जो लोग कहते है कि सत्य एक है, केवल एक ही धर्म और उसके रूपको सत्य मानते हैं। वे अपने उस निर्णीत एक सत्यको ही मानते है। और सत्य जो अनन्त रूपमें परिणित है उसको वे मानना नहीं चाहते। वे ये नहीं जानते कि यह सत्य धर्म अनेक रूपोंमें विभक्त है। फिर वह चाहे किसी रूपमें हो, है सब सत्य ही। मैं आपसे सच कहता हूं,

भारतवर्षकी खुली खिड़कीकी राहसे आप सूर्य को अच्छी तरह देख सकती हैं, उसके लिए समुद्र पार जाकर ईसाईके गिर्जाघरकी खिड़कीमें बैठने की कोई आवश्यकता नहीं।

सुचरिताने कहा—आप यह कहना चाहते हैं कि भारतवर्षका धर्मतन्त्र एक विशेष मार्गसे ईश्वर की ओर ले जाता है। वह विशेषता क्या?

गोरा—विशेषता यही कि जो निर्विशेष ब्रह्म है, वह विशेषके भीतर ही व्यक्त होता है। जो निराकार है उसके आकारका अन्त नहीं—वह ह्रस्व—दीर्घ, स्थूल और सूक्ष्मका अनन्त प्रवाह है। छोटेसे भी छोटा और बड़ेसे बड़ा है। जो अनन्त विशेष है वही निर्विशेष है। जो अनन्त रूप है वही अरूप है, अर्थात् जिस रूपके परे कोई रूप नहीं। ब्रह्म व्यापक रूपसे सर्वत्र विद्यमान है। और देशों में ईश्वरको कुछ घट-बढ़ परिणामसे किसी एक सीमा-निबद्ध विशेषके भीतर रोक रखनेकी चेष्टाकी गई है। भारतवर्ष में भी ईश्वर को विशेषके बीच देखने की बात है, किन्तु यह देश उस विशेष को ही एक मात्र और सर्वोपरि नहीं गिनता। अनेक विषयोंमें एक यह भी विशेष है बस इतना ही। ईश्वर जो इस विशेषको भी अनन्तगुणसे अतिक्रम किए हुए है, यह बात भारतवर्षका कोई भक्त कभी अस्वीकार नहीं करता।

सुचरिता—ज्ञानी अस्वीकार न करें परन्तु अज्ञानी!

गोरा—मैंने तो पहले ही कहा है कि अज्ञानी सभी देशोंमें सभी सत्य को विकृत मानेंगे ही।

सुचरिता—हमारे देशमें वह विकार क्या बहुत दूर तक नहीं पहुँचा है!

गोरा—हो सकता है। किन्तु उसका कारण है—धर्मका स्थूल और सूक्ष्म, भीतर और बाहर, शरीर और आत्मा, इन्हीं दोनों अङ्गोंको भारतवर्ष पूर्ण भावसे स्वीकार करना चाहता! इसलिए जो सूक्ष्मको ग्रहण नहीं कर सकते, वे स्थूलको ही कहते हैं और अज्ञानके द्वारा उस स्थूलके भीतर अनेक अद्भुत विकारों की कल्पना करते हैं। किन्तु जो रूप-अरूप दोनों में सत्य है, स्थूलमें भी और सूक्ष्ममें भी सत्य है, ध्यानमें

भी सत्य और प्रत्यक्षमें भी सत्य है; उसको भारतवर्षने सब प्रकार मनसे वचनसे और कर्मसे प्राप्त करनेकी अद्भुत और बहुत बड़ी चेष्टा की है। उसे हम लोग मूर्खकी भाँति अश्रद्धेय समझ यूरोपकी अठारहवीं शताब्दीके नास्तिकता आस्तिकता युक्त एक संकीर्ण शुष्क अङ्गहीन धर्म को ही एक मात्र धर्म कहकर ग्रहण करेंगे, यह कभी हो नहीं सकता।

सुचरिताको देर तक चुप बैठे देख गोराने कहा—आप मुझे प्रतारक न समझे। हिन्दू धर्म के सम्बन्धमें कपटाचारी लोग, विशेष कर जो नये धर्मध्वजी हो उठे हैं वे, जिस भावसे बात करते हैं उस भावसे आप मेरी बातको ग्रहण न करें। भारतवर्षके विविध प्रकाश और विचित्र व्यापारके भीतर मुझे एक गम्भीर और बहुत बड़ी एकता सूझ पड़ी है। मैं उस एकताके आनन्दमें पागल होगया हूँ। उस ऐक्यके आनन्द में ही भारतवर्षके भीतर जो लोग निपट मूर्ख है, उनके साथ मिलकर दस आदमियोंके बीच जमीन पर बैठने में कुछ भी संकोच नहीं होता! संकोच होगा ही क्यों? जिनकी दृष्टि बहुत दूर तक नहीं पहुँचती है वे भलेही संकोच करें। जिनकी जैसी समझ है, वे वैसा समझते हैं। मैं अपने भारतवर्षके सभी लोगोंके साथ एक हूँ—वे सभी मेरे आत्मीय हैं। भारतवर्ष के हम लोग सब एक हैं। भारतवर्ष सबके लिए एक है। सब लोग इसी एक भारतभूमिकी सन्तान हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं।

गोराके सुदीर्घ कण्ठ से निकाली हुई ये बातें घरके भीतर बड़ी देर तक गूँजती रहीं।

इन बातोंको सुचरिता भलि भांति न समझ सकी। वस्तुतः ये बातें उसके बखूबी समझने को थीं भी नहीं। किन्तु अनुभव के प्रथम अस्पष्ट सञ्चार का वेग बड़ा ही प्रबल होता है। मनुष्य जीवन चहारदीवारीके भीतर या किसी दलके बीच घिरा नहीं है: यह ज्ञान मानों सुचरिताके मनको दबाने लगा।

इसी समय सीढ़ीसे आती हुई स्त्रियोंकी खिलखिलाहट सुन पड़ी। बरदासुन्दरी और लड़कियोंको लेकर परेश बाबू लौट आये। सीढ़ीसे ऊपर

आते समय सुधीर उन सबोंका मार्ग रोककर बीचमें खड़ा हो रहा। उसकी इस नादानी पर सभी हँस पड़ीं।

लावण्य, ललिता और सतीश कमरेके भीतर आते ही गोराको देख ठिठक गये। लावण्य उलटे पैर कमरेसे बाहर हो गई? सतीश विनयकी कुरसीके पास खड़ा होकर उसके कानके पास मुँह ले जाकर कुछ कहने लगा। ललिता सुचरिताके पीछे कुरसी खींचकर, उसकी आड़में अपनेको छिपाकर, बैठी।

परेश बाबूने आकर कहा—मेरे लौटने में बड़ी देर हो गई। मालूम होता है, हारान बाबू चले गये?

सुचरिताने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। विनयने कहा—जी हाँ, वे नहीं ठहर सके।

गोरा ने खड़े होकर कहा—'अब हम भी जाते है, और झुककर परेश बाबू को प्रणाम किया।

परेश बाबू—आज अब तुम लोगों से बातचीत करने का समय नहीं रहा। जब तुम्हें फुरसत मिले, कभी कभी यहाँ आना।

गोरा और विनय जब घर से जाने को उद्यत हुए तब वरदासुन्दरी सामने आ खड़ी हुई। दोनों ने उसे प्रणाम किया। उसने कहा—क्या आप लोग अब जा रहे हैं?

गोरा—जी हाँ।

वरदासुन्दरी ने कहा—विनय बाबू अभी नहीं जा सकते हैं। आपको खाकर जाना होगा। आपसे कामकी बात करनी है।

सतीश लपककर विनय का हाथ पकड़ लिया और कहा—हाँ, माँ, विनय बाबू को मत जाने दो। आज वे रातको मेरे साथ रहेंगे।

कुछ उचित उत्तर न दे सकनेके कारण विनयको घबड़ाया हुआ सा देख वरदासुन्दरी ने गोरा से कहा—क्या आप विनय बाबूको अपने साथ ले जाना चाहते हैं? क्या आपको इनसे कोई काम है?

"जी नहीं, कुछ भी नहीं। विनय, तुम ठहर जाओ, मैं जाता हूँ। यह कहकर गोरा चला गया। विनयके लौटकर बैठते ही ललिताने कहा—विनय बाबू आज आपके भाग जाने ही में कुशल थी।

विनय—क्यों ?

ललिता—माँ आपको एक विपत्ति में डालना चाहती हैं। मैजिस्ट्रेट के मेलेमें जो अभिनय होगा, उसमें एक आदमी कम हो गया है। माँने आपहीको चुना है।

विनय घबड़ाकर बोल उठा—राम राम! यह क्या किया उन्होंने। यह काम मुझसे न होगा।

ललिता ने हंसकर कहा—यह तो मैं माँसे पहले ही कह चुकी हूँ। इस नाटक में आपके मित्र कभी आपको सम्मिलित न होने देंगे।

विनयने चोट खाकर कहा—मित्रकी बात जाने दो। मैंने सात जन्ममें भी कभी अभिनय नहीं किया। मुझे क्यों चुनती हो?

इसी समय वरदासुन्दरी कमरे से भीतर आ बैठीं। ललिता ने कहा—माँ, तुमने अभिनय में विनय बाबू का व्यर्थ साथ कर लिया। पहले इनके मित्रको राजी कर लेतीं तब—

विनयने कुछ कातर होकर कहा—मित्रको राजी कर लेनेकी बात नहीं है। अभिनय तो आज तक मैंने कभी किया ही नहीं और मुझमें वह योग्यता भी नहीं है।

वरदासुन्दरी—उसके लिये आप चिन्ता न करें। मैं आपको सिखा-पढ़ाकर ठीक कर लूंगी। छोटी छोटी लड़कियाँ अभिनय कर सकेंगी और आप न कर सकेंगे?

विनयके उद्धार का कोई उपाय न रहा।

—:o:—

[२१]

गोरा अपनी स्वाभाविक तेज चाल छोड़कर सोचता हुआ धीरे धीरे घरको चला। घर जानेके सीधे रास्तेको छोड़कर, बहुत फेरके साथ, गङ्गा–तट की राह पकड़ ली।

बहुत रात बीते जब गोरा घर पहुँचा तब आनन्दमयी ने पूछा—इतनी रात कर दी बेटा; तुम्हारा व्यालू रक्खे रक्खे ठण्डी हो गई।

गोराने कहा—क्या जाने माँ, आज क्या खयाल आ गया, बहुत देरसे गंगाके किनारे बैठा हुआ था।

आनन्दमयी—जान पड़ता है, विनय साथ था।

गोरा—नहीं तो मैं अकेला ही था।

आनन्दमयी मन-ही मन कुछ विस्मित हुई। बिना कुछ कामके गोरा इतनी रात तक गंगाके किनारे बैठ कर कुछ सोचता रहे, ऐसी घटना तो आज तक कभी हुई नहीं। चुपचाप बैठ कर सोचनेका तो उसका स्वभाव ही नहीं है। गोरा जिस समय अनमना सा होकर भोजन कर रहा था, उस समय आनन्दमयीने ध्यान देकर देखा, उसके चेहरे पर जैसे एक न जाने कैसे चंचल भावकी उत्तेजना है।

आनन्दमयीने कुछ देर बाद धीरे-धीरे पूछा—आज शायद विनयके घर पर गये थे।

गोराने कहा—नहीं, आज हम दोनों परेश बाबू के यहाँ गये थे।

सुनकर आनन्दमयी चुपके बैठकर सोचने लगी फिर पूछा—उनके यहाँ सब लोगों से तुम्हारा मेल जोल हो गया।

गोरा—हाँ, हो गया।

आनन्द०—उनकी औरतें शायद सबके आगे निकलती है?

गोरा—हाँ, उनके यहाँ इनका कोई ख्याल नहीं है।

और समय होता तो इस तरह के उत्तरके साथ-साथ एक तरहकी उत्तेजना प्रकट होती। लेकिन आज उसका कोई लक्षण न देख पड़ा। यह देख कर आनन्दमयी फिर चुपचाप बैठकर सोचने लगीं।

दूसरे दिन सवेरे उठ कर गोरा और दिनकी तरह फौरन मुँह धोकर अपने कामके लिए तैयार हो गया। वह अनमने भावसे अपने सोनेके कमरेके पूर्व ओरका दरवाजा खोलकर कुछ देर तक खड़ा रहा। जिस गलीमें यह घर था वह पूर्व की ओर एक बड़ी सड़कमें जाकर मिली है। उसी बड़ी सड़कके पूर्वकी ओर एक स्कूल है। उस स्लकूसे मिली हुई जमीन में एक पुराना जामुनके पेड़के ऊपर एक पतली सी उज्ज्वल कुहरेकी चादर उड़ रही थी और उसके पीछे उन्मुख सूर्योदयकी अरुण रेखा धुँधले रूपमें दिखाई दे रही थी। गोरा चुपचाप बहुत देर तक उसी ओर देखता रहा। देखते देखते वह कुहरेका टुकड़ा गायब हो गया उज्वल धूप पेड़की शाखाओंके भीतरसे अनेक चमचमा रही संगीनोंकी तरह उन्हें फोड़ कर बाहर निकल आई। देखते ही देखते कलकत्तेकी सड़क आदमियोंकी भीड़ और शोर-गुलसे भर गई!

इसी समय एकाएक गलीके मोड़ पर अविनाशके साथ और कई छात्रोंको अपने घरकी ओर आते देख कर गोराने कहा—ना यह सब कुछ नहीं; यह किसी तरह भी न चलेगा।—यह कह कर तेजीके साथ कमरेसे बाहर निकला। गोराके घरमें उसका सब दल-बल आया हो और गोरा उसके बहुत पहलेसे ही तैयार न हो यह आज नई बात थी। आज तक ऐसी घटना एक दिन भी नहीं होने पाई। इस साधारण त्रुटि ने गोराके मनको एक भारी धिक्कारका धक्का दिया। उसने मन ही मन निश्चय किया कि अब वह फिर कभी परेश बाबूके घर न जायगा, और यह चेष्टा करेगा कि कुछ दिन विनयसे भी भेंट न हो जिसमें यह सब आलोचना बन्द रहे।

उस दिन नीचे आकर यही सलाह हुई कि गोरा अपने दलके दो तीन आदमियोंके साथ, ग्रैंड ट्रंक रोड होकर, पैदल ही भ्रमणके लिए निकलेगा। राहमें भोजनके समय किसी भले आदमीके घर आतिथ्य ग्रहण करेगा, साथ रुपया पैसा कुछ भी न रहेगा।

इस अपूर्व सङ्कल्पको मनमें धारण कर गोरा कुछ अधिक उत्साहित हो उठा। सब बन्धनोंको तोड़कर इस खुले रास्तेसे निकल पड़नेका प्रबल आनन्द उसके मनमें उमड़ उठा। भीतर ही भीतर उसका मन जिस एक जञ्जीरसे जकड़ा था, वह जञ्जीर बाहर होने की इस कल्पनासे मानों टूटी सी जान पड़ी। यह असक्ति भाव केवल माया है और कर्म ही सत्य है—इस बातको मन ही मन खूब मनन कर भ्रमण करनेकी तैयारीके लिये अपने नीचे वाले कमरेसे बाहर निकला। उसी समय कृष्णदयाल गङ्गा स्नान करके तांबेकी कलसीमें गङ्गाजल लिए, रामनामी ओढ़े मन ही मन कुछ पाठ करते हुए घर आरहे थे। रास्तेमें उनसे गोराकी एकाएक भेंट हो गई गोराने लज्जित होकर झटपट उनके दोनों पैर छूकर प्रणाम किया। वे सकुचाकर ठहरो, ठहरो कहकर घर की ओर बढ़े। पूजा पर बैठनेके पहले उन्हें छू लेनेसे उनका गङ्गास्नानका फल मिट्टी हो गया। 'कृष्णदयाल मेरा संस्पर्श बचाये रहते हैं' यह गोरा न जानता था। वह समझता था कि छूत पन्थी होनेके कारण सब प्रकार सबका सम्बन्ध बचाकर चलनाही दिन-दिन उनकी सावधानताका एकमात्र लक्ष्य है। आनन्दमयीको तो वे म्लेच्छ कहकर उससे दूर ही रहा करते थे। महिम काम-काजी आदमी था। उसको फुरसत कहाँ जो उनसे भेंट करे। घरके सभी लोगोंके बीच केवल महिमा की बेटी शशिमुखी को वे अपने पास बिठाकर संस्कृत स्तोत्रोंका अभ्यास कराते और उससे पूजाकी सेवा टहल कराते थे।

गोरासे अपने पैर छू जानेके कारण कृष्ण दयाल जब घबराकर भागे तब उनके सङ्कोचके सम्बन्धमें गोराको चेत हुआ और वह मन ही मन हँसा। इस प्रकार पिताके साथ गोरा का सब सम्बन्ध धीरे धीरे टूट गया था और माताके अनाचारकी वह चाहे जितनी निन्दा करे, पर तो भी वह

माँको ही अपने जीवनकी समस्त भक्ति समर्पित कर उसकी पूजा करता था।

भोजन के अनन्तर गोरा एक छोटी सी गठरीमें कुछ कपड़े लेकर और उसे विलायती मुसाफिरकी भांति पीठ पर बाँधकर वह माँके पास आया और बोला—माँ, मैं कुछ दिन के लिये बाहर घूमने जाऊँगा।

आनन्दमयी—कहाँ जाओगे बेटा?

गोरा—यह मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता।

आनन्दमयी ने पूछा—क्या कोई काम है।

गोरा—काम तो वैसा कुछ नहीं है—यह घूमने को जाना ही काम समझो।

आनन्दमयी को मन मार कर कुछ देर चुप देख गोराने कहा—माँ मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ, मुझे जाने से रोको मत। तुम तो मुझको जानती ही हो मैं सन्यासी हो जाऊँ, यह तो कभी हो नहीं सकता। मैं तुमको छोड़कर अधिक दिन कहीं रह नहीं सकता।

गोराने माँ के निकट अपना प्रेम इस तरह अपने मुँह से कभी प्रकट नहीं किया था—इसीसे आज यह बात कह कर लज्जित हुआ।

उस बातसे पुलकित होकर आनन्दमयीने झट उसकी लज्जा दबा देने के लिए कहा—क्या विनय भी साथ जायगा?

गोराने व्यस्त होकर कहा—नहीं माँ, विनय न जायगा। यह देखो! माँ के मनमें चिन्ता होती है कि विनय के न जाने से रास्ते में मेरे गोरा की कौन रक्षा करेगा! अगर तुम विनय को मेरा रक्षक समझती हो तो यह तुम्हारी भूल है। इस दफे सुरक्षित रूप में मेरे लौट आनेसे तुम्हारा भ्रम दूर हो जायगा।

आनन्दमयी ने पूछा—बीच-बीच में खबर मिलेगी न?

गोरा—खबर न मिलेगी, यही निश्चय करलो। इसके बाद यदि खबर पाओगी तो विशेष हर्ष होगा। कुछ डर नहीं तुम्हारे गोराको कोई न लेगा। माँ तुम मुझे जितना चाहती हो उतना और कोई नहीं

चाहता। मैं तुम्हारी दृष्टि में जैसा बहुमूल्य जँचता हूँ वैसा और की दृष्टि में नहीं। तब इस गठरी पर यदि किसी को लोभ होगा तो यह उसे देकर चला आऊँगा; इसकी रक्षा के पीछे प्राण थोड़े ही दूँगा।

गोरा ने आनन्दमयी के पैर छूकर प्रणाम किया। उसने उसके मस्तक पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। उसकी यात्रा में किसी तरहकी बाधा न दी। अपने कष्ट होनेकी बात सोच कर या किसी तरहके अनिष्ट की आशङ्का करके आनन्दमयी कभी किसी को न रोकती थी। वह अपने जीवन में अनेक बाधाओं और विपत्तियोंके बीच होकर आई है। बाहरी संसार उसके लिए अज्ञात नहीं है उसके मनमें भय न था। गोरा किसी विपत्तिमें पड़ेगा, यह आशङ्का भी न थी। किन्तु गोराके मनमें जो एक प्रकार का नया विप्लव हो पड़ा है, इस बात का सोच कुछ दिनसे उसके मनमें जरूर है। आज सहसा गोरा बिना कारण भ्रमण करने चला है यह सुनकर उसका वह शोच और भी बढ़ गया।

गोरा ने पीठ पर पोटली बाँधकर ज्यों ही सड़क पर पैर रक्खा त्योंही हाथमें गुलाबके फूल लिये विनय उसके सामने आ खड़ा हुआ। गोराने कहा—विनय तुम्हारे दर्शन से यात्रा शुभ होगी या अशुभ?—इस दफे इसकी परीक्षा होगी।

विनय—कहीं जाते हो क्या?

गोरा—हाँ।

विनय—कहाँ?

गोरा—देखो, प्रतिध्वनि ने उत्तर दिया 'कहाँ।'

विनय, तुम माँ के पास जाओ, उसके मुँहसे सब सुन लेना। मैं जाता हूँ,—यह कहकर गोरा तेजी से चल पड़ा।

विनयने भीतर जा आनन्दमयी को प्रणाम कर उनके पैरो पर गुलाब के फूल रख दिये।

आनन्दमयी ने फूल उठाकर पूछा—ये तुमने कहाँ पाये।

विनयने उसका ठीक देउत्तर न कर कहा—उत्तम वस्तु मिलते ही जी चाहता है कि पहले इसके द्वारा माँ की पूजा करूँ ।

इसके बाद विनयने आनन्दमयी की चौकी पर बैठकर कहा—माँ आज क्या तुम्हारा चित्त ठिकाने नहीं है ?

आनन्दमयी—तुमको कैसे मालूम हुआ ?

विनय—आज तुम मुझे पान देना भूल गई हो !

आनन्दमयी ने लज्जित हो पान लाकर विनयको दिया ।

इसके बाद दोपहर में दोनों में वार्तालाप हुआ । गोरा के इस प्रकार निरुद्देश होकर घूमने का अभिप्राय क्या है, इस सम्बन्ध में विनयको कोई पक्की खबर न दे सका ।

आनन्दमयी ने इधर-उधर की बातें करते-करते पूछा - क्या तुम कल गोरा को लेकर परेश बाबू के घर गये थे ?

विनयने कल की सारी घटना विस्तारपूर्वक कह सुनाई । अब आनन्द-मयी ने प्रत्येक बात बड़े ध्यान से सुनी ?

सोते समय विनय ने कहा—माँ, पूजा तो विधिवत् हुई । अब तुम्हारे चरणों की प्रसादीका फूल सिर पर धारण करने को मिल सकेगा ?

आनन्दमयी ने हंस कर गुलाब के फूल विनय के हाथ में दिये और मन में सोचा कि ये दोनों फूल जो केवल खूबसूरती ही के कारण आदर पाते हों सो नहीं । जरूर इसके भीतर और कोई गम्भीर तत्त्व छिपा है ।

दिन के पिछले पहर विनय के चले जाने पर वह न जाने कहाँ-कहाँ की बातें सोचने लगी । भगवान् को पुकार कर बराबर प्रार्थना करने लगीं कि गोराको किसी तरह का कष्ट न हो और विनयसे उसके अलग होने का कोई कारण संघटित न हो ।

—:०:—

[२२]

गुलाबके फूलोंका एक उपाख्यान है। कल रातको गोरा तो परेश बाबूके घरसे चला आया किन्तु मैजिस्ट्रेट के यहाँ उस अभिनयमें योग देने का प्रस्ताव लेकर विनय बड़ी विपत्तिमें पड़ा।

इस अभिनयमें ललिताका वैसा कुछ उत्साह नहीं था बल्कि इन बातों को वह पसन्द ही न करती थी। किन्तु किसी तरह विनयको इस अभिनय में शामिल करने के लिये उसके मनमें मानों एक प्रकार की जिद हो गई थी। जो काम गोराके मत के खिलाफ थे, उन कामों को विनय के द्वारा पूरा कराना ही उसका अभीष्ट था, मानों वह अपने क्रोधको इसीके द्वारा चरितार्थ करना चाहती थी। विनय गोराका अनुवर्ती है, यह बात ललिता को असह्य थी पर इसका कारण खुद भी नहीं जानती थी। जो हो वह यही चाहती थी कि विनयको किसी तरह गोराके हाथसे छुड़ा कर स्वतन्त्र कर दूँ।

ललिता ने अपनी चोटी हिलाकर विनय से पूछा—क्यों साहब अभिनय करनेमें दोष ही क्या है?

विनय—अभिनय करनेमें दोष न हो, किन्तु मैजिस्ट्रेट के घर पर जाकर अभिनय करना मुझे अच्छा नहीं मालूम होता।

ललिता—आप अपने मनकी बात कहते हैं या और किसीके मनकी?

विनय—दूसरेके मनकी बात कहने का जिम्मा मैं नहीं लेता—दूसरे के मनकी बात कोई भी तो नहीं कह सकता। आप शायद विश्वास न करेंगी, परन्तु मैं अपने मनकी ही बातें कहा करता हूँ—कभी अपने मुँहसे और कभी औरके मुँह से।

इस बात का कोई जवाब न देकर ललिता जरा मुँह टेढ़ा करके हँसने लगी। वह कुछ देर पीछे बोली—आपके मित्र गौर मोहन बाबू शायद यह समझते हैं कि मैजिस्ट्रेटका निमन्त्रण अस्वीकार करने हीमें बड़ी बहादुरी है—मानों इसीमें वे अँगरेजोंके साथ लड़ाई कर दिलके फफोले फोड़ते हैं।

विनयने उत्तेजित होकर कहा—मेरा मित्र तो शायद ऐसा नहीं समझता पर मैं समझता हूँ। जो हमें आदमी नहीं समझते, और यदि समझते भी हैं तो बहुत तुच्छ; जो इशारे पर हमें बन्दरकी तरह नचाना चाहते हैं; जो हमें उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हैं उनके लिए यदि उस उपेक्षाके बदले उपेक्षा न की जाय तो हम लोग अपने सम्मानकी रक्षा कैसे कर सकेंगे?

ललितामें स्वाभिमानकी मात्रा काफी थी। इसलिये वह विनयने मुँहसे आत्म गौरवकी बात सुनकर मन ही मन खुश हुई। परन्तु इससे वह अपने पक्षको दुर्बल न समझ करके अकारण व्यंगकी बातोंसे विनयके मनको दुखाने लगी।

आखिर विनयने कहा—आप इसके लिए बहस क्यों कर रही हैं? आप स्पष्ट क्यों नहीं कहती कि 'मेरी इच्छा है।' तुम अभिनयमें साथ दो। तब मैं आपके अनुरोधसे अपने मनको त्यागकर जी को कुछ सुखी करूँ।

ललिता—वाह! यह मैं क्यों कहूँ? यदि आप अपने मतको किसी तरह पुष्ट कर सकें तो आप उसे मेरे अनुरोधसे क्यों छोड़ेंगे? किन्तु वह मत सत्य होना चाहिये।

विनय—अच्छा यही सही। न मैं अपने मतको सत्य ही कर सका, और न आपके अनुरोध की ही कोई बात रही। मैं आपके अनुरोधका पालन करके ही अभिनयमें योग देनेको राजी हूँ।

इस समय वरदासुन्दरीको वहाँ आते देख विनयने झट उठकर कहा—बतलाइए, अभिनयमें सम्मिलित होनेके लिए मुझे क्या करना होगा?

वरदासुन्दरीने गर्वके साथ कहा—उसके लिये आपको कुछ भी चिन्ता न करनी होगी, मैं आपको तैयार कर लूँगी। सिर्फ अभ्यास के लिए आपको नित्य नियमित समय पर आना होगा।

विनय—अच्छा तो आज जाता हूं।

वरदासुन्दरी—आज क्या कहते हो ? कुछ खाकर जाना।

विनय—आज नहीं ।

वरदासुन्दरी – नहीं नहीं, यह न होगा।

विनयने – भोजन किया। किन्तु और दिनकी भांति आज उसके मुँह पर स्वाभाविक प्रसन्नता न थी। आज सुचरिता भी कुछ चिन्तित हो एक ओर चुपचाप बैठी थी। ललिताके साथ विनयकी बहस हो रही थी तब वह बरामदेमें टहल रही थी। आजकी रातमें बातें खूब न जमीं।

जाते उमय विनयने ललिताके उदासीन मुँहकी ओर देखकर कहा—मैंने हार मानी तो भी आपको प्रसन्न न कर सका।

ललिता कुछ उत्तर दिये बिना ही चली गई।

ललिता सहज ही रोना नहीं जानती थीं, किन्तु आज उसकी आँखों से आँसू निकलना चाहते हैं। क्या हुआ है ? आज वह अपनी बात पार आप ही सिर पीट-पीट कर रोना चाहती है! वह बार-बार इस प्रकार निरपराधी विनय बाबू को क्यों चुटीली बातें कहती है और आप कष्ट पाती है

विनय जब तक अभिनयमें सम्मिलित होनेको राजी न था तब तक ललिताकी जिद भी आसमान पर चढ़ी जाती थी, किन्तु जब उसने स्वीकार कर लिया तब ललिताका सब उत्साह मिट्टीमें मिल गया। शामिल न होनेके लिए जितनी युक्तियाँ थीं सब उसके मनमें प्रबल हो उठीं। तब उसका मन व्यथित होकर कहने लगा, केवल मेरा अनुरोध रखनेके लिए विनय बाबूका इस प्रकार राजी हो जाना उचित नहीं। अनुरोध ! अनुरोध क्यों मानेंगे ? वे समझते हैं कि अनुरोध रखकर वे मेरे साथ भद्रता कर रहे है !—ओह ! उनकी यह भद्रता पाने के लियेमानो मेरा सिर दुख रहा है।

किन्तु अभी इस तरह का स्पर्धा करनेसे कैसे बनेगा। नियँसंदेह वह विनयको अभिनयके दलमें खींचनेके लिए इतने दिनोंसे आग्रह दिखाती आई है। आज विनयने सुशीलताको जगह दे उसका इतना बड़ा अनुरोध

मान लिया है, इस लिये उस पर क्रोध करना भी अनुचित होगा। इस घटना से ललिताको अपने ऊपर घृणा और लज्जा हुई जिसके स्वभावतः इतनी बड़ी होनेका कोई कारण न था। और दिन उसका मन जब किसी तरह अस्थिर होता था तब वह सुचरिताके पास जाती थी। कर आज नहीं गई और क्यों उसका हृदय विवश हो गया तथा उसकी आँखों से इस प्रकार सहसा आँसू गिरने लगे, इसका ठीक ठीक कारण वह खुद न समझ सकी।

दूसरे दिन सवेरे सुधीरने लावण्यको एक गुलदस्ता लाकर दिया था। उस गुलदस्तेमें एक डाल में,दो अधखिले गुलाबके फूल थे। ललिताने उस गुलदस्तेमें से उन्हें खोलकर रख लिया। लावण्यने कहा—क्या किया ? ललिताने कहा—गुलदस्तेमें अनेक फूल पत्तियोंके बीच अच्छे फूलको बँधा देख कष्ट होता है; इस तरह एक ही रस्सीमें सब भली बुरी चीजोंको एक श्रेणीमें जबरदस्ती बाँधना मूर्खता है।

यह कह कर ललिताने सब फूलोंको खोलकर उन्हें घरमें इधर उधर —जहाँ जो रखने योग्य था—रख दिया; सिर्फ गुलाबके दोनों फूलों को लेकर वह चली गई।

सतीशने उसके हाथमें फूल देखकर कहा—बहिन ये फूल कहां मिले।

ललिताने उसका उत्तर न देकर पूछा—आज तू अपने दोस्तके घर न जायगा ?

विनयकी ओर अभी तक सतीश का ध्यान न था किन्तु उसके मुहसे विनयका नाम सुनते ही वह उछलकर बोला—हाँ, जाऊँगा क्यों नहीं !—बस, वह जानेके लिए आतुर हो उठा।

ललिताने उसका हाथ पकड़ कर पूछा—वहाँ जाकर तू क्या करता है ?

सतीशने संक्षेपमें कहा—गपशप।

ललिता—उन्होंने तुझको इतने चित्र दिये हैं, तू उन्हें कुछ क्या नहीं देता !

विनय सतीशके लिए अँगरेजी अखबारों और विज्ञापनों से अनेक

तसवीरें काटकर रखता था। सतीशने एक फाइल बनाकर उसमें उन चित्रोंको चिपकाना •आरम्भ किया था। इस प्रकार वह चित्रोंसे फाइल भरनेके लिए इतना व्यग्र हो पड़ा कि अच्छी किताबोंमें चित्र देख उनमेंसे भी चित्र काटकर ले लेनेके लिए उसका मन छटपटाता था। इस लोलुपता के अपराधमें उसे कई वार अपनी वहनोंके द्वारा विशेष दण्ड सहने पड़े हैं।

संसारमें दानके बदले दान देना भी एक जरूरी बात है, यह जानकर आज सतीश को बड़ी चिन्ता हुई। टूटे टीन के बक्समें उसकी जो कुछ निजकी सम्पत्ति सञ्चित है उसमें ऐसी कोई चीज नहीं जिसे वह सहसा किसीको दे डाले। सतीशका चेहरा घबड़ाया सा देखकर ललिताने हंसकर धीरेसे उसका गाल दबाकर कहा—ठहर ठहर, अब तुझे अधिक सोचना न होगा। यही दोनों गुलाब के फूल उन्हें देना।

इतने सहजमें ही इस कठिन समस्या को हल होते देख वह प्रसन्न हो गया और बड़ी खुशीसे दोनों फूल लेकर अपने मित्रका ऋण चुकाने चला।

रास्तेमें विनय के साथ उसकी भेंट हुई। सतीश दूरसे ही उसे विनय वाबू विनय बाबू, कहकर पुकारता हुआ दौड़कर उसके पास पहुँचा और कुरतेकी जेबमें फूल छिपाकर बोला—बतलाइए, मैं आपके लिए क्या लाया हूँ?

विनयके हार मान लेने पर उसने जेबमें से दोनों फूल निकाल कर दिया। विनयने कहा—वाह! बहुत ही बढ़िया फूल हैं। किन्तु सतीश बाबू, ये तो तुम्हारे निजके नहीं हैं। चोरीका माल लेकर आखिर मैं कहीं पुलिसके हाथ न पकड़ा जाऊँ?

ये फूल उसके निजके हैं या नहीं, इस विषय में सतीश को कुछ धोखा हुआ। कुछ देर मनमें सोचकर उसने कहा—हाँ जी, यह चोरी कैसे हुई? ललिता बहन ने मुझको दिये हैं आपको देने के लिए।

इस बातका फैसला यहीं हो गया और विनयने साँझको उसके घर जानेका वादा करके सतीशको बिदा कर दिया।

कल रात को ललिताकी कड़ी बातोंसे चोट खाकर विनय अब भी उसकीवेदनाको भूल न सका था। विनयके साथ प्रायः किसीका विरोध नहीं होता। इसलिए वह किसीसे इस प्रकारका तीव्र आघात पानेकी आशंका भी नहीं रखता। इसके पहले वह ललिता को सुचरिता को अनुवर्तिनी समझता था। किन्तु अङ्कुश खाया हुआ हाथी जैसे अपने महावत को नहीं भूलता, कुछ दिनसे वैसे ही दशा ललिताकी के सम्बन्ध में विनयकी भी थी। किस तरह मैं ललिताको कुछ प्रसन्न करूं और शान्ति पाऊँ, यहीं चिन्ता विनयके मनमें प्रधान हो उठी। सांझको परेश बाबू के घरसे लौटकर आने के बाद सोते समय, ललिताकी कुटिल हास्य-भरी जली-कटी बातें एक एक कर उसके मनमें उठती और उसकी नींद को तोड़ डालती थीं।" मैं छाया की भाँति गोराके पीछे लगा फिरता हूँ, मैं गोराका आज्ञाकारी हूँ, मैं उसकी अनुमित के बिना स्वयं कुछ कर नहीं सकता"—यह कहकर ललिता मेरा अपमान करती है, परन्तु उसकी एक भी बात सच नहीं। विनय इसके विरुद्ध अनेक प्रकारकी युक्तियाँ मनमें एकत्र कर रखता था। किन्तु वे सब युक्तियाँ उसके किसी काम न आती थीं। क्योंकि ललिता तो स्पष्ट रूपसे यह अभियोग उसके विरुद्ध लगाती न थी। इस बातके विषय में तर्क करने का अवकाश उसे न देती थी। मतलब यह कि विनयके पास जबाव देने को वहुत बातें रहने पर भी वह समय पर उनका व्यवहार न कर सकता था, जिससे उसके मनमें क्षोभ और भी बढ़ जाता था। कलकी रात जब उसने हार मानकर भी ललिताके मुँह पर प्रसन्नता न देखी तब वह घर आकर बहुत घबरा ग या और सोचने लगा कि क्या सचमुच ही मैं इतनी बड़ी अवज्ञा का पात्र हूँ ?

इसीसे विनयने जब सतीशने सुना कि ललिता ही ने सतीशके हाथ उसके लिए गुलाब के फूल भेज दिये हैं तब वह मारे खुशीके उछल पड़ा। उसने सोचा, अभिनय में सम्मिलित होने को राजी हो जानेसे सन्धि के चिन्ह-स्वरूप गुलाब के फूल ललिताने प्रसन्न होकर दिये हैं।

पहले उसके मनमें आया कि ये दोनो फूल अपने घरमें रख आवें, पीछे उसने सोचा—नहीं; ये शान्तिसूचक माँके पैरों पर चढ़ाकर उन्हे पवित्र कर लेना चाहिए।

उस दिन सांझको विनय जब परेश बाबूके घर गया तब सतीश ललिताके पास बैठकर स्कूलका पाठ याद कर रहा था विनय ने ललिता से कहा—युद्ध का रङ्ग लाल होता हैं, इस लिए सन्धिका फूल सफेद होना चाहिए था।

ललिता इस बातका अर्थ न समझ विनयके मुँहकी ओर देखने लगी। तब विनयसे अपनी चादरके खूँटसे उजले कनेरके फूलों का एक गुच्छा निकाल कर ललिताके सामने रक्खा और कहा—आपके दोनों फूल चाहे जितने सुन्दर हों तो भी उनमें कुछ कुछ क्रोधका रंग है; मेरे वे फूल शोभा में उनका मुकाबिला नहीं कर सकते किन्तु शान्तिके स्वच्छ रूपमें नम्रता स्वीकार कर आपके पास हाजिर हुए हैं।

ललिताके कपोलों पर गुलाबी आभा दौड़ गई। उसने कहा—आप किसको मेरे फूल कहते हैं?

विनयने कुछ ठिठककर कहा—तब मेरी भूल है, मुझे धोखा हुआ! सतीश बाबू, तुमने किसके फूल किसको दे दिये?

सतीश जोरसे बोल उठा—वाह! ललिता बहन ने देने को कहा था?

विनय—किसे देने को कहा था?

सतीश—आपको।

ललिताने खिसियाकर सतीशकी पीठ में एक थप्पड़ जड़कर कहा—तुझसा बेवकूफ तो मैंने देखा नहीं. विनय बाबू के दिये हुए चित्रोंके बदले तू ही न फूल देना चाहता था?

सतीश हत बुद्धि होकर बोला—हाँ,उसीके बदलेमें तो दे आया था! किन्तु तुम्हींने मुझसे फूल देनेको कहा था न?

सतीश के साथ झगड़नेमें ललिता और भी पकड़ी गई। विनयने स्पष्ट समझ लिया, फूल ललिता ने ही दिये थे। किन्तु उसका अभिप्राय

बनामीसे ही काम करनेका था। उसका नाम जाहिर होते ही वह बिगड़ उठी है। विनयने कहा—आपके फूलोंका दावा मैं छोड़े देता हूं किन्तु इससे आप यह न समझें कि इन फूलोंके विषयमें मेरी कुछ भूल है। हम लोगोंके झगड़ेका निपटारा हो जानेके शुभ उपलक्षमें ये फूल मैं आपको—

ललिता ने सिर हिलाकर कहा—हम लोगोंका विवाद ही क्या, और उसका निबटारा ही कैसा?

विनय तब तो ये सभी इन्द्रजालके खेल हैं? विवाद भी झूठ, फूल भी वही, और फैसला भी मिथ्या? केवल सीपमें चाँदी का भ्रम, नहीं, सीप भी बिलकुल भ्रमात्मक! अच्छा, अब यह कहिए कि मैजिस्ट्रेट साहबके घर पर जो अभिनय होनेकी बात हो रही थी वह भी क्या—

ललिता—वह भ्रम नहीं, वह सत्य ही है। किन्तु उस अभिनयके लिए झगड़ा कैसा? आप ऐसा क्यों समझते हैं कि इसमें आपको राजी करने ही के लिए मैंने आपके साथ कलह किया है और आपकी स्वीकृति होने ही से मैं कृतार्थ हो गई हूं। अगर आपको अभिनय करना अनुचित जान पड़ेगा तो किसीकी बातमें पड़कर आप उसे क्यों स्वीकार करेंगे?

यह कहकर ललिता वहाँ से चली गई। बात बिलकुल उलटी हो गई। विनय क्या सोचकर आया था और क्या हो गया! आज ललिता ने निश्चय कर रक्खा था कि मैं विनयके आगे अपनी हार स्वीकार करूंगी और उससे ऐसा ही अनुरोध करूँगी जिसमें अभिनय में योग न दे। कहाँ उसने यह बात सोच रक्खी थी, और कहां यह नई बात उठ खड़ी हुई जिससे परिणाममें फल ठीक उसका उलटा हुआ। विनयने सोचा, मैंने इतने दिन तक अभिनयके सम्बन्ध में जो विरुद्धता प्रकटकी थी, उसके प्रतिघातकी उत्तेजना ललिताके मनमें कुछ रह गई है—किन्तु वह समझती होगी, विनयने केवल ऊपरके मनसे मान लिया है—किन्तु भीतर विरोध बनाहै, इसीसे शायद ललिताके मनका क्षोभ अभी तक दूर नहीं हुआ। ललिताको जो इस घटनासे इतनी ग्लानि हुई, इससे विनयको बड़ा दुख हुआ। उसने मन ही मन निश्चय किया कि अब मैं इस विषय

में परिहास बुद्धिसे भी कोई आलोचना न करूँगा; और ऐसी निष्ठा और निपुणता के साथ इस काम को करूँगा कि कोई-मुझ पर उदासीनताका दोष आरोपित न कर सकेगा।

सुचरिता आज सबेरेसे ही अपने सोनेके कमरेमें अकेली बैठकर एक ईसाई धर्म ग्रन्थ पढ़नेकी चेष्टा कर रही थी आज अभी तक वह अपने सबेरेके नियमित काम नहीं कर सकी। घरका कोई काम करनेकी आज उसे इच्छा नहीं होती। पुस्तक पढ़नेमें भी उसका जी नहीं लगता। पढ़ते-पढ़ते उसका ध्यान किसी दूसरी ओर चला जाता था। और वह क्या पढ़ गई है यह उसकी समझमें न आता था। फिर वह पाठके टूटे हुए सूत्रको पुनरावृत्तिसे जोड़ती और चंचलता के कारण अपने मन पर कुढ़ती थी।

एक बार दूरसे कण्ठ-स्वर सुनकर उसे मालूम हुआ कि विनय बाबू आये हैं तब वह चौंक उठी और झट हाथसे किताब रखकर बाहर जानेके लिये व्याकुल हो गई। अपनी इस चंचलतासे अपने ऊपर क्रुद्ध होकर सुचरिता फिर किताब हाथमें ले कुरसी पर बैठ गई। विनयकी बोली फिर कहीं सुन न पड़े इसलिए वह दोनों कान बन्द करके पढ़ने लगी।

ऐसा कितनी ही बार हुआ है कि विनय पहले आया है, और गोरा उसके पीछे। आज भी ऐसा हो सकता है, यह सोचकर सुचरिता रह रह कर चकित हो उठती थी। गोरा पीछे आ न जाय, यही उसको भय था और न आनेकी आशंका भी उसे कष्ट दे रही थी।

विनयके साथ ऊपरके मनसे दो चार बातें होनेके बाद सुचरिता मनको छिपानेका और कोई उपाय न देख सतीशकी चित्र-संग्रह फाइल लेकर उसके साथ चित्रोंके सम्बन्धमें आलोचना करने लगी। इधर विनय टेबल पर अपने लौटाये हुए कनेरके फूलोंके गुच्छेको देखकर लज्जा और क्षोभसे मन ही मन कहने लगा कि आखिर शिष्टताके ख्यालसे भी तो मेरे इन फूलोंको ले लेना ललिताको उचित न था।

सहसा किसीके पैरोंकी आहट सुन सुचरिताने चौंककर पीछे फिरकर देखा, हारान बाबू, आ रहे हैं। हारान बाबू ने कुरसी पर बैठकर कहा—बिनय बाबू, आपके गौर बाबू नहीं आये ?

बिनयने हारान बाबूके ऐसे अनावश्यक प्रश्नसे रुष्ट होकर कहा—क्यों ? उनसे कोई काम है ?

बिनयके मन में बड़ा क्रोध हुआ। परन्तु अपने क्रोधको दबा कर कहा—वे कलकत्ते में नहीं हैं ?

हारान—तो क्या धर्म प्रचार करने गये हैं ?

विनयका क्रोध और भी बढ़ गया। उसने कुछ उत्तर न दिया। सुचरिता भी चुपचाप वहां से उठकर चली गई।

हारान बाबू झट उसके पीछे-पीछे गये, किन्तु वह बढ़ गई। जब वह उसे न पा सके तब दूरसे पुकारकर कहा—सुचरिता; ठहरो, तुमसे कुछ कहना है।

"आज मेरी तबियत ठीक नहीं है"—यह कहते हुए सुचरिताने शयनागारमें जाकर भीतरसे किवाड़ लगा दिये।

इसी समय ललिता उसके कमरेमें आई। सुचरिताने उसके, मुंहकी ओर देखकर कहा—बतला, तुझे क्या हुआ है ? ललिताने सिर हिलाकर कहा—कुछ भी तो नहीं। सुचरिताने पूछा—तू कहाँ थी ?

ललिता—बिनय बाबू आये हैं, शायद वे तुमसे कुछ कहना चाहते हैं।

बिनयके साथ और कोई आया है कि नहीं, यह प्रश्न आज सुचरिता नहीं कर सकी। यदि और कोई आया होता तो ललिता जरूर ही उसका नाम लेती। किन्तु तो भी उसके मनका संशय दूर न हुआ। अब वह अपने को दबाने की चेष्टा न करके घर आये हुए अतिथिके प्रति कर्त्तव्य पालनेके अभिप्रायसे बाहरके कमरे की ओर चल पड़ी। ललिताने पूछा—तू नहीं चलेगी ?

सुचरिताने अधीरता भरे स्वरमें कहा—तुम जाओ—मैं पीछे से आऊँगी।

सुचरिताने बाहरके कमरेमें आकर देखा—विनय सतीशके साथ गप शप कर रहे हैं।

सुचरिताने कहा—बाबूजी घूमने गये हैं, अभी आवेंगे। मां आप लोगोंके उस अभिनयकी कविता कण्ठस्थ करानेके लिए लावण्य और लीलाको लेकर मास्टर साहबके यहां गई हैं। ललिता किसी तरह जानेको राजी नहीं हुई। वे कह गई हैं कि आप आवें तो आपको बिठा लिया जाय—आज आपकी परीक्षा होगी।

विनय ने पूछा क्या आप इसमें नहीं हैं?

सुचरिता—सब अभिनय करनेवाले ही हों तो संसार में दर्शक कौन होगा?

वरदासुन्दरी सुचरिता को इन कामोंमें यथासम्भव बचाकर चलती थीं। इसीसे नाटकीय गुण दिखानेके लिए इस दफे भी उससे कुछ नहीं कहा गया।

और दिन ये दोनों सुचरिता और विनय जब एक जगह बैठते थे, तब खूब गप-शप होती थी। आज दोनों ओर ऐसा विघ्न है कि किसी तरह बात जमने न पाई। सुचरिता यह प्रतिज्ञा करके आई थी कि गोरा की बात न चलाऊँगी विनय भी ललिताकी बातसे चिढ़कर गोराकी चर्चा न चला सकता था। विनय के ललिता ही क्यों, इस घर के प्रायः सभी लोग गोराका अनुयायी समझते हैं, यह सोचकर विनय गोरा के विषय में कोई बात न करना चाहता था।

इसी समय वरदासुन्दरी आकर जब अभिनय की तालीम देने के लिये विनय को बुलाकर दूसरे कमरे में ले गई तब कुछ ही देर बाद, अकस्मात् वे फूल टेबल पर से गायब हो गये। उस रात में ललिता भी वरदासुन्दरीके अभिनय के अखाड़े में दिखाई न दी; और सुचरिता

ईसाई-मत की एक पुस्तक अपनी गोदमें रक्खे चिरागको वरके एक कोनेमें छिपाकर वड़ी रात तक द्वारके समीप बैठकर अंधेरी रातकी ओर गाल पर हाथ दिये देखती रही। उसके आगे मानो कोई अपरिचित अपूर्व स्थान मृगतृष्णा की तरह दिखाई दिया था। इतने दिन तक जीवनमें जो बातें जानी सुनी हैं उनके साथ उस स्थानके किसी अंश का चिर विच्छेद है, इसलिए वहाँ के झरोखों में जो रोशनी हो रही है, वह घोर अंधेरी रात की नक्षत्र-मालाकी भांति सुदूरवर्ती होने का कौतुक दिखा मन को सशङ्कित कर रही है। इस अपूर्व दृश्यको देख उसके मन में आया कि मेरा जीवन तुच्छ है; इतने दिन तक जिसे सच माना है वह संशकाकीर्ण है और जो नित्यका व्यवहार करती आती हूँ वह अर्थ हीन है। अब वहाँ पहुंचकर शायद ज्ञानका पूर्ण लाभ होने और कर्मके उच्च होनेसे मैं जीवनको सार्थक कर सकूँ। इस अपूर्व अपरिचित भयङ्कर स्थानके अज्ञात सिंह-दर्वाजेके सामने किसने मुझे लाकर खड़ा कर दिया है। क्यों मेरा हृदय इस तरह कांप रहा है क्यों मेरे पैर उस ओर आगे वढ़कर फिर इस प्रकार स्तब्ध हो रहे हैं।

—:o:—

[२१]

इन कई दिनोंमें सुचरिताने विशेष रूपसे उपासनामें मन लगा दिया था। यह जैसे पहलेसे भी अधिक परेश बाबूका आश्रय लेनेकी चेष्टा करती थी। एक दिन परेश बापू अपने बैठकमें अकेले बैठे कुछ पढ़ रहे थे, इसी समय सुचरिता चुपचाप उनके पास आकर बैठ गई। परेश बाबूने पुस्तक टेबिलके ऊपर रख कर पूछा—क्यों राधे!

सुचरिता 'कुछ नहीं!' कह कर, यद्यपि टेबिलके ऊपर किताबें और अखबार बकायदे रक्खे थे, तो भी उनको इधर उधर हटाकर और तरहसे सजाकर रखने लगी।

दम भर बाद वह कह उठी—बाबूजी, पहले आप जिस तरह मुझे पढ़ाते थे, उसी तरह अब क्यों नहीं पढ़ाते?

परेश बाबूने स्नेहपूर्वक जरा हँस कर कहा—मेरी छात्रा तो मेरे स्कूलसे पास करके निकल गई है! अब तो तुम आप ही सब पढ़ सकती हो बेटी।

सुचरिताने कहा—ना, मैं कुछ भी नहीं समझ पाती बाबूजी। मैं पहले ही की तरह आपके पास पढ़ूँगी।

परेश बाबूने कहा—अच्छी बात है, मैं कलसे तुमको पढ़ाऊँगा।

सुचरिता फिर कुछ देर चुप रह कर एकाएक कह उठी—बाबू जी, उस दिन विनय बाबूने जाति भेदके बारेमें बहुत-सी बातें कही थीं; आप उस बारेमें समझकर मुझसे कुछ क्यों नहीं कहते?

परेश बाबूने कहा—बेटी तुम तो जानती ही हो, मैंने बराबर तुम लोगोंके साथ ऐसा ही व्यवहार किया है कि तुम लोग जिसमें हरएक विषय को आपही सोचने-समझनेकी चेष्टा करो, मेरे या और किसीके

मतको केवल रटी हुई बातोंकी तरह काममें न लाओ। प्रश्नके ठीक तरहसे मनमें जाग उठने के पहले ही उसके सम्बन्धमें किसी तरहका उपदेश देने जाना और भूख लगनेके पहले ही भोजन करनेके लिए आहार देना एक ही है। उससे केवल अरुचि और अजीर्ण ही होता है। तुम जब मुझसे जो प्रश्न करोगी, तब मैं अपनी समझके माफिक उसके विषयमें कहूँगा।

सुचरिताने कहा—मैं आपसे यही प्रश्न करती हूँ कि हम लोग जाति भेद की निन्दा क्यों करते हैं?

परेश बाबूने कहा—एक बिल्ली थाली में हमारे साथ बैठकर खानेको खा जाय, तो कोई दोष नहीं, मगर एक मनुष्य उस स्थान या चौके में चला जाय, तो सामनेका अन्न छूत हो गया कहकर फेंक दिया जाता है! मनुष्य के द्वारा मनुष्य का ऐसा अपमान, मनुष्यकी मनुष्यके प्रति ऐसी घृणा, जिस जातिभेदके भावसे उत्पन्न होती हो, उसे अधर्म न कहें तो और क्या कहें? जो लोग मनुष्य की ऐसी घोर अवज्ञा कर सकते हैं, वे कभी पृथ्वी पर बड़े नहीं हो सकते! उन्हें भी अपने प्रति औरों की ऐसी अवज्ञा सहनी ही होगी।

सुचरिता गोरा के मुँहसे सुनी हुई बातचीतका अनुशरण करके कहा—आलकल यहाँ के समाजमें जो विकार उपस्थित हुआ उसमें अनेक दोषका रहना सम्भव है। किन्तु वह दोष तो समाजकी सभी चीजों में घुस गया है, तो क्या इसीसे असल चीजको दोष दिया जा सकता है?

परेश बाबूने अपने स्वाभाविक शान्त स्वर से कहा—असल चीज कहाँ है, जानता तो कह सकता। मैं आँखों से प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि हमारे देशमें मनुष्य मनुष्य से झूठी घृणा करता है, और वह घृणाका भाव सबको अलग परस्पर विच्छिन्न किये दे रहा है। ऐसी अवस्था में एक काल्पनिक असल चीजकी बात सोचकर मनको सान्त्वना कहाँ मिलती है?

सुचरिताने फिर गोरा की बातों का अनुसरण करके कहा—अच्छा सबको समदृष्टिसे देखना ही तो हमारे देशका चरम सिद्धान्त था।

परेश बाबूने कहा—समदृष्टिसे देखना ज्ञानकी बात है, हृदयकी बात नहीं। समदृष्टिके भीतर प्रेम भी नहीं है, घृणा भी नहीं है। समदृष्टि राग और द्वेषसे परे है। मनुष्यका हृदय ऐसा हृदय-धर्म विहीन जगह पर स्थिर हो कर खड़ा नहीं रह सकता। इसी कारण हमारे देशमें इस तरहका साम्य तत्व रहने पर भी नीच जातियोंको देवमन्दिर तकमें घुसने नहीं दिया जाता। यदि देवताके स्थानमें भी हमारे देश में साम्य न रहे, तो दर्शन-शास्त्रके भीतर उस तत्वके रहने से भी कोई लाभ नहीं, और न रहनेसे भी कुछ हानि नहीं।

सुचरिता बहुत देर तक चुपचाप बैठे रह कर परेश बाबूकी बातोंको मन ही मन समझनेकी चेष्टा करने लगी। अन्त में बोली—अच्छा बाबूजी आप विनय बाबू वगैरहको ये सब बातें समझाने की चेष्टा क्यों नहीं करते?

परेश बाबूने जरा हँसकर कहा—विनय बाबू वगैरह बुद्धि कम होनेके कारण इन सब बातोंको न समझते हों यह बात नहीं है बल्कि उनमें बुद्धि अधिक होने हीके कारण वे समझना ही नहीं चाहते, केवल औरको समझाना ही चाहते हैं। वे लोग जब धर्मकी ओरसे अर्थात् सबकी अपेक्षा बड़े सत्यकी ओरसे इन सब बातोंको हृदयसे समझना चाहेंगे, तब तुम्हारे बाबू जी को समझाने के लिये उन्हें अपेक्षा किये बैठे रहना नहीं पड़ेगा। इस समय वे और ही पहलूसे देखते हैं; इस समय मेरी बातें या मेरा समझाना उनके किसी काम न आवेगा।

गोरा वगैरहकी बातोंको यद्यपि सुचरिता श्रद्धाके साथ सुनती थी, तो भी वे बातें उसके संस्कार या धारणा के साथ विवाद उपस्थित करके उसके हृदयको वेदना दे रही थीं। वह शांति नहीं पाती थी। आज परेश बाबूके साथ बातें करके उसने क्षण भरके लिए उस विरोधसे छुटकारा पाया। गोरा विनय, या और कोई भी परेश बाबूसे बढ़कर किसी विषयको अच्छी तरह समझता है, इस बात को सुचरिता किसी तरह अपने मनमें स्थान देना नहीं चाहती। परेश बाबूके साथ जिसका मन

नहीं मिलता था, उसके ऊपर क्रोध किये बिना आज तक सुचरितासे नहीं रहा जाता था। हालमें गोराके साथ मुलाकात और बातचीत होनेके बादसे सुचरिता गोराकी बातोंको क्रोध, अवज्ञा, या उपेक्षा, करके किसी तरह उड़ा देनेमें असमर्थ हो रही थी, इसीसे उसे एक तरहके कष्टका अनुभव हो रहा था। यही कारण था कि वह फिर बचपनकी तरह परेश बाबूको, उनकी छायाकी तरह, अपना आश्रय अथवा अवलम्ब बनानेके लिए उसके हृदयमें व्यकुलता उपस्थित हुई थी। चौकी परसे उठकर दरवाजेके पास तक जाकर सुचरिता फिर लौट आई और परेश बाबूके पीछे खड़े होकर, उनकी कुर्सी की पीठ पर दोनों हाथ रख कर, उसने कहा—बाबू जी, आज मुझे भी साथ लेकर उपासना कीजिएगा।

परेश—अच्छा।

उसके बाद अपनी सोनेकी कोठरी में जाकर दरवाजा बन्द करके सुचरिता बैठी, और उसने गोराकी बातोंको एकदम अग्राह्य करनेकी चेष्टा की। किन्तु गोराका वह बुद्धि और विश्वाससे जगमगा रहा मुख उसकी आँखोंके आगे जागता रहा। उसे जान पड़ने लगा कि गोराकी बातें केवल बातें ही नहीं है, वे जैसे खुद गोराकी ही हैं। उन बातों का आकार है, गति है, प्राण है; वे विश्वास केवल स्वदेश प्रेमकी वेदनासे परिपूर्ण है। वह मत नहीं है कि उसका प्रतिवाद करके ही उसे समाप्त कर दिया जायगा—वह तो सम्पूर्ण मनुष्य है, और वह मनुष्य सामान्य नहीं हैं। उसे ठेलकर सामनेसे हटानेके लिये हाथ ही नहीं उठता! अत्यन्त ही एक द्वन्द के बीचमें पड़कर सुचरिता को रुलाई आने लगी। कोई उसे इतने बड़े दुविधाके द्वन्द्वमें डालकर आप सम्पूर्ण उदासीन निर्लिप्तकी तरह अनायास दूर चला जा सकता है, यह बात सोचकर उसका हृदय विदीर्ण सा होने लगा; किन्तु अपनेको इसके लिए कष्ट पाते देखकर वह अनेको कोटिशः धिक्कार भी देने लगी।

—:*:—

[२४]

यह निश्चय हुआ था कि अँगरेज-कवि ड्राइडन की संगीत विषयक एक कविताको विनय रंगमंच पर भाव व्यक्तिके साथ पढ़ेगा, और लड़कियां स्टेज पर उपयुक्त साज सज्जा के साथ उपस्थित होकर कविताके विषयकी मूक अभिनय करेंगी। इसके अलावा लड़कियाँ भी अँगरेज़ी की कविताएँ पढ़ेगी, और गाना भी गावेंगी।

वरदासुन्दरीने विनयको बहुत कुछ भरोसा दिया था कि वे लोग उसे किसी तरह तैयार कर लेंगे। वरदासुन्दरीने खुद तो अँगरेजी बहुत ही थोड़ी मामूली सीखी थी, लेकिन उनके दलके दो-एक अँगरेजीके विद्वान ऐसे थे, जिनपर उन्हें पूर्ण भरोसा था।

किन्तु जब रिहर्सल हुई तब पहिलेही दिन विनयने अपनी कविता-पाठकी निपुणतासे वरदासुन्दरी की मण्डलीके बाहरके इस 'अनाड़ी' आदमी-को सिखलाकर तैयार करनेके सुखसे वरदासुन्दरीको वंचित होना पड़ा। पहले जो लोग विनयको विशेष व्यक्ति न जानकर उसकी कुछ खातिर न करते थे, अर्थात् उसे साधारण आदमी समझते थे, उनसे भी विनयको इतनी खूबीके साथ अँगरेजी कविता का पाठ और उच्चारण करते देखकर मन ही मन उसे श्रद्धाकी दृष्टिसे देखे बिना नहीं रहा गया। यहाँ तक कि हारान बाबूने भी अपने अँगरेजोके अखबारमें कभी-कभी कुछ लिखनेके लिए विनयसे विशेष अनुरोध किया। सुधीरने भी अपने लोगोंकी छात्र सभामें कभी-कभी अँगरेजीमें व्याख्यान देनेके लिये विनयसे आग्रह करना शुरू कर दिया।

उधर ललिताकी अवस्था विचित्र ही हो गई। किसीको किसी विषयमें विनयकी सहायता जो नहीं करनी पड़ी, इससे वह प्रसन्न भी

हुई, और उसी विनयकी दक्षताने उसके मनमें एक असन्तोष भी पैदाकर दिया। उसे यह ख्याल चोट पहुँचाने लगा कि विनय किसी बातमें उनमेंसे किसीकी अपेक्षा कम नहीं है बल्कि उन सबसे अच्छा है; वह मन-ही-मन श्रेष्टता का अनुभव करेगा, और उन लोगोंके निकटसे किसी प्रकारकी शिक्षाकी प्रत्याशा नहीं करेगा। वह आपही यह नहीं समझ पाती थी कि विनयके सम्बन्ध में वह क्या चाहती है, कैसा होने पर उसका मन खूब सहज अवस्था को प्राप्त हो सकता है। बीचमें उसकी अप्रसन्नता केवल छोटी—छोटी बातों में तीव्रभावसे प्रकट होकर घूम—फिर कर विनयको अपना लक्ष्य बनाने लगी। ललिता आप ही समझती थी कि उसका यह व्यवहार विनयके प्रति सुविचार नहीं है, और शिष्ठता भी नहीं है। यह समझकर उसने कष्ट पाया, और अपनी इस प्रवृत्तिके दमन की चेष्टा भी की; किन्तु अकस्मात् अत्यन्त साधारण उपलक्ष में ही क्यों उसकी एक असंगत अंतर्ज्वाला संयमके शासन को पारकर बाहर हो पड़ती थी, यह उसकी समझमें न आता था। पहले जिस काममें शामिल होनेके लिए उसने बराबर विनय को उत्तेजित किया उसी काम में विनयको न शामिल होने देने के लिएही अब उसके मनने उसे बेचैन कर दिया। किन्तु अब सारी तैयारी को उलट पुलट कर बिना किसी कारणके विनय उस कामसे भाग खड़ा हो तो कैसे, क्या कह कर? समय भी अब और अधिक नहीं है। फिर अपनी एक नई निपुणता का आविष्कार करके विनय आप ही इस कार्यमें उत्साहित हो उठा था।

अन्त में ललिताने अपनी माँसे कहा—मैं इस अभिनयमें न शामिल होऊँगी।

वरदासुन्दरी अपनी मँझली लड़कीको अच्छी तरह पहचानती थी। इससे बहुत ही शङ्कित होकर उन्होंने पूछा—क्यों!

ललिता—मुझसे हो नहीं सकता।

असल में जब से विनयको अनाड़ी समझनेका उपाय नहीं रहा, तभी से ललिता विनयके सामने किसी तरह कविताकी आवृत्ति अभिनयका

अभ्यास करना नहीं चाहती थी। वह कहती थी—मैं अपने अलग ही अभ्यास करूँगी। इससे सबके अभ्यासमें बाधा पड़ती थी किन्तु ललिता को किसी तरह राजी नहीं किया जा सका। अन्तको हार मानकर रिहर्सल में ललिताके बिना ही काम चलाना पड़ा।

किन्तु जब कुछ दिन बाकी रहने पर ललिताने एक दम अलग हो जाना चाहा तब वरदासुन्दरीके सिरपर जैसे व्रजपात हो गया। वह जानती थीं कि वह ललिता की इस 'नाहीं का प्रतिकार नहीं कर सकतीं। तब वह परेश बाबूकी शरणमें गईं। परेश बाबू साधारण बातोंमें कभी अपनी लड़कियोंकी इच्छा-अनिच्छा में हस्तक्षेप नहीं करते थे। किन्तु ट्रेटसे वे लोग वादा कर चुके हैं उसीके अनुसार उधर भी तैयारी हो रही है; इधर समय भी बहुत ही थोड़ा है, यह सब सोच विचार कर परेश बाबूने ललिता को बुलाया। उसके सिर पर हाथ रखकर उन्होंने कहा —ललिते अब तुम इससे अलग हो जाओगी तो अन्याय होगा।

ललिता ने रोदन रुद्ध कंठ से कहा—बाबू जी, मुझसे यह नहीं हो सकता। मैं अभिनयमें अपना काम अच्छी तरह न कर पाऊँगी।

परेशने कहा—तुम अच्छी तरह न कर पाओगी तो उसमें तुम्हारा कुछ दोष न होगा; किन्तु न करनेसे अन्याय होगा।

ललिता सर झुकाये खड़ी रही! परेश बाबूने कहा—बेटी जब तुमने इस कामका भार अपने ऊपर लिया है, तब तुम्हें यह काम पूरा करना ही होगा। पीछे अहंकार को चोट पहुंचेगी, यह ख्याल करके भाग खड़े होने का तो अब समय नहीं है। पहुंचने दो अहंकार को चोट उसे अग्राह्य करके भी तुमको अपना कर्त्तव्य करना ही होगा। यह तुमसे हो न सकेगा क्या बेटी?

ललिताने पिताके मुख की ओर देखकर कहा—हो सकेगा।

उसी दिन शामको खास करके विनयके सामने ही सब संकोचको पूर्ण रूपसे दूर करके ललिता, जैसे एक अतिरिक्त बलके साथ, स्पर्द्धा-पूर्वक अपने कर्त्तव्यमें प्रवृत्त हुई। विनयने इतने दिन तक उसकी कविता

पाठ नहीं सुना था। आज सुनकर सब अचम्मे में डूब गया। ऐसा सुस्पष्ट सतेज उच्चारण कि कहीं पर कुछ भी अस्पष्टता या रुकावट नहीं! भाव प्रकट करने के भीतर ऐसा एक निःसंशय बल था कि सुनकर विनयको आशातीत आनन्द प्राप्त हुआ। वह कण्ठ स्वर विनयके कानोंमें बहुत देर तक गूंजता-सा रहा।

कविताका पढ़ना, अच्छे पढ़नेवालेके सम्बन्ध में श्रोता के मनमें, एक विशेष प्रकार का मोह उत्पन्न करता है। फूल जैसे वृक्षकी शाखा में वैसेही कविता भी पढ़ने वाले ही के बीच, लिखकर उसे विशेष शोभा सम्पत्ति देती है। ललिता भी विनयकी दृष्टि में कवितासे मण्डित हो उठी।

ललिताने इतने दिन तक अपनी तीव्रताके द्वारा विनयको निरन्तर उत्तेजित ही कर रखा था। जहाँ पर व्यथा है केवल उसी जगह जैसे हाथ पड़ता है, वैसेही विनय भी इधर कई दिन ललिताके उष्ण वचन और तीक्ष्ण हास्यके सिवा और कुछ सोचही नहीं सका था। उसे बारम्बार यही अलोचना करनी पड़ती थी कि ललिताने क्यों ऐसा किया क्यों ऐसी बात कही। ललिताके असंतोष के रहस्य को जितना ही वह खोल नहीं सका उतना ही ललिता की चिन्ताने उसके मन पर अधिकार जमाया। एकाएक सबेरेके समय नींदसे जागकर वही ख्याल उसके मनमें आया; परेश बाबू के घर अनेक समय नित्य ही उसके मनमें यह तर्कणा उपस्थित हुई कि आज ललिता कैसे भावमें देखी जायगी। जिस दिन ललिताने लेशभर भी प्रसन्नता प्रकटकी है उस दिन विनयके जैसे जानमें जान आई, और यही सोचता रहा है कि क्या करनेके उसका यह भाव सदा बना रह सकता है। किन्तु आजतक ऐसा कोई उपाय उसे ढूढ़े नहीं मिला कि जो उसके हाथमें हो।

इन कई दिनोंके इस मानसिक हलचल के बाद ललिताके कविता पाठ के माधुर्यने विनयको विशेष करके प्रबल भावसे विचलित किया। उसे वह इतना भला लगा कि उसे प्रशंसाके लिये शब्द ढूंढ़ना कठिन हो गया। ललिता के मुँह पर भला या बुरा कुछ भी कहनेका उसे साहस

नहीं हुआ; क्योंकि अच्छा कहनेसे प्रसन्न होनेका जो मनुष्य चरित्रका साधारण नियम है, वह ललिताके सम्बन्धमें भी घटिता हो सकता है—यहाँ तक कि शायद साधारण नियम होनेके कारण ही न घटित होगा। यही सोचकर, इसी कारण से, विनय अपने मनके वेगको न रोक कर वरदासुन्दरीके पास गया, और उनके आगे ललिताकी इस क्षमता पर निरन्तर प्रशंसाके फूल बरसाने लगा। इससे विनयकी विद्या और बुद्धि पर वरदासुन्दरीकी श्रद्धा और भी दृढ़ हो गई।

और एक अद्भुत घटना देखी गई ललिताने जब स्वयं अनुभव किया कि उसकी कविताका पढ़ना और अभिनय अच्छा हुआ है, सुगठित नाव जैसे नदीकी लहरों पर अनायास चली जाती है वैसे ही वह भी जब खूबीके साथ अपने कर्त्तव्यकी कठिनाईके ऊपर चली गई, तभी विनयके सम्बन्धमें उसकी तीव्रता भी दूर हो गई। फिर तो विनय को अभिनय से अलग करने के लिए उसकी जरा भी इच्छा नहीं रही। अब इस कार्यमें उसका उत्साह बढ़ उठा और रिहर्सलके काममें विनयके साथ उसका मेल घनिष्ट हुआ। यहाँ तक कि कविताकी आवृत्ति अथवा और किसी बातके बारेमें विनय से सलाह या उपदेश लेनेमें भी उसे कुछ भी आपत्ति नहीं रही।

ललिताके इस परिवर्तनसे विनयकी छाती परसे जैसे एक बड़े भारी पत्थरका बोझ हट गया। उससे इतना अधिक आनन्द हुआ कि वह तब आनन्दमयीके पास जाकर बालककी तरह लड़कपन करने लगा। सुचरिता के पास बैठ कर बहुत सी बातें बकनेके लिए विनय के मनमें अनेक बातें जमा होने लगीं; किन्तु आज कल सुचरिता उसे देखने ही को नहीं मिलती, उसके दर्शन ही दुर्लभ हैं। मौका पाते ही वह ललिता के साथ बात चीत करनेको बैठता था; किन्तु ललिता के सामने उसे विशेष सावधान होकर ही बात मुँहसे सब निकालनी पड़ती थी। विनय जानता था कि ललिता मन ही मन उसका और उसकी बातोंका विचार तीक्ष्णभावसे करती है, इसी कारण ललिता के सामने, उसकी बातोंके धारा प्रवाहमें

स्वाभाविक वेग नहीं रहता था। ललिता बीच बीच में उससे कहती थी—आप तो जैसे किताबसे रट कर ये बातें कह रहे हैं। इस तरह क्यों बोलते हैं ?

विनय इसके जवाब में कहता था—मैं इतनी अवस्था तक किताबें ही रटता आया हूँ, इसीसे मेरा मन छपी हुई किताबके समान हो गया है।

ललिता कहती थी—आप खूब अच्छी तरह संभाल कर, बनाकर बात करनेकी कोशिश न किया करें—अपने मनकी बात ठीक तौरसे कह आया करें। आप इस तरह खूबीके साथ अलंकारिक भाषामें कहते हैं कि मुझे सन्देह होता है, आप किसीकी बातें सोच समझकर बना कर कहते हैं।

यही कारण था कि स्वाभाविक क्षमताके कारण कोई बात खूब सजावटके साथ अगर विनयके मनमें आती थी, तो उसे भी ललिताके सामने कहते समय चेष्टा करके विनयको वह बात सीधी सादी भाषामें संक्षेपके साथ कहनी पड़ती थी। कोई आलंकारिक बात उसकी जबान पर अगर अकस्मात आ जाती थी, तो वह लज्जित हो जाता था।

ललिताके मनके भीतरसे जैसे एक व्यर्थका मेघ हट गया, और उसका हृदय निर्मल उज्वल हो उठा। वरदासुन्दरी भी उसका यह परिवर्तन देखकर विस्मित हो गई। वह अब पहलेकी तरह बात बातमें आपत्ति प्रकट करके विमुख नहीं हो बैठती—सब कामों में उत्साह के साथ शरीक होती है। आगामी अभिनय के साज और सजावट वगैरह सभी बातोंके बारेमें उसके मनमें नित्य नाना प्रकारकी नई नई कल्पनायें पैदा होने लगीं। उन्हीं कल्पनाओंको लेकर उसने सबकी नाकमें दम कर दिया। इस बारेमें वरदासुन्दरीका उत्साह चाहे जितना अधिक हो वह खर्चकी बात भी सोचती हैं—इसी कारण, ललिता जब अभिनयकी ओर से विमुख थी, तब भी जैसे उनकी उत्कण्ठाका कारण उपस्थित हुआ था, वैसे ही अब उसकी उत्साहित अवस्थामें भी उनके जी को संकट उप-

स्थित हुआ। किन्तु ललिताकी उत्तेजित-कल्पना वृत्तिको चोट पहुँचाने का भी साहस नहीं होता। जिस काममें वह उत्साह दिखाती है, उस काम में कहीं लेशमात्र भी असंपूर्णता घटित होनेसे वह एक दम उदास हो बैठती है—उसमें शरीक होना ही उसके लिए असम्भव हो उठता है।

ललिता अपने मनकी इस बढ़ी हुई अवस्थामें सुचरिताके निकट अनेक बार व्यग्र हो गई है। सुचरिता हँसी है, बातें भी की हैं, किन्तु ललिताने उसके भीतर बारम्बार ऐसी एक बाधाका अनुभव किया है कि वह मन ही मन नाराज होकर वहांसे लौट आई है।

एक दिन उसने परेश बाबूके पास जाकर कहा—बाबू जी सुची दीदी एक किनारे बैठे-बैठे किताब पढ़ें, और हम लोग अभिनय करने जायँ, यह न होगा। उनको भी हमारा साथ देना होगा।

परेश बाबू भी इधर कई दिनसे सोचते थे कि सुचरिता अपनी साथियों से जैसे कुछ दूर होती जा रही है। ऐसी अवस्था सुचरिताके लिए स्वास्थ्यकर नहीं,यह जान कर उन्हें एक आशङ्का सी हो रही थी। ललिताकी बात सुना कर आज उन्हें जान पड़ा, आमोद-प्रमोदमें सबके साथ सम्मिलित न हो सकनेसे सुचरिताका यह अलगावका भाव प्रश्रय पाकर बढ़ जायगा। परेश बाबूने ललितासे कहा—अपनी माँ से कहो।

ललिताने कहा—माँसे तो मैं कहूँगी, मगर सुची दीदीको राजी करनेका भार आपको लेना पड़ेगा!

परेश बाबूने जब कहा, तो सुचरिता फिर कुछ नाहीं नूही नहीं कर सकी। वह अपना कर्तव्य पालनेके लिए अग्रसर हुई।

सुचरिताके बाहर निकल कर सबके साथ शामिल होते ही विनयने उसके साथ पहलेकी तरह वार्तालाप जमानेकी चेष्टाकी, किन्तु इन्हीं कई दिनोंमें न जाने क्या हो गया कि अच्छी तरह उसे सुचरिताका रुख नहीं मिला। उसके मुखकी श्रीमें उसकी दृष्टिमें ऐसा एक सुदूर व्यवधान का भाव प्रकट होता है कि उसके पास आगे बढ़नेमें संकोच उपस्थित होता है। पहले भी मिलने जुलने और काम काजके भीतर सुचरिताका एक निर्लिप्त

भाव था, वही भाव इस समय अत्यन्त स्पष्ट हो उठा है। उसने जो अभिनय कार्यके अभ्यासमें योग दिया था, उसके भीतर भी उसकी स्वतंत्रता नष्ट नहीं हुई। कामके लिए उसकी जितनी जरूरत होती थी, उसे ही करके वह चली जाती थी। इसी तरह देखते देखते सुचरिता विनयके निकटसे बहुत दूर चली गई।

अबकी कई दिन गोराके उपस्थित न रहनेसे विनय बिल्कुल ही वे रोकटोक हो परेश बाबूके परिवारके साथ सभी तरहसे हिलमिल गया था, विनय इस तरह अवारित भावसे प्रकाशको प्राप्त हुआ तो यह देख कर बाबू के घरके सभी आदमियोंने एक विशेष तृप्तिका अनुभव किया। विनयने भी अपने इस तरह बाधामुक्त स्वाभाविक अवस्था से जैसा आनन्द पाया वैसा आनन्द उसे और कभी मिला न था! वह उन सब लोगोंको भला लगता है, यह अनुभव करके उसकी रिझानेकी शक्ति और भी बढ़ उठी।

प्रकृतिके इस फैलावके समय, अपनेको स्वतंत्र शक्तिसे अनुभव करनेके दिन, विनयके निकटसे सुचरिता दूर चली गई। यह क्षति, यह आघात, अन्य समय दुःसह होता; किन्तु इस समय वह सहज ही उससे उत्तीर्ण हो गया। आश्चर्य तो यही है कि ललिताने भी सुचरिताके भावान्तरको उपलक्ष्य करके उसके प्रति पहलेकी तरह अभिमान नहीं प्रकट किया। कविताकी आवृत्ति और अभिनयके उत्साहने ही क्या उस पर संपूर्ण अधिकार कर लिया था?

इधर सुचरिताको अभिनयमें शामिल होते देखकर एकाएक हारान बाबू भी उत्साहित हो उठे। उन्होंने यह कह कर स्वयं प्रस्ताव किया कि वह 'पैराडाइस लास्ट' का एक अंश पढ़ेंगे, और ड्राइडनके काव्यका जो पाठ अभिनयमें होगा, उसकी भूमिकाके तौर पर संगीतकी मोहिनी शक्ति के सम्बन्धमें एक छोटी सी वक्तृता भी देंगे। इस प्रस्तावको सुन कर वरदासुन्दरी मनमें खीज उठी। ललिता भी सन्तुष्ट नहीं हुई। हारान बाबू खुद मैजिस्ट्रेट से मुलाकात करके इस प्रस्तावको पहलेही पक्का कर

आये थे ? ललिताने जब कहा कि इस मामलेको इतना बढ़ानेसे शायद मैजिस्ट्रेट साहब आपत्ति करेंगे, तब हारान बाबूने जेबसे मैजिस्ट्रेटका कृतज्ञताज्ञापक पत्र निकाल कर ललिताके हाथमें देकर उसे निरुत्तर कर दिया।

गोरा बिना किसी कामके पर्य्यटन करने निकला था, और कब लौटेगा, यह भी कोई नहीं जानता था। यद्यपि सुचरिताने सोचा था कि वह इस सम्बन्धमें किसी भी बातको मनमें स्थान नहीं देगी, लेकिन तो भी प्रायः प्रतिदिन ही उसके मनमें आशा उत्पन्न होती थी कि आज शायद गोरा आवेगा। इस आशाको वह किसी तरह अपने मनसे दूर नहीं कर पाती थी। गोराकी उदासीनता या उपेक्षा और अपने मनकी इस अबाध्यतासे जब वह अत्यन्त पीड़ाका अनुभव कर रही थी, जब किसी तरह इस जालको छिन्न-भिन्न करके भागनेके लिए उसका चित्त व्याकुल हो उठा था, ऐसे ही समय एक दिन हारान बाबूने विशेष बात पक्की करनेके लिए परेश बाबूसे फिर अनुरोध किया। परेश बाबूने कहा—अभी तो विवाहमें विलम्ब है; इतनी जल्दी सम्बन्ध बन्धन होना क्या अच्छा है ?

हारान—विवाह के पहले कुछ समय इस बन्धनकी अवस्थामें बिताना दोनोंके मनकी परिपातिके लिए मैं विशेष आवश्यक समझता हूँ। प्रथम परिचय और विवाहके बीचमें इस तरहका एक आध्यात्मिक 'सम्बन्ध जिसमें संसारकी जिम्मेदारी नहीं—लेकिन बन्धन है, विशेष उपकारी है।

परेश—अच्छा, सुचरितासे पूछ देखूँ।

हारान—उन्होंने तो पहले ही स्वीकृति दे दी है।

हारान बाबूके प्रति सुचरिताके मनके भावके बारेमें परेश बाबूको अब भी सन्देह था इसीसे उन्होंने खुद सुचरिताको बुला कर उसके आगे हारान बाबू का प्रस्ताव उपस्थित किया। सुचरिताका यह हाल था कि

अपने इस दुबधामें पड़े हुए जीवन को किसी एक जगह चूड़ान्त भावसे समर्पण कर सकनेसे ही उसकी जान बचे। इसीसे उसने इस तरह तत्काल निश्चय भावसे अपनी स्वीकृति दे दी कि परेश बाबूका सारा सन्देह दूर हो गया। उन्होंने विवाहके पहले प्रतिज्ञाबद्ध होना/कर्त्तव्य है कि नहीं, इस विषयको अच्छी तरह सोच विचार लेनेके लिए सुचरितासे अनुरोध किया, किन्तु फिर भी सुचरिताने इस प्रस्तावमें कुछ भी आपत्ति नहीं की।

निश्चय हुआ कि ब्राउनलो साहबके निमन्त्रणसे हो आकर एक विशेष दिनमें सबको बुलाकर भावी दम्पत्ति का सम्बन्ध पक्का किया जायगा।

सुचरिताको क्षण भरके लिए जान पड़ा कि उसका मन जैसे राहूके ग्रास से मुक्त हो गया। उसने मनमें पक्का कर लिया कि हारान बाबूसे व्याह करके ब्राह्मसमाज के काम में सम्मिलित होनेके लिए वह अपने मनको कठोर भावसे प्रस्तुत करेगी। हारान बाबूसे ही वह रोज थोड़ा थोड़ा धर्मतत्व सम्बन्धी अंगरेजी पुस्तकें पढ़कर उनकी आज्ञा के अनुसार चलेगी यही उसने इरादा कर लिया। उसके लिए जो दुरूह है यहां तक कि अप्रिय है, उसीको ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा करके उसने मनमें एक तरह की स्फूर्ति या स्फूर्तिका अनुभव किया।

हारान बाबू द्वारा संपादित अंगरेजी पत्रको कुछ दिनसे सुचरिताने नहीं पढ़ा था। आज वह पत्र छपते ही सुचरिताको डाकसे मिला। जान पड़ता है, हारान बाबू ने खास करके वह अंक सुचरिता के पास भेज दिया था।

सुचरिता उस अखबारको अपनी कोठरीमें ले जाकर स्थिर होकर बैठकर, परम कर्त्तव्यकी तरह, शुरूसे पढ़ने लगी। श्रद्धापूर्ण चित्तसे अपनेको छात्रकी तरह जान कर वह उस पत्रसे उपदेश ग्रहण करने लगी।

नौका पालके जोरसे चलते एकाएक पहाड़ से टकरा कर उलट गई। इस संख्या में 'पुराने खयालात के पागल' नामक एक लेख था। उसमें उन लोगों पर आक्रमण किया गया था जो वर्त्तमान कालमें रह कर भी पुराने जमाने की-ओर रूख किये हुए हैं ? यह बात नहीं कि उस लेख

की युक्तियां असंगत हों, बल्कि असलमें सुचरिता ऐसी युक्तियों की खोजमें थी, किन्तु वह लेख पढ़ते ही विदित हो गया कि इस आक्रमण का लक्ष्य एक मात्र गोरा पर ही है। मगर उसका नाम नहीं था। न उसके लिखे किसी लेखका ही उल्लेख था। सैनिक जैसे बन्दूक की हर गोलीसे एक एक मनुष्यकी हत्या करके खुश होता है वैसे ही उस लेखके प्रत्येक वाक्यसे कोई एक सजीव पदार्थ मानो छेदा जारहा है; और मानों उससे एक हिंसा का आनन्द व्यक्त होता है।

वह लेख सुचरिताको असह्य हो उठा। उसका जी चाहा कि वह उसकी प्रत्येक युक्तिको तीव्र प्रतिवाद से टुकड़े टुकड़े कर डाले। उसने अपने मनमें कहा कि गौर मोहन बाबू अगर चाहें, तो इस लेखको मिट्टी में मिला दें। गोरा का उज्जवल प्रदीप्त मुख-मण्डल सुचरिताकी आँखों के आगे ज्योतिर्मय होकर जगमगा उठा और उसका प्रबल कण्ठस्वर सुचरिता की छाती के भीतर तक ध्वनित हो उठा, उस मुख और स्वरकी असाधारणताके निकट उस लेख और उसके लेखककी क्षुद्रता ऐसी ही तुच्छ हो उठी कि सुचरिताने उस पत्रको धरती पर फेंक दिया।

बहुत दिनोंके बाद उस दिन सुचरिता आपही से विनयके पास आकर बैठी, और कहा—आपने कहा था कि जिन पत्रोंमें आप लोगोंके खेल निकले हैं, उन्हें पढ़ने के लिए दीजिएगा, मगर आप नहीं लाये।

उत्तर में विनय ने कहा—हां, मैंने उन पत्रों का संग्रह कर लिया है, कल ही ला दूंगा।

विनय दूसरे ही दिन पत्रिकाओंकी एक गठरी लाकर सुचरिताको दे गया। सुचरिताने उन्हें पाकर भी फिर पढ़ा नहीं, बक्समें बन्द करके रख छोड़ा। पढ़नेको बहुत ही जी चाहनेके कारण ही उसने उन्हें नहीं पढ़ा। उसने प्रतिज्ञा की कि चित्तको किसी तरह इधर उधर बहकने न दूंगी। अपने विद्रोही चित्तको फिर हारान बाबूके शासनके अधीन अर्पण करके उसने और एक बार सान्त्वनाका अनुभव किया।

:o:-

[२५]

रविवारको सबेरे आनन्दमयी पान लगा रही थी; शशिमुखी उनके पास बैठी सुपारी काटकर ढ़ेर कर रही थी। इसी समय विनय वहाँ पहुंचा। विनयको देखते ही शशिमुखी अपने आंचलसे कटी सुपारियाँ फेंककर चटपट भाग खड़ी हुई। आनन्दमयी जरा मुसकरा दी।

विनय सभीके साथ हेलमेल कर लेता था। अब तक शशिमुखीके साथ उसका खूब हेलमेल था। दोनों ही ओरसे परस्पर खूब उपद्रव चलता था। शशिमुखीने विनयसे कहानी कहलानेका यह उपाय खोज निकाला था वह कि उसके जूते छिपाकर रख देती थी। विनयने भी शशिमुखीके जीवनकी दो एक साधारण घटनाओं के आधार पर खूब रंग चुङ्ग कर दो-एक कहानियाँ गढ़ रखी थीं। उन्हींमें से कोई कहानी शुरू करने पर शशिमुखी बहुत ही खीजती थी। पहले वह वक्ताके ऊपर मिथ्या भाषण का अपवाद लगाकर उच्च स्वरसे प्रतिवादकी चेष्टा करती। उस पर भी जब विनय चुप न होता, तो वह हार मानकर वह स्थान छोड़कर भाग जाती थी। शशिमुखी भी विनयके जीवन चरितको विकृत करके उन कहानियों के जवाबमें वैसी ही कहानी बनानेकी चेष्टा करती थी; किन्तु रचना तथा कल्पनाकी शक्तिमें विनयके सामने न ठहर सकनेके कारण वह इस सम्बन्ध में यथेष्ट सफलता नहीं प्राप्त कर सकी।

मतलब यह कि विनय जब गोराके घर आता था, तब सब काम छोड़कर शशिमुखी उसके साथ ऊधम और छेड़छाड़ करने के लिए दौड़ी आती थी। किसी किसी दिन वह इतना उत्पात करती थी कि आनन्दमयी उसे डाँटने लगती थीं। किन्तु दोष तो अकेले उसी बेचारी का नहीं था, विनय भी उसे उत्तेजित कर देता था कि अपनेको संभालना उसके लिए असम्भव हो जाता था। वहीं शशिमुखी आज जब विनय को देखकर चट-

पट वह स्थानको छोड़कर भाग खड़ी हुई, तब आनन्दमयी हँसी। किन्तु वह हँसी सुखकी हँसी नहीं।

विनय को भी इस क्षुद्र घटनाने ऐसी चोट पहुंचाई कि वह कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा। शशिमुखीसे ब्याह करना विनयके लिये कितना असंगत है यह ऐसे ही ऐसी छोटी मोटी बातोंमें अच्छी तरह स्पष्ट हो उठता था। विनयने जब इस ब्याह के लिये अपनी सम्मति दी थी तो उस ने गोराके साथ मित्रताकी बात ही सिर्फ सोची थी—कल्पनाके द्वारा उसकी इन अड़चनोंका अनुभव नहीं किया था। इसके सिवा, हमारे देश में विवाह प्रधानतः व्यक्तिगत मामला नहीं है, वह पारिवारिक है। इसी सिद्धान्त को लेकर विनय पत्रोंमें अनेक लेख लिख चुका है, और उनमें इस बातको भारतवासियोंके लिये गौरव की सामग्री सिद्ध कर चुका है। यही कारण है कि अपने विवाह सम्बन्धके बारे में आप भी उसने किसी व्यक्तिगत इच्छा को मनमें स्थान नहीं दिया। आज शशिमुखी जो विनयको देखकर अपना वर समझकर लज्जाके मारे उसके आगेसे भाग खड़ी हुई उससे उसको शशिमुखीके साथ अपने भावी सम्बन्ध का रूप दिखाई पड़ा। यह सोचकर गोरा उसे उसकी प्रकृतिके विरुद्ध कहाँ तक लिये जा रहा था विनय को गोराके ऊपर बड़ा क्रोध हुआ। अपने ऊपर धिक्कारका भाव उत्पन्न हुआ, और यह स्मरण करके कि आनन्दमयीने पहले ही इस विवाहको नापसन्द किया था उनकी सूक्ष्म दर्शिता के लिये विनय का मन उनके प्रति विस्मय मिश्रित भक्तिसे परिपूर्ण हो उठा।

आनन्दमयी विनयके मनका भाव समझ गईं। उन्होंने उसके मनको दूसरी ओर फेरनेके लिये कहा—कल गोराकी चिट्ठी आई है विनय।

विनयने कुछ अन्यमनस्क भावसे ही कहा—क्या लिखा है?

आनन्दमयीने कहा—अपना हाल कुछ विशेष नहीं लिखा है। देशके छोटे लोगों की दुर्दशा देख कर दुःखित होकर उन्हींका हाल अधिकतर लिखा है। घोषपाड़ा नामके किसी गाँवमें मजिस्ट्रेट कैसे-कैसे अन्याय-अत्याचार कर रहा है, उसीका वर्णन किया है।

गोराके प्रति एक विरुद्ध भावकी उत्तेजना होनेके कारण असहिष्णु हो कर विनय कह उठा—गोराकी बस पराये के ही ऊपर दृष्टि रहती है। हम जो समाजकी छाती पर बैठकर नित्यप्रति जो सब अत्याचार करते हैं; उन्हें केवल क्षमा ही करना होगा, और कहना होगा कि ऐसा सत्कर्म और कुछ हो ही नहीं सकता।

एकाएक गोराके ऊपर इस तरह दोषारोपण करके अपनेको जैसे अन्य पक्ष मान कर, विनय अपनेको गोराके विरुद्ध खड़ा किया ! यह देख कर आनन्दमयी हँसी।

विनयने कहा—मां तुम हँसती हो कि एकाएक विनय इस तरह क्रोध क्यों कर उठा ? मुझे क्यों क्रोध होता है, सो तुमसे कहता हूँ। सुधीर उस दिन मुझे अपने यहां नैहाटी—स्टेशन में अपने एक मित्रके बागमें ले गया था। सियालदह स्टेशनसे ही पानी बरसना शुरू हो गया। शोदपुर स्टेशनमें जब गाड़ी रुकी, तब मैंने देखा, एक साहबी पोशाक पहने बंगाली साहब गाड़ीसे उतरे, अपनी स्त्रीको भी उतारा। बंगाली साहब मजेसे छाता लगाये हुये थे। स्त्रीकी गोदमें एक बच्चा था। वह बेचारी खुद एक मोटी चादर ओढ़े थी, और बच्चेको भी उसीमें छिपाये थी। शीत और लज्जासे संकुचित हो रही थी, महिला तो खुले प्लेटफार्म पर खड़ी हुई भीग रही थी, और उसका बेहया स्वामी खुद छाता लगाये असवाब उठानेके लिये कुलियों का इन्तिजाम कर रहा था। मुझे जान पड़ा, इस घड़ी सारे बंगाल में, क्या धूपमें और क्या वर्षामें भले घर की और क्या नीच जातिकी—किसी भी स्त्रीके सिर पर छाता नहीं है ! जब मैंने देखा कि स्वामी निर्लज्ज होकर सिर पर छाता लगाये है, उसकी स्त्री चादर से अपने बच्चेके शरीरको किसी तरह ढक कर चुपचाप खड़ी भीग रही है—इस व्यवहारकी निन्दा मनमें भी नहीं करती, और स्टेशन भरमें किसी आदमी को यह व्यवहार अन्याय नहीं जान पड़ता, तभीसे मैंने प्रतिज्ञाकी है कि मैं इन सब काव्यकी कल्पनात्मक मिथ्या बातोंको

अब कभी जबान पर भी नहीं लाऊँगा कि हम लोग स्त्री जातिका अत्यन्त आदर करते हैं, उन्हें लक्ष्मी (गृहलक्ष्मी) या देवी मानते हैं। देशकी स्त्रियां देशकी कितनी बड़ी शक्ति हैं, यह मैं पहले कभी अच्छी तरह समझ नहीं सका—कभी इस विषय पर विचार भी नहीं किया। इतना कहकर बिना विलम्ब के विनय चल दिया। उस समय उसका चित्त उत्साहसे पूर्ण हो रहा था।

आनन्दमयीने महिमको बुलाकर कहा—भैया, विनयके साथ हमारी शशिमुखीका ब्याह नहीं होगा।

महिम—क्यों ? क्या तुम्हारी राय नहीं है ?

आनन्द०—यह सम्बन्ध अन्त तक नहीं टिक सकता, इसीसे मेरी राय नहीं है। नहीं तो मैं क्यों न राय देती ?

महिम—गोरा राजी हो गया है विनय भी राजी है फिर क्यों नहीं टिकेगा ? हां, यह मैं अवश्य जानता हूं कि अगर तुम राय न दोगी, तो विनय कभी ब्याह नहीं करेगा।

आनन्द—देखो, मैं विनय को तुम्हारी अपेक्षा अधिक और अच्छी तरह जानती हूँ। जितना मैं जानती हूं, उतना गोरा भी नहीं जानता। इसी कारण सब बातों पर गौर करके मैं इस ब्याह में राय नहीं दे सकती।

महिम—अच्छा, देखा जायगा—गोराको लौट आने दो।

आनन्द०—महिम, मेरी बात सुनो। इस ब्याहके लिए अगर अधिक हठ करोगे, या दबाव डालोगे, तो अन्तको अवश्य गड़बड़ होगी। मेरी इच्छा नहीं है कि इस मामलेमें गोरा विनयसे कुछ कहे।

'अच्छा, देखा जायगा!' कहकर, महिम बिगड़ कर वहांसे चल दिया।

[२६]

गोरा जब बाहर घूमनेको निकला था तब उसके साथ अविनाश, मोतीलाल, बसन्त, और रमापति भी थे। किन्तु गोराके पूर्ण उत्साहमें ये लोग पूरा साथ न दे सके। अविनाश और बसन्त तबीयत खराब हो जानेका बहाना करके चार ही पाँच दिनके भीतर कलकत्ते लौट आये। मोतीलाल और रमापतिको गोराके ऊपर बड़ी भक्ति थी, इसलिए ये दोनों उसे अकेला छोड़कर न लौट सके। किन्तु इन दोनोंके कष्टोंकी सीमा न रही। कारण यह था कि गोरा बहुत चलकर भी न थकता था। और कहीं तकलीफ पाकर भी वह दो चार दिन ठहर जाता था। गांवका जो कोई गृहस्थ गोराको ब्राह्मण समझकर भक्तिपूर्वक अपने घरमें ठहराता था, वहाँ अनेक असुविधाएं रहते भी वह अटक जाता था। उसकी बात-चीत सुननेके लिये सारी बस्तीके लोग चारों ओरसे आकर इकट्ठे होते थे और दिन रात उसे घेरे रहते थे। वे उसको छोड़ना नहीं चाहते थे।

गोराने यहाँ पहले-पहल यह देखा। भारतवर्ष असंख्य गाँवोंका आधार-भूत होकर भी कितना भेद-भाव युक्त, संकीर्ण और दुर्बल है, वह अपने शक्तिके सम्बन्धमें कैसा अचेत और मंगल साधनमें नितान्त अज्ञ और उदासीन है! पाँच ही सात कोस के अन्तर पर उसका कैसा सामाजिक प्रभेद है; परस्पर कैसा जुदाईका भूत सवार है। यह सब ग्रामवासियोंके बीच इस तरह निवास न करनेसे गोरा कभी न जान सकता। गोरा जब गाँवमें टिका था तब दैवयोगसे एक महल्लेमें आग लगी। इतने बड़े सङ्कटमें भी सब लोगोंको मिलकर प्राणपणसे विपत्तिके विरुद्ध काम करते न देख गोराको बड़ा आश्चर्य हुआ। एक जगह घर बाँधकर दस मनुष्योंके रहने का मुख्य उद्देश्य यही है कि बिपत्तिमें एक दूसरे की सहायता करें। यदि ऐसा न हुआ तो गाँवमे एक

साथ रहने का सुख क्या हुआ ? इस प्रकार मनमें सोचते हुए गोराने देखा कि गाँवके सभी लोग इधर उधर दौड़ रहे हैं, कोई रो रहा है, कोई हाय हाय कर रहा है, कोई खड़ा तमाशा देख रहा है, और कोई सिर पर हाथ रख किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो खड़ा है। ऐसा यत्न किसीने न किया जिससे आग बुज सकती। सब मिलकर यदि आग बुझाने में लग पड़ते तो आग बुझना क्या कठिन था। सबके देखते ही देखते समूचा घर जल गया पर किसी से कुछ न हो सका। उसके पास कोई तालाब या कुआँ न था। स्त्रियाँ दूर से पानी लाकर घरका काम काज चलाती थीं परन्तु प्रतिदिनका यह झन्झट मिटानेका लिए घरके नजदीक थोड़े खर्च में कुआँ खुदा लेनें पर धनवान् लोग भी ध्यान न देते थे। पहले भी कई बार इस बस्तीमें आग लग चुकी है, अतः उसे ब्रह्माग्नि कह और दैवको दोष दे सभी लोग निरुद्यम हो बैठे हैं। समीपमें पानी की कोई व्यवस्था कर रखनेके लिए उन लोगोंके मनमें कभी कोई चेष्टा उपजती ही नहीं। गाँवकी अत्यन्त आवश्यक बातके लिए जिनकी समझ ऐसी विचित्र और खोटी है उन लोगोंके पास समस्त देश की अलोचना करना गोराको एक विडम्बना सी जान पड़ी। सबसे अधिक आश्चर्य गोरा को यह समझकर हुआ कि मोतीलाल और रमापति इन सब दृश्योंको देखकर जरा भी न घबराये, इस घटना से कुछ भी विच-लित न हुए। बल्कि गोरा के इस क्षोभको उन दोनोंने असङ्गत जाना। छोटे लोग तो ऐसा करते ही हैं, वे इसीमें आन्नद मानते हैं। इन कष्टोंको वे कष्ट ही नहीं मानते। छोटे लोगों में इन सब बातों के सिवा और कुछ हो सकता है और हम किसी तरह सुधर सकते हैं, इसकी कल्पना करना भी वे व्यर्थ समझते हैं। इस अज्ञता पशुधर्मिता और दुःखका बोझ कितना भारी है। बस भार हमारे, शिक्षित अशिक्षित, धनी दरिद्र, सभी के सिरको झुकाये हुए हैं और किसीको आगे बढ़ने नहीं देता। यह बात आज स्पष्ट रूपसे जानकर गोराके मनमें भाँति भाँतिके दुःख होने लगे।

मोतीलाल यह कहकर कि "मेरे घर से बीमारीका पत्र आया है" चल

दिया। अब गोराके साथ सिर्फ रमापति रह गया।

दोनों वहाँ से विदा हो नदीके पासकी बालुकामयी भूमिमें एक मुसलमानी बस्तीमें जा पहुंचे। ठहरने की इच्छासे ढूंढ़ते ढूंढ़ते सारी बस्तीके भीतर केवल एक घर हिन्दू हज्जामका मिला। दोनों ब्राह्मणोंने आश्रय लेने के लिए उसके घर जाकर/देखा, बूढ़ा नाई और उसकी स्त्रीएक मुसलमानके बच्चे को अपने घरमें पाल रहे हैं। रमापति बड़ा ही नैष्ठिक था, वह तो व्याकुल हो गया। गोरा नाईको इस अनाचारके लिए धिक्कार देने लगा। उसने कहा—देवताजी, हम लोग जिसे हरि कहते हैं, उसीको वे अल्ला कहते हैं, भेद कुछ नहीं है।

धूप कड़ी हो गई थी, जिधर देखो उधर वालू ही वालू नजर आती थी। नदी वहाँ से वहुत दूर थी। रमापतिने मारे प्यासके आकुल होकर कहा जल कहाँ मिलेगा?

नाईके घरके समीप एक कूप था, किन्तु उस कुएँका पानी न पीकर वह मुँह बिगाड़ कर बैठा रहा।

गोराने पूछा—क्या इस लड़के के माँ बाप नहीं हैं?

नाई ने कहा—दोनों हैं पर न होने ही के बराबर है।

गोरा—सो कैसा?

नाईने इस पर जो इतिहास कहा उसका साराँश यह है—

जिस जमींदारीमें ये लोग रहते हैं, वह निलहे साहबके ठेकेकी है! रेतीली भूमिमें नीलकी खेती करने के विषयमें प्रजाके साथ नील कोठीके विरोधका अन्त नहीं। सव किसानोंने उसकी दस्तन्दाजी कबूल कर ली है, सिर्फ अल्लापुरकी प्रजाको साहब अभी तक अपने कब्जे में नहीं ला सका है। यहाँकी रियाया मुसलमान हैं और इनका सर्दार फेरू मियाँ किसी से नहीं डरता! निलहे साहबके उपद्रवकी तहकीकातमें आई हुई पुलिसको दो दफ़े पीटकर जेल काट आया है। उसकी अवस्था ऐसी बीत रही है कि उसके घरमें इत्तफ़ाक हीसे कभी चूल्हा जलता है पर तो भी वह किसी से डरने वाला नहीं है। इस दफे नदीके समीप ही रेतीली जमीनको जोत

गोड़कर इस गाँवके लोगोंने कुछ धान बोया था। क़रीब एक महीने के हुआ कि कोठीके मैनेजर साहबने स्वयं लठैतोंको साथ ले प्रजाका धान लूट लिया। इस अत्याचारके समय फेरू ने मैनेजरके दाहिने हाथमें एक ऐसी लाठी मारी कि उसका हाथ टूट ही गया। डाक्टरने उसकी चिकित्सा न कर सकने पर हाथ काट डाला। ऐसा बड़ा अन्धेर इस देहातमें आज तक कभी न हुआ था। इसके बादसे पुलिसका उपद्रव गाँवमें मानों आग बरस रहा है। उस आगमें पड़कर प्रजाके घरकी सब चीजे जलकर खाक हो गई हैं। किसीके घरमें कुछ न बचा। पुलिसके क्रोध में पड़कर सब स्वाहा हो गये। स्त्रियोंकी इज्जत न बची। सभी बेतरह बेइज्जतकी गई हैं। पुलिस फेरू सर्दारऔर कितने ही लोगोंको हाजतमें रक्खे हुए हैं। गाँवके बहुतेरे लोग जहाँ तहाँ भाग गए हैं। फेरूके घरके लोग आज भूखो मर रहे हैं! उनके देह परसे कपड़े तक उतार लिये गए हैं, यहाँ तक वे शर्मके मारे घरके बाहर नहीं निकल सकते। उसका एकमात्र लड़का तमीज नाइन को, गाँवके नातेसे, मौसी कहता था। उसे कई दिनोका भूखा देख नाइन अपने घर लाई और उसका पालन कर रही है। नील कोठीकी एक कचहरी यहाँसे डेढ़ कोस पर है। दारोगा अब भी अपना दल-बल लिए वहाँ ठहरा है। उस दंगेके उपलक्षमें वह गाँव आकर कब क्या करेगा; इसका ठिकाना नही! कल मेरे पड़ोसी नाजिमके घर पुलिस उतरी थी! नाजिमका एक जवान साला दूसरे गाँवसे अपनी बहनको देखने आया था! दारोगाने उसे देख बिना कारण कहा—"साला देखनेमें कैसा मोटा ताजा है, इसकी छाती तो देखो कितनी चौड़ी है।" और यह कहकर हाथकी लाठी ऐसी जोरसे उसके मुँह पर मारी कि उसके दाँत टूट गये और मुँहसे रक्तकी धारा बहने लगी। भाई पर ऐसा अत्याचार होते देख उसकी बहन चिल्लाती हुई ज्योंही उसके पास आइ त्योंही एक कान्स्टेबलने उसे धक्का मारकर सात हाथ दूर फेक दिया। वह बूढ़ी बेचारी मुँहकी खाकर बेहोश होकर गिर पड़ी। पहले इस गाँवमें पुलिस ऐसा उपद्रव करनेका साहस नहीं करती थी, किन्तु अभी इस गांव के बलिष्ठ

युवक लोग गिरफ्तार होने के भयसे भाग गये हैं। उन भगोड़ोंकी खोजका बहाना करके पुलिस अब भी गाँवको तङ्ग कर रही है। नहीं कह सकते कब इस संकटसे हम लोगोंका छुटकारा होगा।

गोरा उठना नहीं चाहता था। उधर प्यासके मारे रमापतिके प्राण निकले जाते थे। नाईका इतिहास खतम होते न होते उसने पूछा—यहाँ से हिन्दुओंका गाँव कितनी दूर है?

नाई—करीब तीन मील पर जो नील कोठी कचहरी है, वहाँका तहसीलदार एक कायस्थ है। नाम है मङ्गलप्रसाद।

गोराने पूछा—स्वभाव कैसा है?

नाई—साक्षात् यमदूत ही कहना चाहिये। इतना बड़ा निर्दय और चालाक आदमी कहीं देखनेमें नहीं आया। दारोगाको वह कई दिनोंसे अपने यहाँ टिकाये हुए है; उसका कुल खर्च हमीं लोगों से वसूल करेगा। इसमें वह कुछ मुनाफा भी मारेगा।

रमापति—गोरा, अब चलिये। मैं तो मारे भूख-प्यासके मरा जाता हूँ। अब मुझसे नहीं रहा जाता। विशेष कर जब नाईन मुसलमानके लड़केको कुएँ के पास ले जाकर घड़ेमें पानी भर-भरकर उसे नहलाने लगी तब रमापतिके मन में अत्यन्त क्रोध हुआ, और उस घरमें बैठना उसके लिए कठिन हो गया।

चलते समय गोराने नाई से पूछा—इस उपद्रवमें जो तुम अब तक यहाँ टिके हो, सो क्या और कहीं तुम्हारे कुटुम्बी लोग नही है?

नाई—मैं बहुत दिनोंसे यहां हूँ, इन सबोंके ऊपर मेरी ममता बढ़ गई है, मैं हिन्दू नाई हूँ। मैं खेती नहीं करता, मेरे जोत जमा कुछ नहीं हैं इसी लिए कोठी के अमले मुझसे कुछ कह नहीं सकते। आजकल इस गांवमें एक भी पुरुष नहीं। सभी जहाँ तहाँ भाग गये हैं। अगर मैं भी यहाँसे चला जाऊँगा तो स्त्रियां डर से ही मर जायँगी।

गोराने कहा—अच्छा मैं वहाँसे खा पीकर फिर आऊँगा।

दुःसह भूख प्यासके समय रमापति कोठीके साथ दङ्गा-फसादके

वर्णनसे गांवकी प्रजाको अपराधी ठहरा कर उन पर खूब बिगड़ा। ये सब लोग बलवान्‌के विरुद्ध सिर उठाना चाहते हैं; यह मूर्ख मुसलमानोंकी स्पर्द्धा और जड़ता नहीं तो और क्या है ? उचित शासनके द्वारा इन लोगों की उद्दण्डता दूर करने ही में कुशल है। इसमें रमापति को कुछ भी सन्देह न था। ऐसे कम्बख्त अभागोंके ऊपर पुलिसका उपद्रव होता ही रहता है। ये गँवार लोग ही प्रधान दोषी हैं ये अपने दोषका ही उचित फल पा रहे हैं, उसकी ऐसी ही धारणा थी कि वे मालिकके साथ मेल-मिलाप कर लेवें, फसाद क्यों खड़ा करने लगे ? अब पुलिसके आगे वह वीरता कहां गई ? वास्तव में रमापतिकी आन्तरिक सहानुभूति नीलकोठी के साहब के ही साथ थी।

दोपहरकी कड़कड़ाती धूपमें तपी हुई बालूके ऊपर चलते-चलते थककर गोरा एक भी बात न बोला। आखिर एक बागके भीतर से जब कुछ दूरी पर कचहरीका मकान देख पड़ा तब गोरा ने रमापति से कहा—तुम वहां जाकर खाओ पीओ। मैं उसी नाईके घर जाता हूं

रमापति—यह क्यों ? क्या आप भोजन नहीं करेंगे ? तहसीलदार के यहाँ खा पीकर जाइयेगा।

गोरा—अभी अपना काम करूंगा। तुम खा पीकर कलकत्ते चले जाना। इस अल्लापुर में शायद मुझे कुछ दिन रहना पड़ेगा। तुम्हें यहाँका रहना बरदाश्त न होगा।

रमापति के रोंगटे खड़े हो गये। गोराके सदृश धर्मिष्ट हिन्दूने इस म्लेच्छके घरमें रहनेकी बात कैसे मुंह से निकाली, यह सोचकर वह अवाक हो रहा। गोराने क्या खाना पीना छोड़कर उपवास व्रतका संकल्प किया है, वह यही सोचने लगा। किन्तु वह सोचनेका समय न था। एक एक घड़ी उसके लिए एक एक कल्पके बराबर बीतती जा रही थी। गोराका साथ छोड़कर कलकत्ते जानेके लिए उसको अधिक निहोरा करना न पड़ा। कुछ ही देरमें रमापतिने देखा कि गोरा विस्तृत छाया छोड़कर

प्रचण्ड आतप में सुनसान बालुकामय मार्गसे अकेला ही लौटा जा रहा है।

भूख प्यासने गोराको भी व्याकुल कर रक्खा था, किन्तु अन्यायी मङ्गल प्रसादका अन्न खाकर जाति बचानी होगी, इस बातको वह जितना ही सोचने लगा उतनी ही यह उसको असह्य होने लगी। उसके मुख और नेत्र लाल हो गये, सिर गर्म हो गया उसके मनमें विषम विद्रोह उपस्थित हुआ। उसने मनमें कहा; हम लोग भारतवर्षमें पवित्रताका ढोंग रचकर भारी अधर्म कर रहे हैं। एक नया उपद्रव खड़ा करके जो लोग मुसलमानोंको सता रहे हैं, उन्हींके यहां खाने पीनेसे मेरी जाति बचेगी। और जो उत्पात सहकर मुसलमानके लड़केकी प्राण रक्षा कर रहा है और साथ ही समाजकी निन्दा सहनेको भी तैयार हुआ है, उसके घर भोजन करनेसे मेरी जाति जायगी। हा! देसी नासमझी! जो हो, इस आचार-विचार की भली बुरी बातको पीछे सोचूँगा, किन्तु अभी मुझसे यह न हो सकेगा कि जाति बचानेकी इच्छासे मैं, इस घोर अन्यायी के घर अन्न जल ग्रहण करूँ।

गोराको अकेला लौट आते देख नाई अचम्भेमें आ गया। गोराने आते ही सबके पहले नाईके लोटे को भली भाँति बालूसे मलकर अपने हाथ से कुएँ से पानी भरकर पिया और कहा, अगर तुम्हारे घरमें कुछ चावल दाल हो तो दो, हम रींधकर खायँगे; नाईने हुलसकर रसोई का सब प्रबन्ध कर दिया। गोराने भोजन करके कहा—मैं तुम्हारे यहाँ दो चार दिन रहूँगा।

नाईने डरते हुए हाथ जोड़कर कहा—आप इस अधमके घर रहें, इससे बढ़कर मेरा सौभाग्य और क्या हो सकता है। परन्तु एक बात मैं पहले ही आपसे कह रखता हूँ, हम लोगोंके ऊपर पुलिसकी कड़ी दृष्टि है आपके रहने से कोई नया बखेड़ा न खड़ा हो, इसीका डर है।

गोराने कहा—मेरे यहाँ रहनेसे पुलिस कोई उपद्रव करनेका साहस न करेगी जो करेगी तो मैं तुम लोगों की रक्षा करूँगा।

नाई—अगर आप हम लोगोंकी रक्षा करनेकी चेष्टा करेंगे तो हम लोग और भी विपत्ति में फँसेंगे। वे साले यही समझेंगे कि मैंने ही प्रपंच करके आपको बुलाकर उनके विरुद्ध गवाह खड़ा किया है। इतने दिनसे किसी तरह यहाँ टिका तो हूँ, हाँ अब टिक भी न सकूंगा। अगर मैं अकेला यहाँ से चला जाऊँ तो यह सारी बस्ती बरबाद हो जायगी।

गोरा अब तक शहरमें रहकर ही आदमी हुआ। नाई क्यों इतना डर रहा है, यह समझना उसके लिए कठिन हो गया। वह जानता था कि न्यायके ऊपर दृढ़ भावसे आरूढ़ रहने पर अन्यायका प्राबल्य नहीं रह सकता। विपद् ग्रस्त गाँवको असहाय अवस्था में छोड़कर चले जानेमें उसकी बुद्धि किसी तरह सम्मत न हुई। तब नाईने उसके पैर पकड़ कर कहा—देखिये आप ब्राह्मण हैं, मेरे पूर्वजन्म के पुण्य से आप मेरे अतिथि हुये हैं मैं जानेके लिए कहता हूं यह मुझसे बड़ा अपराध होता है। किन्तु हमारे ऊपर जो आपकी दया है वह जानकर ही हमने ऐसा कहा है। आप मेरे घरमें रहकर यदि पुलिसके अत्याचारमें कोई रोक टोक करेंगे तो समझिये आप हमें बड़ी विपतमें डालेंगे।

नाईके इस भय को अमूलक और कायरता समझकर गोरा कुछ रुष्ट हो कर तीसरे पहर दिन के ही उसका घर छोड़कर चलता हुआ। इस म्लेच्छ के घर खाया पीया है यह सोचकर गोराके मनमें कुछ अश्रद्धा भी उत्पन्न होने लगी। थके हुए शरीर और उद्विग्न मनसे वह साँझको नील कोठी की कचहरीमें जा पहुँचा। रमापति भोजन करके तुरन्त कलकत्ते को चल दिया। इस कारण वह वहाँ न दीख पड़ा। मंगलप्रसाद गोराका तेज-पूर्ण मुख देखकर उसका विशेष आतिथ्य सत्कार करने लगा। गोराने एक-दम बिगड़कर कहा—मैं आपके यहाँ जल भी ग्रहण न करूँगा।

मंगलप्रसादने विस्मित होकर इसका कारण पूछा। उत्तरमें गोराने उसे अन्यायी, अत्याचारी कह कर कटु भाषणका प्रयोग किया और आसन पर न बैठ खड़ा रहा। दारोगा चौकी पर बैठकर मसनदके सहारे तम्बाकू पी रहा था। वह उठ बैठा और जरा रूखे स्वर में बोला—तुम कौन हो?

गोराने इसका कुछ उत्तर न देकर कहा—मालूम होता है तुम दारोगा हो ? तुमने अल्लापुर में जो जो उपद्रव किये है उनकी सब खबरें लिये आ रहा हूँ अगर अब भी सँभलकर न चलोगे तो—

दरोगा—तो क्या तुम फाँसी दोगे ? तुम तो बड़े शानदार आदमी मालूम होते हो। पहले तो जान पड़ा था, तुम कुछ मांगने की इच्छासे आये हो, किन्तु अब तो कुछ और ही देख पड़ता है। देखते हैं, आखें रंग गई है त्योरी चढ़ गइ है। शायद दारोगासे कभी भेंट नहीं हुई है ?

मङ्गलने दरोगा का हाथ पकड़कर कहा—जाने दीजिये, अपने घर आये किसी सज्जनका अपमान करना ठीक नहीं।

दरोगाने बिगड़ कर कहा—कैसा सज्जन ! इसने जो मनमें आया है, आप से कहा है। क्या वह आपका अपमान नहीं हुआ ?

मङ्गल—आपका कहना सही है किन्तु निरर्थक क्रोध करनेसे क्या होगा ? मैं निलहे साहबकी तहसीलदारी करके खाता हूँ; उसका काम करता हूं। उसके अतिरिक्त और काम से मुझे क्या वास्ता जो उसमें कुछ बोलूँ। भाई आप क्रोध न करें, आप पुलिस मोहकमेंके दरोगा हैं, आप को यदि यमदूत कहें तो भी अनुचित न होगा।

बिना प्रयोजन मङ्गलप्रसादको किसी पर नाराज होते आज तक किसी ने नहीं देखा है। किस आदमीसे कब क्या काम चल सकता है या रुष्ट होने पर किसके द्वारा क्या अनिष्ट हो सकता है, यह नहीं कहा जा सकता। किसीका अनिष्ट या अपमान वह खूब सोच-विचार कर करता था क्रोध करके दूसरेको सतानेकी बातको वह सहसा नहीं किया करता था।

दरोगाने तब गोरासे कहा—देखो बाबू, तुम पूरे देहाती मालूम होते हो। हम लोग यहाँ सरकारी काम करने आये हैं। इसमें अगर तुम कुछ बोलोगे या किसी तरहकी दस्तन्दाजी करोगे तो मुश्किलमें पड़ोगे।

गोराने इसका कुछ उत्तर न देकर बाहर निकल आया। मङ्गल झट उसके पीछे हो लिया और उसके पास जाकर बोला—महाशय ! आपने जो कहा है सो ठीक है—हम लोगोंका यह कसाईका काम है—और इस

बेईमान दरोगाके साथ एक बिछौने पर बैठनेमें भी पाप है। उसके पंजेमें पड़कर मैंने जितने दुष्कर्म किये हैं उनको जबान पर भी नही ला सकता। अब अधिक दिन नहीं। दो-तीन वर्ष किसी तरह और इस काममें रह लड़की के ब्याह कर देनेका खर्च जमा कर लेने पर मैं अपनी स्त्री सहित काशीवास करूँगा। मुझे भी यह सब अच्छा नहीं लगता। किसी समय मनमें इतना विषाद होता है कि गलेमें फाँसी लगाकर मर जाऊँ, जो हो, आज रातको आप जायेंगे कहाँ? यहीं खा-पीकर सो रहिए। उस पापी दारोगाकी छाया तक आपके ऊपर न पड़ने दूँगा। आपके खाने पीनेका सब प्रबन्ध मैं अलग कर दूँगा।

गोराको साधारण लोगोंकी अपेक्षा भूख अधिक लगती थी। आज सबेरे उसने अच्छी तरह नहीं खाया। किन्तु मारे क्रोधके उसका सारा शरीर जल रहा था। वह किसी भाँति यहाँ रहनेको राजी न हुआ। उसने यह कहकर चलनेको तैयार हुआ कि मुझे एक बहुत जरूरी काम है।

मङ्गल—अच्छा जरा ठहर जाइए, लालटेन साथ कर देता हूँ।

गोरा इसका कोई उत्तर न देकर तीरकी तरह निकल पड़ा।

मङ्गलप्रसाद ने घर लौटकर दारोगा से कहा—मालूम होता है, वह आदमी सदर गया है। इसी वक्त एक आदमी को मैजिस्ट्रेटके पास भेज दीजिये।

दरोगाने कहा—क्यों, क्या करना होगा?

मङ्गलने कहा—और कुछ नहीं, वह जाकर डिविजनल अफिसरको जता आवे कि एक भला आदमी कहीं से आकर गवाहको बिगाड़ने की चेष्टा में घूम रहा है।

——:०:——

[२७]

मैजिस्ट्रेट ब्रैंडला साहब सन्ध्या समय नदीके किनारेकी सड़क पर पैदल घूम रहे हैं, साथ में हरान बाबू हैं। किन्तु उनसे कुछ दूर घोड़े पर सवार हो उनकी मेम परेश बाबूकी लड़कियोंको साथ ले हवा खानेको निकली है।

ब्रैंडला साहब कभी-कभी गार्डनपार्टीमें अच्छे-अच्छे बङ्गालियोंको न्योंता देकर अपने यहां बुलाते थे। ज़िला स्कूल में इनाम बांटने के लिए वही सभापति का आसन ग्रहण करते थे! कोई रईस यदि अपने बेटी की शादी में उन्हें बुलाता तो उसका निमन्त्रण स्वीकार करते थे। उनकी कचहरी के सरकारी वकीलके घर गत दशहरेके उत्सव में जो यात्रा हुई थी, उसमें दो लड़कोंने भिश्ती और मेहतरानी का पार्ट लिया था और परस्पर कुछ बातें की थी। उन दोनों का अभिनय मैजिस्ट्रेट साहब को बहुत अच्छा लगा। उन्होंने इस अभिनय पर हर्ष प्रकट किया था। और उनके अनुरोध से उस अभिनय का कुछ अंश दूबारा दिखलाया गया था।

उनकी स्त्री पादरीकी बेटी थीं। उनके यहां कभी कभी पादरियोंकी लड़कियां आकर चाय पानी पीती थी। भीतर शहरके उसके एक कन्या-पाठशाला स्थापितकी थी और उस स्कूलमें पढ़नेवाली लड़कियों का अभाव न होनेके लिए वह यथेष्ट चेष्टा करती थी। परेश बाबूके घर की लड़कियों में विद्या की चर्चा देख वह उन्हें बराबर उत्साह देती थी; दूर रहकर भी कभी कभी उनके पास पत्र भेजती और बड़े दिनकी खुशीमें उन्हें धर्म ग्रन्थ उपहार देती थीं।

प्रदर्शनीका दिन आ गया। मेलेका प्रबन्ध बहुत ठीक है। दूर दूरके लोग कोई सौदा बेचने कोई खरीदने और कोई तमाशा देखने को आये

हैं। इस उपलक्षमें हारान बाबू, सुधीर और विनयके साथ वरदासुन्दरी और उसकी लड़कियाँ भी आई हैं, उनको डाक बङ्गलेमें ठहराया गया है। परेश बाबू इन सब बखेड़ों में पड़ना नहीं चाहते, इसलिए वे अकेले कलकत्ते में ही रह गये। सुचरिताने उनकी सेवा टहलके लिए उनके पास रहनेकी बहुत चेष्टाकी थी किन्तु परेश बाबूने मैजिस्ट्रेटके निमन्त्रणमें कर्तव्य पालनके लिए सुचरिता को विशेष उपदेश देकर भेज दिया। परसों कमिश्नर साहब और लाट साहबके सामने मैजिस्ट्रेट साहबके बङ्गले पर सन्ध्या समय परेश बाबूकी लड़कियों द्वारा अभिनय होने की बात स्थिर हुई है। उसे देखनेके लिए मैजिस्ट्रेटके अनेक इष्ट मित्र जहाँ तहाँसे बुलाये गये हैं। कितने ही चुने-चुने हिन्दू वकील, बारिस्टर और जमींदार आदि को भी इस अभिनयमें बुलानेका आयोजन हो रहा है। यह भी सुना जाता है कि उन लोगोंके लिए बागमें एक तम्बूके भीतर ब्राह्मण रसोइया द्वारा अन्न पानकी सामग्री तैयार करनेकी तैयारी होगी।

हारान बाबूने कुछ ही समयमें सार गर्भित बातचीतसे मैजिस्ट्रेट विशेष रूपसे सन्तुष्ट कर लिया था। ईसा मसीहकी धर्म-सम्बन्धी पुस्तकोंमें हारान बाबूका असाधारण पाण्डित्य देखकर साहब आश्चर्यमें डूब गये थे और ईसाई धर्मको ग्रहण करनेमें वह अब तक क्यों विलम्ब कर रहा है यह भी मैजिस्ट्रेटने उससे पूछा।

आज साँझको नदी तटके मार्गमें हारान बाबूके साथ मैजिस्ट्रेट ब्राह्म-समाजकी कार्यप्रणाली और हिन्दूसमाजके संस्कार साधनके सम्बन्धमें बड़ी गम्भीरतासे आलोचना कर रहे थे। इसी समय गोरा "गुड ईवनिंगसर" कहकर उनके सामने आ खड़ा हुआ।

कल उसने मैजिस्ट्रेट साहबसे मिलने की चेष्टा करके देखा कि साहबके सदर फाटकके भीतर पैर रखने के लिये दरबान को कुछ भेंट देनी होती है। इस प्रकार जुर्मानेके साथ साथ अपमान स्वीकार करनेमें राजी न होकर आज वह साहबके हवा खानेके समय उनसे भेंट करने आया है। इस

साक्षात्कारके समय हारान बाबू और गोरा, इन दोनों में पारस्परिक परिचयका कोई लक्षण न पाया गया।

गोरा को देखकर साहब कुछ विस्मितसे हो गये। ऐसा लम्बा जवान, हट्टा-कट्टा बदन, इसके पहले कभी बङ्ग देश में देखा है या नहीं, यह उनके स्मरणमें न आया। इसके शरीरकी कान्ति भी साधारण बङ्गालीकी सी न थी। यह एक खाकी रङ्ग का कुरता पहिने हुए था, धोती मोटी और कुछ मैली थी, हाथमें एक बाँस का लट्ठ था चादर को सिर-पर पगड़ीकी तरह लपेटे हुए था।

गोराने मैजिस्ट्रेट से कहा—मैं अल्लापुरसे आ रहा हूँ।

मैजिस्ट्रेट ने एक विस्मयसूचक भाव प्रदर्शित किया। अल्लापुरकी वर्तमान कार्रवाईमें एक बाहरी आदमी बाधा देने आया है, यह खबर उनको कलही मिल चुकी थी। तो क्या यह वही आदमी है? गोराको सिरसे पैर तक उन्होंने एक बार कड़ी दृष्टिसे देखा और पूछा—तुम कौन जात हो?

गोरा—मैं बङ्गाली ब्राह्मण हूँ।

साहबने कहा—ओ! क्या समाचार पत्रके साथ तुम्हारा कोई सम्बन्ध है?

गोरा—जी नहीं।

मैजिस्ट्रेट—तब तुम अल्लापुर क्या करने गये थे?

गोरा—घूमते-फिरते वहाँ जा पहुंचा था। पुलिस का अत्याचार और गाँव की दुर्दशा देखकर तथा वहाँ विशेष उपद्रवकी संभावना जानकर प्रतिकारके लिए मैं आपके पास आया हूँ।

मैजिस्ट्रेट—अल्लापुरके लोग बड़े बदमाश हैं, यह तुम नहीं जानते?

गोरा—वे बदमाश नहीं हैं, वे निडर हैं और स्वतन्त्र स्वभाव के हैं। वे लोग अन्याय और अत्याचार को चुपचाप नहीं सह सकते।

मैजिस्ट्रेट खफा हो उठे। उन्होंने मनमें समझा कि नये बङ्गाली

इतिहासकी किताबें पढ़कर नई बोली बोलने लगे हैं। "तुम वहाँकी हालतसे बिलकुल वाकिफ नहीं हो", यह कहकर मैजिस्ट्रेटने गोरा को खूब झुड़की दी।

गोराने भी खूब कड़ककर कहा—आप वहाँकी हालत मेरी अपेक्षा बहुत कम जानते हैं।

मैजिस्ट्रेट—मैं तुमको सावधान किये देता हूँ, अगर तुम अल्लापुरके मामले में किसी तरह का हस्तक्षेप करोगे तो याद रक्खो, तुम विद्रोही समझे जाओगे और तुमको इसका उचित फल मिलेगा।

गोरा—जब आपने अत्याचारको शान्त न करने ही का मनमें सङ्कल्प किया है और गाँवके लोगोंके विरुद्ध जब आपकी ऐसी धारणा दृढ़ बँध गई है तब मैं कर ही क्या सकता हूं। हाँ, इतना मैं जरूर करूँगा कि उस गाँवके लोगोंको पुलिस के विरुद्ध खड़े होने के लिये उत्साहित करूँगा।

मैजिस्ट्रेट चलते चलते रुक गये और पीछे की ओर घूमकर गोराको डपट कर बोले—क्या इतनी बड़ी शेखी?

गोरा कुछ जवाब न देकर धीरे धीरे वहाँ से चला गया। मैजिस्ट्रेटने हारान बाबूसे कहा—क्यों साहब, आपके देशवासियोंमें यह कैसा लक्षण दिखाई दे रहा है?

हारान बाबू ने कहा—हुजूर! लिखना पढ़ना कुछ ठीक होता नहीं, विशेषकर देशमें आध्यात्मिक और नैतिक तथा चरित्र सुधार सम्बन्धी शिक्षा न होने के कारण ही ऐसी घटना होती है। अँगरेजी विद्या का जो श्रेष्ठ अंश है वह ग्रहण करने की इन्हें सामर्थ्य नहीं। भारतवर्ष में अँगरेजी शासन को—जो ईश्वरकी कृपा का फल है—ये अकृतज्ञ अब भी स्वीकार करना नहीं चाहते। इसका कारण एक मात्र यही जान पड़ता है कि ये लोग तोते की तरह केवल पाठ को कंठ कर लेते हैं किन्तु धर्म का ज्ञान बिलकुल नहीं है।

मैजिस्ट्रेट—जब तक ये लोग ईसाईमतको न मानेंगे तब तक भारत में यह धर्मज्ञान कभी पूर्णतया लाभ न करेगा।

हारान बाबूने कहा—"यह आपका कहना एक प्रकार से सच है।" यह कहकर ईसाको स्वीकार करनेके सम्बन्धमें किसी ईसाई के साथ हारान बाबू का कहाँ मतभेद था और कहाँ वह सम्मत था—इसीकी सूक्ष्म भावसे चर्चा उसने मैजिस्ट्रेटसे की और उनका ध्यान इस प्रकार अपनी ओर खींच लिया था कि जब मेम साहिबा ने परेश बाबूकी लड़कियोंको गाड़ी पर बिठा डाक बङ्गलेमें पहुँचा दिया और लौटती बार रास्तेमें अपने स्वामीसे कहा, "घर चलिये," तब वे चौंक उठे और घड़ी देखकर कहा—आठ बजकर बीस मिनट हो गये! गाड़ी पर चलते समय मैजिस्ट्रेटने हारानबाबू से हाथ मिलाकर कहा—आपके साथ बातचीत करके मेरी आजकी सन्ध्या खूब मजेमें कटी है।

हारान बाबूने डाक बङ्गले में पहुँचकर वे सब बातें सबको सुनाई जो कि आज मैजिस्ट्रेट से हुई थीं। परन्तु उसने गोराके आने का उल्लेख नहीं किया।

किसी प्रकारके अपराध का विचार न करके केवल दमन करने के लिये सैंतालीस आदमी आदमी गिरफ्तार करके हवालात में डाल दिये गये थे।

मैजिस्ट्रेटके साथ मुलाकात करने के बाद गोरा वकीलकी खोजमें निकला। किसी से उसे खबर मिली कि सात कौड़ी हालदार यहाँके एक अच्छे वकील हैं। सात कौड़ीके घर पहुंचते ही उन्होंने कहा—वाह, गोरा—! तुम यहाँ कहाँ!

गोराने जो समझा था, वही ठीक निकला—सात कौरी गोराके सहपाठियोंमें से हैं। गोराने कहा—चर-घोषपुरके आसामियों को जमानत पर छुड़ा कर उनके मुकद्दमे की पैरवी करनी होगी।

सातकौड़ीने कहा—जमानत कौन करेगा?

गोराने कहा—मैं।

सातकौड़ीने कहा—तुम अकेले सैंतालीस आदमियों की जमानत कर सकोगे, इतनी जयदाद तुम्हारे कहाँ है?

गोराने कहा—अगर मुख्तार लोग मिलकर जमानत करें, तो उसकी फीस मैं दूँगा।

सात०—मगर रुपया थोड़े नहीं लगेंगे

दूसरे दिन मैजिस्ट्रेटके इजलासमें जमानत पर आसामियोंको छोड़नेकी दरख्वास्त दी गई। मैजिस्ट्रेट ने दरख्वास्त नामन्जूर करदी। चौदह साल-के लड़केसे लेकर अस्सी बरसके बूढ़े तक हवालातमें सड़ने लगे।

गोराने इन लोगोंकी ओरसे मुकद्दमा लड़नेके लिए सातकौड़ीसे अनुरोध किया। सातकौड़ीने कहा—गवाह कहाँ मिलेंगे? जो लोग गवाह हो सकते थे, वे सब तो असामी बना लिये गये हैं। इसके अलावा साहब के मारने के मामलेकी तहकीकातके उपद्रवसे इस तरफके लोग

हैरान हो उठे हैं। मजिस्ट्रेट की यह धारणा पक्की हो गई है कि इस मामले में भीतर ही भीतर भले आदमियों की साजिश है। शायद मुझ पर भी सन्देह करता हो, कह नहीं सकता; अँग्रेजी अखबार बराबर लिख रहे हैं कि 'देशी आदमियों की हिम्मत और हौसला अगर इस तरह बढ़ता रहा, तो अरक्षित असहाय अँग्रेज लोग अब मुफस्सिलमें रहने ही न पावेंगे। इधर इसी बीचमें यह हाल हो गया है कि देशके आदमी अपने ही गाँव देशमें रह नहीं सकते। अत्याचार हो रहा है, यह मैं जानता हूं, किन्तु क्या किया जाय, कुछ करनेका उपाय नहीं है।

गोराने गरज कर कहा—क्यों नहीं है?

सातकौड़ीने हँस कर कहा—देखता हूँ, तुम स्कूलमें जैसे थे, ठीक वैसे ही अभी तक बने हुए हो। उपाय नहीं है, इसके माने यह है कि हम लोगोंके घरमें औरतें और लड़के वाले हैं! रोज कमाई किये बिना सभी आदमियोंको भूखे रहने पड़े। पराई बला अपने सिर पर लेकर मरनेके लिए राजी होने वाले आदमी संसारमें अधिक नहीं हैं, खास कर उस देशमें, जहाँ परिवार पदार्थ निहायत छोटी मोटी चीज नहीं है। जिनके ऊपर दस आदमियोंका बोझ है, वे उन आश्रित आदमियोंको छोड़ कर अन्य दस आदमियों की ओर ताकनेका अवकाश ही नहीं पाते।

गोराने कहा—तो तुम इन लोगोंके लिए कुछ भी नहीं करोगे?

सातकौड़ीने कहा—अरे तुम यह नहीं देखते कि अँग्रेज को मारा गया है? हर एक अँग्रेज ही यहाँ राजा है—एक छोटेसे अँग्रेज को मारना भी एक छोटा मोटा राज विद्रोह माना जाता है। जिससे कुछ लाभ नहीं होनेका, जो अवश्यही निष्फल होगा, उसके लिए व्यर्थ चेष्टा करके मजिस्ट्रेटके कोपकी आगमें पड़नेका काम मेरे द्वारा नहीं होगा।

कलकत्ते जाकर वहाँके किसी वकीलकी सहायतासे कुछ सुभीता होता है कि नहीं, यह देखनेके लिए दूसरे दिन साढ़े दस बजेकी ट्रेनसे रवाना होनेके इरादेसे गोराने यात्रकी। किन्तु बीचहीमें बाधा पड़ गई।

यहाँके मेलेके उपलक्षमें कलकत्तेके छात्रोंकी एक 'टीम' (दल) से

यहाँ के स्थानीय छात्रोंकी एक 'टीम' से क्रिकेट मैच होने वाला था। अभ्यासके लिए कलकत्तेके दलके छात्र आपसमें क्रिकेट खेल रहे थे। क्रिकेटका गेंद पड़ जानेसे एक लड़केके पैरमें गहरी चोट आगई। मैदानके किनारे एक तालाब था। चोट खाये हुये लड़केको उसके साथी दो लड़के लादकर उसी तलावके किनारे ले गये, और चादर फाड़कर पानीमें भिगो कर उस लड़केके पैरमें पट्टी बाँधने लगे। इसी समय अकस्मात एक सिपाही वहां आ गया। उसने आते ही एक दम एक लड़केकी गर्दन पकड़ कर उसे जोरसे धक्का दिया। इतना ही नहीं गन्दी गन्दी गालियां भी दीं। तालाब पीनेके पानीके लिए सुरक्षित है उसके भीतर उतरना मना है, यह कलकत्ते के दलके छात्रोंको मालूम नहीं और अगर मालूम भी होता, तो अकस्मात् एक मामूली सिपाहीके हाथों ऐसा अपमान सहनेका अभ्यास उन्हें न था। शरीरमें शक्ति भी थी। इसीसे उन्होंने उस अपमान का बदला चुकाना शुरू कर दिया। लड़कोंके हाथसे सिपाहीके पिटनेका दृश्य देखकर चार-पांच और सिपाही भी दौड़कर आगये। ठीक इसी समय गोरा भी उधरसे निकला। वे लड़के गोराको अच्छी तरह जानते-पहचानते थे—गोरा बहुत दिन तक उनके साथ क्रिकेट खेला है। गोराने जब देखा, सिपाही लड़कोंको मारते हुये पकड़े लिए जाते हैं, तब उससे सहा न गया। उसने कहा—खबरदार मारना नहीं। सिपाहियोंने जैसे ही गोराके लिए गाली जबानसे निकाली, वैसेही गोराने उनपर घूँसे लातकी बौछार करके ऐसा एक काण्ड कर डाला कि रास्तेमें तमाशाइयोंकी भीड़ जमा हो गई। इधर देखते ही देखते छात्रोंका पूरा जत्था आकर उपस्थितहो गया; फिर क्या था, गोरासे उत्साह और आज्ञा पाकर उन्होने पुलिसवालों पर हमला किया; देखते-ही-देखते सिपाहियोंकी टोली भाग खड़ी हुई। राहगीर लोगोंको बड़ा मजा आया, किन्तु यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं कि गोराके लिए यह घटना कोरा तमाशा ही नहीं हुई।

तीन चार बजे होंगे—डाक बङ्गलेमें विनय, हारान बाबू और लड़कियाँ रिहर्सलमें लगे हुये थे; इसी समय विनयके परिचित दो छात्रोंने आ

कर खबर दी कि गोरा को और अन्यान्य कई छात्रोंको पुलिसने गिरफ्तार करके हवालातमें बन्द कर रक्खा है।

गोरा हवालातमें ! यह खबर सुनकर हारान बाबू के सिवा और सभी एकदम चौंक उठे। विनय उसी दम दौड़कर पहले अपने सहपाठी पूर्वोक्त सातकौड़ी हालदार वकीलके पास गया, और उसे सब समाचार सुनाकर साथ लेकर हवालात में पहुँचा।

सातकौड़ीने गोराकी ओरसे वकील होकर इसी दम जमानत पर उसको छुड़ानेका प्रस्ताव किया। गोराने कहा—ना, मैं वकील भी नहीं करूँगा, और मुझे जमानत पर छुड़ानेकी चेष्टा भी न करनी होगी।

यह क्या बात है ! सातकौड़ीने विनयकी ओर फिर कर कहा—देखते हो ! कौन कहेगा कि गोरा स्कूलसे निकल चुका है ! उसकी बुद्धि ठीक उसी तरहकी बनी हुई है, जैसे कि स्कूलमें पढ़नेके समय थी।

गोराने कहा—दैवसंयोगसे मेरे रुपये हैं, इष्ट मित्र हैं, इससे मैं हाजत और हथकड़ीसे छुटकारा पा सकता हूं, किन्तु मैं यह नहीं चाहता। हम लोग अपने देशकी धर्म नीतिके अनुसार यही जानते है कि सुविचार और न्याय करनेकी गरज राजाको होनी चाहिए—प्रजाके प्रति अविचार होनेसे राजा को ही अधर्मका भागी होना पड़ता है। किन्तु इस सल्तनतमें अगर वकीलकी फीसका प्रबन्ध न कर पाने से प्रजा हवालातमें सड़ती और जेल में मरती है, राजाके सिर पर मौजूद रहते न्याय विचारको रुपए देकर खरीदनेमें सर्वस्व स्वाहा कर देना पड़ता है, तो ऐसे विचारके लिए मैं दमड़ी भी खर्च करनेको राजी नहीं हूं।

सातकौड़ीने कहा - काजियोंके अमलमें तो घूस देने में ही सिर तक बिक जाता था ?

गोराने कहा—घूस देना तो राजाका विधान नहीं था। जो काजी बुरा होता था, वह घूस लेता था। यह बात इस अमलदारी में भी है। किन्तु इस समय राज-द्वार में विचारके लिए खड़े होते ही वादी-प्रतिवादी दोषी-निर्दोष, सभी प्रजा को आँसू बहाने ही पड़ेंगे। जो पक्ष धनहीन है, उसके

लिए 'विचार' की लड़ाईमें हार और जीत दोनों ही सर्वनाशके समान है। फिर जहाँ राजा स्वयं वादी है, और प्रदिवादी मेरे समान सम्पन्न आदमी है, वहीं वकील वैरिस्टरका प्रबन्ध है। मैं अगर वकील को फीस देकर खड़ा कर सका, तब तो अच्छा ही है, नहीं तो भाग्य में जो लिखा हो! विचार में अगर वकीलकी सहायता का प्रयोजन है, तो फिर गवर्नमेंटके विरुद्ध पक्षको क्यों अपना वकील आप खड़ा करनेके लिए बाध्य होना होगा? यह किस तरहका राजधर्म है?

सातकौड़ीने कहा—भाई, खफा क्यों होते हो? सूक्ष्म विचार करने के लिए सूक्ष्म आईन बनाना होता है, और सूक्ष्म आईन बनाने पर तब कानूनी पेशा लोगोंके बिना काम नहीं चलता। पेशा या धन्धा चलाने में क्रय-विक्रयका भाव आ ही जाता है। अतएव सभ्यता की अदालतमें आपही विचार (इन्साफ) के क्रय-विक्रय की बाजार अवश्य हो उठेगी जिसके पास रुपये नहीं हैं, उसके ठगे जाने की सम्भावना अवश्य यही रहेगी। अच्छा तुम अगर राजा होते तो क्या करते बतलाओ तो सही?

गोराने कहा—मैं तब अगर ऐसा कानून बनाता कि हजार डेढ़ हजार रुपयकी तनख्वाह पाने वाले विचारककी बुद्धिसे भी उसके रहस्य का भेद होना सम्भव न होता, तो अभागे वादी और प्रतिवादी दोनों की ओर सरकारी खर्च से ही वकील खड़े कर देता। विचार अच्छा और ठीक होनेका खर्च प्रजाके सिर पर लादकर अपने सुविचारके गौरवका बखान मुगल-पठान शासकोंके ऊपर गालियों की बौछार कभी न करता।

सातकौड़ीने कहा—अच्छी बात है, जब कि वह शुभ दिन अभी नहीं आया—तुम राजा नहीं हुए—और जब फिलहाल तुम सभ्य राजाकी अदालत के आसामी हो तब तुमको या तो गाँठके पैसे खर्च करने पड़ेंगे, और नहीं तो वकील मित्रकी शरणमें जाना होगा।

गोराने जिद करके कहा—कोई चेष्टा न करके जो गति हो सकती है, वही गति मेरी हो। इस राज्यमें सम्पूर्ण रूपसे निरुपाय मनुष्यकी जो गति है, वही गति मेरी भी है।

विनय अनेक अनुनय विनय करके हार गया, लेकिन गोराने उसपर ध्यान ही नहीं दिया। उसने विनयसे पूछा—तुम यहां कैसे आगये।

विनयका मुख कुछ लाल हो उठा। गोरा अगर आज हवालातमें न होता; तो शायद विनय कुछ विद्रोहके स्वरमें ही अपनी यहाँ उपस्थित का कारण कह देता। किन्तु आज गोराके प्रश्नका उत्तर उसके मुँहसे न निकल सका। विनयने कहा—मेरी बात पीछे होगी, इस समय तुम्हारी।

गोराने कहा—मैं तो राजाका अतिथि हूँ। मेरे लिए राजाको खुद चिन्ता है, तुम लोगोंमें किसीको कुछ सोचना न होगा।

विनय जानता था, गोराको उसके संकल्पसे डिगाना सम्भव नहीं। अतएव वकील करनेकी चेष्टा छोड़ देनी पड़ी। विनयने कहा—मैं जानता हू, तुम तो यहाँ कुछ खा पी नहीं सकोगे। बाहर से कुछ लानेके लिए भजनका प्रबन्ध कर दूँ?

गोराने अधीर होकर कहा—विनय, क्यों तुम वृथा चेष्टा करते हो। बाहरसे मैं कुछ नहीं चाहता। हवालात में सबको जो नसीब होता है, उससे अधिक कुछ भी मैं नहीं चाहता।

विनय व्यथित चित्तसे डाक बङ्गलेमें लौट आया। रास्ते की ओर जो एक सोनेकी कोठरी थी, उसीमें दरवाजा बन्द किये और खिड़की खोले बैठी हुई सुचरिता विनयके लौटने की राह देख रही थी। वह किसी तरह और सबका संग और बातचीत सहन करनेमें असमर्थ हो रही थी।

सुचरिताने जब देखा कि विनय चिन्तित उदासमुख लिए डाक-बङ्गलेकी ओर आ रहा है, तब आशंकाके भावसे उसके हृदय में हलचल सी मच गई। बहुत कोशिशसे अपनेको शान्त करके एक किताब हाथमें लेकर सुचरिता सबके पास आकर बैठ गई। ललिता सिलाईका काम पसन्द नहीं करती, किन्तु आज वह भी चुपचाप एक कोने में बैठी सुई चला रही थी। लावण्य सुधीरके साथ खेल खेल रही थी; लीला दर्शक रूपसे बैठी थी। हारान बाबू वरदासुन्दरीके साथ दूसरे दिन होने वाले, उत्सव की चर्चा और आलोचना कर रहे थे।

विनय ने आकर आज प्रातःकाल पुलिसके द्वारा गोराके झगड़ेका सब हाल ब्योरेवार कह सुनाया। सुचरिता सन्नाटे में आकर बैठी रही। ललिता के हाथ से सिलाई का काम गिर गया और चेहरा लाल हो उठा।

वरदासुन्दरीने कहा—आप कुछ चिन्ता न करिये विनय बाबू ! मैं खुद मैजिस्ट्रेट साहब की मेमसे गोरा बाबू के लिये अनुरोध करूँगी।

विनयने कहा—ना, ना, आप यह न करें। गोरा अगर सुन पावेगा तो वह इस जीवन भरमें मुझे क्षमा न करेगा।

सुधीरने कहा—उनके डिफेन्स (बचाव) के लिये तो कुछ बन्दोबस्त करना होगा। जमानत देकर छुड़ाने की चेष्टा और वकील खड़ा करनेके सम्बन्ध में गोराने जो जो आपत्ति की थी सब विनयने कह सुनाया। सुन सुनकर हारान बाबू ने असहिष्णु होकर कहा—यह सब ज्यादती है।

हारान बाबूके ऊपर ललिताके मन का भाव चाहे जो हो, वह आज तक उन्हें मानती आरही है, उनका अदब करती रही है—कभी उसने उनसे बहस नहीं की। आज वह उनकी बात सुनकर उससे नहीं रहा गया वह तीव्र भाव से सिर हिलाकर कह उठी—कुछ भी ज्यादती नहीं है—गोरा बाबू जो कहते हैं सो ठीक है। मेजिस्ट्रेट हम पर अत्याचार करेगा, और हम आप अपना रक्षा करेंगे! उनको लंबी तनख्वाह देने के लिए हमें टैक्स देना होगा और उन्हीके दमनके हाथ से परित्राण पानेके लिये अपने बचाव लिये—हमें अपनी ही गाँठ से वकील की फीस भी देनी होगी! ऐसा इंसाफ पानेकी अपेक्षा जेल जाना ही भला है!

ललिता को हारान बाबू ने जरा सी देखा है—उन्होंने किसी दिन इसकी कल्पना भी नहीं की कि ललिताकी कोई स्वतन्त्र सम्मति है, या हो सकती है। उसी ललिताके मुखकी तीव्र भाषा सुनकर वह आश्चर्य से अवाक रह गये। भर्त्सना के स्वर में उन्होंने ललितासे कहा—तुम इन सब बातों के बारे में क्या समझती हो? जो लोग कुछ थोड़ी सी किताबें रटकर परीक्षा पास कर, अभी कालेज से निकलकर आये हैं, जिनका कोई

धर्म नहीं है—कोई धारणा नहीं है, उनके मुखसे दायित्व हीन उन्मत्तप्रलाप सुनकर तुम लोगों का सिर फिर जाता है !

इतना कहकर हारान बाबू ने कल शाम को गोरा से मैजिस्ट्रेटकी मुलाकात और मैजिस्ट्रेटके साथ अपनी बात चीत का विवरण उन्होंने कह सुनाया। चरघोषपुर का हाल विनय को मालूम न था; सब सुनकर वह शङ्कित हो उठा। उसने समझ लिया कि मैजिस्ट्रेट गोराको सहजमें क्षमा या रिहा नहीं करेगा।

हाराननें जिस मतलबसे वह हाल कहा, वह बिल्कुल व्यर्थ हो गया। वह गोराके साथ अपनी मुलाकात होनेके बारे में अब तक एक दम चुप थे, उनके भीतर जो क्षुद्रता थी, उसने सुचरिताको चोट पहुँचाई, और हारानबाबूकी हर एक बातसे गोराके प्रति जो एक व्यक्तिगत ईर्षा प्रकट हुई, उसने गोराकी इस विपत्तिके समय, हारान बाबूके ऊपर, उपस्थित सभी लोगोंके मनमें एक अश्रद्धाका भाव उत्पन्न कर दिया।—सुचरिता अब तक चुप थी। कोई-एक बात कहनेके लिए उसके चित्तमें आवेग उपस्थित हुआ सही, किन्तु वह अपनेको संभालकर एक पुस्तक खोलकर काँपते हुए हाथ से उसके पन्ने उलटने लगी। ललिताने उद्धत भावसे कहा—मैजिस्ट्रेटके साथ हारान बाबूका मत चाहे जितना मिलता हो, घोषपुरके मामलोंमें अवश्य ही गौरमोहन बाबूका महत्त्व प्रकट हुआ है।

आज छोटे लाटकी अवाईके कारण मैजिस्ट्रेट साहबने ठीक साढ़े दस बजे अदालतमें आकर सवेरे-सवेरे कचहरीका काम खतम कर डालनेकी कोशिश की।

सातकौड़ी बाबूने स्कूलके विद्यार्थियोंका पक्ष लेकर उसी उपलक्षमें अपने मित्र गोराको बचानेकी चेष्टाकी। उन्होंने रङ्ग ढङ्ग देखकर समझ लिया था कि अपराध स्वीकार कर लेना ही इस जगह अच्छी चाल है। 'लड़के उपद्रवी हुआ ही करते हैं, वे नालायक पाजी इत्यादि हैं—कह कर उन्होंने लड़कोंके लिए क्षमा-प्रार्थनाकी। मैजिस्ट्रेटने लड़कोंको जेल लेजाकर उनकी अवस्था और अपराधकी कमी बेशीके अनुसार पाँचसे पच्चीस बेंत तक लगानेका हुक्म दे दिया। गोराका वकील कोई न था। उसने अपना मुकदमा आप चलाया, और उसी उपलक्ष में पुलिसके अत्याचारके बारेमें भी कुछ कहना चाहा, किन्तु मैजिस्ट्रेटने बीचहीमें तीव्र तिरस्कार करके उसका मुँह बन्द कर दिया, और पुलिसके काममें बाधा देनेके अपराध में उसे एक महीनेकी सख्त सजा दे दी। साथ ही ऐसी हलकी सजाको विशेष दया कहनेमें भी नहीं चूके।

सुधीर और विनय अदालतमें उपस्थित थे। विनय गोराके मुँहकी ओर देख न सका। उसकी जैसे सांस बन्द होने लगी; वह चटपट अदालतके कमरेसे बाहर निकल आया। सुधीरने उससे डाक-बंगलेको लौट जाकर नहाने-खानेके लिए अनुरोध किया, मगर उसने उस पर ध्यान नहीं दिया। मैदानकी राहसे चलते-चलते एक पेड़के नीचे वह बैठ गया; सुधीर से कहा—तुम बङ्गलेको लौट जाओ, मैं भी कुछ देर बाद आता हूँ। सुधीर चला गया।

इस तरह कितना समय वृक्ष के नीचे बैठे बीत गया, इसकी खबर

विनयको नहीं हुई। सूर्य सिरके ऊपरसे पश्चिमकी ओर जब ढल पड़े, तब एक गाड़ी ठीक उसके सामने आकर रुकी। विनयने मुह उठाकर देखा, सुधीर और सुचरिता, दोनों गाड़ीसे उतर कर उसके पास आ रहे हैं। विनय फौरन उठ खड़ा हुआ। सुचरिताने पास आकर स्नेहार्द्र स्वरसे कहा—विनय बाबू आइए!

विनयको एकाएक होश हुआ कि इस दृश्यको रास्तेके लोग तमाशेकी तरह देख रहे हैं। वह झटपट गाड़ी पर सवार हो गया। रात भर किसी के मुहसे कोई बात नहीं निकल सकी।

डाकबंगलेमें पहुँच कर विनयने देखा, वहाँ एक खासी लड़ाई चल रही है। ललिता बिगड़ी बैठी है—वह किसी तरह मैजिस्ट्रेटके निमन्त्रण और उत्सवमें शामिल न होगी। वरदासुन्दरी बड़े संकट में पड़ गई हैं। हारान बाबू ललिता सरीखी बालिकाके इस असंगत विद्रोहको देखकर क्रोधके मारे अस्थिर हो उठे हैं। वह बार बार कहते हैं—आज कलके लड़कों और लड़कियोंमें यह कैसा विकार उपस्थित हो गया है कि वे अदब-कायदा मानना नहीं चाहते। केवल जिस-तिस ऐरे गैरे आदमी के संसर्ग में मन-मानी आलोचना करनेका ही यह फल है!

विनयके आते ही ललिताने कहा—विनय बाबू, मुझे माफ कीजिये। मैंने आपके निकट भारी अपराध किया है। आप उस समय जो कहते थे, उसे तब मैं कुछ भी नहीं समझ सकी थी। हम लोग बाहरकी हालत कुछ भी नहीं जानतीं, इसीसे हमारे समझनेमें इतनी और ऐसी भूल हो जाती है! हारान बाबू कहते हैं, भारतमें मैजिस्ट्रेटका यह शासन विधाता का विधान है। मैं कहती हूँ अगर यह बात सच है, तो इस शासनको मन-वाणी कया से अभिशाप देनेकी इच्छा जगा देना भी उसी विधाताका ही विधान है!

हारान बाबू क्रोद्ध होकर कहने लगे—ललिता तुम...............

ललिता हारान बाबूकी ओर घूम कर खड़ी होगई, और बोली—चुप रहिए साहब! आप से मैं कुछ नहीं कहती।—विनय बाबू आप किसीके

अनुरोधका ख्याल न करें ? आज किसी तरह अभिनय हो ही नहीं सकता !

वरदासुन्दरीने चटपट ललिताकी बातको दबाते हुए कहा—ललिता, तू तो अच्छी लड़की देख पड़ती है। विनय बाबू को क्या आज नहाने-खाने न देगी ? जानती है, दो बज गये हैं ! देख तो उनका मुँह सूख रहा है, चेहरा कैसा हो रहा है !

विनय ने कहा—यहाँ हम उसी मैजिस्ट्रेट के अतिथि हैं। इस घर में मैं तो स्नान भोजन नहीं कर सकूँगा !

वरदासुन्दरीने बहुत अनुनय-विनय करके विनय को समझाने की चेष्टा की। सब लड़कियोंको चुप बैठे देख कर खफा हो कर वह कहने लगीं—तुम सबको हो क्या गया है ? सुची तुम्हीं विनय बाबू को जरा समझाओ ! हमने जबान दे रक्खी है सब लोग निमन्त्रण दे कर बुलाये जा चुके हैं; आजका दिन किसी तरह बिता देना चाहिये—नहीं तो भला वे सब लोग क्या ख्याल करेंगे तुम्हीं बताओ ! मैं तो फिर उन लोगों के आगे मुंह नहीं दिखा सकूंगी।

सुचरिता चुपचाप मुंह नीचा किये बैठी रही।

विनय पास ही नदी पर स्टीमरमें चला गया। वह स्टीमर आज दो तीन घन्टे के भीतर ही यात्रियोंको लेकर कलकत्ते को रवाना होगा—कल आठ बजेके लगभग वहाँ पहुँच जायगा।

हारान बाबू उत्तेजित हो उठे, और विनय तथा गोरा की निन्दा करने लगे। सुचरिता चटपट कुर्सी से उठकर पासकी कोठरीमें चली गई, और जोरसे दरवाजा भेड़ दिया। दम भर बाद ही ललिता भी दरवाजा खोल कर भीतर पहुँची। उसने देखा, सुचरिता दोनों हाथोंसे मुँह ढके विस्तर पर पड़ी हुई है।

ललिताने भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया। फिर सुचरिताके पास बैठकर धीरे—धीरे उसके सिरके बालोंमें अंगुलि—संचालन करने लगी। कई मिनटके बाद सुचरिता जब शान्त हुई, तब जबरदस्ती उसके मुँह

परसे दोनों हाथ हटाकर, उसके मुँहके पास मुंह लेजाकर, उसके कानमें कहने लगी—दीदी, चलो, हम लोग यहाँसे कलकत्ते लौट चलें; आज तो हम मजिस्ट्रेटके यहाँ जा नहीं सकेंगी।

सुचरिताने बहुत देर तक इस प्रस्तावका कुछ उत्तर नहीं दिया। ललिता जब बारम्बार कहने लगी, तब सुचरिता बिछौने पर बैठी, और बोली—यह कैसे होगा बहन? मेरी तो आनेकी इच्छा ही नहीं थी। लेकिन जब बाबूजी ने भेज दिया है तब जिस कामके लिये हम आई हैं उसे किये बिना हम जा नहीं सकेंगी।

ललिता—बाबूजी तो इन सब बातोंको जानते नहीं हैं, वह जानते तो कभी हमसे यहाँ ठहरनेके लिये न कहते।

सुचरिता—सो मैं किस तरह जान सकती हूँ बहन!

ललिता—दीदी तुझसे जाया जायगा? तूही बता, किस तरह वहां जायगा? उसके बाद फिर सजधज करके स्टेज पर खड़े हो कर कविता पढ़नी होगी। मेरे तो जीभ कटकर खून गिरेगा तो भी मुंहसे एक शब्द न निकलेगा!

सुचरिता—सो तो जानती हूँ बहन! किन्तु नरककी यन्त्रणा भी सहनी पड़ती है। अब और कोई उपाय नहीं! आजका दिन जीवन भरमें कभी न भूल सकूंगी।

सुचरिताकी इस बाध्यतासे नाराज होकर ललिता वहाँसे उठ आई आकर माँसे कहा—माँ तुम लोग न जाओगे?

वरदासुन्दरीने कहा—तू क्या पागल हो गई? वहाँ तो रातको, नौ बजेके बाद जाना होगा।

ललिताने कहा—मैं कलकत्ते जानेकी बात कहती हूँ?

वरदा०—जरा लड़कीकी बातें तो सुनो!

ललिताने सुधीरसे कहा—सुधीर दादा, तुम यहाँ रहोगे!

गोराकी सजाने सुधीरके मनको भी बेचैन कर दिया था किन्तु

बड़े-बड़े साहबोंके सामने अपनी विद्या प्रकट करनेके प्रलोभनको त्याग कर सकनेकी हिम्मत उसमें नहीं थी।

वरदासुन्दरीने कहा— इस गड़बड़में देर हो गई, अब और देर करनेसे काम नहीं चलेगा। अब साढ़े पाँच बजे तक कोई बिस्तर परसे उठने नहीं पावेगा—विश्राम करना होगा। नहीं तो रात में नींद सतावेगी, मुँह भी सूख जायगा, देखनेमें अच्छा न लगेगा।

इतना कहकर उन्होंने एक तरहसे जबरदस्ती ही सबको सोनेकी कोठरीमें लेजाकर बिस्तरों पर सुला दिया! सब सो गये, केवल सुचरिता को नींद नहीं आई, और दूसरी कोठरीमें ललिता अपने बिस्तर पर उठ कर बैठी रही।

उधर स्टीमर बार बार सीटी देने लगा।

स्टीमर जिस समय छूट रहा था, खलासी लोग सीढ़ीको ऊपर उठानेके लिए तैयार थे, इसी समय जहाजके डेकके ऊपरसे विनयने देखा, एक भले घर की स्त्री जहाजके सामने तेज चालसे आ रही है। उसका पहनावा देख कर वह ललिता ही जान पड़ी; किन्तु विनय सहसा विश्वास न कर सका। अंतको ललिता जब पास आगई, तब सन्देह जाता रहा। एक बार ख्याल आया, ललिता उसे लौटानेके लिए आई है; किन्तु ललिता ही तो मैजिस्ट्रेटके निमन्त्रणमें जानेके विरुद्ध खड़ी हुई थी। ललिता स्टीमर पर चढ़ गई, खलासीने सीढ़ी ऊपर उठाली। विनय शंकित चित्तसे ऊपरके डेकसे नीचे उतर कर, ललिताके सामने आकर उपस्थित हुआ। ललिता ने कहा—मुझे ऊपर ले चलिए।

विनयने विस्मित होकर कहा—जहाज जो छोड़ा जारहा है!

ललिताने कहा—यह मैं जानती हूं।

इतना कहकर, विनयके लिए अपेक्षा न करके ही सामने की सीढ़ी से वह ऊपरके खंड में चढ़ गई।

स्टीमर सीटी देता हुआ चल दिया।

विनयने ललिता को फर्स्ट क्लास डेक में कुर्सी पर बिठा कर चुपचाप उसके मुँहकी ओर देखा।

ललिताने कहा—मैं कलकत्ते जाऊँगी। मुझसे किसी तरह ठहरा नहीं गया।

विनयने पूछा—और वे सब ?

ललिताने कहा—अभी तक कोई यह हाल नहीं जानता। मैं पुर्जा लिख कर रख आई हूँ, पढ़ कर जान लेंगे।

ललिताकी इस दुस्साहसिकतासे विनय स्तम्भित रह गया था। वह संकोच के साथ कहने लगा—मगर··

ललिताने चटपट बाधा देकर कहा—जहाज छूट चुका है, अब 'अगर—मगर' से क्या होगा ? औरत होकर पैदा हुई हूँ तो मुझे सब कुछ चुपचाप सहना पड़ेगा, यह मेरी समझ में नहीं आता। हम स्त्रियोंकी बुद्धिमें भी न्याय अन्याय, सम्भव-असम्भव, सभी कुछ है। आज के निमन्त्रण में जाकर अभिनय करने की अपेक्षा आत्महत्या कर लेना मेरे लिए सहज है।

विनय सोचा, जो होना था सो हो गया; अब इस कामकी भलाई-बुराईका विचार करके मनको पीड़ित व चिन्तित करनेमें कोई लाभ नहीं है।

कुछ देर चुप रह कर ललिताने कहा—देखिए, आपके मित्र गोरा बाबूके साथ मैंने मन-ही-मन बड़ा अविचार किया था। नहीं जानती, पहलेसे ही क्यों उन्हें देख कर, उनकी बातें सुनकर मेरा मन उनके विरुद्ध हो गया था; वह बहुत ज्यादा जोर देकर बातें कहते थे और आप सब लोग उनका साथ जैसे दिये जाते थे; यही देखकर मुझे एक तरहका क्रोध हो आता था। मेरा स्वभाव ही यह है, यदि देखती हूँ कि कोई बातचीत या व्यवहार में ज़ोर जाहिर करता है, तो उसे मैं बिल्कुल ही सह नहीं सकती। किन्तु गोरा बाबूका जोर सिर्फ

औरोंके ऊपर ही नहीं है, वह अपने ऊपर भी जोर देते हैं। यह सच्चा जोर है। ऐसा आदमी और मैंने नहीं देखा।

इसी तरह ललिता कहने लगी। यह बात नहीं थी कि वह केवल गोराके सम्बन्धमें पश्चात्तापका बोध करनेके कारण ही ये सब बातें कह रही थी; असलमें एक धुनमें आकर उसने जो काम कर डाला था, उसका संकोच मनके भीतरसे बराबर सिर उठानेका उपक्रम कर रहा था, काम शायद अच्छा नहीं हुआ? इस दुविधाके जोर करनेके लक्षण देखे जाते थे। विनयके सामने स्टीमरमें इस तरह अकेले बैठे रहना इतनी बड़ी कुण्ठाका विषय है इसका ख्याल भी पहले वह नहीं कर सकी थी, किन्तु लज्जा प्रकट होते ही यह घटना अत्यन्त लज्जाका मामला हो उठेगी, इसी लिए वह प्राणपणसे कहने लगी। विनयको बोलना भी भारू हो रहा था। एक ओर गोराका कष्ट और अपमान था, दूसरी ओर यहां मैजिस्ट्रेटके घर आमोद-प्रमोद में सम्मिलित होने के लिए आनेकी लज्जा थी, उस पर तुर्रा यह कि ललिताके इस दुस्साहससे उसके सम्बन्ध में विनय पर संकट आ पड़ा। इन्हीं बातोंने मिलकर विनयको गूँगा सा बना दिया था।

पहले होता, तो ललिताके इस दुस्साहससे विनयके मन में तिरस्कार का भाव उत्पन्न होता, किन्तु आज वह किसी तरह नहीं हुआ। यहाँ तक कि उसके मनमें जो विस्मय उदय हुआ था, उसके साथ श्रद्धा मिली हुई थी। इसमें एक और आनन्द यह था कि उनके सारे दलके भीतर गोराके अपमानके प्रतिकारकी चेष्टा केवल विनय और ललिताने ही की है। इसके लिए विनयको तो विशेष कुछ दुःख उठाना होगा, किन्तु ललिताको अपने कर्म के फलस्वरूप बहुत दिन तक असीम पीड़ा भोग करनी होगी। इसलिये इसी ललिताको विनय बराबर गोराके विरुद्ध ही जानता था। वह जितना ही सोचने लगा उतना ही ललिता के इस परिणाम विचार विहीन सहास और अन्यायके प्रति एकान्त घृणासे उसके प्रति विनयके मन में भक्ति उत्पन्न होने लगी। किस तरह क्या कहकर

वह भक्ति प्रकट की जाय, यह बहुत सोचकर भी विनय निश्चय न कर सका। विनय बारम्बार सोचने लगा की ललिताने जो उसे इतना परमुखापेक्षी और साहसहीन कह कर घृणा प्रकट की थी वह यथार्थ थी। वह तो आत्मीय बन्धुओंकी निन्दा और प्रशंसाकी बलपूर्वक उपेक्षा करके इस तरह किसी भी विषयमें साहिसक आचारणके द्वारा अपने मतको प्रकट न कर सकता। उसने अक्सर गोराको कष्ट पहुँचानेके भयसे, अथवा पीछे गोरा उसे दुर्बल न समझ ले—इस अशङ्कासे अपने स्वभावका अनुसरण नहीं किया; अक्सर सूक्ष्म युक्ति जाल फैला कर गोरा के मतको अपना ही मतें कहकर स्वयं अपने ही को भुलाने की चेष्टा की है। आज यही मन में स्वीकार करके विनयने स्वाधीन बुद्धि शक्तिके गुणमें ललिताको अपनेसे कहीं श्रेष्ठ मान लिया। उसने जो पहले अनेक बार मन ही मन ललिता की निन्दा की थी। याद करके विनयको लज्जा मालूम हुई ! यहाँ तक कि ललिता से क्षमा माँगने को उसका जी चाहा, किन्तु यह सोचकर ठीक न कह सका कि किस तरह उससे क्षमा माँगे। ललिता की कमनीय स्त्री मूर्ति अपने आन्तरिक तेज से विनय की आँखों को आज ऐसी एक महिमा से जगमगती हुई दिखाई दी कि नारीके इस अपूर्व परिचय से उसने अपने जीवनको सार्थक समझा।

[३०]

ललिताको साथ लेकर विनय परेश बाबूके घर पर उपस्थित हुआ।

स्टीमर पर चढ़नेके पहले तक विनयको निश्चित रूपसे नहीं मालूम था कि ललिताके सम्बन्धमें उसके मनका भाव क्या है। ललिताके साथ विरोध में ही उसका मन हुआ था कि किस तरह इस दुर्जय लड़कीके साथ किसी तरह सुलह की जा सकती है, यही कुछ समयसे विनयकी-चिन्ता का प्रायः प्रतिदिनका विषय हो रहा था। विनयके जीवनमें स्त्री-माधुर्यकी निर्मल दीप्ति लेकर सुचरिता ही पहले सन्ध्या तारके समान दिखाई दी थी। इस आविर्भाव का अनुपम अपरूप आनन्द ही उसकी प्रकृति को परिपूर्णता दिये हुए हैं, यही विनय अपने मनमें जानता था। किन्तु इसी बीचमें और एक तारा उदय हो आया है, और ज्योतिः उत्सव की भूमिकामात्र करके प्रथम तारा धीरे-धीरे क्षितिजकी ओर उतर रहा है—यह बात विनय स्पष्ट रूपसे समझ नहीं सका था।

विद्रोही ललिता जिस दिन स्टीमर पर चढ़ आई, उस दिन विनयके मनमें आया कि ललिता और मैं दोनों एक पक्षमें होकर जैसे सारे संसार के प्रतिकूल खड़े हुए हैं। इस घटनाके कारण ललिता और सबको छोड़ कर उसीके पास आकर खड़ी हुई है—यह बात विनय किसी तरह भूल नहीं सका। चाहे जिस कारण और चाहे जिस उपलक्ष्य हो, ललिताके लिये विनय आज अनेकके बीच एक जनमात्र नहीं है—ललिताकी बगलमें वही अकेला है— वही एक मात्र है, सब आत्मीय-स्वजन दूर हैं, वही निकट है। इस नैकट्य का पुलक पूर्ण स्पन्दन, विद्युतगर्भ मेघकी तरह उसकी छातीमें एक,चमक सी पैदा करने लगा। फर्स्ट क्लास केबिन में ललिता जब सोने गई तब विनयसे अपनी जगह पर सोया नहीं गया। वह उसी केबिनके बाहर डेक पर जूते उतार कर चुपचाप टहलने लगा। स्टीमर में ललिता के सम्बन्धमें कुछ उत्पात होने की विशेष

भावना नहीं थी, किन्तु विना अपनेके अकस्मात मिले हुए नवीन अधिकारका पूरा अनुभव करने के प्रलोभनसे विना प्रयोजनके भी उस अधिकार का व्यवहार किये बिना नहीं रह सका।

रात गहरी अंधेरी थी। मेघ—शून्य आकाश तारागणों से जगमगा रहा था, नीचे चौड़ी नदी की प्रबल धारा चुप-चाप बह रही थी—उसीके बीचमें ललिता सो रही थी। और कुछ नहीं, केवल इस सुन्दर—इस बिश्वास-पूर्ण—निन्द्रा को ही ललिताने आज विनयके हाथमें सौंप दिया है। महा मूल्य रत्नके समान इस निद्राकी ही रखवालीका भार आज विनयने लिया है। पिता, माता, भगिनी, कोई नहीं है; एक अपरिचित शय्याके ऊपर ललिता अपने सुन्दर शरीरको डाले हुये निश्चिन्त होकर सो रही है। निश्वास प्रश्वास जैसे इस निद्रा काव्यके छन्दकी माप से, अत्यन्त शान्तभावसे गमनागमन करती है। उस कारीगरीके साथ बाँधी कई वेणीसे एक केशभी स्थान च्युत नहीं हुआ। वे नारी हृदयके कल्याणकी कोमलतासे मन्डित दोनों हाथ परिपूर्ण विरामसे बिछौने के ऊपर पड़े हुए हैं कुसुम-सुकुमार दोनों पदतल अपना समस्त रमणीय गति-चेष्टाको उत्सवावसान के सङ्गीत की तरह स्तब्ध करके बिछौने के ऊपर फैले हुए हैं। विश्रब्ध विश्राम की इस छविने विनयकी कल्पनाको परिपूर्ण कर डाला। सीपीमें मोतीके समान ही ग्रह तारामण्डित निःशब्द तिमिर वेष्टित इस आकाश मंडलके मध्य स्थलमें ललिताकी यह निद्रा - यह सुडौल सुन्दर संपूर्ण विश्राम—जगत में एकामात्र ऐश्वर्यके रूपमें बिनय को देख पड़ा। मैं जाग रहा हूँ—मैं जाग रहा हूं, यह वाक्य विनयके विस्फारित वक्षःस्थलसे अभय-शङ्ख ध्वनि के समान उठ कर महा आकाशके अनिमेष जाग्रत पुरुषकी निःशब्द वाणीके साथ मिलित हुआ।

इस कृष्ण-पक्षकी रात्रिमें और एक खयाल विनय के हृदयको रह रह कर चोट पहुंचाने लगा, वह यही कि गोरा आज रातको जेल-खाने में है। आज तक विनय गोराकी सभी सुख दुःखकी वातों में बराबर शरीक होता आया है—यही पहले पहल उसके खिलाफ हुआ विनय जानता

था। गोरा-जैसे मनुष्यके लिये जेलका शासन कुछ भी नहीं है; किन्तु आदिसे अन्त तक इस घटनामें विनयके साथ गोराका कोई योग न था— गोराके जीवनकी प्रधान घटनामें बिल्कुल ही विनयका संसर्ग नहीं है। दोनों मित्रोंके जीवनकी धारा यह जो एक जगह विच्छिन्न हो गई है, वह फिर जब मिलेगी तब क्या इस विच्छेदकी शून्यताकी पूर्ति हो सकेगी? बन्धुत्वकी सम्पूर्णता क्या अबकी खंडित नहीं हो गई? जीवन का ऐसा अखण्ड—ऐसा दुर्लभ—बन्धुत्व? आज एक ही रातमें विनय अपनी एक ओर की शून्यता और दूसरी ओर की पूर्णताका एक साथ अनुभव करके जीवन के सृजन-प्रलयके सन्धि कालमें निश्चल स्तब्ध भाव से बैठे बैठे अंधकारकी ओर ताकता रहा।

किराएकी गाड़ी परेश बाबूके दरवाजेके पास आकर खड़ी हुई। उतरते समय ललिताके पैर काँप उठे, और घर के भीतर प्रवेश करनेके समय उसने जोर करके अपने जी को जरा कड़ा कर लिया, यह बात विनयने स्पष्ट समझ ली। ललिताने धुनमें आकर अबकी जो काम कर डाला है, उसका अपराध कितना बड़ा है, और उसका वजन कितना है, इसका अनुमान वह आज किसी तरह नहीं कर पाती थी। ललिता जानती थी कि परेश बाबू उसे ऐसी कोई भी बात नहीं कहेंगे, जिसे ठीक भर्त्सना कहा जा सके; किन्तु इसी से परेश बाबूके चुप रहनेको ही वह सबसे अधिक डरती थी।

ललिताके इस संकोचके भावको लक्ष्य करके विनय को इस जगह क्या करना चाहिए, यह बहुत सोच विचार करके भी कुछ ठीक न कर सका। उसके साथ रहनेसे ललिताके लिये संकोचका कारण अधिक होगा, या नहीं, इसीकी परीक्षा करनेके लिए उसने जरा दुविधाके स्वर में कहा— तो अब जाऊँ?

ललिता ने चटपट कहा—ना चलिए, बाबूजी के पास चलिए।

ललिताके इस समयके व्यग्र अनुरोधसे विनय मन ही मन आनन्दित हो उठा। घरमें पहुंचा देनेके बादसे उसका कर्त्तव्य जो समाप्त नहीं हो

गया, इस एक एकाएक होने वाले मामलेसे ललिताके साथ उसके जीवन की एक विशेष गांठ बन्ध गई, यही समझ कर विनय ललिताकी बगलमें जैसे कुछ विशेष ज़ोरके साथ खड़ा हुआ। इसके ऊपर ललिताकी इस निर्भर कल्पनाने जैसे एक स्पर्शके समान उसके सारे शरीरमें बिजली सी दौड़ाना शुरू कर दिया। उसे जान पड़ा, ललिताने जैसे उसका दाहना हाथ जोरसे पकड़ रक्खा है। ललिताके साथ इस सम्बन्धसे उसका हृदय जैसे भर उठा—छाती जैसे फूल उठी। उसने अपने मनमें सोचा, जब परेश बाबू ललिताके इस हठके काम पर क्रोध करेंगे, ललिताको डाटेंगे तब वह यथासम्भव उस कार्यकी सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लेगा—डाँट डपटके अंशको बिना किसी संकोचके ग्रहण करेगा, और ललिताको सभी आघातोंसे बचानेकी चेष्टा करेगा।

किन्तु ललिताके मनके यथार्थ भावको विनय नहीं समझ सका। यह बात नहीं थी कि ललिताने विनयको भर्त्सनाकी ढाल बनानेके लियेःही विनय न जाने देना चाहा हो। असल बात यह थी कि ललिता कुछ भी छिपा रखना नहीं चाहती थी। वह छिपा रख सकती ही न थी; यह स्वभावके विरुद्ध था। उसने जो कुछ किया है, उसका सब कुछ परेश बाबू आंखोंसे देखें और विचार में जो कुछ निर्णय हो, उसका सारा फल ललिता स्वयं ग्रहण करे, यही उसके मनका भाव था।

आज सबेरेसे ही ललिता विनयके ऊपर मन ही मन नाराज है। वह यह अच्छी तरह जानती है कि उसकी नाराजगी असंगत है किन्तु असंगत होनेके कारण ही क्रोध कम नहीं होता, बल्कि बढ़ता ही जाता है।

जब तक ललिता स्टीमरमें थी, तब तक उसके मनका भाव और तरह का था। लड़कपनसे ही वह कभी क्रोध करके, कभी हठ करके एक-न-एक अभावनीय काँड करती आई है, किन्तु अबकी घटना गुरुतर है। इस निषिद्ध काममें विनयके भी उसके साथ जड़ित हो पड़नेसे एक ओर वह संकोच का, और दूसरी ओर एक निगूढ़ हर्ष का, अनुभव कर रही थी। वह हर्ष जैसे निषेधकी टक्करसे अधिक उन्मथित हो उठ रहा था।

एक बाहरके आदमीका उसने आज इस तरह आश्रय लिया है, उसके इतना पास आ गई है, कि उन दोनोंके बीचमें आत्मीय-समाजकी कोई आड़ नहीं है। इसमें कुन्ठा या संकोचका कितना बड़ा कारण था। किन्तु विनयकी स्वाभाविक नम्रताने ऐसे समयके साथ एक 'आबरू' की रचना कर रक्खी थी कि इस आशंकाजनक अवस्थाके बीचमें भी विनयकी सुकुमार सुशीलताका परिचय-ललिताको एक भारी आनन्द दे रहा था। जो विनय उसके यहां सबके साथ सर्वदा आमोद-कौतुक करता था, जिसकी बात चीत कभी बन्द नहीं होती थी, जिसके साथ घरके नौकर चाकरोंकी भी आत्मीयता अनारित थी, वह विनय यह जैसे था ही नहीं। सतर्कताकी दोहाई देकर जिस जगह वह अनायास हो ललिताके साथ अधिक और निकट रह सकता था वहाँ वह इस तरह दूर-दूर रहनेकी चेष्टा करता था कि उसीसे ललिता अपने हृदयमें उसे और भी अपने निकट अनुभव करती थी।

रातको स्टीमर केबिनमें अनेक चिन्ताओंके कारण ललिताको अच्छी तरह नींद नहीं आती थी। छटपटाते-ही छटपटाते एकबार उसे जान पड़ा कि अब रात बीत गई सवेरा होनेको है। धीरे-धीरे केबिनका द्वार खोलकर बाहर नजर डाल कर उसने देखा, रात्रि शेषका शिशिर अन्धकार उस समय भी नदीके ऊपरके मुक्त आकाश और किनारे परके जङ्गलसे लिपटा हुआ है। अभी-अभी एक ठण्डी हवाके झोंकेने उठकर नदीके जलमें कलरव पैदा कर दिया, और नीचेके खंडमें एंजिनके खलासी अभी उठकर अपना काम शुरू कर देने वाले हैं ऐसा आभास पाया जाता है। ललिताने केबिनके बाहर आते ही देखा, थोड़ी ही दूर पर विनय एक कपड़ा पहने बेत की कुर्सी पर बैठा हुआ सो रहा है। देखकर ही ललिताका कलेजा धड़क उठा। रात भर विनय इसी जगह पर बैठे पहरा देता रहा है। इतना निकट होकर भी इतना दूर है! तब ललिता कांपते हुए पैरोंसे, डेकसे केबिनमें आई। द्वार पर खड़े होकर उस हेमन्तके प्रत्यूष-कालमें, उस अन्धकार-जड़ित अपरचित नदी—दृश्य के बीच, अकेले सोते विनय के मुखकी ओर ताकने लगे। उसे देख पड़ा—सामने दिशाके

प्रांत-भागके तारागण जैसे विनयकी निद्राको घेरे हुए हैं। एक अनिर्वचनीय गाँभीर्य और माधुर्यसे उसका सारा हृदय एक दम लबालब भर गया। देखते-ही-देखते ललिताके दोनों नेत्रोंमें जल भर आया, यह वह खुद ही नहीं समझ सकी ? अपने पितासे उसने जिस देवताकी उपासना सीखा है, उसी देवताने जैसे उसे दाहिने हाथसे आज स्पर्श किया है। इस नदीके ऊपर, इस तरु पल्लव निविड़ निद्रित नदी तटमें रात्रिके अन्धकारके साथ नवीन प्रकाशका जिस समय निगूढ़, सम्मिलन हो रहा था, उसी पवित्र सन्धि क्षणमें परिपूर्ण नक्षत्र सभाके बीच कोई एक दिव्य संगीत अनाहत महावीणामें दुस्सह आनन्द वेदनाकी तरह बज उठा।

इसी समय नींदके झोंकेमें विनयने जरा हाथ हिलाया ललिता चटपट केबिनका दरवाजा बन्द करके बिछौने पर लेट रही उसके हाथ पैरके तलवें ठण्डे पड़ गये। बहुत देर तक छातीकी धड़कनको वह बन्द न कर सकी।

अन्धकार दूर हो गया, स्टीमर चलने लगा। ललिता मुँह हाथ धोकर प्रस्तुत होकर बाहर आई, और रेलिङ्ग पकड़ कर खड़ी हुई। विनय पहले ही जहाजके भोंपूकी आवाजसे जाग कर तैयार हो प्रभातका प्रथम अभ्युदय देखनेके लिए अपेक्षा कर रहा था। ललिता के बाहर निकलते ही वह संकुचित होकर चले जानेका उपक्रम करने लगा। ललिताने पुकारा—विनय बाबू !

विनयके पास आते ही ललिताने कहा—जान पड़ता है, रातको आप अच्छी तरह नहीं सो सके ?

विनयने कहा—सोया तो खूब।

इसके बाद दोनोंमें फिर कोई बात नहीं हुई। शिशिर सिक्ताकाश वन के दूसरे छोर पर उन्मुख सूर्योदयकी सुनहली आभा उज्ज्वल हो उठी। इन दोनों जनोंने जीवनमें ऐसा प्रभात और किसी दिन नहीं देखा था। प्रकाशने उन्हें कभी इस तरह स्पर्श नहीं किया। यह बात उन्होंने यहीं पहले पहल जानी कि आकाश बिलकुल शून्य नहीं है, वह विस्मय नीरव आनन्दसे सृष्टिकी ओर एक टक निहार रहा है। इन दोनों जनोंके

चित्तमें चेतना इस तरह जाग्रत हो उठी कि सारे जगत्‌के अन्तर्निहित चैतन्य के साथ आज जैसे एकदम उनके अंग से अंग भिड़ गया।

स्टीमर कलकत्तेमें आया। विनयने घाटमें एक गाड़ी किरायेकी करके भीतर ललिताको बिठलाया, और आप ऊपर कोच-बक्समें गाड़ीवानके पास बैठ गया। इस दिनके समय कलकत्तेकी सड़क पर गाड़ी करके चलते-चलते क्यों ललिताके मनमें उलटी हवा चलने लगी, यह कौन बता सकता है! इस संकटके समय विनय जो स्टीमरमें था, ललिता जो विनयके साथ इस तरह जड़ित हो पड़ी है, विनय जो अभिभावककी तरह उसे गाड़ी पर बिठा कर घर लिए जा रहा है, यह सब उसे पीड़ित करने लगा। घटनावश विनयने जो उसके ऊपर एक कर्तृत्वका अधिकार पाया है, वही उसे असह्य हो उठा। क्यों ऐसा हुआ। रातको वह संगीत दिनके कर्म-क्षेत्रके सामने आकर क्यों ऐसे कठोर सुरमें थम गया।

इसीसे द्वारके पास आकर विनयने जब संकोचके साथ पूछा—मैं तो, फिर जाऊँ? तब ललिताकी खीझ और भी बढ़ उठी। उसने सोचा कि विनय बाबू समझते हैं, उन्हें साथ लेकर पिताके पास उपस्थित होनेमें कुण्ठित होती हूँ। इस सम्बन्धमें उसके मनमें संकोचका लेश भी नहीं है, यही जोरके साथ प्रमाणित करने और पिताके निकट सारी घटनाको संपूर्ण भाव से उपस्थित करनेके लिए उसने विनयको द्वारके निकट ही से अपराधी की तरह विदा कर देना नहीं चाहा।

विनयके साथ सम्बन्धको वह पहले ही की तरह साफ कर डालना चाहती है—बीचमें कोई कुन्ठा कोई मोहकी जड़िमा रख कर वह अपनेको विनयके निकट छोटा या हीन करना नहीं चाहती।

——:०:——

[३१]

विनय और ललिताको देखते ही सतीश न मालूम कहांसे दौड़कर उनके पास आया और उन दोनोंके बीच खड़ा हो दोनोंके हाथ पकड़कर बोला—कहो, बड़ी बहन कहाँ है ? क्या वह नहीं आई ?

विनयने पाकेटमें हाथ डालकर और विस्मय भरी दृष्टिसे चारों ओर देखकर कहा—बड़ी बहन ! ओफ, थीं तो साथ ही में न मालूम कहाँ खो गईं।

सतीशने विनयको धक्का देकर कहा – नहीं, यह बात कभी नहीं है। कहो ललिता बहन तुम कहो।

बड़ी बहन कल आवेगी। यह कर ललिता परेश बाबूके कमरेकी ओर चली।

सतीशने ललिता और विनयका हाथ पकड़ और अपनी ओर खींच-कर कहा—हमारे घरमें कौन आया है, देखो चलो।

तिमंजिले की छतके कोने पर जो एक छोटी सी कोठरी है, उसके दक्खिन ओर धूप और वर्षा के निवारणार्थ एक टीनका छोटासा आवरण दे दिया गया है। सतीशके पीछे पीछे इन दोनोंने जाकर देखा कि एक छोटा सा आसन बिछाकर, उस छपरीके नीचे, एक अधेड़ स्त्री चश्मा लगाये रामायण पढ़ रही है। उसकी उम्र करीब पैंतालिस वर्षकी होगी। सिरके आगेके बाल कुल उड़े हुएसे जान पड़ते हैं और कोई कोई बाल सफेद भी हो चला है। किन्तु गोरा चेहरा अब भी, पके फलकी तरह ज्योंका त्यों देख पड़ता है। दोनों भौंहोंके बीच एक काला दाग है। न हाथमें चूड़ी है और न बदनमें कोई गहना। विधवा सी दीखती हैं। पहले ललिता पर दृष्टि पड़ते ही उसने झट चश्मा खोल पुस्तकको एक ओर रख बड़ी उत्सुकताके साथ उसके मुँहकी ओर देखा। इसी क्षण

उसके पीछे विनयको देख वह झट उठ खड़ी हुई और घूँघट बढ़ाकर भीतर जाना चाहा। सतीश झट दौड़कर उससे लिपट गया और बोला, मौसी, तुम क्यों भागती हो ? यह मेरी ललिता बहन है, और ये विनय बाबू हैं। बड़ी बहन कल आवेगी। विनय बाबूका यह संक्षिप्त परिचय ही काफी था। उसके पहले ही विनय बाबूके सम्बन्धमें पूर्ण रूपसे आलोचना हो चुकी है, इसमें सन्देह नहीं।

सतीश किसे मौसी कह रहा है, यह न जाननेके कारण ललिता चुपचाप खड़ी रही। विनयने इस अधेड़ स्त्री के पैर छूकर उसे प्रणाम किया। ललिताने भी विनय का अनुसरण किया।

उस स्त्रीने झट भीतरसे एक चटाई लाकर बिछा दी और कहा—बैठो बाबू, बेटी तुम बैठो।

विनय और ललिताके बैठने पर वह भी अपने आसन पर बैठी और सतीश उसके बदनसे सटकर बैठा। उसने सतीशको दाहने हाथसे भरकर कहा—तुम्हे आप नहीं जानते, मैं सतीशकी मौसी हूँ। सतीशकी माँ मेरी सगी बहन थी।

इस सामान्य परिचयके भीतर कोई ऐसी विशेष बात न थी किन्तु उस स्त्रीके चेहरे और गलेकी आवाजमें ऐसा एक विलक्षण भाव था जिससे उसके जीवनका; गम्भीर शोक से भरा हुआ, पवित्र आभास प्रकाशित हो पड़ा। मैं सतीशकी मौसी हूँ यह कहकर जब उसने सतीशको छातीसे लगाया, तब उस स्त्रीका जीवन वृत्तान्त न जानने पर भी विनयका मन दयासे पसीज गया। वह स्नेह भरे स्वरसे बोल उठा—आप अकेले सतीश की मौसी होकर रहेंगी, तो कैसे होगा ? अगर आप सतीशके बराबर मुझे न समझेंगी तो सतीशके साथ मेरा झगड़ा होगा। एक तो वह मुझे विनय बाबू कहकर पुकारता है, भाई नहीं कहता, तिस पर भी अब वह मुझे आपसे मौसीका नाता न जोड़ने देगा, तो कैसे बनेगा।

किसीके मनको वशमें कर लेना विनयके बाँयें हाथका खेल था।

इस सुशील प्रियभाषी युवकने बातकी बातमें उस स्त्रीके हृदय में सतीशके साथ प्रेमका अंश ग्रहण किया।

सतीशकी मौसीने पूछा—बच्चा ! तुम्हारी माँ कहाँ है ?

विनयने कहा—मुझे अपनी माँको खोये बहुत दिन हो गये, किन्तु मेरे माँ नहीं है यह बात मैं मुँहसे नहीं निकाल सकता।

यह कहकर आनन्दमयी की बात स्मरण करते ही उसकी आँखें आँसुओंसे भर गईं।

बड़ी देर तक इन दोनोंके बीच बातें होती रहीं। उस समय ऐसा नहीं जान पड़ा कि इनकी यह पहली मुलाकात है। सतीश इन दोनोंकी बातचीतमें जब अप्रासङ्गित बातें कहकर अपने लड़कपनका परिचय देने लगा। ललिता चुपचाप बैठकर इन दोनों की बातें सुनती रही।

परेश बाबूको बाहर गये बहुत देर हो गई, अब भी लौटकर नहीं आये यह देख ललिता वहाँ से उठ जानेके लिए छटपटाने लगी। उसको किसी तरह रोक रखने हीके लिए विनय सतीशकी मौसीके साथ जी लगाकर बातें कर रहा था आखिर ललिताका क्रोध रोके न रुका, वह विनयकी बातमें सहसा बाधा देकर बोल उठी—आप इतनी देर क्यों कर रहे हैं ? बाबूजी कब आवेंगे, इसका निश्चय नहीं। क्या आप गोराकी माँके पास एक बार न जायंगे ?

विनय चौंक उठा। ललिताका क्रुद्ध स्वर विनय के लिए अपरिचित न था। वह ललिताके मुँहकी ओर देखकर तुरन्त उठ खड़ा हुआ। वह किसके लिए विलम्ब कर रहा था ? उसीके लिए। यहाँ उसका कोई विशेष प्रयोजन नहीं था, वह तो दरवाजे परसे ही बिदा हो रहा था। ललिता ही तो उसे अनुरोध करके अपने पास लाई थी, आखिर उसीके मुँहसे ऐसा प्रश्न !

विनय इस प्रकार एकाएक आसन छोड़ उठ खड़ा हुआ कि ललिता अचम्भेके साथ उसकी ओर देखने लगी। उसने देखा, विनयके मुंहकी स्वाभाविक प्रसन्नता एकदम लुप्त हो गई, जैसे फूँक मारनेसे चिराग बुझ

जाता है। विनयका ऐसा म्लान मुख और उसके भावका ऐसा परिवर्तन ललिताने और कभी नहीं देखा था। विनयके मुँहकी ओर देखते ही तीव्र अनुतापकी ज्वालामय यन्त्रणाने तुरन्त ललिताके सम्पूर्ण हृदयको आक्रान्त कर लिया। वह बार-बार अपनी इस अतुरता पर पछताने लगी।

सतीश झट खड़ा हो गया और विनय का हाथ पकड़ सिर हिलाकर विनती भरे स्वरमें बोला—विनय बाबू बैठिये, अभी मत जाइएगा। फिर मौसी की ओर देखकर उसने कहा—विनय बाबूसे जलपान करनेको कहो—ललिता बहन, विनय बाबू को क्यों जाने देती है?

विनयने कहा—भाई सतीश, आज माफ करो; अगर मौसी चाहेंगी तो मैं और किसी दिन आकर प्रसाद पाऊँगा। आज देर हो गई है।

विचारसे बात कुछ विशेष नहीं किन्तु विनयके कण्ठस्वरमें ममता का भाव भरा था। उसकी करुणा और उसके मनके भाव को सतीशकी मौसी समझ गई। उसने एक बार विनयके और एक बार ललिताके मुंहकी ओर चकित होकर देखा।

ललिता तुरन्त वहाँसे उठी और कोई बहाना करके अपने कमरेमें चली गई। वह कई दिन इसी प्रकार अपनी करनी पर कुढ़कर आपही आप रोती रही।

[३२]

विनय उसी समय आनन्दमयीके घरको चला।

उस समय आनन्दमयी वैसे ही नहाकर दालानके फर्श पर आसन बिछाये स्थिर भावसे बैठी थीं, शायद मनमें जप कर रही थी। विनय चटपट उनके पैरों पर लोट कर बोला—माँ!

आनन्दमयीने उसके मस्तक पर दोनों हाथ फेरकर कहा—विनय!

माताके से ऐसे स्निग्धकंठ स्वर को सुनकर विनयके सारे शरीरमें जैसे करुणाके स्पर्शका अनुभव हो गया। उसने कष्टसे आँसुओंको रोक कर कोमल स्वरमें कहा—माँ, मुझे आनेमें देर हो गई।

आनन्दमयीने कहा—मैं सब बातें सुन चुकी हूँ विनय!

विनय चौंककर बोला—सब बातें सुन चुकी हो!

गोराने हवालातसे ही उन्हे पत्र लिखकर अपने मित्र वकीलकी मार्फत भेज दिया था। उसने निश्चित रूपसे अनुमान कर लिया था कि वह अवश्य जेल जायगा।

उसने पत्रके अन्तमें लिखा था—"कारागार-निवास तुम्हारे गोराको रत्ती भर हानि न कर सकेगा। किन्तु तुम जरा भी कष्ट पाओगी, तो ठीन न होगा। तुम्हारा दुख-ही बस मेरा दण्ड होगा, मुझे और कोई भी दण्ड देनेकी शक्ति मैजिस्ट्रेटमें नहीं है। अकेले अपने ही लड़केकी बात न सोचना माँ! और भी अनेक माताओंके लड़के बिना दोषके जेल भुगदते रहते हैं। एक बार उनके साथ, उनके कष्टके समान क्षेत्रमें खड़े होनेकी मेरी इच्छा हुई है। यह इच्छा अगर इस दफे पूर्ण हो, तो तुम मेरे लिए शोक या दुख न करना।"

"मां" नहीं जानता तुम्हें याद हैं कि नहीं, उस मर्तबा अकालके

साल सड़कके किनारे वाली अपनी बैठकमें टेबिल पर रुपयोंकी थैली रख कर मैं चार-पाँच मिनटके लिए भीतर चला आया था। लौट कर देखा थैली नदारद ! कोई चुरा ले गया था। थैलीमें मेरे स्कालरशिपके जमा किये ८५) रुपये थे। मेरा इरादा था, और कुछ रुपये जमा होजाने पर तुम्हारे पैर धोनेके जलके लिए एक चांदीका लोटा बनवा दूँगा। रुपये चुराये जानेके बाद जब मैं चोरके ऊपर व्यर्थके क्रोधसे जल रहा था, उस समय ईश्वरने एकाएक मुझे सुमति दी। मैंने मनमें कहा जो व्यक्ति मेरे रुपये ले गया है, उसीको आज दुर्भिक्षके दिनोंमें मैंने वे रुपये दान कर दिये। जैसे यह कहा, वैसे ही मेरे मनका सारा दुःख शान्त हो गया। आज भी अपने मनसे मैंने उसी तरह कहलाया है कि मैं स्वेच्छासे ही जेल जा रहा हूं मेरे मनमें कोई कष्ट नहीं है, किसी के ऊपर क्रोध नहीं, है। जेलमें अतिथि सत्कार करने चला हूँ। यहाँ आहार-विहारका कष्ट है तो कुछ हर्ज नहीं। अबकी इस यात्रामें भ्रमण के समय अनेक घरोंमें अतिथि हुआ हूँ—वहाँ भी तो अपने अभ्यास और आवश्यकताके माफिक आराम नहीं पाया ? इच्छा करके; जान बूझ कर, हम जिसे स्वीकार करते हैं, वह कष्ट तो कष्ट ही नहीं है। जेलके आश्रय को आज मैं अपनी इच्छा से ही ग्रहण करूँगा। जब तक मैं जेलमें रहूंगा, एक दिन भी कोई मुझे जबर्दस्ती नहीं रक्खेगा यह तुम निश्चय जानो।

"पृथ्वी पर जब हम घरमें बैठकर अनायास आहार विहार करते थे तब नित्यके अभ्यासके कारण इसका अनुभव भी नहीं कर पाते थे कि बाहरके आकाश और प्रकाशमें बिना किसी बाधाके घूमने-फिरनेका अधिकार कितना बड़ा अधिकार है; और उसी समयमें पृथ्वीके जो बहुतसे मनुष्य अपराध और बिना अपराधके ईश्वरके दिये विश्वके अधिकार (स्वतंत्रता) से वञ्चित होकर बन्धन और अपमान भोग रहे थे उनके सम्बन्धमें आज तक मैंने नहीं सोचा—उनके साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं रक्खा। अबकी मैं उनके साथ समान रूपसे दागी होकर कारागारसे बहार निकलना चाहता हूं। पृथ्वीके अधिकाँश बनावटी भले आदमी जो शरीफ या

प्रतिष्ठित बने बैठे हैं, मैं उनके दलमें घुसकर सम्मान बचा कर चलना नहीं चाहता।

"माँ! इस बार पृथ्वीके साथ परिचय होनेसे मुझे बहुत शिक्षा मिल गई है। पृथ्वी तल पर जिन्होंने विचारका भार अपने ऊपर ले रक्खा है उनमें अधिकाँश ऐसे हैं जो कृपा के पात्र हैं। जो लोग दण्ड नहीं पाते और दण्ड देते हैं उन्हींके पापकी सजा जेलके कैदी भोग करते हैं। अपराध तो अनेक मिलकर गढ़कर खड़ा करते हैं और प्रायश्चित करते हैं ये ही। जो लोग जेलके बाहर आराममें हैं सम्मानसे हैं, नहीं जानता उन लोगोंके पापोंका क्षय कब, कहाँ और किस तरह होगा। मैं उसी आराम और सम्मानको लात मारकर—धिक्कार देकर—मनुष्य कलङ्कका चिन्ह हृदयमें धारण कर—जेलसे बाहर निकलूँगा। माँ! तुम मुझको आशीर्वाद दो तुम आंसू न गिराना। ××× !"

गोराका यह पत्र पाकर आनन्दमयीने महिमको उसके पास भेजनेकी चेष्टाकी थी पर मुझे आफिस जाना है साहब किसी तरह छुट्टी नहीं देंगे यह कहकर महिम गोराकी अविवेचना और उद्दण्डता आदि का बखान करता हुआ उसे यथेष्ट रूपसे भला बुरा कहने लगा। उसने यह भी कहा कि 'उसके कारण किसीदिन मेरी नौकरी तक चली जायगी।' आनन्दमयीने इस बारेमें कृष्णदयाल बाबूसे कोई बात कहना अनावश्यक या व्यर्थ समझा। गोराके सम्बन्धमें स्वामीकी उदासीनता उन्हें बहुत ही कष्ट देती थी। वह जानती थी, कृष्णदयालने गोराको अपने हृदयमें पुत्रका स्थान नहीं दिया। यहाँ तक कि उनके अन्तःकरण में गोरा के ऊपर एक विरोधका भाव था। गोरा आनन्दमयी के दाम्पत्य सम्बन्धको दो टुकड़े करके दोनों जनोंके बीचमें विन्ध्याचलकी तरह खड़ा हुआ था। उसके एक अत्यन्त सतर्क शुद्धाचारको लेकर कृष्णदयाल अकेले थे, और दूसरी ओर अपने 'म्लेच्छ' गोरा के लिये अकेली आनन्दमयी थी। गोराके जीवनका इतिहास पृथ्वी पर जो दो आदमी जानते हैं, उनके बीचमें आने जाने की राह जैसे बन्द हो गई है। इन सब कारणोंसे संसारमें गोरा के ऊपर

आनन्दमयीका स्नेह बिलकुल अकेले उन्हींकी सम्पत्ति था। इस परिवारमें गोराकी अनधिकार अवस्थितको वह सब ओरसे जितनी हलकी कर रखना सम्भव था, उसीकी चेष्टा करती थीं। आनन्दमयीको नित्य यही चिन्ता रहती थी कि पीछे कोई यह न कहे कि तुम्हारे गोराके कारण यह हुआ, तुम्हारे गोराके कारण हमें यह बात सुननी पड़ी, अथवा तुम्हारे गोराने हमारा यह नुकसान कर डाला। गोराकी सब जिम्मेदारी तो उन्हींकी है। वह हठी, तेजस्वी और उद्दंड गोरा है उसके अस्तित्वको छिपाकर रखना तो कोई सहज बात नहीं है। उसी अपनी गोद के पागल गोराको इस विरुद्ध परिवारके बीचमें अब तक दिन रात सम्भाले रहकर इतना बड़ा किया है—इसमें उन्होंने ऐसी अनेक अप्रिय बातें सुनी हैं जिनका कोई जवाब नहीं दिया; ऐसे अनेक दुःख सहे हैं जिनका हिस्सेदार वह और किसीको नहीं बना सकीं।

आनन्दमयी चुपचाप होकर खिड़कीके पास बैठी रहीं। उन्होंने देखा, कृष्णदयाल बाबूने प्रातःकाल स्नान करके—ललाटमें गोपीचन्दनकी छाप लगा कर—मंत्र उच्चारण करते करते घरमें प्रवेश किया। उनके पास आनन्दमयी जा नहीं सकीं; निषेध, सर्वत्र ही निषेध है। अन्तको लम्बी सांस छोड़कर आनन्दमयी महिमके कमरेमें गईं। महिम उस समय फर्शके ऊपर बैठा अखबार पढ़ रहा था, और उसका नौकर स्नानके पहले उनके शरीरमें तेलकी मालिश कर रहा था। आनन्दमयीने महिमसे कहा—महिम, तुम मेरे साथ एक आदमी कर दो, मैं जाकर गोराको देख आऊँ वह जेल जानेके लिए मनमें निश्चय किये बैठा है। अगर उसे जेलकी सजा हो गई तो क्या मैं उसके पहले एक बार उसको देख भी न आ सकूँगी?

महिमका ऊपरका व्यवहार गोराके बारे में चाहे जैसा हो भीतर उसके हृदयमें गोराके प्रति एक प्रकार का भ्रातृ-नेह अवश्य था। उसने मुँहसे गरजकर यह अवश्य कहा कि "जाय अभागा जेलको। अब तक जेल नहीं गया वह यही आश्चर्य है।" किन्तु यह कहनेके बाद ही

दम भरमें अपने साथी परान घोषालको बुला कर उसे वकीलकी फीसके लिये कुछ रुपये देकर, उसी समय गोराके पास रवाना कर दिया, और उधर आप भी आफिसमे जाकर यह निश्चय कर लिया कि साहबसे छुट्टी मांगेंगे; अगर साहबने छुट्टी और बीबीने अनुमति दे दी, तो वहाँ जांयगे।

आनन्दमयी भी जानती थी कि महिम गोराके लिए कुछ किये बिना बैठा नहीं रह सकता। महिमके यथासम्भव प्रबन्ध करनेकी बात सुनकर वह अपनी कोठरीको लौट गई। यह स्पष्ट ही जानती थी कि गोरा जहाँ पर है, उस अपरिचित स्थानमें, इस संकटके समयमें उन्हें साथ लेकर जाने वाला आदमी इस परिवार में कोई नहीं है। वह हृदयकी शान पीड़ाको मन ही मन सहनकर चुप होकर बैठ रहीं। लछमिनिया जब हाय हाय करके रोने लगी तब उसको डपट कर दूसरी दालानमें भेज दिया। सो इसको चुपचाप सहन कर लेनाही उनका सदाका अभ्यास था। सुख और दुःख, दोनों हीको वह शान्त भावसे ग्रहण करती थीं। उनके हृदयका दुःख और कष्ट केवल अन्तर्यामी ही जानते थे!

विनय सोचकर ठीक न कर सका कि वह आनन्दमयी, से क्या कहे। किन्तु आनन्दमयी किसीके सान्त्वना वाक्योंकी कुछ अपेक्षा नहीं रखती थीं। जिस दुःख का कोई प्रतिकार नहीं है उस दुःखको अन्य कोई आदमी अगर उसके साथ आलोचना या चर्चा करने आता था तो उनकी प्रकृति संकुचित सी हो उठती थी। उन्होंने और कोई बात उठने देनेका अवसर न देकर विनयसे कहा—बिनू, देख पड़ता है, अभी तक तुम नहाए नहीं हो जाओ जल्द नहा लो बहुत देर गई है।

विनय स्नान करके जब भोजन करने बैठा तब उसके पास गोराका स्थान शून्य देखकर आनन्दमयीका हृदय हाहाकार कर उठा। गोराको आज जेलका अन्न खाना पड़ रहा होगा। यह सोचकर कि वह अन्न निर्मम शासनके द्वारा कटु है, माताकी सेवा और स्नेहके मेलसे मधुर नहीं है, आनन्दमयी को भी कोई बहाना करके वहाँसे उठ जाना पड़ा।

—:०:-

[३३]

परेश बाबू घर आकर ललिताको देखते ही समझ गये कि वह उद्दण्ड लड़की जरूर कोई अनोखी बातकरके वहाँसे आई है। जिज्ञासा-भरी दृष्टि से उनके मुँहकी ओर देखते ही वह बोल उठी—बाबूजी, मैं चली आई हूँ, । किसी तरह वहाँ नहीं रह सकी।

परेश बाबूने पूछा—क्यों चली आई? क्या हुआ?

ललिता ने कहा—गोरा बाबू को मजिस्ट्रेटने कैदकी सजा दी है।

गोरा इसके बीचमें कहाँसे आपड़ा, कैसे उसे जेल हुआ, यह परेशबाबू कुछ न समझ सके। ललितासे सब समाचार सुनकर कुछ देर तक वे दुखी होते रहे। उसके बाद गोराकी माँकी बात सोचकर उनका चित्त और भी दुखी हुआ। वे मन ही मन सोचने लगे कि चोरको जो दण्ड देना चाहिये था, वही दण्ड गोरा को भी देना मजिस्ट्रेट के लिए सर्वथा धर्म विरुद्ध कार्य हुआ है। मनुष्य के प्रति मनुष्यका अनिष्ट साधन संसार की और सब हिंसाओंसे कितना भयानक है, यह कहा नहीं जा सकता। उसके पीछे समाजकी शक्ति और राजाकी शक्तिने एक साथ मिलकर उसे कैसा भयानक कर दिया है, यह दृश्य गोरा के कारागार की बात सुनकर उनकी आँखोंके सामने प्रत्यक्ष हो गया।

परेश बाबूको इस प्रकार चुप हो सोचते देख ललिता उत्साहित होकर बोल उठी—अच्छा, बाबू जी, आप ही कहिए क्या यह घोर अन्याय नहीं है?

परेश बाबूने अपने स्वाभाविक शान्त भावसे कहा—गोरा ने कब क्या किया है, यह हम ठीक नहीं जानते। हां, इतना कह सकते हैं गोरा अपनी कर्तव्य बुद्धिकी प्रबलताके झोंके में आकर सहसा अपने अधिकारकी सीमा पार कर सकता है। किन्तु अंगरेजी भाषामें जिसको क्राइम (जुर्म) कहते हैं

वह गोराके लिए एकदम प्रकृति-विरुद्ध है। इसमें कुछ भी संदेह नहीं। किन्तु हम लोग क्या करेंगे? वह समयानुसार काम नहीं करता, आजकल का जो न्याय है, उसपर वह विचार नहीं करता। जिस जमानेका खयाल उसके दिमागमें घुसा है, अब वह जमाना नहीं। इस समय जान बूझकर अपराध करने का जो दण्ड है वही भूलसे भी करनेका दण्ड है। दोनों प्रकार के कैदी एक ही जेल में एक साथ ठूंसे जाते हैं। ऐसा क्यों होता है, इसका दोष एक ही आदमीके माथे मढ़ा नहीं जा सकता। कितने ही लोग इस दोषके भागी हैं। एकाएक इस प्रसङ्गको रोककर परेश बाबू पूछ बैठे—तुम किसके साथ आई हो?

ललिता ने साहस करके कहा—विनय बाबूके साथ। बाहरसे वह चाहे जितनी प्रबलता प्रकट करती किन्तु उसके भीतर दुर्बलता थी। विनय बाबूके साथ आने की बात कहते समय लाख चेष्टा करने पर भी उसका स्वर स्वाभाविक नहीं रहा। उसमें कुछ विकार आ ही गया। लज्जा से बचनेके लिए खूब सावधान रहने पर भी न मालूम कहाँ से कुछ लज्जा आ ही गई। चेहरे पर लज्जाका भाव छा गया है, यह समझ कर उसे और भी लज्जा हुई।

परेश बाबू इस उद्धत-स्वभावकी लड़की को अपनी और लड़कियोंके अलावा कुछ अधिक प्यार करते थे। इसके व्यवहारकी और लोगोंके द्वारा निन्दा होने पर भी उसके आचरणमें जो सत्यनिष्ठता थी उसे वे विशेष श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। वे जानते थे, ललितामें जो दोष है वही लोगों की नजरमें विशेष रूपसे पड़ेगा, किन्तु इसमें जो गुण है वह, चाहे जितना ही दुर्लभ क्यों न हो, लोगों के निकट आदरणीय न होगा। परेश बाबू उसके दोष को न देख करके उसके गुणको ही यत्नपूर्वक आश्रय देते आये हैं। वे ललिता की दुरन्त प्रकृति को दबानेकी चेष्टा करते हुए भी उसके भीतरका महत्त्व नष्ट करना नहीं चाहते थे। उनकी और दो बेटियोंको सब लोग सुन्दरी कहते थे। उनका रङ्ग गोरा था किन्तु ललिताका रङ्ग उन दोनोंकी अपेक्षा कुछ साँवला था। उसके चेहरेके सौन्दर्यमें भी भेद

था। वरदासुन्दरी इसी कारण ललिताके लिए योग्य वरकी बात चलाकर स्वामीके समीप सदा उद्वेग प्रकट करती थी। किन्तु परेश बाबू ललिताके चेहरे पर जो एक प्रकारकी शोभा देखते थे, वह न रङ्गकी शोभा थी और न अवयवकी शोभा; वह अन्तःकरणकी गम्भीर शोभा था। उसमें केवल लालित्य ही नहीं था किन्तु स्वतन्त्रताका तेज और मानसिक शक्तिकी दृढ़ता भी भरी थी। वह दृढ़ता सबके हृदयको मोह नहीं सकती थी। वह व्यक्ति-विशेषको अपनी ओर खींचती थी किन्तु बहुतेरोंको दूर हटा देती थी। संसारमें ललिताका स्वभाव लोगोंको प्रिय न होगा, यह समझ परेश बाबू उस पर कुछ खेद करते हुए उसे अपने पास बिठाते—और उससे कोई खुश नहीं रहता यह जानकर ही उसके दोषों पर ध्यान न दे उसे दया की पात्री समझते थे।

परेश बाबूने जब सुना कि ललिता अकेली विनय के साथ हठात् चली आई तब वे तुरन्त समझ गये कि इसके लिये उसे बहुत दिनों तक दुःख सहने पड़ेंगे। उसने जो कुछ अपराध किया है, उसकी अपेक्षा भारी अपराध का दण्ड लोग उसके प्रति निर्धारित करेंगे। वे इस बातको मन ही मन चुपचाप सोच रहे थे, इसी समय ललिता बोल उठी—मैंने अपराध किया है। किन्तु इस बार मैं भली भांति समझ गई हूं कि मैजिस्ट्रेटके साथ हमारे देश के लोगोंका ऐसा सम्बन्ध है कि उनके आतिथ्यमें सम्मान का नाम नहीं, केवल अनुग्रहका है। यह सहकर भी वहाँ रहना क्या मेरे लिए उचित था?

परेश बाबूने इस प्रश्न का कुछ उत्तर न दे सिर्फ मुसकराकर कहा—तू पगली है।

इस घटनाके सम्बन्धमें मन ही मन चिन्ता करते हुए परेश बाबू जब शामको बाहर टहल रहे थे तब विनयने आकर उन्हें प्रणाम किया। परेश बाबूने गोरा के कैद खाने की सजाके सम्बन्धमें उसके साथ बड़ी

देर तक बात-चीतकी, किन्तु ललिताके साथ स्टीमर पर आनेके प्रसङ्गमें कुछ न पूछा। अंधेरा होने पर कहा—चलो विनय, भीतर चलो।

विनयने कहा—मैं अभी अपने घर जाऊँगा।

परेश बाबूने उससे दूसरी बार ठहरनेका अनुरोध न किया। विनय एक बार संकुचित दृष्टिसे दो मंजिलेकी ओर देखकर धीरे-धीरे चला गया।

ऊपरसे ललिताने विनयको देख लिया था। जब परेश बाबू अकेले घरके भीतर बैठे थे, तब ललिताने समझा कि कुछ देरमें विनय भी घर आवेगा। परन्तु विनय न आया। तब टेबलके ऊपर की कुछ किताब को उलट-पुलटकर ललिता कोठेसे चली गई। परेश बाबूने फिर ललिता को पुकारा। उसके उदास मुँहकी ओर स्नेह-भरी दृष्टिसे देखकर कहा—बेटी मुझे एक ब्रह्म-सङ्गीत सुनाओ। यह कहकर उन्होंने बत्ती की रौशनी में कागज की आड़ कर दी।

—:०:—

दूसरे दिन वरदासुन्दरी और उसके दलके सभी लोग कलकत्ते आ पहुंचे। हारान बाबू ललिताके सम्बन्धमें अपने क्रोधको न रोक सके, इसलिये सीधे अपने घर न जा इन लोगोंके साथ एकाएक परेश बाबू के पास आए। वरदासुन्दरी मारे क्रोध और ग्लानिके ललिताकी ओर न देख और न उसके साथ कोई बात करके सीधी अपने कमरेमें चली गई। लावण्य और लीला भी ललिताके ऊपर बहुत रुष्ट थी। ललिता और विनय के चले आनेसे उनका अभिनय अङ्गहीन हो पड़ा था। बीच बीचमें उनदोनों का पार्ट खाली हो जानेसे वे सब बड़ी लज्जित हो गईं। सुचरिता हारान बाबू की क्रोध भरी उत्कट उत्तेजनामें, वरदासुन्दरीके आँसू भरे कटुवाक्यों में तथा लावण्य और लीलाके लज्जा भरे निरुत्साह में कुछ भी योग न देकर एकदम चुप हो रही थी। अपने निर्दिष्ट काम को वह मशीनकी तरह करती गई। दुर्धार लज्जा और पश्चात्तापसे संकुचित होकर परेश बाबूके घरके फाटकसे ही अपने घरको चला गया? लावण्य उसको घर के भीतर आने के लिए बार बार अनुरोध करके सफल न होने पर उससे बिगड़ बैठी और बोली—आजसे मैं तुमसे कुछ न कहूँगी।

हारान बाबू परेश बाबूके घरमें प्रवेश करते ही बोल उठे एक बहुत बड़ा अन्याय हो गया है।

पासवाले कमरे में ललिता थी। यह बात उसके कानमें पड़ते ही वह आकर अपने पिताकी कुरसीके पीछे दोनों हाथ रखकर खड़ी हुई, और हारान बाबूके मुँहकी ओर टकटकी बांधकर देखने लगी।

परेश बाबूने कहा—मैं ललिताके मुंह से सब बातें सुन चुका हूँ। जो बात हो गई, उसकी आलोचना करनेसे अब कोई फल नहीं।

शान्त स्वभाव क्षमाशील परेश बाबूको हारानबाबू अत्यन्त दुर्बल हृदय समझते थे। इससे उन्होंने कुछ अनादरके साथ कहा—घटना तो हो

ही जाती है, परन्तु कलङ्क सहसा नहीं मिटता, इसलिए जो बात हो जाती है उसकी आलोचना करना भी जरूरी है। यदि आपसे ललिता इस प्रकार बराबर सहारा न पाती तो उसने जो काम आज किया है, वैसा वह कभी न कर सकती। आपहीने उसे इतना उद्दण्ड बना डाला है।

परेश बाबूने पीछेकी ओर ललिताको खड़ी देख उसका हाथ पकड़ सामने खींचकर हारान बाबूसे जरा हँसकर कहा—हारान बाबू जब समय आवेगा तब आप जान सकेंगे कि सन्तानको सुशिक्षित करने के लिए स्नेहकी भी आवश्यकता होती है।

ललिता झुककर पिता के कानके पास मुंह ले जाकर कहा—बाबूजी आपका पानी ठंडा हुआ जा रहा है। आप नहाने जायं।

परेश बाबूने हारान बाबूकी ओर देखकर कोमल स्वरमें कहा—हाँ जाता हूँ अभी उतनी देर नहीं हुई है।

ललिताने स्नेह भरे स्वरमें कहा—नहीं आप स्नान कर आयें, तब तक हम लोग हारान बाबूके पास बैठती हैं।

परेश बाबू जब चले गये तब ललिता एक कुरसी पर जमकर बैठी और हारान बाबूके मुंहकी ओर देखकर बोली—आप समझते ही हैं सभी को अपनी बातें कहने का अधिकार है।

ललिताको सुचरिता जानती थी। और दिन ललिताकी ऐसी मूर्ति देखने पर वह मन ही मन उद्विग्न हो उठती; किन्तु आज वह खिड़कीके पास कुरसी पर बैठकर, एक किताब हाथमें ले सिर झुकाये चुपचाप उसके पन्ने उलटने लगी। अपनेको रोक रखना सुचरिता जानती थी। वह स्वभावकी बड़ी गम्भीर थी। ललिता जब हारान बाबू के आगे अपना विचार प्रकट करने बैठी तब सुचरिताने अपने हृदय के रुके हुए वेगको मुक्त कर देने का अवसर पाया।

ललिताने कहा—हमारे लिए पिताजीको क्या करना उचित है यह आपकी समझमें पिताजी की अपेक्षा आप ही अच्छा जानते हैं। ऐसा आपको समझना चाहिए, क्योंकि आप समस्त ब्रह्मसमाजके आचार्य हैं न।

ललिताकी ऐसी उद्दण्डता-भरी बात सुन हारान बाबू पहले तो हत-बुद्धि हो रहे किन्तु फिर उन्होंने इसका खूब कड़ा जवाब देना चाहा। उन्हें कुछ बोलते देख ललिताने अपने को रोककर कहा—हम लोग आपकी श्रेष्ठताका बराबर लिहाज करती आती हैं किन्तु आप यदि पिता जी से बढ़कर अपनेको मान्य समझते हैं और उनकी अपेक्षा अपना आदर बढ़ाना चाहते हैं तो इस घरमें आपका आदर कोई न करेगा।

हारानबाबू आँखें लाल कर बोल उठे—ललिता तुम बहुत बढ़कर बातें······

ललिताने उनकी बातकर कहा—शान्त रहिए। आपकी बातें हमने बहुत सुनी हैं। आज मेरी बात सुनिए। अगर आपको मेरी बात पर विश्वास न हो तो आप सुचरिता बहिन से पूछ लीजिए। आप अपनेको जितना बड़ा समझते हैं, उसकी अपेक्षा हमारे पिताजी बहुत बड़े हैं। आपको जो कुछ उपदेश मुझे देना है दे डालिए।

हारान बाबूका चेहरा उतर गया। उन्होंने कुरसीसे उठकर कहा सुचरिता?

सुचरिताने किताबके पन्नेकी ओरसे नजर उठाकर उनकी ओर देखा। हारान बाबूने कहा—देखो, ललिता तुम मेरे साथ अभद्रताका व्यवहार कर रही हो। क्या तुम्हें मेरा अपमान करना उचित है!

सुचरिताने गम्भीर स्वरमें कहा—वह आपका अपमान करना नहीं चाहती। उसके कहने का मतलब यह है कि आप पिताजीको सम्मान की दृष्टिसे देखा करें। उनसे बढ़कर सम्मानके योग्य और कोई है यह हम लोग नहीं जानतीं।

हारान बाबूकी चेष्टासे जान पड़ा कि वह अभी कुरसी छोड़कर चले जायंगे। किन्तु वह दो-एक बार उठनेका लक्षण दिखाकर भी न उठे, मुँह लटका कर बैठे रहे। इस घरमें उनकी प्रतिष्ठा धीरे-धीरे नष्ट हो रही थी, इस बात को वह जितना सोचते थे, उतना ही वह यहाँ अपने आसनको दृढ़ जमाकर बैठनेके लिये विशेष चेष्टा करते थे। वे इस बातको सोचकर

अपनी अप्रतिष्ठाको भूल जाते थे कि पुरानी वस्तुको जितना ही जोर लगाकर दबा रखना चाहते हैं वह उतनी ही खण्ड खण्ड होकर टूटती है।

हारान बाबू मुँह लटकाये बैठे हैं। यह देख, ललिता वहाँ से उठ सुचरिता के पास जा बैठी। और उसके साथ मीठे स्वरमें इस प्रकार बातें करने लगी मानों हारान बाबूके साथ कुछ छेड़छाड़ ही नहीं हुई है।

इसी समय सतीशने घरके भीतर प्रवेश कर सुचरिता का हाथ खींचकर कहा—बड़ी बहिन, इधर आओ।

सुचरिता ने कहा—कहाँ जाना है ?

सतीश—चलो, तुमको एक चीज दिखाऊँगा ! ललिता बहिन, तुमने कह तो नहीं दिया ?

ललिता—नहीं !

मौसीके आने की बात ललिता सुचरितासे न कहे, ऐसा ही ललिताका निश्चय सतीशके साथ हुआ था। इसीसे ललिताने अपनी प्रतिज्ञाका स्मरण कर सुचरितासे कुछ नहीं कहा।

परेश बाबूको स्नान करते आते देख सतीश अपनी दोनों बहनोंको वहाँ से खींचकर ले गया।

हारान बाबूने परेश बाबूसे कहा—सुचरिताके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पक्का हो गया है उसमें अब विलम्ब करना ठीक नहीं। मैं चाहता हूँ कि अगले रविवारको यह काम हो जाय।

परेश—मुझे कोई उज्र नहीं। यह सुचरिताकी इच्छा पर निर्भर है।

हारान—उसकी इच्छा तो पहले ही ज्ञात हो चुकी है।

परेश बाबूने कहा—अच्छा, तो आपकी ही बात रही।

—:o:-

[३५]

उस दिन ललिताके पाससे वापस आकर विनयको अपने सूने घरमें बैठना कठिन हो गया। दूसरे दिन तड़के ही उठकर वह आनन्दमयीके पास पहुँचा और कहा – माँ, मैं कुछ दिन तुम्हारे ही यहाँ रहूंगा!

आनन्दमयीको गोराके विच्छेदसे जो शोक हुआ था, उसमें सान्त्वना देने का अभिप्राय भी विनयके मनमें था। यह समझकर आनन्दमयीका हृदय प्रेमसे पिघल गया! वह कुछ न कहकर बड़े स्नेहसे विनयकी पीठ पर हाथ फेरने लगी!

विनयने अपने खाने-पीने और सोने आदिका बहुत बड़ा झमेला खड़ा कर दिया। वह बीच-बीचमें आनन्दमयीके साथ झूट-मूटका झगड़ा करने लगा कि यहाँ मेरा जैसा प्रबन्ध चाहिए—नहीं होता। उसने हमेशा ही इधर-उधर की बातें सुनाकर आनन्दमयीको और अपने को गोराकी चिन्तासे अलग रहनेकी चेष्टा की। साँझको जब मनको बाँध रखना कठिन हो जाता, तब विनय उत्पात करके आनन्दमयी को घरके कामोंसे हठात् रोक द्वारके सामने बरामदेमें चटाई बिछाकर बैठाता था। वह आनन्दमयीसे उसके लड़कपन की बातें और उसके बापके घरकी कहानी कहलवाता। जब उसका विवाह नहीं हुआ था, जब वह अपने अध्यापक पितामहकी पाठशाला के विद्यार्थियों के बड़े आदरकी बालिका थी, और जब सभी मिलकर सब विषयोंमें उस पितृहीना बालिकाका पक्ष करते थे, जिससे उसकी विधवा माताके मनमें विशेष उद्वेग होता था, उस दिनकी सब कथा कहने को विनय उसे बाध्य करता था। विनय कहता—माँ, तुम कभी मेरी माँ न थीं, यह बात मनमें आनेसे मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। मैं तो समझता हूं कि महल्लेके सभी लड़के तुमको अपनी ही माँ समझते हैं।

एक दिन साँझको आनन्दमयी चटाई पर दोनों पैर पसारे बैठी थी। विनय उसके पैरके तलुवों पर सिर रखकर कहा— माँ, जी चाहता हूँ कि मैं अपनी सब विद्या, बुद्धि भुलाकर बालक बन तुम्हारी गोदमें बैठूं। संसारमें तुम्हीं मेरी सब कुछ हो, तुम्हें छोड़ मैं और कुछ नहीं चाहता।

विनयके कोमलता-भरे कण्ठसे एक ऐसा आन्तरिक भक्ति-भाव प्रकट हुआ जिससे आनन्दमयीने व्यथाके साथ आश्चर्य का अनुभव किया। वह खिसककर विनयके पास बैठ गई और धीरे-धीरे उसके माथे पर हाथ फेरने लगी। बड़ी देर तक चुप रहकर आनन्दमयीने पूछा—विनय, परेश बाबूके घरका समाचार कैसा है?

इस प्रश्नसे विनय सहसा लज्जित हो चौंक उठा। सोचा, माँ से कोई बात छिपाना ठीक नहीं, मेरी माँ अन्तर्यामिनी है, उसने ठिठकते हुए कहा—हां, उनके घरका समाचार अच्छा है, सभी लोग कुशलपूर्वक हैं।

आनन्दमयी—मेरी बड़ी इच्छा है कि परेश बाबूकी लड़कियों से मेरी जान-पहचान हो जाय। पहले तो उनके ऊपर गोराके मनका भाव अच्छा न था, किन्तु अब जब उन लोगोंने उसे वशमें कर लिया है तब वे साधारण लोगोंमें नहीं हैं।

विनयने उत्साहित होकर कहा—मेरी भी कई बार यह इच्छा हुई है कि परेश बाबूकी लड़कियोंके साथ किसी तरह तुम्हारी भेंट करा दूँ, किन्तु गोरा नाराज न हो इस भयसे मैंने कभी उसका जिक्र भी तुमसे नहीं किया।

आनन्दमयीने पूँछा—बड़ी लड़कीका नाम क्या है?

इस प्रकार प्रश्नोत्तर होते-होते जब ललिता का प्रसङ्ग आया तब विनयने इस प्रसङ्गको थोड़े ही में समाप्त कर डालना चाहा। किन्तु आनन्दमयीने न माना। ललिताके सम्बन्ध में प्रश्न पर प्रश्न करने लगी। उसने मुसकुराकर कहा— सुनती हूँ ललिताकी बुद्धि बड़ी तीव्र है।

विनयने कहा—तुमने किसीसे सुना है?

आनन्दमयी—तुम्हींसे!

पहले एक ऐसा समय था जब ललिताके सम्बन्धमें विनय को कुछ सङ्कोच न था। तब उसने आनन्दमयी के आगे ललिताकी तीक्ष्ण बुद्धि पर जो बेरोक आलोचना की थी, वह उसे याद ही थी।

आनन्दमयी खूब चतुराई से सब बाधाओं को बचा-कर ललिताकी बातको इस प्रकार ले चली कि विनयके द्वारा उसके जीवन की प्रायः सभी बातें प्रकट हो गयी। गोराके जेल जानेकी घटना से दुखी होकर ललिता चुपचाप अकेली भागकर स्टीमर पर विनयके साथ आई यह बात भी विनयने आज कह डाली। कहते-कहते उसका उत्साह बढ़ गया। वह जिस दुःखके बोझसे दबा जा रहा था, वह एकदम हलका पड़ गया। उसने ललिताके समान बालिकाके अद्भुत चरित्रको जाना और उसके चरित्रका इस प्रकार वर्णन किया, इसीको वह परम लाभ मानने लगा। रात को जब भोजनके लिए बुलाहट हुई, और बात खतम हुई तब विनय मानों स्वप्नसे जाग उठा; उसे मालूम हुआ कि मेरे मनमें जो कुछ बात थी वह सभी आनन्दमयीसे कही जा चुकी है। आनन्दमयीने विनयके मुँहसे आज सभी बातें सुनीं। आज तक माँसे छिपानेकी कोई बात विनयके मनमें न थी। मामूली से मामूली बात भी वह आनन्दमयी के पास आकर कह सुनाता था। किन्तु परेश बाबूके घर के लोगोंके साथ जबसे परिचय हुआ है तबसे कोई एक बात उसके हृदय में कहीं अटक रही थी वह उसे बराबर कसकती थी। आज ललिताके सम्बन्धकी जो बातें उसके मन में थीं वे एक प्रकार से सभी आनन्दमयी पर प्रकट हो गई हैं। यह सोचकर विनयका मन उल्लसित हो गया।

भोजन करके रातमें अकेली बैठकर आनन्दमयी इन बातोंको बड़ी देर तक सोचती रही। गोराके जीवन की समस्या उत्तरोत्तर जटिल होती जा रही है और परेश बाबूके घरमें ही उसकी कोई मीमांसा हो सकती है। यह सोचकर उसने निश्चय किया कि जैसे होगा, एक बार परेश बाबूकी लड़कियोंके साथ अवश्य भेंट करनी होगी।

—:o:—

३६

शशिमुखीके साथ विनयका विवाह जैसे एक तरह से पक्का होगया है, इस ढंगसे महिम और उसके घरके और लोग चल रहे थे। शशिमुखी तो विनय के पास ही न फटकती थी। शशिमुखी की माँ लक्ष्मीमणि के साथ तो विनयका परिचय जैसे था ही नहीं, यह कहना कुछ झूठ न होगा। वह ठीक लज्जाशीला हो, यह बात न थी। बात यह थी कि यह कुछ अस्वाभाविक रूपसे परदा पसन्द करती थीं। उसने पक्के तौर पर यह ठीक कर लिया कि विनयके साथ ही उसकी कन्याका ब्याह होगा। इस प्रस्ताव की एक भारी सुविधा की यह बात उन्होंने अपने स्वामीके मनमें जमा दी कि विनय उन लोगों से दहेज में कोई भारी रकम न माँग सकेगा।

आज रविवार था। विनय को घरमें अकेला बैठा देखकर महिमने कहा—विनय तुमने जो कहा था कि तुम्हारे वंशमें अगहन के महीने में विवाह होनेका निषेध है, सो यह तो किसी काम की बात नहीं है। एक तो पोथी-पत्रेमें निषेधके सिवा कोई बात ही नहीं है, उस पर अगर घरके शास्त्रको मानोगे तो फिर वंश की रक्षा किस तरह होगी?"

विनयके संकटको देखकर आनन्दमयीने कहा—शशिमुखीको विनय उसके बिल्कुल बचपनसे देखता आ रहा है; उससे ब्याह करनेकी बात उसे पसन्द नहीं आती और इसी से वह अगहनके निषेध का बहाना कर रहा है।

महिमने कहा—यह बात तो फिर शुरूमें ही कह देनी चाहिए थी।

आनन्द०—अपने मन को जाँचनेमें भी तो कुछ समय लगता है। और लड़कोंकी क्या कमी है महिम! गोरा लौट कर आ जाय—वह तो अनेक अच्छे लड़कोंको जानता है—वह एक लड़का ढूँढ़ कर ठीक करदे सकेगा।

महिमने कहा—माँ, तुम अगर विनयके मनको बँहका न देती, तो वह इस काम में कुछ नाहीं-नूही न करता।

विनय व्यस्त होकर कहनेको था कि इतनेमें आनन्दमयीने बाधा देकर कहा—सो सच ही कह रही हूँ महिम, मैं इस काममें विनयको उत्साहित नहीं कर सकती। विनय अभी लड़का ही है। मुमकिन है कि वह बिना सोचे समझे एक काम कर भी डाले किन्तु अन्तमें उसका फल अच्छा न होगा।

आनन्दमयीने विनयको अलग आड़में रखकर अपने ही ऊपर महिम के कोपका धक्का ले लिया। विनय यह बात समझ गया, और अपनी इस दुर्बलता पर लज्जित हो उठा। वह अपनी असम्मतिको स्पष्ट करके प्रकट करने को उद्यत हुआ इतने ही में महिम और न ठहर करके मन-ही-मन यह कहते हुए चले गये कि सौतेली माँ कभी अपनी नहीं होती।

आनन्दमयी इस बातको जानती थी कि महिम ऐसा खयाल मनमें ला सकता है और वह खुद भी सौतेली माँ होने के कारण विचार-क्षेत्रमें बराबर अपराधी की श्रेणीमें ही स्थान पाये हुये है। किन्तु यह सोचकर कि लोग क्या खयाल करेंगे, काम करनेका उन्हें अभ्यास ही न था। जिस दिन उन्होंने गोरा को अपनी गोद में उठा लिया उसी दिनसे उनकी प्रकृति लोगों के आचार और विचारसे एक दम स्वतन्त्र हो गई है। उसी दिन से वह इस तरह के सब आचरण करती आई है कि जिनसे लोग उनकी निन्दा ही करते हैं। उनके जीवनके मर्म स्थानमें जो एक छिपा हुआ सत्य उन्हें सर्वदा पीड़ा पहुँचाता है, यह लोक-निन्दा असलमें उस पीड़ासे कुछ छुटकारा देकर शान्ति ही पहुँचाती है। लोग जब उन्हें क्रिस्तान कहते थे तो वह गोराको छातीसे लगाकर कहती थीं—भगवान् जानते हैं क्रिस्तान कहनेसे मेरी कुछ भी निन्दा नहीं होती। इस तरह क्रमशः सभी मामलोंमें लोगोंकी बातोंसे अपने व्यवहारको अलग कर देना उनके लिए एक स्वभाव सिद्ध बात हो गई थी! इसी कारण महिम मन-ही-मन या

प्रकट रूपसे सौतेली माँ कहकर अगर उन्हें लांछित करता तो भी वह अपने निश्चित मार्गसे विचलित न होती।

आनन्दमयी ने कहा—विनू, तुम बहुत दिन से परेश बाबू के घर नहीं गये?

विनयने कहा—बहुत दिन अभी कहाँ से हो गये?

आनन्द०—स्टीमरसे आनेके दूसरे दिन से तो तुम एक दफे भी उधर नहीं गये।

वह तो बहुत अधिक दिनकी बात है, किन्तु विनय जानता था, कि बीचमें परेश बाबूके घर उसका जाना-आना इतना बढ़ गया था कि आनन्दमयी को भी उसके दर्शन दुर्लभ हो उठे थे। उसके देखते बेशक वह परेश बाबूके घर बहुत दिन से नहीं गया।

विनय चुप होकर अपनी धोती के सिरसे एक डोरा तोड़ने में लग गया।

इसी समय नौकरने आकर कहा कि माँ जी कहींसे औरतें आई है।

विनय चटपट उठ खड़ा हुआ। कौन आया कहाँसे आया; इसकी खबर लेनेके पहिले ही सुचरिता और ललिता ने वहाँ प्रवेश किया। विनयका घर छोड़कर बाहर जाना न हो सका; वह सन्नाटेमें आकर वहीं खड़ाका खड़ा रह गया।

दोनोंने आनन्दमयीके पैर छूकर प्रणाम किया। ललिता ने विनयकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया; सुचरिताने उसे नमस्कार करके कहा—अच्छे हैं आप? फिर आनन्दमयीकी ओर देखकर कहा—हम परेश बाबू के घर से आई हैं?

आनन्दमयीने आदर करके उन्हें बिठलाया और कहा—मुझे वह परिचय देना न होगा। तुम लोगोंको मैंने कभी देखा नहीं बेटी, मगर तुम्हें मैं अपने घरका आदमी ही जानती मानती हूँ।

देखते-देखते बात-चीतका सिलसिला जम गया। विनय को चुपचाप

बैठे देखकर सुचरिताने उसे अपनी बातचीत के बीच खींच लानेकी चेष्टाकी कोमल स्वरसे पूछा—आप कई दिनसे हमारे उधर गये नहीं क्यों ?

विनयने एक बार ललिता की ओर नजर डाल कर कहा—बार बार जल्दी जल्दी दिक करनेसे कहीं आप लोगों का स्नेह न गँवा बैठूँ—यही डर मालूम पड़ता है।

सुचरिताने जरा हँस कर कहा—आप शायद यह नहीं जानते कि स्नेह भी जल्दी-जल्दी दिक करने की अपेक्षा रखता है !

आनन्दमयीने कहा—सो दिक करना तो यह खूब जानता है बेटी ! तुम लोगोंसे क्या कहूँ दिन भर इसकी फरमाइस और जिद को पूरा करते करते मेरे नाक में दम हो जाता है जरा भी फुरसत नहीं मिलती।

विनयने हँसकर कहा—ईश्वरने तुमको जो धैर्य दिया है माँ, उसी की वह मेरे द्वारा परीक्षा ले रहे है।

सुचरिताने ललिताको जरा ठेल कर कहा—सुनती है भाई ललिता हम लोगों की परीक्षा शायद समाप्त हो गई ! हम शायद उसमें पास नहीं हो सकीं।

ललिताको इस बातचीतमें कुछ भी शामिल होते न देख हँस कर आनन्दमयीने कहा—अब हमारा विनय अपने धैर्यकी परीक्षा ले रहा है। तुम्हें उसने किस दृष्टि से देखा है,सो तो तुम जानती नहीं हो। शामको तुम लोगोंकी चर्चा के सिवा और कुछ बात ही नहीं करता और परेश बाबूकी बात उठने पर तो वह जैसे एकदम गल जाता है।

आनन्दमयी ने ललिताके मुखकी ओर देखा। वह खूब जोर करके आँखें उठाये तो रही, लेकिन वृथा—अकारण—लाल हो उठी।

आनन्दमयीने कहा—तुम्हारे बाबूजी के लिए तो उसने कितने ही लोगोंसे झगड़ा किया है। उसके दलके लोगोंने तो उसे ब्राह्म समाजी कहकर जाति-च्युत करनेकी ठान रक्खा है।—विनू, इस तरह स्थिर हो

उठने से काम नहीं चलेगा बेटा—सच बात कह रही हूँ इसमें लज्जा करने का तो कोई कारण मैं नहीं देखती। क्यों न बेटी?

अबकी ललिताके मुखकी ओर देखती ही उसकी आंखें नीची हो गईं। सुचरिताने कहा—विनय बाबू जो हमें अपना आदमी ही मानते हैं, यह हम खूब जानती हैं किन्तु वह हम लोगोंके ही गुणसे नहीं—वह उनकी अपनी क्षमता है।

आनन्दमयी ने कहा—सो तो मैं ठीक कह नहीं सकती बेटी। विनयको तो मैं तबसे देख रही हूं जब वह इतना सा था। अब तक उसके मित्रों में एक मेरा गोरा ही था; यहाँ तक कि मैंने देखा है, इन लोगोंके अपने दलके जो आदमी हैं, उनके साथ भी विनय हिलमिल नहीं सकता। लेकिन तुम लोगोंके साथ उसके दो दिनके आलाप परिचयसे ही ऐसा हो गया है कि हम लोग भी अब उसका पता नहीं पाते। सोचा था, इसके लिए तुम लोगोंके साथ झगड़ा करूँगी; किन्तु इस समय देख रही हूँ, मुझे भी विनयके दलमें भरती होना पड़ेगा।

यह कह कर आनन्दमयीने एक बार ललिताको और एक बार सुचरिताकी टुड्डी उँगली से छूकर उसे चूम लिया।

सुचरिताने विनयकी दुर्दशा देखकर सहृदय होकर कहा—विनय बाबू! बाबू जी भी आये हैं; वह बाहर कृष्णदयाल बाबू से बातें कर रहे है।

सुनकर विनय चटपट बाहर चल दिया। तब गोरा और विनयकी असाधारण मित्रताके प्रसंगको लेकर आनन्दमयी बातचीत करने लगीं। दोनों श्रोता इस विषयको मन लगा कर सुन रहे हैं, यह उन्हें अच्छी तरह मालूम हो गया। आनन्दमयी अपने जीवनमें इन्हीं दोनो लड़कों को अपने मातृ स्नेहका परिपूर्ण अर्घ्य देकर पूजा करती आ रही हैं। संसार में इनकी अपेक्षा बड़ा उनका और कोई नहीं। उनके मुखसे उनके इन दोनों गोदके देवतों की कहानी स्नेह रससे ऐसी मधुर, ऐसी उज्वल हो उठी कि सुचरिता और ललिता दोनों अतृप्त हृदयसे उसे सुनने लगीं।

गोरा और विनयके प्रति उनकी श्रद्धा न हो, यह बात न थी; किन्तु आनन्दमयी सरीखी माता के ऐसे गहरे स्नेह के द्वारा उनके साथ जैसे और भी अधिक, और भी विशेष, और भी नवीन करके परिचय हुआ।

आनन्दमयीके साथ आज परिचय होनेके बाद पूर्वोक्त मैजिस्ट्रेट के ऊपर ललिताका क्रोध जैसे और भी बढ़ उठा। ललिताके मुखसे मैजिस्ट्रेटके लिये जोशसे भरे तीव्र बचन सुनकर आनन्दमयी हँसी। उन्होंने कहा—बेटी गोराके आज जेलखानेमें होनेसे होने वाला दुःख मेरे हृदयको कैसा व्यथित कर रहा है, सो वह अन्तर्यामी ही जानते हैं। लेकिन तो भी मैं उस मजिस्ट्रेटके ऊपर क्रोध नहीं कर सकी। मैं तो गोराको जानती हूँ। वह जिस कामको अच्छा समझता है उसके आगे आईन-कानून कुछ भी नहीं मानता। गोराका काम गोरा कर रहा है, और अपना कर्तव्य वे लोग भी कर रहे हैं। इसमें जिन्हें दुख मिलता है वे दुख पावेंगे ही! मेरे गोराकी चिट्ठी अगर पढ़ कर देखो बेटी, तो तुम समझ सकोगी, कि वह दुःखको नहीं डरा—किसीके ऊपर वृथाका क्रोध भी उसने नहीं किया। जिस कामसे जो फल होता है वह सब निश्चय जान कर ही वह काम करता है।

यह कहकर मन लगाकर लिखी गई वह गोराकी चिट्ठी बक्ससे निकाल कर आनन्दमयीने सुचरिताके हाथमें दी, और कहा—बेटी; तुम जोरसे पढ़ो, मैं एक बार सुनूँ।

गोराकी वह अद्भुत चिट्ठी पढ़ी जा चुकनेके बाद तीनों जनी कुछ देरे तक गुमशुम होकर बैठी रहीं। आनन्दमयी ने आंचलसे आंसू पोछे। उन आसुओंमें केवल मातृ हृदय की व्यथा ही नहीं थी, उसमें आनन्द और गौरव भी मिला हुआ था।

ललिता विस्मित होकर आनन्दमयीके मुखकी ओर ताक रही थी। ललिताके मनमें ब्राह्म परिवार संस्कार खूब दृढ़ था; जिन स्त्रियोंने आधुनिक रीतिसे शिक्षा नहीं पाई, और जिन स्त्रियोंको वह पुरानी चालके हिन्दुओंके घरकी जानती थी, उनके ऊपर उसे श्रद्धा नहीं थी। लड़कपनमें

वरदासुन्दरी उससे जिस अपराधके प्रति लक्ष करके कहती थीं कि हिन्दुओंके घरकी औरतें भी ऐसा काम नहीं करती, उस अपराधके लिए ललिता बार-बार कुछ विशेष करके ही सिर नीचा कर लेती थी। आज आनन्दमयीके मुख से कुछ बातें सुनकर उसके अन्तः करणने बार-बार विस्मयका अनुभव किया। उसके मनके भीतर आज एक भारी हलचल मची हुई थी; इसीसे उसने विनयके मुखकी ओर नजर नहींकी, उसके साथ एक बात भी नहीं की। किन्तु आनन्दमयीके स्नेह करुणा और शान्तिसे मण्डित मुखकी ओर देख कर उसके हृदयमें जो विद्रोहका ताप था, वह जैसे ठंडा हो गया—चारो ओरके सब लोगोंके साथ उसका सम्बन्ध जो हो आया। ललिताने आनन्दमयीसे कहा—गोरा बाबूने इतनी शक्ति कहाँसे पायी है यह आज आपको देखकर मेरी समझमें आगया।

आनन्दमयीने कहा—ठीक नहीं समझी। मेरा गोरा अगर साधारण लड़कोंकी तरह होता तो मैं कहाँसे बल पाती बेटी! तब क्या मैं उसके दुखको इस तरह सह सकती?

ललिताका मन आज क्यों इतना विकल हो उठा था, इसका थोड़ासा इतिहास कहनेकी अवश्यकता है।

इधर कई दिनसे सबेरे बिस्तरसे उठते ही ललिताके मनमें पहला खयाल यह आया है कि आज विनय बाबू नहीं आवेंगे। फिर भी दिन भर उसके मनने एक घड़ीके लिये भी विनयके आनेकी प्रतीक्षा करना नहीं छोड़ा। दम-दम भर पर उसने केवल यही सोचा है कि विनय शायद आया है; वह शायद ऊपर न आकर नीचेकी बैठकमें परेश बाबूके साथ बात चीत कर रहा है। इसी कारण दिन भर में कितनी बार वह अकारण ही इधरसे उधर घूमती फिरी है; इसका कुछ ठिकाना नहीं। अंतको दिन जब समाप्त हो जाता है रातको जब वह बिस्तर पर सोनेको जाती है, तब वह सोच कर भी कुछ ठीक नहीं कर पाती कि वह अपने इस अशान्त मनको लेकर क्या करेगी—अपने मनको किस तरह समझावे बहलावेगी। हृदय

जैसे फटने लगता है, रुलाई आती है, साथ ही क्रोध भी आता है। किस पर क्रोध आता है, यह समझना उसके लिये भी कठिन है। क्रोध शायद अपने ही ऊपर होता है। केवल बार-बार यही खयाल आता है कि यह क्या हुआ। मैं किस तरह अपनेको समझाऊँगी! किसी ओर कोई राह नहीं देख पड़ती! इस तरह कितने दिन चलेगा?

ललिता जानती है विनय हिंदू है; उसके साथ किसी तरह उसका व्याह नहीं हो सकता। फिर भी अपने हृदयको किसी तरह काबूमें न ला सकनेके कारण लज्जा और भय से उसकी जान जैसे सूख गई है। यह उसने समझ लिया है कि विनयका हृदय उससे विमुख नहीं है। यह समझ लेनेके कारण ही अपने को सभालना उसके लिए आज इतना कठिन हो गया है। इसी कारणवश जब वह इस तरह अस्थिर होकर विनय की आशासे उसकी राह देखती रहती है, तब उसके साथ ही उसके मनके भीतर एक भय होता रहता है कि कहीं विनय आ न जाय। इसी तरह अपने साथ लड़ते लड़ते आज सवेरे उसका धैर्य ठहर न सका। उसे जान पड़ा कि विनय के न आनेसे ही उसके हृदयके भीतर यह अशान्ति मची हुई है, एक बार मुलाकात हो जानेसे ही यह अस्थिरता दूर हो जायगी।

सवेरे वह सतीशको अपनी कोठरीमें खींच लाई। शतीश आज कल मौसीको पाकर विनयके साथ मित्रताकी चर्चाका एक तरहसे भूल ही गया था। ललिताने उससे कहा—विनय बाबूके साथ, जान पड़ता है तेरी लड़ाई हो गई है।

सतीशने जोर के साथ इस अपवादको अस्वीकार किया। ललिताने कहा—वह तो तेरे बड़े भारी मित्र हैं। तूही केवल विनय बाबू—विनय बाबू करता है वह तो तेरी ओर फिर कर भी नहीं देखते।

सतीशने कहा—हिश! यह बात नहीं है—कभी नहीं है?

परिवारके भीतर क्षुद्र सतीश को अपना गौरव प्रमाणित करने के लिए इसी तरह बारम्बार गले का जोर जाहिर करना पड़ता है। आज

प्रमाणको उससे भी अधिक दृढ़ता करनेके लिए वह उसी समय विनयके घर पर दौड़ा गया। लौटकर उसने कहा—वह तो घर पर हैं ही नहीं, इसीसे नहीं आये।

ललिताने पूछा—कई दिनसे घर क्यों नहीं आये ?

सतीशने कहा—कई दिनसे घर पर नहीं है।

तब ललिताने सुचरिताके पास जाकर कहा—दीदी, गौर बाबू की माँके पास हम लोगोंको एक बार जरूर जाना चाहिए।

सुचरिता—उन लोगोंसे हमारी जान-पहचान जो नहीं है ?

ललिता—वाह, गोरा बाबूके बाप तो हमारे बाबूजी के लड़कपनके मित्र हैं।

सुचरिताको याद आ गया। उसने कहा—हाँ यह तो जरूर है।

सुचरिता भी अत्यन्त उत्साहित हो उठी। बोली—बहिन ललिता, तुम जाओ, जाकर बाबूजीसे चलनेको कहो।

ललिता—ना, मुझ से न कहा जा सकेगा; तुम जाकर कहो।

अन्तको सुचरिता ही परेश बाबूके पास गई। उनके आगे यह प्रसंग उठाते ही वह बोले—ठीक है, अब तक हमें हो आना चाहिए था।

भोजनके बाद जानेकी बात जब पक्की हो गई, तब ललिता का मन एकाएक विमुख हो उठा। तब फिर न जाने कहाँसे अभिमान और संशय आकर उसे विपरीतकी ओर खींचने लगा। उसने जाकर सुचरितासे कहा—दीदी तुम बाबूजी के साथ जाओ। मैं न जाऊँगी।

सुचरिताने कहा—यह कैसे हो सकता है! तू न जायगी तो मैं अकेले नहीं जा सकूँगी। मेरी बहन, मेरी रानी, चल गड़बड़ न कर।

अनेक अनुनय—विनयके बाद ललिता गई। किन्तु विनय के निकट वह जो परास्त होगई, विनय अनायासही उन लोगोंके घर न आकर भी रह सका और वह आज विनयको देखने दौड़ी जा रही है इस पराभवके अपमानसे उसे भारी क्रोध होने लगा। विनयको देख पानेकी आशासे ही आनन्दमयीके घर जानेके लिये उसके मनमें एक आग्रह का भाव पैदा

हुआ था। किन्तु इसी बातको एक दम अस्वीकार करनेकी चेष्टा वह मनमें करने लगी, और वही अपनी जिद बनाए रखनेके लिये उसने न तो विनय कीं ओर एक बार आँख उठा कर देखा न नमस्कार किया, और न उससे एक बात तक की। विनयने समझा, उसके मनकी गुप्त बात ललिता ने जान ली है, और इसी कारण इस अवज्ञाके द्वारा वह इस तरह उसे प्रत्याख्यान कर रही है। ललिता उसे प्यार भी कर सकती है वह अनुमान करनेके उपयुक्त आत्माभिमान विनयमें नहीं था।

विनयने आकर सङ्कोचसे दरवाजेके पास खड़े होकर कहा—परेश बाबू अब घर जाना चाहते हैं; इन लोगोंको खबर देनेके लिये उन्होंने कहा है। विनय इस तरह खड़ा था कि उसे ललिता न देख पावे।

आनन्दमयीने कहा—यह भी कहीं हो सकता है! मुँह मीठा किये बिना शायद चले जा सकेंगे! अब और अधिक देर न होगी। तुम यहां जरा बैठो विनय, मैं जाकर देख आऊँ। बाहर क्यों खड़े हो भीतर आकर बैठो।

विनय ललिताकी ओर आड़ करके किसी तरह दूर पर एक जगह बैठ गया। जैसे विनयके प्रति उसके व्यवहारमें, कोई विलक्षणता नहीं हुई, ऐसे ही सहज भावसे ललिताने कहा—"विनय, बाबू अपने मित्र सतीशको आपने बिलकुल ही त्याग कर दिया है या नहीं, जाननेके लिए वह आज सवेरे आपके घर गया था।"

एकाएक देववाणी सुन पड़नेसे मनुष्य जैसे अचम्भे में आजाय, वैसे ही विस्मयसे विनय चौंक उठा। उसका वह चौंकना दिखाई दे जानेसे वह अत्यन्त लज्जित हुआ। अपनी [illegible] के साथ वह कुछ जवाब न दे सका। मुख और कानोंकी जड़ तक लाल करके उसने कहा—सतीश गया था क्या? मैं तो घर पर था नहीं।

ललिताके इस एक साधारण बात कहनेसे ही विनय के मनमें एक अपरिमित आनन्द उत्पन्न हुआ। ललिता नाराज नहीं है; ललिताके मन-में उसकी ओरसे कोई सन्देह नहीं है!

देखते-देखते सब बाधा दूर हो गई। सुचरिता ने हँस कर कहा—विनय बाबू हम लोगोंको एक भयङ्कर जानवर समझकर दूर हो गये हैं।

विनयने कहा—पृथ्वी पर जो लोग मुँह खोलकर नालिश नहीं कर सकते चुप रहते हैं, वे ही, उलटे अपराधी ठहराये जाते हैं। दीदी तुम्हारे मुँहसे यह कथन शोभा नहीं पाता। तुम आप ही बहुत दूर चली गईं, इसीसे अब औरको भी दूर समझ रही हो।

विनय ने आज पहले पहल सुचरिता को दीदी कहा। सुचरिताको सुननेमें यह सम्बोधन मधुर मालूम पड़ा। प्रथम परिचयसे ही विनयके प्रति सुचरिताके मनमें जो एक सौहार्द्र उत्पन्न हो गया था उसने दीदी कह कर सम्बोधन करते ही एक स्नेह पूर्ण विशेष आकार धारण किया।

परेश बाबू अपने लड़कियोंको लेकर जब बिदा हो गये, उस समय दिन ढल चुका था। विनयने आनन्दमयीसे कहा—माँ, आज तुम्हें कोई काम नहीं करने दूँगा, चलो ऊपरके कमरेमें।

विनय अपने चित्तकी उमंगको सँभालनेमें असमर्थ हो रहा था। आनन्दमयीको ऊपरके कमरे में ले जाकर फर्शके ऊपर अपने हाथसे चटाई बिछाकर विनयने उस पर बिठलाया। आनन्दमयीने बिनयसे पूछा—विनू बोल, तुझे क्या कहना है ?

विनयने कहा—माँ, मुझे कुछ भी नहीं कहना है; तुम्हीं अपने मनकी बातें सुनाओ।

विनयका मन यही सुननेके लिए छटपटकर रहा था कि आनन्दमयीको परेश बाबूकी लड़कियाँ कैसी लगीं।

आनन्दमयीने कहा—अच्छा, इसीलिए तू शायद मुझे बुलाकर लाया है ! मैं कहती थी तुझको कुछ कहना है।

विनय—बुला कर न लाता, तो ऐसे सुन्दर सूर्यास्तकी शोभा कहाँसे देखती माँ !

उस दिन कलकत्तेकी छतों पर अगहनके सूर्य मलिन भावसे ही अस्त हो रहे थे। वर्ण-छटाकी कोई विचित्रता नहीं थी। आकाशके छोरपर

धुंधले रँगके कुहरेमें सुनहली आभा अस्पष्ट पड़ रही थी। किन्तु इस म्लान सन्ध्याके धुंधले धूसर वर्णने भी आज विनयके मनको रंगीन कर डाला था। उसे ज्ञान पड़ने लगा, चारों दिशाओंने जैसे उसे खूब घेर लिया है—आकाश जैसे उसे स्पर्श कर रहा है।

आनन्दमयीने कहा—दोनों लड़कियाँ साक्षात् लक्ष्मी है।

विनयने इतनी प्रशंसा पर रुकने न दिया। अनेक पहलू उठा-उठाकर इसी आलोचनाको आगे बढ़ाता रहा। परेश बाबूकी लड़कियोंके सम्बन्धमें कितने ही दिनोंकी कितनी ही छोटी-मोटी घटनाओंका प्रसङ्ग उठा—उनमें से अधिकांश बिलकुल ही मामूली थीं; किन्तु उस अगहनकी मलिन सन्नाटेकी सन्ध्यामें एकांत स्थानमें विनयका उत्साह और आनन्दमयीकी उत्सुकता इन दोनोंके सहयोग से उन सब क्षुद्र गृह-कोणकी अप्रसिद्ध घटनाओंका इतिहासखण्ड एक गहरी महिमासे परिपूर्ण हो उठा।

आनन्दमयी एकाएक एक बार साँस छोड़ कर उठी—सुचरिताके साथ अगर गोराका ब्याह हो सके तो मुझे बड़ी खुशी हो।

विनय उछल पड़ा। बोला—माँ, मैंने यह बात अनेक बार सोची है। ठीक गोराके योग्य संगिनी सुचरिता दीदी हैं।

आनन्द०—किन्तु क्या ऐसा हो सकेगा?

विनय—क्यों न होगा! मुझे ज्ञान पड़ता है, गोरा भी सुचरिताको पसन्द करता है।

आनन्दमयीसे यह छिपा नहीं था कि गोराका मन किसी एक जगह अवश्य आकृष्ट हुआ है। विनयकी अनेक बातोंके बीचसे उन्होंने यह भी समझ लिया था कि वह लड़की सुचरिता ही है। थोड़ी देर चुप रहकर आनन्दमयी ने कहा—किन्तु सुचरिता क्या हिन्दूके घर ब्याह करना चाहेगी?

विनय—अच्छा, माँ, गोरा क्या ब्राह्म परिवारमें ब्याह नहीं कर सकता? तुम्हारी क्या इसमें सम्मति नहीं है?

आनन्द०—मैं तो बड़ी खुशी से सम्मति दे दूँगी।

विनयने फिर पूछा—हाँ ?

आनन्दमयीने कहा—हाँ, अवश्य सम्मति दूँगी। मनुष्य के साथ मनुष्यका मन मिलना ही विवाहकी सार्थकता है। उस समय कोई मन्त्र पढ़ने या न पढ़नेसे कुछ लाभ या हानि नहीं। किसी तरह भगवानका नाम ले लेना ही यथेष्ट है भैया।

विनयके मनके ऊपरसे एक बोझ सा हट गया। उसने उत्साहित होकर कहा—माँ तुम्हारे मुखसे जब इस तरहकी बातें सुनता हूँ, तब मुझे बड़ा आश्चर्य मालूम पड़ता है। ऐसी उदारता तुमने कहांसे पाई ?

आनन्दमयीने हँसकर कहा—गोरासे पाई है।

विनयने कहा—गोरा तो इसके विरुद्ध ही कहता है !

आनन्द०—उसके कहनेसे क्या होता है। मेरी जो कुछ शिक्षा है सब मुझे गोरासे ही प्राप्त हुई है। मनुष्य पदार्थ कितना सत्य है, और मनुष्य जिसके लिए दलबन्दी करता है झगड़ा करके मरता है—वह कितना मिथ्या है, वह बात भगवानने उसी दिन मुझे समझा दी जिस दिन गोराको उन्होंने मेरी गोदमें भेजा। भैया, ब्रह्म कौन है और हिन्दू कौन है ? मनुष्यके हृदयकी मनुष्यके आत्माकी तो कोई भी जाति नहीं है। वहीं पर भगवान सबको मिलाते हैं और आप भी आकर मिलते हैं। उन्हें ठेल कर मन्त्र और मतके ऊपर ही मिलानेका भार देने से कहीं काम चल सकता है !

विनयने आनन्दमयीके चरण छू कर कहा—मां, तुम्हारी बातें मुझे बड़ी मीठी मालूम देती हैं। मेरा आजका दिन सार्थक हो गया।

सुचरिताकी मौसी हरिमोहनीके कारण परेश बाबूके घर में बड़ी अशान्ति उत्पन्न हुई। इस अशान्तिका वर्णन करनेके पहले हरिमोहिनीने सुचरिताको जो अपना परिचय दिया था वह यहाँ संक्षेप में लिखा जाता है। उन्होंने कहा —"मैं तुम्हारी माँ से दो साल बड़ी थी। पिता के मन में हम दोनों बहनोंके आदर की सीमा न थी। आदर क्यों न होता, उस समय अपने बापके घरमें केवल हमीं दोनों बलिकाओं ने जन्म लिया था। घर में और कोई लड़का बच्चा न था। चचा हम दोनों बहनोंको बराबर गोदमें लिये रहते थे। धरती पर पैर रखने का हमें अवकाश नहीं मिलता था।

मेरी उमर जब आठ वर्ष की हुई, तब कृष्णनगरके विख्यात चौधरी घरानेमें मेरा विवाह हुआ। वे जैसे ही कुलीन थे, वैसे ही धनी भी थे। किन्तु मेरे भाग्यमें सुख न लिखा था। ब्याहके समय लेन-देन की बात पर मेरे ससुर के साथ पिताजी का झगड़ा हो गया। मेरे पिताके उस अपराधसे मेरे ससुर बहुत दिन तक बिगड़े रहे। मेरी ससुरालके सभी लोग कहने लगे—हम अपने लड़केका दूसरा विवाह करा देंगे तब देखेंगे कि उस लड़की की क्या दशा होती है। मेरी दुर्दशा देखकर ही पिताने प्रतिज्ञा की थी, अब कभी धनवान्के घर लड़कीका ब्याह न करूँगा। इसीलि तुम्हारी माँ को गरीब के ही घरमें ब्याह दिया था।

मेरे ससुर के परिवार में बहुत लोग एक साथ रहते थे। नौ दस वर्ष की उम्र में ही मुझे बहुत लोगोंकी रसोई बनाने का भार दिया गया। ५०-६० व्यक्ति नित्य भोजन करते थे। सबको खिला पिलाकर तब मैं किसी दिन सिर्फ रूखा-सूखा भात, और किसी दिन दाल-भात खाकर ही

रह जाती थी। किसी दिन लोगोंको खिलाते-पिलाते दो बज जाते थे। किसी दिन कुछ मात्र दिन रह जाता था तब मैं खाती थी। भोजन करने के बाद फिर तुरन्त रात के लिये रसोई चढ़ानी पड़ती थी। रात में भी ग्यारह बारह बजेके पूर्व मुझे कभी भोजन करने का अवसर नहीं मिलता था। मेरे सोनेके लिए कोई खास जगह न थी। जिस दिन जहाँ जगह मिल जाती, वहीं सो रहती थी। किसी दिन तो चटाई बिछाकर रात भर जहाँ की तहाँ अकेली पड़ी रहती थी।

घर के सभी लोगोंकी मुझ पर अनादर-दृष्टि थी, मेरे स्वामी भी उस पर कुछ ध्यान न देते थे। वे भी बहुत दिनों तक मुझको दूर ही दूर रखकर उन लोगों के साथ मिले रहे।

जब मेरी उम्र सत्रह वर्षकी हुई तब मेरी कन्या मनोरमा ने जन्म लिया। कन्याका जन्म होने से ससुर-कुलमें मेरा अनादर और भी बढ़ गया। मेरे सब अपमान और दुखोंके बीच वही लड़की एक मात्र सान्त्वना और विश्रामका स्थान थी। मनोरमाको उसके बाप या घर के और लोग जैसा चाहिए, प्यार नहीं करते थे। इसीसे वह मुझीको अपना सर्वस्व जानती थी।

तीन वर्षके बाद जब मेरे एक लड़का हुआ, तबसे मेरी अवस्थामें परिवर्तन होने लगा। तबसे मैं गृहिणी कहलाने योग्य हुई। सब लोग मुझे कुछ-कुछ आदरकी दृष्टिसे देखने लगे। मेरे सास न थी, ससुर भी मनोरमाके जन्मके दो वर्ष बाद संसारसे विदा हो चुके थे। उनकी मृत्यु होते ही धन सम्पत्तिके लिए-आपस में कलह उपस्थित हुआ। मेरे देवरोंने अपना अंश विभक्त कर लेनेके लिये मुकदमा दायर किया। आखिर उस मामलोंमें बहुत रुपया बरबाद करके हम सब अलग हुए।

अब मनोरमाके ब्याहका समय आया। अधिक दूर पर ब्याह करनेसे पीछे लड़कीको देखना कठिन समझकर मैंने कृष्णनगरसे पाँच छः कोसके फ़ासले पर राधानगर में उसका ब्याह कर दिया। दूल्हा देखने में

बड़ा सुन्दर था। जैसा रङ्ग था, वैसा ही सुडौल चेहरा। उसके कुछ धन सम्पत्ति भी थी।

जैसा मेरा समय पहले अनादर और कष्ट में बीता था, वैसे ही भाग्य फूटने के पूर्व विधाताने मुझे कुछ दिन सुख भी दिया था। अन्त में मेरे स्वामी मुझे बड़े आदर और श्रद्धाकी दृष्टिसे देखने लगे। मुझसे बिना सलाह लिए कोई काम न करते थे। इतना बड़ा सौभाग्य मेरा विधातासे न देखा गया, हैजेकी बीमारीमें पड़कर चार रोज के भीतर मेरा लड़का और मेरे पिता दोनों जाते रहे।

धीरे धीरे मैं अपने जमाई का परिचय पाने लगी। सुन्दर फूलके भीतर जो काला साँप छिपा था, उसे कोई कैसे जान सकता था। बुरे लोगों की सङ्गति में पड़कर वह मद्य-पान करने लग गया, पर मेरी लड़कीने भी यह मुझसे किसी दिन न कहा। जमाई जब-तब आकर, अपने घरकी अनेक आवश्यकताएँ दिखाकर, मुझसे रुपया माँग ले जाता था। मुझे तो किसीके लिये रुपया जमा करनेका कोई प्रयोजन न था इसीसे जब वह विनती करके मुझसे कुछ माँगता तो मुझे अच्छा ही लगता था। बीच-बीचमें मेरी लड़की मुझे रोकती थी और फटकार कर कहती थी कि तुम इस तरह इन्हें रुपया देकर उनके स्वभावको बिगाड़ती हो। रुपया हाथ आनेसे उसे कहाँ कैसे उड़ा डालते हैं, इसका पता नहीं। रुपया पाकर जो इनके जी में आता है, कर गुजरते हैं। मैं समझती थी कि उसका पति मुझसे जो इस प्रकार रुपया लेता है, उससे अपने श्वशुर-कुलकी अप्रतिष्ठाके भयसे शायद मनोरमा मुझे रुपया देनेमें रोकती है।

तब मेरी ऐसी बुद्धि हुई कि मैं अपनी बेटीसे छिपाकर जमाईको रुपया देने लगी। मनोरमाको जब इसका पता लगा तब उसने एक दिन मेरे पास आकर और रो रोकर अपने स्वामीके दुराचार की सब बातें कह सुनाईं। मैंने अपना सिर पीट डाला। दुःखकी बात और क्या कहूँ? मेरे एक देवरने ही उसे मद्य-पान की आदत लगाकर उसके स्वभाव को बिगाड़ दिया था।

मैंने जब रुपया देना बन्द कर दिया और जब मेरे जमाईको सन्देह हुआ कि उसकी स्त्री ही रुपया नहीं देने देती, तब उसके ऊधम का अन्त न रहा। उसने मेरी लड़की पर घोर अत्याचार करना आरम्भ किया। वह मेरी लड़कीको भाँति भाँतिसे दुःख देने लगा। सबके सामने उसको मारने-पीटने और गालियाँ देने लगा। यह सब सुन कर मेरे दुःखकी सीमा न रही। वह मेरी लड़कीको दुःख न दे इसलिए मैं अपनी लड़की से छिपाकर फिर उसे रुपया देने लगी। जानती थी कि यह रुपया मैं पानीमें फेंकती हूँ। किन्तु वह मनोरमाको हद दरजेकी तकलीफ दे रहा है, यह खबर पातेही मैं गला फाड़-फाड़कर रोती थी और जमाईको रुपया देकर उसे सन्तुष्ट रखने की चेष्टा करती।

आखिर एक दिन—वह दिन मुझे याद है, माघके कुछ दिन बाकी थे, सबेरेका समय था—मैं अपनी पड़ोसिनके साथ बातें कर रही थी ? यही कह रही थी कि मेरे घरके पिछवाड़े जो बाग है उसमें आमकी अच्छी मंजरी आई है। उसी दिन पिछले पहर मेरे दरवाजे पालकी उतारी गई। देखा—मनोरमाने हँसते-हँसते आकर मुझे प्रणाम किया। मैंने कहा—कहो बेटी, क्या हाल है ?

मनोरमाने प्रसन्न मुखसे कहा—हाल अच्छा न रहनेसे बेटी क्या माँ के घरमें हँसी-खुशीसे आ सकती है ?

मेरे समधी समझदार थे। उन्होंने मुझे कहला भेजा, बहूका पांव भारी है। सन्तान प्रसव होने तक वह अपनी मांके पास रहे तो अच्छा है। मैंने सोचा, यही बात सच है, किन्तु मेरा जमाई इस अवस्थामें भी मनोरमाको मार पीटकर अपने जी का जलन बुझाता था। इसलिए गर्भावस्थामें अनिष्टके भयसे ही समधीने अपनी पतोहूको मेरे पास भेज दिया, यह मैं न जानती थी। मनोरमाने अपनी सासकी शिक्षाके अनुसार मुझसे कोई बात न कही। जब मैं उसे अपने हाथसे तेल लगाकर स्नान कराना चाहती थी तब वह कोई न कोई बहाना करके मुझे तेल लगाने न

देती थी। उसके कोमल अङ्ग पर जो चोटके दाग थे वह अपनी माँको दिखलाना नहीं चाहती थी।

जमाई कभी-कभी आकर मनोरमाको अपने घर लौटा ले जानेके लिए जिद्द करता था। मेरी बेटी मेरे पास रहनेसे रुपया खींचनेमें उसे बाधा होती थी। आखिर उस बाधाको भी उसने न माना। रुपयेके लिए मनोरमाके सामनेही वह मुझे बार-बार दिक करने लगा। मनोरमा मुझे रुपया देने से बराबर रोकती थी कि मैं तुमको किसी तरह रुपया देने न दूँगी।" किन्तु मैं स्वभावकी बड़ी दुर्बल थी। जमाई पीछे मेरी लड़कीके ऊपर बहुत खफा न हो, इस भयसे मैं उसे बिना कुछ दिये न रहती थी।

मनोरमाने एक दिन कहा—"मां, तुम्हारा रुपया पैसा मैं अपने कब्जे में ही रक्खूँगी" और यह कहकर मेरे हाथसे कुन्जी और बक्स जो कुछ था सब ले लिया। जमाईने आकर जब मुझसे रुपया पानेकी सुविधा न देखी और जब मनोरमाको वह किसी तरह राजी न कर सका तब उसने जिद्द पकड़ी कि मैं अपनी स्त्रीको अपने घर ले जाऊंगा! मैं मनोरमा से कहती थी, उसे कुछ रुपया देकर विदा कर दो, नहीं तो न जाने वह क्या कर बैठेगा। किन्तु मेरी मनोरमा एक ओर जैसी कोमल थी दूसरी ओर वैसीही कठोर थी। वह कहती थी, नहीं रुपया किसी तरह नहीं दिया जायगा।

जमाईने एक दिन आकर आंखें लाल करके कहा—कल मैं पालकी भेज दूंगा, अगर अपनी बेटीको मेरे घर न भेज दोगी तो अच्छा न होगा। मैं पहलेसे ही कहे देता हूं!

दूसरे दिन दोपहरको पालकी आने पर मैंने मनोरमासे कहा—बेटी, अब देर करना उचित नहीं है, अगले हफ्तेमें किसी को भेजकर तुम्हें बुला लूंगी।

मनोरमाने कहा—आज जानेको मेरा जी नहीं चाहता। कुछ दिनके बाद इनसे आनेको कहो, तब मैं जाऊँगी।

मैंने कहा—बेटी ? पालकी लौटा देनेसे मेरे क्रोधी जामाता आपेमें रहेंगे। कुछ काम नहीं है तुम आज ही जाओ।

मनोरमाने कहा—नहीं माँ, आज नहीं मेरे ससुर कलकत्ते गये हैं। आधे फागुन तक वे लौट आवेंगे, तब मैं जाऊँगी।

मैंने न मानी, कहा—नहीं, तुम जाओ।

तब मनोरमा लाचार होकर जानेको तैयार हुई। मैं उसकी ससुराल के नौकर और कहारोंको खिलाने पिलाने लगी! उसके जानेके पहले उसके पास कुछ देर बैठती सो भी न हुआ। उस दिन उसके साथ दो-एक बात करती अपने हाथसे उसको भूषण वसन पहिराती उसका शृङ्गार करती, वह जो खाने को पसन्द करती सो उसे खिलाकर विदा करती, ऐसा अवकाश मुझे न मिला। पालकी में सवार होने के पहले उसने पैर छूकर मुझे प्रणाम किया और कहा—माँ, 'मैं अब जाती हूं।

मैं क्या जानती थी कि वह सचमुच मेरे घरसे सदाके लिए जाती है। वह जाना नहीं चाहती थी, मैंने बरजोरी उसे विदा कर दिया। उस दुःख से आज तक मेरी छाती जल रही है, वह किसी तरह ठण्डी नहीं होती।

वह उसी रात को ससुराल पहुँची और उसी रात में उसका गर्भपात हुआ। गर्भपात होनेके साथ उसकी भी मृत्यु हो गई। जब मुझे यह खबर मिली, उसके पूर्व ही उसकी लाश जला दी गई। मैं उसका मुँह भी देखने न पाई।

जो बात कहने की नहीं, करने की नहीं, सोचने की नहीं सोचकर भी जिसका अन्त नहीं हो सकता वह दुःख क्या साधारण दुःख है, वह तुम न जानोगी, जाननेका कोई प्रयोजन भी नहीं।

मेरे तो एक-एक कर सभी चले गये, किन्तु तो भी विपति का अन्त न हुआ। मेरे स्वामी और मेरे पुत्रकी मृत्यु होते ही देवर लोग मेरी सम्पत्तिके ऊपर दाँत गड़ाने लगे। यद्यपि ये जानते थे कि मेरी मृत्युके

अनन्तर मेरी धन सम्पति सब उन्हीं की होगी, तो भी उतने दिन तक धैर्य धारण करना उनके लिए कठिन हो गया। मैं इसमें किसको दोष दूँ? सब दोष मेरे फूटे कपालका ही था। मेरे सदृश अभागिन का जीता रहना ही मेरा एक भारी अपराध था। संसार में जो लोग अनेक प्रकारके स्वार्थों से सम्बन्ध रखते हैं वे मेरे सदृश अनावश्यक प्राणीका जीना क्यों पसन्द कर सकेंगे।

जब तक मनोरमा जीती रही तब तक मैं देवरों के भुलावे की बातों में न आई। वे लोग मेरी सम्पत्ति हथियाने के लिए भाँति-भाँति की चेष्टा करने लगे। परन्तु मैं उन लोगोंके प्रपंच में न फँसकर अपनी सम्पत्तिकी—जो मेरे अधिकार में थी—बराबर रक्षा करती रही। मैंने यह अपने मन में निश्चय किया था कि जब तक जीती हूँ, क्यों अपना घर बरबाद करूँ। खर्च करके जो बचेगा वह मनोरमाको दे जाऊँगी। मैं अपनी कन्याके लिए रुपया जमा कर रही हूँ। यह सुनकर मेरे देवरों का जी जल उठा। वे लोग समझते थे मानों मैं उन्हींका धन चुराकर बेटीके लिए जमा कर रही हूँ। मेरे स्वामीका नीलकान्त नामक एक पुराना विश्वासी कर्मचारी था, वही मेरा सच्चा सहायक था। जब मैं अपने धनका कुछ अंश उन्हें देकर आपस में मेल कराना चाहती थी तब वह मुझे रोकता था। और इसमें अपनी सलाह देनेको कभी राजी न होता था। वह कहता था, देखेंगे कि हमारे अंशका एक पैसा भी कोई ले सकता है। आखिर मेरा हक हड़पने के लिए देवरोंकी ओर से झगड़ा होने लगा। उसी समय मेरी लड़कीका देहान्त हो गया। उसके दूसरेही दिन मेरे मंझले देवर ने आकर मुझे वैराग्य लेने का उपदेश दिया। कहा—भाभी! ईश्वरने तुम्हें जिस दशा में पहुँचा दिया है, उससे तुम्हें अब घर रहना उचित नहीं। अब तुम किसी तीर्थ में जाकर अपने जीवन का शेष समय बिताओ। धर्म कर्ममें मन लगाओ। हम लोग तुम्हारे खाने-पहिरनेका प्रबन्ध कर देंगे।

मैंने अपने गुरु महाराजको बुलाया और उनसे कहा—महाराजजी, मैं इस असह्य यन्त्रणासे कैसे उद्धार पाऊंगी, उसका उपाय बता दीजिए। घरके किसी काममें मेरा जी नहीं लगता। मेरे हृदय में शोककी आग दिन-रात जलती रहती है। मैं जहां जाती हूं, जिधर जाती हूँ, कहीं मेरी ज्वाला शान्त नहीं होती। इस यन्त्रणासे मुक्त होने का कोई मार्ग नहीं सूझता।

गुरु महाशयने मुझको हरिमन्दिरके भीतर ले जाकर कहा—आजसे तुम इनका भजन करो। ये गोपीरमणजी ही तुम्हारे स्वामी, पुत्र, कन्या सब कुछ हैं। इनकी सेवा करनेही से तुम्हारे सब दुःख दूर होंगे।

तबसे मैं दिन रात ठाकुरजी की सेवा में हाजिर रहने लगी। उनको मैं अपना मन सौंप देनेकी चेष्टा करने लगी। किन्तु जब उन्हें मेरा मन लेना पसन्द न था तब मैं उनको कैसे अपना मन देती? मुझ अभागिन का मन लेकर वे क्या करते?

मैंने नीलकान्तको बुलाके कहा—नील बाबू, मैंने अपने सारी सम्पत्ति देवरोंको लिख देनेका निश्चय किया है। वे वृत्ति के रूप में हर महीने मुझे कुछ रुपया दे दिया करेंगे।

नीलकान्त ने कहा—यह कभी नहीं हो सकता। आप स्त्री हैं ये बातें आप क्या जानें?

मैंने कहा—मैं अब सम्पत्ति लेकर क्या करूंगी?

नील—यह आप क्या कहती हैं? जो आपका अंश है वह क्यों छोड़ेंगी? इस तरहका पागलपन मत कीजिए।

नीलकान्त मेरे हकको किसीके हाथ देना नहीं चाहता था। मैं बड़ी मुश्किल में पड़ी। जमींदारीका काम मुझे विष से भी बढ़कर भयङ्कर मालूम हो रहा था। किन्तु संसारमें मेरा यही एक मात्र नीलकान्त विश्वासी था। मैं उसके मनको कष्ट देना भी नहीं चाहती थी। उसने कैसे कैसे दुःख झेलकर मेरे अंशको बचाया है, यह

सोचकर मैंने उसकी बात काटकर अपने मनसे कोई काम करना उचित न समझा।

आखिर एक दिन मेरे मनमें क्या आया! मैंने नीलकान्तसे छिपाकर देवरोंके कहने पर एक कागज पर दस्तखत कर दिया। उसमें क्या लिखा था, यह मैं अच्छी तरह नहीं जान सकी! मैंने सोचा मुझे सही करनेमें क्या डर है। मैं कौनसी वस्तु अपने पास रखना चाहती हूँ, जिसके चले जानेसे मुझे कष्ट हो। जब मैं यों ही अपनी सम्पत्ति देनेको तैयार हूं तब कोई ठगकर ही क्या करेगा? सब तो मेरे ससुरका ही है। उनका धन उनके बेटे पावें, इसमें मेरा क्या?

लिखा पढ़ी, रजिस्टरी आदि सब हो गई। तब मैंने नीलकान्तको बुलाकर कहा—आप रुष्ट न हों मेरे पास जो कुछ था, सब लिख पढ़ दिया; मुझे अब किसीसे कुछ प्रयोजन नहीं।

नीलकान्तने चौंककर कहा—आपने! यह क्या किया!

जब उसने दस्तावेजकी नकल पढ़ी, तब उसने जाना कि मैंने सब कहा है, सचमुच मैंने अपना सब अधिकार त्याग दिया है। यह जानकर नीलकान्तके क्रोधकी सीमा न रही। जबसे मालिककी मृत्यु हुई तबसे मेरा हक बचानाही उसके जीवनका एक प्रधान उद्देश था। उसकी सारी बुद्धि और शक्ति उसी हककी हिफाजत में लगी रहती थी। इस हकको लेकर उसने कितने मामले मुकदमे लड़े, कितने वकील मुख्तारोंके घर देखे, कितने कष्ट सहे इसका ठिकाना नहीं। मेरे ही कामके पीछे वह दिन रात बावलेकी तरह फिरा करता था और उसीमें सुख पाता था। उसे अपने घरका काम देखनेको भी समय न मिलता था। वह हक जब निर्बोध स्त्रीके कलम की नोकके एक ही घसीटमें उड़ गया तब नीलकान्त का सब किया-धरा व्यर्थ हो गया। उसके मनको शान्त करना असम्भव हो गया।

उसने हताश होकर कहा—जाओ आजसे तुम्हारे साथ मेरा सम्बन्ध टूट गया। मैं जाता हूं।

मैंने देखा नीलकान्त भी मुझे छोड़कर जा रहा है। क्या मेरा भाग्य ऐसा खोटा है कि दुःखमें एक भी सहारा मेरे पास न रहा! मैं अपने इस दुर्भाग्य पर बार बार पछताने लगी। मैंने अपनी भूल स्वीकार कर नीलकान्तसे कहा —आप मुझ पर क्रोध न करें! मेरे पास कुछ रुपया एकत्रित है। मैं उसमें से अभी आपको पांच सौ देती हूं। आपकी पतोहू जब आपके घर आवे तब उसके लिए मेरे आशीर्वादके रूप से इन रुपयों का उसे गहना गढ़ा दीजिएगा।

नीलकान्तने कहा—मुझे अब इसकी जरूरत नहीं। मेरे मालिक का जब सब कुछ चला गया तब ये पांच सौ रुपये लेकर मैं कौन सुख भोगूँगा। ये आप रहने दीजिये—यह कहकर मेरे स्वामी का एक सच्चा शुभचिन्तक भी मुझे छोड़कर चला गया।

मैं पूजा-घर में रहने लगी। मेरे देवरोंने मुझसे कहा—तुम किसी तीर्थ में जाकर रहो।

मैंने कहा—ससुरका घर ही मेरे लिए तीर्थ है। मेरे ठाकुरजी जहां रहेंगे वहीं मैं भी रहूंगी।

मैं जो अधिकार में दो एक घर लिए बैठी थी, यह भी उन लोगोंसे न देखा गया! वे मेरे घरोंमें अपनी सलतनत जमानेके लिए व्यग्र हो उठे। मेरे किस घरको किस काम में लावेंगे, यह उन लोगोंने पहले ही ठीक कर लिया था। आखिर एक दिन उन्होंने कहा—जहाँ तुम्हारा जी चाहे अपने ठाकुरको ले जाओ हम लोग उसमें दस्तन्दाजी न करेंगे।

जब मैं इसमें कुछ सङ्कोच दिखाने लगी तब उन्होंने कहा—यहाँ रहनेसे तुम्हें खाना कपड़ा कौन देगा?

मैंने कहा तुम लोगोंने जो परवरिश मुकर्रर कर दी है, वही मेरे लिए काफी है।

उन्होंने कहा—दस्तावेजमें कोई परवरिश का जिक्र नहीं !

तब मैं अपने ठाकुरजीको लेकर अपना विवाह होनेके ठीक ३४ वर्ष बाद अपने ससुरके घरसे चलदी। नीलकान्त की खोज करनेपर मालूम हुआ कि वह मेरे चलने के पूर्व ही वृन्दावन चला गया।

मैं गाँव के तीर्थ-यात्रियोंके साथ काशी गई। किन्तु इस पापी मनको कहीं शान्ति न मिली। मैं ठाकुरजी से नित्य पुकार कर कहती थी—हे नाथ ! मेरे स्वामी मेरे बाल्यकालमें मेरे साथ जैसा सत्य भाव धारण किये हुए थे। तुम भी वैसा ही सत्य भाव धारण कर मुझे दर्शन दो। किन्तु उन्होंने मेरी प्रार्थना न सुनी। मेरे हृदयका ताप दूर न हुआ। मैं दिन रात रोया करती थी। हाय ! मनुष्यके प्राण भी कैसे कठिन होते है।

मैं आठ वर्ष की उम्र में ससुराल गई थी। फिर लौट कर बापके घर न जा सकी। तुम्हारी माँके विवाहमें जानेके लिए मैंने बहुत चेष्टाकी परन्तु सब व्यर्थ हुआ। इसके अनन्तर पिताजीके पत्रसे तुम सबोंके जन्म का हाल मालूम हुआ ! मैंने अपनी बहिनके मरनेका भी सम्वाद सुना। उसे सुनकर मुझे जो दुःख हुआ सो क्या बताऊँ ! तुम सबोंका, मातृ हीन होने पर भी, गोद में खिलाने का अवसर ईश्वर ने मुझे न दिया।

तीर्थमें भ्रमण करके भी जब मैंने देखा कि माया मेरा साथ नहीं छोड़ती हृदयका एक अवलम्ब पानेके लिए अब तक मेरे मनमें तृष्णा लगी है तब मैं तुम लोगोंकी खोज करने लगी। यद्यपि मैंने सुना था तुम्हारे पिताने सनातन धर्म को छोड़, ब्राह्म समाजियोंसे नाता जोड़ लिया है तथापि तुम लोगोंकी ममता मेरे मनसे न गई। तुम्हारी माँ मेरी सगी बहन थी। एक ही माँ के पेट से हम दोनों उत्पन्न हुई थी।

काशीमें एक सज्जन पुरुषके द्वारा तुम्हारा पता पाकर मैं यहाँ चली आई।”

परेश बाबूने वरदासुन्दरीके न रहने पर हरिमोहनीको अपने यहाँ टिका लिया और छत के ऊपरवाली कोठरीमें उसे जगह देकर ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि जिसमें उसके पूजापाठ में कोई विघ्न बाधा न हो।

वरदासुन्दरी जब लौट आई तब वह अपने घरमें एक वैष्णवीको टिकी देख जल उठी। उसने परेश बाबूसे कहा—आपने यह क्या किया है? मैं एक परदेशी स्त्री को अपने यहाँ रहने देना पसन्द नहीं करती।

परेश बाबूने कहा—हम लोगोंका रहना तुम पसन्द करती हो और एक अनाथ विधवाका रहना पसन्द नहीं करती?

सुचरिता प्रायः उम्रमें मनोरमाके बराबर की थी। हरिमोहिनी सुचरिताको मनोरमाकी ही भाँति देखने लगी और उसके साथ हरिमोहनीका स्वभाव मिल गया था। सुचरिता बड़ी शान्त प्रकृतिकी थी। किसी-किसी समय हरिमोहनी उसे पीछेसे आते देख चौंक उठती थी। उसे जान पड़ता था कि मनोरमा ही मेरे पास आ रही है देखो, हँसती हुई चली आ रही है। "आओ बेटी, आओ। तुम्हीं मेरी बेटी हो। तुम्हीं मेरे हृदय की मणि हो," यह कहकर सुचरिताके मुँह पर बड़े प्यारसे हाथ फेरकर और उसके मुँह को चूमकर आँसू बहाने लगती थी। सुचरिताकी आँखोंमें भी आँसू उमड़ आते थे। वह उसके गलेसे लिपट कर कहती थी मौसी, मैं भी तो माताका सुख बहुत दिन नहीं भोग सकी। आज वही खोई हुई माँ मुझे मिल गई है। मैं समझती हूँ वही मुझे देखने को आई है।

दो ही दिन में सुचरिता के साथ उसकी मौसी का ऐसा गहरा सम्बन्ध हो गया कि सभी लोग दङ्ग हो रहे।

वरदासुन्दरी को यह देख कर भी क्रोध हो आया। देखो तो, लड़की दो ही दिनमें उसके साथ ऐसे हिल मिल गई है, मानों हम लोगों से उसका

कोई सम्बन्ध ही न हो ! मैंने इतने दिन इसको बेटीकी तरह पाला-पोसा सो कुछ नहीं । इतने दिन मौसी कहाँ थी, बचपनसे ही मैंने ऐसे सिखा पढ़ाकर होशियार किया है। किन्तु आज मौसीके पीछे एकदम दुल है दिन रात उसीके पास बैठी रहती है। मैं उन (परेश) से बराबर कहती आई हूँ कि आप सुचरिता को अच्छी कहकर प्रशंसा करते हैं सो बाहरसे वह भले ही अच्छी हो, किन्तु भीतरसे वह साफ नहीं है ! उसके मन का कोई अन्त नहीं पा सकता। इतने दिन तक हम लोगोंने उसको जो कुछ किया सब व्यर्थ हुआ ।

वरदासुन्दरी जानती थी कि परेश बाबू मेरे दुःख पर ध्यान न देंगे इतना ही नहीं, हरिमोहिनीके ऊपर क्रोध प्रकट करने से परेश बाबूसे अपमानित होने में भी उसे कुछ सन्देह न था। इसीसे उसका क्रोध और भी बढ़ गया। परेश कुछ भी कहें किन्तु उसका मत अधिकाँश बुद्धिमान लोगोंसे मिलता है। इनको प्रमाणित करनेके लिए वरदासुन्दरी अपना दल बढ़ाने की चेष्टा करने लगी। अपने समाजके क्या प्रधान क्या अप्रधान सभी लोगोंके आगे वह देवता पूजती है, मेरी लड़कियाँ उसका यह कुसंस्कार देख कर बिगड़ जावेंगी इस पर वह अनेक प्रकारकी टीका टिप्पणी करने लगी।

सिर्फ लोगोंके आगे समालोचना करके वरदासुन्दरीने संतोष नहीं वरन् वह सब प्रकारसे हरिमोहिनी को तकलीफ भी देने लगी। हरिमोहिनी का चौका बर्तन करने और पानी लाने के लिए एक ग्वाला नौकर था उसको वह हरिमोहिनीके काम के समय कोई दूसरा काम करनेको भेज देती थी। उसकी खोज होने पर कहती थी, क्यों रामदीन तो है। रामदीन जाति का दुसाध था। वरदासुन्दरी जानती थी की उसके हाथ का जल हरिमोहिनी ग्रहण न करेगी। किसीके यह कहने पर वह बोलती थी— इतने नेमसे रहना चाहती है तो हमारे ब्राह्मघरमें क्यों आई ? हमारे यहाँ सब नेम धरम न चलेगा ? हमारे यहाँ जाति-पाँतिका विचार नहीं

है। हम लोग छूआ-छूत नहीं मानतीं। हमारे घरमें रहकर हिन्दू धर्म निभाना चाहेगी, तो कैसे निभेगा ? मैं किसी तरह उसे इस काममें सहायता दूँगी।

वरदासुन्दरी अनेक प्रकारके कष्ट देकर भी हरिमोहिनीको न भगा सकी। हरिमोहिनीने मानों कठिन से कठिन कष्ट सहने का प्रण कर लिया था। जब हरिमोहिनीने देखा कि पानी लानेवाला कोई नहीं है तब उसने रसोई बनाना एकदम छोड़ दिया। वह ठाकुर जी को दूध और फलोंका भोग लगाकर प्रसाद स्वरूप कुछ खाकर दिन काटने लगी। सुचरिताको यह देख बड़ा दुःख हुआ। मौसीने उसे बहुत तरहसे समझाकर कहा—बेटी, तुम खेद मत करो, यह मेरे लिए बहुत अच्छा हुआ है। मैं यही चाहती थी। इसमें मुझे कोई कष्ट नहीं, आनन्द ही होता है।

सुचरिताने कहा—अगर मैं दूसरी जातिके हाथका छूआ खाना छोड़ दूँ तो तुम मुझे अपना काम करने दोगी ?

हरिमोहिनीने कहा—बेटी, तुम मेरे लिए अपना धर्म क्यों छोड़ोगी ? तुम जिस धर्मको मानती हो उसीके अनुसार चलो। मैं जो तुमको अपने पास बराबर हाजिर पाती हूँ, तुम्हें छातीसे लगाकर जी ठण्ढा करती हूँ यह क्या मेरे लिए थोड़ा सुख है ? परेश बाबू पिताके तुल्य तुम्हारे लिए पूज्य हैं, तुम्हारे गुरु हैं। उन्होंने तुमको जो शिक्षा दी है तुम वही मानकर चलो। उसीमें भगवान् तुम्हारा कल्याण करेंगे।

हरिमोहिनी वरदासुन्दरीका सब उपद्रव इस तरह सहने लगी, जैसे वह उसे कुछ समझती ही न हो। परेश बाबू जब नित्य सवेरे उसके पास आकर पूछते थे—कहो कुछ तकलीफ तो नहीं होती, तब वह कहती थी—नहीं, मैं बड़े आराममें हूँ।

किन्तु वरदासुन्दरीका अनुचित व्यवहार सुचरिताको असह्य होने लगा। वह किसीके पास रोकर अपना दुखड़ा सुनाना नहीं चाहती थी। विशेषकर परेश बाबूसे वरदासुन्दरीके कुव्यवहारकी शिकायत करना उसके

लिए असम्भव था। वह चुपचाप सब सहने लगी। भूलकर भी इस विषय में कोई बात कह देनेसे उसे पीछे बड़ा सङ्कोच होता था।

अन्तमें इसका परिणाम यह हुआ कि सुचरिता धीरे-धीरे वरदासुन्दरी के हाथसे निकलकर हरिमोहिनीके हाथका खिलौना बन गई। दिन भर वह उसीके पास बैठी रहती थी। उसीके हाथका दिया कुछ प्रसाद पाकर रह जाती थी। आखिर सुचरिताका यह कष्ट हरिमोहिनीसे न देखा गया। हारकर उसे फिर रसोई बनाने का प्रबन्ध करना पड़ा। सुचरिताने कहा—मौसी, तुम मुझे जिस तरह रहनेको कहोगी, मैं उसी तरह रहूँगी। किन्तु तुम्हारे लिए जल मैं अपने हाथसे ला दूँगी यह काम मैं दूसरेको न करने दूँगी।

हरिमोहिनीने कहा—बेटी! मैं अपने लिए कुछ नहीं कहती किन्तु इस जलसे ठाकुरजीकी पूजा कैसे करूँगी!

सुचरिता—मौसी, क्या तुम्हारे ठाकुरजी भी जाति-पाँति मानते हैं? क्या उन्हें भी प्रायश्चित करना होगा? उनका भी कोई समाज है क्या?

आखिर एक दिन सुचरिताकी भक्तिके आगे हरिमोहिनी को हार माननी पड़ी। उसने सुचरिताकी सेवा सम्पूर्ण रूपसे ग्रहण की! सतीश भी बहिनकी देखा-देखी मौसीकी रसोईमें ही खाने लगा। इस तरह तीनों मिलकर परेश बाबूके घरमें अपना एक अलग ही आश्रम स्थापित कर रहने लगे। सिर्फ ललिता इन दोनों आश्रमोंके बीच सेतुरूप होकर रहती थी। वरदासुन्दरी अपनी और बेटियोंको हरिमोहिनीके पास न जाने देती थी किन्तु ललिताको रोक रखना उसके लिए कठिन था!

[३९]

वरदासुन्दरी अपनी ब्राह्म-बहिनों को सभाके लिए प्रायः अपने घर बुलाने लगी। कभी कभी उसकी छतके ऊपर ही सभा होती थी। हरिमोहिनी अपनी स्वाभाविक सरलताके साथ उन स्त्रियोंका आदर करती थीं, किन्तु वे जो उसका अनादर करती थीं, यह उससे छिपा न रहा। वरदासुन्दरी हिन्दुओंके सामाजिक आचार-व्यवहार पर उसके सामने ही कड़ी समालोचना करती थी; और अनेक स्त्रियाँ हरिमोहिनीके प्रति विशेष लक्ष्य कर समालोचनामें साथ देती थीं।

सुचरिता अपनी मौसीके पास रहकर ये सब बातें चुपचाप सह लेती थी। केवल वह अपने मनका भाव किसी तरह प्रकट कर देती थी कि मैं भी अपनी मौसीके साथ हूँ। जिस दिन भोजनका कुछ विशेष आयोजन होता उस दिन वरदासुन्दरी जब सुचरिताको खाने के लिए बुलाती थी, तब वह कहती थी—मैं न खाऊँगी!

"यह क्या! मालूम होता है, हम लोगोंके साथ बैठकर तुम न खाओगी?"

सुचरिता—नहीं।

वरदासुन्दरी कहती थी—आजकल सुचरिता बड़ी हिन्दू हो गई है यह तुम लोग नहीं जानतीं। अब यह हम लोगोंका छुआ नहीं खाती।

हरिमोहिनी किसी-दिन व्यस्त होकर कह उठती थी—बेटी राधा रानी जाओ, तुम खाने को जाओ।

सुचरिता अपने समाजमें हरिमोहिनी के कारण इस तरह फटकारी जा रही थी, यह उसके लिए बड़ा ही कष्टकर हुआ। किन्तु सुचरिता इस कष्ट को कुछ जी में न लाती थी। एक दिन कोई ब्राह्म स्त्री जूता पहिने

कुतूहल-वश हरिमोहिनीके कमरे में जाने लगी। सुचरिता रास्ता रोक कर खड़ी हो गई और बोली—इस कमरेमें मत जाना।

"क्यों ?"

"इसमें उनके ठाकुरजी हैं।"

"ठाकुरजी हैं! मालूम होता है, तुम लोग रोज ठाकुर पूजती हो।"

हरिमोहिनीने कहा—हाँ, रोज पूजा करती हूँ।

"ठाकुरजी पर तुम्हारी भक्ति है ?"

"मेरा ऐसा भाग्य कहाँ जो उन पर मेरी भक्ति हो ? भक्ति होती तो मैं अपने जन्मको सफल समझती।"

उस दिन ललिता भी वहाँ मौजूद थी। उसने मुँह लाल करके आनेवाली स्त्रीसे पूछा—तुम जिसकी उपासना करती हो, क्या उसकी भक्ति नहीं करती ?

"वाह! करती क्यों नहीं ?"

ललिताने सिर हिलाकर कहा—भक्ति तो तुम क्या करोगी ?—भक्ति नहीं करती हो, यह भी तुम नहीं जानती।

इस पर वह कुछ न बोली और चुपचाप वहाँ से चली गई।

हरिमोहिनीने अनेक यत्न किये जिसमें सुचरिता आचार-व्यवहारमें अपने दलसे अलग न हो किन्तु वह किसी तरह सफल न हो सकी।

इसके पहले हारान बाबू और वरदासुन्दरीके बीच कुछ मनमुटाव रहता था किन्तु वर्तमान घटनासे दोनों में खूब मेलजोल हो गया। वरदासुन्दरीने कहा—कोई कुछ कहे, ब्रह्मसमाजके आदर्शको शुद्ध रखनेके लिए यदि कोई हृदय से इच्छुक है तो वह हारान बाबू ही हैं। हारान बाबूने भी ब्राह्मसमाजी परिवारको सब प्रकार निष्कलङ्क रखने का पूर्ण यश वरदासुन्दरी को ही दिया। उसकी इस प्रशंसाके भीतर परेश बाबूके प्रति एक विशेष आक्षेप था।

हारान बाबूने एक दिन परेश बाबूके सामने ही सुचरिता से कहा—सुना है कि आजकल तुमने ठाकुरका प्रसाद खाना आरम्भ किया है ?

सुचरिताका मुँह क्रोधसे लाल हो गया किन्तु ऐसा भाव करके—मानो उसने कुछ सुना ही नहीं—वह मेज पर रक्खे कलम दावात और पुस्तकों को सँवारकर रखने लगी। परेश बाबूने एक बार स्नेहकी दृष्टिसे सुचरिता की ओर देखकर हारान बाबूसे कहा—हम लोग जो कुछ खाते हैं सभी तो ठाकुरजीका ही प्रसाद है!

हाराननें कहा—किन्तु सुचरिता हम लोगोंके ठाकुरजीको छोड़ना चाहती है।

परेश—अगर यही बात है तो इनके बिरुद्ध बोलनेसे क्या होगा? उसमें बाधा डालनेसे क्या उसका प्रतिकार होगा?

हारान बाबू—जो मनुष्य धारामें बहा जा रहा है उसे ऊपर लानेकी चेष्टा करना भी तो उचित है।

परेश—उस बहते हुए व्यक्तिके सिर पर ढेले मारनेको ही ऊपर लाने की चेष्टा नहीं करते। हारान बाबू आप निश्चिन्त रहिए, मैं सुचरिता को इतने दिनोंसे देख रहा हूँ। अगर वह बे रास्ते चलती तो आप लोगों से पहले ही मैं समझ जाता और इस तरह बेफिक्र न रहता।

हाराननें कहा—सुचरिता तो यहीं है। आप उसीसे क्यों नहीं पूछते? सुना है, वह अब सबके हाथ का छूआ नहीं खाती। क्या यह झूठ है।

सुचरिताने हारान बाबू की ओर आकर्षित हो कर कहा—बाबूजी भी यह जानते हैं कि मैं सबके हाथका छूआ नहीं खाती। यदि वे मेरे इस आचरणको बुरा नहीं मानते तो दूसरे के मानने ही से क्या? यदि आपको मेरा यह आचरण अच्छा न लगे तो, आपकी खुशी है, जहाँ तक जी चाहे मेरी निन्दा कीजिए किन्तु पिताजी को क्यों दिक कर रहे हैं? वे आप लोगों की कड़ी से कड़ी बातों को भी कितना सहन करते हैं क्या आप यह नहीं जानते? शायद उसी का यह परिणाम है?

हारान बाबू विस्मित होकर सोचने लगे कि सुचरिताने भी आजकल बातें करना सीख लिया है !

हारान बाबू की धारणा थी कि उनके समाजके लोगोंके व्यक्तिगत चरित्रमें जो अच्छा भला परिवर्तन हुआ है, उन्होंने किसी न किसी तरह उसका प्रधान कारण अपने ही को मान लिया है। उसका अप्रकट प्रभाव भी भीतर ही भीतर काम कर रहा है, इसमें भी उन्हें सन्देह न था। इतने दिन उनके सामने सुचरिताकी जब कभी किसीने विशेष रूपसे प्रशंसा की है तब उन्होंने ऐसा भाव धारण किया है, मानों वह सारी प्रशंसा हमारी ही हुई है। वह उपदेश, दृष्टान्त और अपने संसर्गके द्वारा सुचरिता के चरित्रको इस प्रकार सुधार रहे हैं कि इस सुच-रिताके जीवन द्वारा ही जन-समाज में उनका अनुभव प्रभाव प्रमाणित होगा। उनकी आशा ऐसी ही थी।

इस सुचरिता की सोचनीय अवनत दशासे हारान बाबूको अपनी योग्यताके सम्बन्धमें कुछ भी गर्व कम न हुआ। उन्होंने सब दोष परेश बाबूके माथे मढ़ दिया। परेश बाबूकी सब लोग बराबर प्रशंसा करते आये हैं, किन्तु हारान बाबू कभी उसमें सहमत नहीं हुए। वह परेश बाबूको प्रशंसनीय नहीं समझते थे।

हारान बाबूकी इन बातोंसे सुचरिता बहुत कष्ट पाने लगी, पर अपने लिए नहीं, परेश बाबूकी समालोचना ब्राह्मसमाजमें जहाँ-तहाँ हो रही है, यह अशान्ति किस उपायसे दूर की जाय? इधर सुचरिता की मौसी भी बराबर समझ रही थी कि मैं विनीत भाव धारण कर जितनी ही सबसे बचकर चलनेकी चेष्टा करती हूँ उतनी ही इस घरके लोगोंके लिये उपद्रव स्वरूप होती जा रही हूं। इस कारण सुचरिता की मौसी जो मारे लज्जा और सोचके मरी जा रही थी यह देख सुचरिता का हृदय पीड़ित होने लगा। इस सङ्कट से उद्धार पानेका कोई रास्ता सुचरिताको न सूझ पड़ा।

इधर सुचरिताको शीघ्र ब्याह देनेके लिए वरदासुन्दरी परेश बाबूको बहुत दिक करने लगीं। उसने कहा—सुचरिता की जिम्मेदारी अब हम अपने ऊपर लेना नहीं चाहती। उसने अपने मनसे चलना आरम्भ किया है। अब यदि उसे आप ब्याहने में विलम्ब करेंगे तब मैं अपनी लड़कियों को लेकर कहीं और जगह चली जाऊँगी। सुचरिताका विचित्र दृष्टान्त मेरी लड़कियोंके-लिए बड़े अनिष्ट का कारण हो रहा है। कुछ दिनमें इसकी देखा देखी मेरी लड़कियाँ भी बिगड़ जायँगी। इसका कोई उपाय शीघ्र कीजिए नहीं तो इसके लिए आप को पीछे पछताना पड़ेगा। ललिता पहले ऐसी न थी, अब जो उसके जी में आता है कर बैठती है। उस दिन वह ऐसा काम कर बैठी, विनयके साथ चुपचाप चली आई, जिस कारण मैं लज्जा से मरी जा रही हूँ। क्या आप समझते हैं कि इस काम में सुचरिता का हाथ न था! आप अपनी लड़कियोंसे बढ़कर सुचरिता पर प्यार करते हैं, इसके लिए मैं आपसे कभी कुछ नहीं कहती किन्तु अब यह बात न चलेगी, यह मैंने आपसे कभी कह रक्खा है।

सुचरिता के लिए तो नहीं, किन्तु घरके और लोगोंकी अशान्तिके कारण परेश बाबू चिन्तित हो पड़े थे। इस अशान्तिका कारण हरिमोहिनी का रहना ही था। वरदासुन्दरी इस बात को लेकर वहां गड़बड़ मचावेगी और अपने उद्योग में वह जितनी ही असफल होगी उतनी ही गड़बड़को बढ़ाती जायगी, इस बातको परेश बाबू जानते थे। सुचरिताके विवाह का प्रस्ताव भी वरदासुन्दरीने यही सोचकर परेश बाबूसे किया था। यदि सुचरिता का ब्याह शीघ्र हो जाय तो सुचरिता के लिए भी अच्छा ही होगा, यह विचार कर परेश बाबूने वरदासुन्दरीसे कहा—अगर हारानबाबू सुचरिता को राजी कर सकें तो मैं इस सम्बन्दमें कोई उज्र न करूँगा।

वरदासुन्दरी ने कहा—उसे अब कितनी दफे राजी करना होगा? वह कई बार तो अपनी सम्मति प्रकट कर चुकी है। आपके मनमें क्या है, सो मैं नहीं जानती। आप इसके लिए इतना टाल मटोल क्यों कर रहे है?

परेश बाबूने कहा—हारान बाबूके प्रति सुचरिताके मनका भाव क्या है; यह मैं ठीक नहीं जानता इसलिए उन दोनों में जब तक इस बात का निश्चय न होगा तब तक मैं इस विषयमें जबरदस्ती कोई काम नहीं कर सकता।

वरदासुन्दरी ने कहा—उसके मनका भाव ठीक-ठीक न जानने की बात इतने दिन पीछे आपने स्वीकार की? इस लड़की के मन की बात समझना बड़ा कठिन काम है। वह बोलती कुछ है और करती कुछ है। उसका बाहर-भीतर एक नहीं।

वरदासुन्दरी ने हारान बाबूको बुला भेजा।

इसी समय हारानबाबू कमरेमें प्रवेश करके सुचरिताके पास एक कुरसी खींचकर बैठ गये। सुचरिता ने एक बार भी आँख उठाकर उनकी ओर न देखा।

हारान बाबूने कहा—सुचरिता आज तुमसे एक विशेष बात कहना है मेरी बात पर जरा ध्यान देना होगा।

सुचरिता कुछ न बोली, सिर नीचा किये बैठी रही। ठीक इसी समय ललिता आई।

हरान बाबूने कहा—ललिता! सुचरिता के साथ मुझे आज कुछ बातों का विचार करना है।

ललिताको वहाँ से जानेको उद्यत करते देख सुचरिता ने झट उसका आँचल पकड़ लिया। ललिताने कहा—'हारान बाबूको तुम्हारे साथ कुछ बात करनी है।' सुचरिता उसको कुछ उत्तर न दे ललिताका आँचल जोरसे पकड़े ही रही। तब ललिता सुचरिताके पास ही एक कुरसी पर बैठ गई।

हारान बाबू किसी बाधासे दब जानेवाले आदमी न थे उन्होंने कथा की भूमिका बाँधना छोड़ एकदम सुचरितासे कहा—विवाह में विलम्ब होना मैं अब उचित नहीं समझता। परेश बाबू को मैंने इसकी सूचना दी थी,

तुम्हारी सम्मति पाने पर ही सब बातें तय हो जायँगी फिर उसमें कोई बाधा न होगी। मैंने निश्चय किया है, इस रविवारके अगले रविवारको---

उनकी बात काटकर सुचरिता बीच ही में बोल उठी—नहीं।

सुचरिता के मुँहसे स्पष्ट और कर्ण-कटु अत्यन्त संक्षिप्त "नहीं" सुनकर हारान बाबू ठिठक गये। सुचरिताको वह अपने ऊपर विशेष अनुरक्त समझते थे। यह एक मात्र "नहीं" शब्द रूपी बाणसे मेरे प्रस्ताव को बीच ही में काट गिरावेगी, ऐसा खयाल उनके मन में कभी न हुआ था! उन्होंने रुष्ट होकर कहा—नहीं! नहीं के मानी क्या? क्या तुम और कुछ देरी करना चाहती हो?

सुचरिताने फिर कहा—नहीं?

हारान बाबू ने आश्चर्यके साथ कहा—तो फिर?

सुचरिताने सिर हिलाकर कहा—विवाहके लिए मेरी सम्मति नहीं है।

हारान बाबूने हताश होकर पूछा—सम्मति नहीं है, इसके मानी?

ललिताने हँसकर कहा—हारान बाबू, आज आप मानी, का 'अर्थ' क्यों भूल गये?

हारान बाबूने कड़ी दृष्टिसे ललिताकी ओर देखकर कहा—मातृभाषा भूल जाने की भूल स्वीकार करना सहज है किन्तु जिस व्यक्तिकी बात पर मेरी बराबर श्रद्धा हो उसे मैं ठीक नहीं परख सका, यह स्वीकार करना सहज नहीं है।

ललिताने कहा—दूसरेके मनका भाव समझनेमें समय लगता है। परन्तु कभी-कभी अपने सम्बन्ध में भी यह बात संगठित होती है। कितने ही लोग अपने मनका भाव आप ही शीघ्र नहीं समझते।

हारान बाबूने कहा—शुरूसे आजतक मेरी बात, विचार या व्यवहार में कुछ अन्तर नहीं आया है। मैं अपनेको कुछ जँचानेका किसीको अवसर नहीं देता, यह बात मैं जोर देकर कह सकता हूँ। सुचरिता ही कहे, मैं ठीक कहता हूँ या नहीं?

ललिता कुछ कहना चाहती थी किन्तु सुचरिताने उसे रोककर कहा—आप ठीक कहते हैं, आपको मैं कोई दोष देना नहीं चाहती।

हारान बाबूने कहा—यदि दोष देना नहीं चाहती तो मेरे साथ अन्याय करना ही क्यों चाहती हो?

सुचरिताने स्पष्ट स्वर में कहा—यदि आप इसको अन्याय कहते हैं, तो मैं अन्याय ही करूँगी। किन्तु—

बाहर से आवाज आई—बहन घर में हो?

सुचरिता प्रसन्न होकर झट बोल उठी—आइये, विनय बाबू आइये।

बहन, तुम भूल करती हो। विनय बाबू नहीं आये, मैं तो विनय मात्र हूँ। मुझे विनय बाबू कहकर क्यों आदरके शिखर पर चढ़ाकर लजा रही हो—यह कह विनयने घरमें प्रवेश करते ही हारान बाबू को देखा। हारान बाबूके मुँह पर उदासीका चिन्ह देखकर विनयने कहा—बहुत दिन से मेरे न आने के कारण आप नाराज तो नहीं हो गये हैं?

हारान बाबू ने इस परिहासमें योग देनेकी चेष्टा करके कहा—नाराज होने की तो बात ही है। किन्तु आज आप बे मौके आये हैं—सुचरिताके साथ मेरी कुछ विशेष बातें हो रही थीं।

विनयने घबड़ाकर कहा—यह देखिये, मेरा आना कब बेमौके न होगा, यह मैंने आजतक समझा ही नहीं। इसी नासमझी के कारण यहाँ आने का साहस भी नहीं होता।—यह कहकर विनय बाहर जाने लगा।

सुचरिताने कहा—विनय बाबू कहाँ चले! बैठिये। इनके साथ जो बात होनी थी वह खतम हो गई। आप बड़े अच्छे अवसर पर आगये।

विनय समझ गया कि मेरे आने से सुचरिता एक सङ्कट से उद्धार पा गई। वह प्रसन्न होकर एक कुरसी पर बैठ गया और बोला—मैं किसीके मनको दुखाना नहीं चाहता। जब कोई मुझे बैठने को कहता है तब मैं बैठूँगा ही। मेरा स्वभाव ऐसा ही है। इसलिए सुचरिता बहन से यही निवेदन है कि वे इन बातों को समझ बूझकर बोलें, नहीं तो विपत्तिमें फँसेंगी।

हारान बाबू कुछ न बोलकर चुपचाप बैठे रहे। उन्होंने मनमें कहा—अच्छा, मैं जब तक अपने मनकी बातें सुचरिता से न कह लूँगा, तब तक न टलूँगा।

बड़ी देर तक इस तरह बात-चीत होनेके पीछे यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आगई कि हारान बाबू नहीं उठेंगे। तब सुचरिताने विनय से कहा—बहुत दिनोंसे मौसी के साथ आपकी भेंट नहीं हुई, इसलिए वे प्रायः रोज ही आपका जिक्र करती हैं क्या आप एक बार उनको देखने न चलेंगे?

विनयने कुरसीसे उठकर कहा—जब मैं यहाँ आया हूँ तब बिना उनको देखे कैसे जा सकता हूँ।

विनयको जब सुचरिता अपनी मौसीके पास ले गई तब ललिता ने उठकर कहा—हारान बाबू मुझसे तो अब आपका कोई विशेष प्रयोजन नहीं है।

हारान बाबूने कहा—नहीं। मालूम होता है, तुम्हें और किसी जगह कोई आवश्यक काम है, तुम जा सकती हो!

ललिता उनकी बात का मर्म समझ गई। उसने तुरन्त उद्धत भावसे सिर हिलाकर उनकी साङ्केतिक बात को खोलकर कह दिया—विनय बाबू आज बहुत दिनोंमें आये हैं, मैं उनसे बातचीत करने जाती हूं!

यह कहकर वह झट वहाँसे चली गई।

विनयको देखकर हरिमोहिनी बहुत प्रसन्न हुई। किन्तु उसपर इसका कुछ विशेष स्नेह था, केवल इसी कारण नहीं। बल्कि इस घरमें बाहरका जो कोई हरिमोहिनी को देखने आता था वह उसे एक विचित्र जीव की तरह समझती थी। वे लोग ठहरे कलकत्ते के रहने वाले, सभी अंगरेजी और अन्य भाषायें लिखने पढ़ने में उसकी अपेक्षा श्रेष्ट—उन सबोंके द्वारा अपमानित होनेके कारण यह बड़े संकोचमें पड़ जाती थी। ऐसी अवस्थामें विनय इसे एक अवलम्ब सा मिल गया था। विनय भी कलकत्ते का

रहनेवाला है। यह लिखा पढ़ा भी किसी की अपेक्षा कम नहीं है तथापि वह हरिमोहिनी पर कुछ अश्रद्धा नहीं रखता। विनय इन्हें अपने घरके लोगों की तरह देखता था, इससे इनके मनमें बड़ा ही सन्तोष होता था। इसी कारण थोड़े ही परिचय से विनय को इनके यहाँ आत्मीय का स्थान मिल गया।

हरिमोहिनीके पास विनयके जानेके थोड़ी देर पीछे ललिता वहाँ तुरन्त कभी नहीं जाती थी—किन्तु आज हारान बाबू से गुप्त आक्षेपकी चोट खाकर वह सब संकोच-बन्धनको तोड़ बड़ी निर्भीकताके साथ ऊपरवाली कोठरी में गई, और जाते ही विनय बाबूके साथ बेरोक बात भी करने लग गई। उनकी सभा खूब जम उठी। यहाँ तक कि बीच-बीच में उन सबके हंसनेका शब्द नीचे के घर में अकेले बैठे हुए हारान बाबू के कानकी राह से भीतर प्रवेश कर हृदयको वेधने लगा। वह अब देर तक घर में अकेले न रह सके। वरदासुन्दरीके साथ वार्तालाप करके अपने मनकी मर्मान्तिक वेदना को दूर करना चाहा। वरदासुन्दरीने जब सुना कि सुचरिताने हारान बाबूके साथ विवाह करने से इन्कार किया है तब वह एकदम अधीर हो उठी। उसने हारान बाबू से कहा—सीधेपन से आपका काम न होगा। जब वह बार-बार अपनी सम्मति प्रकट कर चुकी है और ब्राह्म समाज के सभी लोग इस बातको जान चुके हैं और उसकी अपेक्षा कर रहे हैं तब आज उनके सिर हिलाने से सब बातें बदल जायँ, यह नहीं हो सकता। उसकी यह अस्वीकृति अब ग्राह्य न होगी। आप अपना दावा किसी तरह न छोड़ें, यह मैं अभी आपसे कहे रखती हूं,! देखें वह क्या करती है?

इस सम्बन्ध में हारान बाबू को उत्साह देना, धधकती हुई आग में मानों घी डालना हुआ। वह अभिमान से सिर उठाकर मन ही मन कहने लगे कि सुचरिता को हारकर मेरी बात माननी ही पड़ेगी, मेरे लिए सुचरिता का त्याग करना कुछ कठिन नहीं किन्तु मैं ब्राह्म समाजके सिरको नीचा कर देना नहीं चाहता।

विनयने हरिमोहनी के साथ आत्मीयता दिखानेके अभिप्रायसे कुछ प्रसाद पानेकी इच्छा प्रकट की। हरिमोहिनी ने झट उठकर एक छोटी सी थाली में ठकुरजी का भोग लगा भीगा चना, कुछ मेवा-मक्खन मिसरी और केला तथा एक कटोरेमें थोड़ा सा दूध लाकर बड़े प्रेम से विनय के आगे रख दिया। विनय ने हँसकर कहा—मैं असमयमें भूख की बात चलाकर मौसी को तकलीफ देना चाहता था किन्तु मैं ही ठगा गया। यह कहकर वह खूब आडम्बर के साथ भोजन करने बैठा। इसी समय वरदासुन्दरी वहाँ आ पहुंची। विनय ने अपने आसन पर बैठे ही बैठे जरा सिर नवाकर नमस्कार करने की चेष्टा करते हुए कहा—'मैं बड़ी देर तक नीचे बैठा था। आपका दर्शन न हुआ।' वरदासुन्दरी ने इसका कोई उत्तर न देकर सुचरिताके प्रति लक्ष्य करके कहा—यह तो यहां बैठी है! मैं क्या जानती थी कि यहां सभा लगी है। सब आनन्द लूट रहे हैं। उधर बेचारे हारान बाबू सबेरेसे इसके लिए अपेक्षा किये बैठे हैं, मानों वे इसके बाग के माली हैं। मैंने बचपनसे इसको पाल-पोसकर इतना बड़ा किया है, अरे बाबू! इतने दिन तो इसका ऐसा व्यवहार कभी न देखा था! कौन जाने, आज कल यह सब सीख कहां से पा रही है। हमारे घरमें जो बात कभी न होती थी वही आजकल होने लगी है। समाज के लोगोंके आगे हम लोग मुँह दिखलाने योग्य न रहे। इतने दिन तक बड़े यत्न से जो शिक्षा दी गई थी वह सब दो ही दिन में न जाने कहाँ उड़ गई। यह क्या माजरा है, कुछ समझ में नहीं आता।

हरिमोहिनीने डरकर सुचरितासे कहा—नीचे कोई बैठा था, यह मैं न जानती थी। बड़ा अन्याय हुआ बेटी! तुम शीघ्र जाओ मैंने तुमको बिठा रक्खा, यह मुझसे बड़ी भूल हुई!

इसमें हरिमोहिनीकी रत्ती भर भूल नहीं है, यह कहनेके लिए ललिता तुरन्त उद्यत हो उठी थी, परन्तु सुचरिताने चुपचाप जोर से

उसका हाथ दबाकर उसे रोक दिया और वरदासुन्दरीकी बातका कोई प्रतिवाद न करके वह नीचे चली गई।

यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि विनयने वरदासुन्दरीका स्नेह अपनी ओर आकर्षित किया था। विनय जो मेरे घरके लोगों के साथ हिल मिलकर एक न एक दिन ब्राह्मसमाज में सम्मिलित होगा, इस विषय में उसे सन्देह न था। मानो वह विनयको अपने हाथसे नये साँचेमें ढाल रही थी और इसका उसके मनमें बड़ा गर्व था। उसने अपने समाजमें किसी-किसी पर प्रकाशित भी किया था। उसी विनयको आज विपक्षोंके घरमें प्रतिष्ठित देख उसके मनमें जलन पैदा हुई और अपनी ललिता को भ्रष्टाचारी विनयकी सहकारिणी देख उसके हृदयकी ज्वाला दूनी हो भभक उठी। उसने रूखे स्वरमें कहा—ललिता, यहां क्या तुम्हारा कोई काम है?

ललिताने कहा—हाँ, विनय बाबू आये हैं इसीसे—

वरदा सुन्दरीने कहा—विनय बाबू जिसके पास आये हैं वही उनका आतिथ्य करे। अभी तुम नीचे चलो काम है।

ललिताने मन में सोचा कि हारान बाबू ने अवश्य ही विनयका मेरा तथा सुचरिता का नाम लेकर मां से कुछ ऐसा कहा है जिसे कहने का उनको कोई अधिकार नहीं था, यह सोचकर उसका मन अत्यन्त कठोर हो उठा। उसने प्रयोजन न रहने पर भी बड़ी प्रगल्भताके साथ कहा—विनय बाबू बहुत दिनमें आये हैं, इनके साथ कुछ बात करके तब मैं आऊँगी।

ललिताकी बोलीसे ही वरदासुन्दरी जान गई कि इस पर अब जोर न चलेगा। हरिमोहिनी के सामने ही फिर अपना पराभव बचाने की दृष्टिसे वह कुछ न बोली और विनयके साथ किसी प्रकार का सम्भाषण किये बिना ही चली गई।

ललिताने विनयके साथ बातें करनेका उत्साह अपनी मां के आगे जाहिर तो किया, किन्तु वरदासुन्दरी के चले जाने पर इस उत्साहका कोई लक्षण न देखा गया। तीनों व्यक्ति एक विचित्र भाव धारण कर चुप

हो रहे। कुछ ही देर बाद ललिता वहां से उठकर अपने कमरे में चली गई। भीतरसे किवाड़ लगा लिया।

इस घरमें हरिमोहिनी की क्या दशा है, विनय बखूबी समझ गया। उसने बात-चीत करके क्रमशः हरिमोहिनी का सब वृत्तान्त सुन लिया सब बातोंके अन्तमें हरिमोहिनीने कहा—बाबू! मेरे समान अनाथों के लिए घर में रहना ठीक नहीं। किसी तीर्थ में जाकर देव-सेवा में मन लगाती यह मेरे लिए अच्छा होता। मेरे पास जो कुछ रुपया पैसा बच रहा है उससे कुछ दिन निर्वाह चल जाता। तब भी यदि यह अधम शरीर बचा रहता तो मैं किसी के घर में रसोई-पानीका काम करके भी किसी तरह दिन काट लेती। मैं काशी में देख आई हूँ कि इस तरह कितने ही लोगों का निर्वाह हो रहा है। किन्तु मैं तो बड़ी अभागिन, हूँ मेरा दुर्भाग्य कोई काम होने नहीं देता। जैसे डूबते हुए मनुष्यको एक सहारेकी लकड़ी मिल जाय और वह उसे किसी तरह छोड़ना न चाहे वैसा ही राधा-रानी और सतीश मेरे लिए आधार हो गये हैं। उनको छोड़कर कहीं जाने की बात मन में आते ही मेरे प्राण सूख जाते हैं। इन दोनोंको कहीं छोड़ना न पड़े इसका भय दिन-रात मेरे मनमें लगा रहता है। इस चिन्तासे रात को नींद नहीं आती। अगर इन दोनों को छोड़कर जाना पड़ा तो मैंने इनके साथ इतना स्नेह किस लिए जोड़ा? तुमसे कहने में मुझे लज्जा नहीं। जबसे इन दोनोंको पाया है तबसे मैं ठाकुरजीकी पूजा ध्यान लगाकर कर सकी हूँ। यदि ये दोनों मेरे पास से अलग हो जायगे तो ठाकुरजीकी पूजा में मेरा ध्यान न लगेगा।

यह कहकर हरिमोहिनीने अपने आंचल से आँखें पोछ डालीं।

[४०]

सुचरिता नीचे दालानमें आकर हारान बाबूके सामने खड़ी हुई और बोली—आपको क्या कहना सुनना है, कहिये !

हारान० - बैठ जाओ।

सुचरिता बैठी नहीं, चुपचाप खड़ी ही रही।

हाराननें कहा—सुचरिता, तुम मेरे साथ अन्याय कर रही हो।

सुचरिताने कहा—आपने भी मेरे साथ अन्याय किया है !

हाराननें कहा—क्यों कैसे ? मैंने तुमको जो वचन दिया, वह अब भी...।

सुचरिताने बीच ही में रोक कर कहा—न्याय क्या केवल मुंहकी बातसे ही होता है ? उसी वचन पर जोर देकर क्या आप अपने कामोंसे मेरे ऊपर अत्याचार करना चाहते हैं। एक सत्य क्या सहस्त्र मिथ्या की अपेक्षा बड़ा नहीं है ? मैंने अगर सौ दफे भूल की हो, तो क्या आप जबरदस्ती मेरी उस भूल को अग्रगण्य करेंगे ? आज जब मुझे अपनी वह भूल मालूम पड़ गई है, तब मैं अपनी पहिले की किसी बात को स्वीकार नहीं करूंगी—स्वीकार करने से ही मेरा अन्याय होगा ?

हारान बाबू की समझमें किसी तरह यह बात नहीं आती थी किन्तु सुचरिता का ऐसा परिवर्त्तन किसी प्रकार सम्भव हो सकता है, उसकी पहिले की स्वभाविक नम्रता और चुप रहनेकी—कम बोलने की—आदत आज जो इस तरह नष्ट हो गई हैं, उसका कारण उन्हीं का आचरण है, अनुमान करनेकी शक्ति और विनयका भाव उनमें नहीं था। उन्होंने मनमें सुचरिताके नये साथियों पर दोषारोपण करके सुचरिता से पूछा—तुमने क्या भूल की थी ?

सुचरिताने कहा—यह बात मुझसे क्यों आप पूछते हैं? पहले मेरा मन था, अब नहीं है, इतना ही क्या यथेष्ट नहीं है?

हारानने कहा—ब्राह्म समाजके आगे जो हम जवाबदेह है समाज के आदमियों के आगे तुम क्या जवाब दोगी, और मैं ही क्या कहूंगा?

सुचरिता—मैं कुछ भी नहीं कहूँगी। आप अगर कहना चाहें तो कहेंगे कि सुचरिताकी अवस्था थोड़ी है, उसके बुद्धि नहीं है, उसकी मति अस्थिर है। जो जी चाहे वही कहियेगा? किन्तु मेरी इस बारे में यही आखिरी बात है—बस?

हारान०—आखिरी बात हो ही नहीं सकती। परेश बाबू अगर...

इसी बीचमें परेश बाबू वहां आ गये। उन्होंने कहा—क्या हारान बाबू मेरी क्या बात आप कह रहे हैं?

सुचरिता इस समय दालान से अन्यत्र जा रही थी। हारान बाबू ने पुकारकर कहा—सुचरिता जाना नहीं। परेश बाबूके सामने बात हो जाय।

सुचरिता घूम कर खड़ी हो गई! हारानने कहा—परेश बाबू इतने दिन बाद आज सुचरिता कहती है कि इस विवाह में उसका मत नहीं है! इतने बड़े विषय को लेकर उसको क्या इतने दिन तक लड़कपन या खेल करना उचित था? यह जो निन्दनीय विघ्न उपस्थित हुआ इस बातके लिए क्या आपको भी जवाबदेह न होना होगा?

परेश बाबूने सुचरिताके सिर पर हाथ फेर कर स्नेह के स्वरमें कहा बेटी, तुम्हारे यहाँ ठहरने की जरूरत नहीं है, तुम जाओ?

यह मामूली बात सुनते ही दम भर में सुचरिता की दोनों आँखें डबडबा आईं। वह चटपट वहाँ से चली गई।

परेश बाबूने कहा—सुचरिताने अपने मनको अच्छी तरह समझे बिना ही विवाहके लिए सम्मति दी थी—यह सन्देह बहुत दिनसे मेरे मनमें पैदा होने के कारण ही समाजके सब लोगोंके सामने आप लोगोंके सम्बन्ध को पक्का करनेके बारेमें मैं आपके अनुरोधका पालन नहीं कर सका था।

हारानने कहा—सुचरिताने उस समय अपने मनको अच्छी तरह समझकर ही सम्मति दी थी, और इस समय बिना समझे ही असम्मति प्रकट कर रही है—इस तरह का सन्देह आपके मनमें नहीं उत्पन्न होता ?

परेशने कहा—दोनों ही बातें सम्भव हैं। किन्तु कैसा भी सन्देह क्यों न हो, ऐसी अवस्था में विवाह नहीं हो सकता।

हारानबाबू—आप सुचरिताको अच्छी सलाह न देंगे ?

परेश०—आप निश्चय जानते हैं, सुचरिताको मैं कभी अपनी शक्ति भर बुरी सलाह नहीं दे सकता !

हारान०—यही बात अगर होती तो सुचरिता का ऐसा परिणाम कदापि न हो सकता। आपके परिवार में आज कल जो बातें होने लगी हैं सो अब आपकी अविवेचनाका ही फल है, और यह बात मैं साहस करके आपके मुँह पर ही कह रहा हूँ !

परेशबाबूने जरा हँसकर कहा—यह तो आप ठीक ही कह रहे हैं। अपने परिवारके अच्छे बुरे सभी परिणामोंकी जिम्मेदारी मैं न लूंगा, और कौन लेगा ?

हारान०—आपको इसके लिए पछताना पड़ेगा।

परेश०—पश्चात्ताप—तो ईश्वर की दया है। अपराधको ही डरता हूं, हारान बाबू, पश्चात्तापको नहीं।

सुचरिताने प्रवेश करके परेश बाबूका हाथ पकड़ कर कहा—बाबूजी आपकी उपासनाका समय हो गया, चलिए।

परेश०—हारान बाबू, तो क्या जरा बैठिएगा ?

हारान बाबू, केवल 'न' कह कर तेजीके साथ चले गये।

—:-:-:-:०:-:-:-:—

सुचरिता दुविधामें पड़कर अनेक कष्टोंका अनुभव करने लगी। भीतर से बाहर तक कहीं उसको चैन नहीं। गोराके प्रति उसके मनका भाव इतने दिनसे अलक्षित रूपमें घनिष्ठ होता जा रहा था। गोराके जेल जानेके कारण कष्ट उसके मनमें हो रहा है, उसके दूर होनेका उसे कोई उपाय नहीं दिखाई देता। वह दिन-रात घोर चिन्तामें डूबी रहती है। किसीसे अपने मनका दुःख कह भी नहीं सकती। उसे इतना भी समय नहीं मिलता जो एकान्तमें बैठकर वह अपने मानसिक दुःख पर कुछ विचार कर सके। हारान बाबूने उसका मन फेरनेके लिए अपने समग्र समाजको उसके पास भेजकर उसे बाधित करने का उपाय रचा है। वह समाचार पत्रमें भी इस सम्बन्धका उल्लेख करना चाहता है। सुचरिता की मौसी परेश बाबूके घरमें ठाकुरजीकी पूजा करती है, और सुचरिताको बहका रही है, इसका भी उल्लेख किया जायगा। यह सुनकर मौसी बड़ी बेचैन हो पड़ी हैं। मैं अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, इसी सोचमें इसका कुछ निश्चय नहीं कर सकती। सुचरिता भी इसी सोचसे मरी जा रही है।

इस सङ्कटके समय उसके एकमात्र अवलम्ब थे परेश बाबू। वह उनसे कोई परामर्श लेना नहीं चाहती थी। उसे अनेक बातें कहने को थीं, जिन्हें वह परेश बाबूके सामने कह नहीं सकती थी और कितनी ही बातें ऐसी थीं जो सङ्कोचवश वह उनके निकट प्रकट नहीं कर सकती थी। यद्यपि वह परेश बाबूसे कुछ नहीं कह सकती थी तथापि उसे पूर्ण विश्वास था कि वे मेरे हृदयका भाव जानते हैं। वह उन्हींको अपना माँ बाप समझ बैठी है।

आजकल जाड़ेके समय साँझको परेश बाबू बागमें उपासना करने न जाते थे। घरसे पच्छिम ओरकी एक छोटी सी कोठरीके खुले

दर्वाजेके सामने एक आसन बिछाकर वे उपासना करते थे। उनके उजले केशोंसे सुशोभित मुखमण्डल पर सायंकालीन सूर्यकी आभा पड़नेसे उनका मुख और भी दीप्तिमान हो उठता था। उसी समय सुचरिता पैरोंकी आहट बचाकर चुपचाप उनके पास आकर बैठती थी। वह अपने अशान्त, व्यथित चित्तको मानों परेश बाबूकी गम्भीर उपासनामें डुबा रहती थी। आजकल उपासनाके अन्तमें प्रायः परेश बाबू नित्य देखते थे कि हमारी यह लड़की, यह शिष्या, चुपचाप हमारे पास बैठी है। वे उसको अनिर्वचनीय आध्यात्मिक माधुर्य द्वारा परिवेष्टित देख अन्तःकरणसे चुपचाप आशीर्वाद देते थे।

परेश बाबूके जीवनकी गम्भीर शान्तिका कुछ सुख पानेकी इच्छासे सुचरिता कोई न कोई बहाना करके उपासनाके समय उनके पास जा बैठती थी। वह अपने चिन्तित चित्तमें शान्ति पहुंचानेके लिए परेश बाबूके पैरों पर मस्तक रखनेके सिवा और कोई सुगम उपाय न देखती थी।

सुचरिता अपने अटल धैर्यके साथ सब आघातोंको चुपचाप सह लेने हीमें अपना कल्याण समझती थी। उसका खयाल था कि इस विषयमें कुछ न बोलनेसे आप ही आप सब बखेड़े मिट जायंगे। परन्तु यह न हुआ। उसे और ही उपायका अवलम्बन करना पड़ा।

वरदासुन्दरीने जब देखा कि क्रोध करके या धिक्कार देकरके सुचरिता को राजी करना सम्भव नहीं है और परेश बाबूसे भी इस विषयमें सहायता पाने की कोई आशा नहीं है तब हरिमोहिनीके प्रति वह भूखी बाघिनकी तरह क्रुद्ध हो उठी। घरमें हरिमोहिनीका रहना उसे उठते-बैठते बेचैन करने लगा।

उस दिन वरदासुन्दरीके पिताके मृत्यु-दिनकी वार्षिक उपासना थी। इस उपलक्ष्यमें उसने विनयको नेवता दिया था। उपासना सायंकालको होनेवाली थी। उसके पूर्व ही वह उपासना-गृहको सजा रही थी। सुचरिता और वरदासुन्दरीकी लड़कियाँ भी उसकी सहायता कर रही थीं।

इस समय एकाएक वरदासुन्दरीकी नजर विनय पर पड़ी। वह पासके जीनेसे ऊपर हरिमोहिनीके पास जा रहा था। जब मनमें कुछ मालिन्य रहता है तब छोटी सी घटना भी बहुत बड़ी हो उठती है। विनयका यह ऊपरके कमरेमें जाना वरदासुन्दरीको ऐसा असह्य हो गया कि वह घरकी सजावट छोड़कर तुरन्त हरिमोहिनीके पास जा पहुंची। देखा, विनय चटाई पर बैठकर आत्मीयकी भांति विस्वस्त भावसे हरिमोहिनीके साथ बातचीत कर रहा है।

वरदासुन्दरीने कहा—तुम हमारे यहाँ जब तक जी चाहे रहो, मैं तुमको आदर से रक्खूँगी। किन्तु तुम्हारे ठाकुरजी को मैं अपने यहाँ नहीं रहने दे सकती।

हरिमोहिनी देहातकी रहनेवाली थी। ब्राह्मके सम्बन्ध में उसकी धारणा थी कि वह किरिस्तानी धर्मकी ही एक शाखा है। कई दिनोंसे वह इसी बातको सोच रही थी और इस चिन्तासे व्याकुल हो रही थी कि अब क्या करना चाहिए। ऐसे ही अवसर पर आज वरदासुन्दरीके मुखसे यह बात सुनकर वह समझ गई कि अब सोच-विचार करने का समय नहीं है, अब कोई बात शीघ्र ही स्थिर करनी होगी। पहले उसने सोचा, कलकत्तेमें मकान किराये पर लेकर रहूँगी तो कभी-कभी सुचरिता और सतीशको भी देख सकूँगी, किन्तु मेरे पास जो थोड़ी सी पूँजी बच रही है उससे कलकत्तेका खर्च नहीं चलेगा।

वरदासुन्दरी बवण्डरकी तरह आकर चली गई तब विनय सिर नीचा करके चुप हो बैठा रहा।

कुछ देर चुप रहकर हरिमोहिनीने कहा—मैं तीर्थको जाऊँगी, तुममेंसे कोई मुझे पहुंचा आवेगा?

विनयने कहा—क्यों नहीं मैं पहुँचा आऊँगा। किन्तु इसकी तैयारी करने में दो चार दिनका बिलम्ब होगा। तब तक तुम मेरी माँके पास चलकर रहो।

हरिमोहिनीने कहा—मेरा भार कुछ साधारण नहीं है। विधाताने मुझे कितना भारी बनाया है यह मैं नहीं जानती। मेरा बोझ कोई नहीं उठा सकता। जब ससुरालमें भी विपत्ति आ पड़ने पर मुझे कोई न रख सका तब दूसरा कौन मुझे रख सकेगा? अब किसीके घर जानेका काम नहीं। जो विश्वका भार धारण करते हैं अब उन्हींके चरण-कमलोंमें आश्रय लूँगी। अब यहाँ न रहूँगी, यह कहकर वह बार-बार दोनों आँखें आँचलसे पोंछने लगी।

विनयने कहा—यह कहनेसे क्या होगा! मेरी माँके साथ किसीकी तुलना नहीं हो सकती। जो अपने जीवन का समस्त भार भागवान्को अर्पण कर चुकी है, वह दूसरे का भार उठानेमें कुछ भी सङ्कोच नहीं करती। जैसे परेश बाबू हैं, वैसी ही मेरी माँ है। एक बार मैं तुमको अपनी माँके पास ले चलूँगा। फिर तुम जहाँ जिस तीर्थमें जानेको कहोगी, वहाँ मैं पहुंचा आऊँगा।

हरिमोहिनी—तो एक बार उनको इसकी खबर—

विनयने कहा—मेरे जाने हीसे उन्हें खबर मिल जायगी। इसके लिए आप कुछ चिन्ता न करें।

हरिमोहिनी—तो कल सवेरे—

विनय—कलकी क्या बात! आज ही रातको चलिए।

सन्ध्या समय सुचरिताने आकर कहा—विनय बाबू, आपको माँ बुलाती हैं, उपासना का समय हो गया है।

विनयने कहा—मौसीके साथ बात चीत हो रही है अभी मैं न चल सकूँगा।

असलमें आज विनय को वरदासुन्दरीका, उपासनाका, निमन्त्रण किसी तरह स्वीकार न था। उसने मनमें कहा, यह सब आडम्बर है।

हरिमोहिनीने घबराकर कहा—बाबू, तुम जाओ, मेरे साथ बात-चीत फिर होगी। वहाँका काम पूरा हो जाय तब यहाँ आना।

सुचरिता ने कहा—अभी आपका वहां चलना अच्छा है।

विनयने समझा, अभी उपासना गृहमें न जाऊँगा तो इस घरमें जिस उपद्रवका आरम्भ हुआ है वह और बढ़ जायगा। इसलिये वह उपासना स्थलमें गया तो, परन्तु उसका जाना पूर्ण रूपसे फलित न हुआ।

उपासनाके अनन्तर भोजनका प्रबन्ध था। विनयने कहा—अभी मुझको भूख नहीं है।

वरदासुन्दरीने कहा—भूखको दोष मत दीजिये। आप ऊपरसे ही भूखको निवारण कर रहे हैं।

विनयने हँसकर कहा—आपका कहना ठीक है, लोभी की ऐसी ही दुर्दशा होती है। वह वर्त्तमानकी अल्पप्राप्तिसे भविष्यके वृहत् लाभको खो बैठता है—यह कहकर विनय जानेको उद्यत हुआ।

वरदासुन्दरीने कहा—मालूम होता है आप फिर ऊपर जा रहे हैं?

संक्षेपमें 'हां' कहकर विनय वहांसे बाहर आ गया। दर्वाजेके पास सुचरिता खड़ी थी। विनयने उससे मीठे स्वरमें कहा—बहन, एक बार मौसी के पास तुम्हारा जाना अवश्यक है। शायद वह तुमसे कोई कामकी बात पूछेंगी।

ललिता आगत-जनोंके आतिथ्यमें नियुक्त थी; एक बार हारानबाबू उसे अपने पास आते देख बोल उठे—विनय बाबू तो यहाँ नहीं हैं, ऊपर गये हैं।

उनकी यह व्यङ्ग-भरी बात सुनकर ललिता खड़ी हो उनके मुँहकी ओर दृष्टि करके निःसङ्कोच होकर बोली—मालूम है। वे मुझसे भेंट किये बना न जायँगे। मैं यहाँ का काम पूरा करके अभी ऊपर जाऊँगी।

ललिताको किसी तरह चुप न कर सकने के कारण हारानबाबूके हृदय की ज्वाला और भी बढ़ गई। विनय सुचरितासे कुछ कह गया और सुचरिताने कुछ ही देर पीछे उसका अनुसरण किया, यह हारान बाबूने अपनी आँखों देखा। आज वह सुचरितासे बातचीत करनेका ढंग निकाल बारबार विफल प्रयत्न हुए हैं। दो एक बार उनके द्वारा स्पष्ट रूपसे बुलाई जाने पर सुचरिताने उनकी बात अनसुनी कर दी है, जिससे समास्थित

लोगोंके सामने हारान बाबूने अपनेको विशेष अपमानित समझा। इससे उनका मन प्रसन्न न था।

सुचरिताने ऊपर जाकर देखा कि हरिमोहिनी अपनी चीजोंको समेट गठरी बांधे इस भावसे बैठी है जैसे अभी कहीं जायगी। सुचरितने पूछा—मौसी यह क्या?

हरिमोहिनीने उसका कोई उत्तर न दे, रो कर कहा—सतीश कहाँ है, बेटी! एक बार उसे बुला दो।

सुचरिताने विनयके मुंहकी ओर देखा। विनयके कहा—इस घरमें मौसीका रहना सबको भारी मालूम होता है, इससे मैं इनको माँ के पास लिये जा रहा हूँ।

हरिमोहिनीने कहा—वहाँ से मैंने तीर्थ-यात्राका विचार किया है। मेरे सदृश अनाथोंका इस तरह किसीके घरमें रहना ठीक नहीं। मुझे कोई अधिक दिन तक अपने घरमें रहने देना क्यों पसन्द करेगा?

सुचरिता आप ही इस बातको कई दिनोंसे सोच रही थी। इस घरमें रहना मौसी के लिए अपमान है यह सुचरिता जान चुकी थी, इसलिए वह कोई उत्तर न दे सकी। चुप होकर उसके पास जा बैठी। सायङ्कालका अन्धकार घरमें छा गया है परन्तु अभी तक चिराग-बत्ती नहीं हुई है। हेमन्तके धुंधले आकाशमें कहीं-कहीं तारे उगे हुए दिखाई दे रहे थे। किसके नेत्रोंसे आंसू गिर रहे हैं, यह इस अंधेरेमें दिखाई न दिया।

जीने परसे ही सतीशका ऊँचे स्वरसे मौसीको पुकारने का शब्द सुन पड़ा। "क्या है बेटा? आओ" कहकर हरिमोहिनी झट उठ खड़ी हुई। सुचरिताने कहा—मौसी, आज रातको कहीं जाना ठीक न होगा, कल सबेरे की यात्रा ठीक होगी! बाबूजीको जानेकी सूचना दिये बिना तुम कैसे जा सकोगी? यह बड़ा अन्याय होगा।

विनयने वरदासुन्दरीके द्वारा किये गये हरिमोहिनीके अपमानसे उत्तेजित होकर इस बातको न सोचा था। उसने यही निश्चय किया था कि अब एक रात भी मौसीका इस घरमें रहना मुनासिब नहीं है। और

आश्रयके अभाव हा   मोहिनी सब कष्ट सहकर इस घरमें है, वरदासुन्दरीकी इस धारणाको दूर करनेके लिए वह हरिमोहिनीको यहाँ से ले जानेमें कुछ भी विलम्ब करना नहीं चाहता था। सुचरिताकी बात सुनकर उसे धकसे स्मरण हो आया कि इस घर में हरिमोहिनीका वरदासुन्दरीके साथ ही तो एकमात्र सम्बन्ध नहीं है। जिस व्यक्तिने इसका अपमान किया है, उसीको सबसे बड़ा समझना और जिसने बड़ी उदारताके साथ अपने सम्बन्धी की भाँति आश्रय दिया है, उसको भूल जाना उचित नहीं।

विनयने कहा—हाँ; यह ठीक है। परेश बाबूको बिना जताये इस तरह जाना न्याय-विरुद्ध है।

सुचरिता जानती थी कि सोने के पहले परेश बाबू अपनी उपासना सम्बन्धी कोई पुस्तक पढ़ा करते हैं। कई दिन ऐसे समय सुचरिता उनके पास जाकर बैठी और उसके अनुरोधसे परेश बाबूने उसे कुछ पढ़कर सुनाया है।

आज भी अपने सूने घरमें परेश बाबू चिराग जलाकर एमर्सनका ग्रन्थ पढ़ रहे थे। सुचरिता धीरे-धीरे उनके पास एक कुरसी पर जा बैठी परेश बाबूने पुस्तक रखकर एक बार उसके मुँहकी ओर देखा। सुचरिता का सङ्कल्प भङ्ग हुआ। वह जो बात कहनेके लिये आई थी, वह कह न सकी। सिर्फ इतना ही कहा—बाबूजी, क्या पढ़ते थे, मुझे पढ़कर सुनाइए।

परेश बाबू पढ़कर उसका गम्भीर आशय सुचरिता को समझाने लगे। जब रातके दस बज गये तब पढ़ना समाप्त हुआ। तब भी सुचरिता यह सोचकर कि सोनेके पूर्व परेश बाबूके मनमें किसी प्रकारका क्षोभ न हो, कोई बात कहे-सुने बिना ही धीरे-धीरे उठ खड़ी हुई और चल पड़ी परेश बाबूने उसे पुकार कर कहा—राधा।

वह लौट आई। परेश बाबू ने कहा—तुम अपनी मौसी की बात मुझसे कहने आई थीं?

परेश बाबू मेरे मन की बात समझ गये, यह जानकर वह विस्मित

हो बोली—हाँ, बाबूजी! आज अब यह बात रहने दीजिये, कल सबेरे कहूंगी।

सुचरिताके बैठने पर परेश बाबू ने कहा—तुम्हारी मौसीको यहाँ कष्ट होता है सो मैं समझता हूं। उनका धर्म-विश्वास और आचरण लावण्य की माँके ब्राह्मसंस्कारमें इतना अधिक आघात देगा यह मैं पहले न जान सका। अब देखता हूँ, वह उसे तकलीफ दे रही है, तब इस घरमें तुम्हारी मौसी कैसी रह सकेंगी।

सुचरिताने कहा— मौसी तो यहाँसे जानेके लिए तैयार हैं।

परेश बाबू ने कहा—मैं जानता हूँ, वे जायँगी। तुम्हीं दोनों उनके एकमात्र आत्मीय हो। तुम उनको भिखारिन की तरह बिदा कर सकोगी, यह मैं नहीं जानता। यह बात मैं कई दिनोंसे सोच रहा था।

मौसीका सङ्कट परेश बाबू जानते हैं और उसके लिए चिन्तित हैं, इसका कुछ भी अनुभव सुचरिताको न था। मेरी मौसीका कष्ट जाननेसे उन्हें दुःख होगा, इस भयसे इतने दिन तक बड़ी सावधानीसे चलती थी। भूलकर भी वह परेश बाबूके आगे इस विषयमें कुछ न बोलती थी। आज परेश बाबूकी बात सुनकर वह अचम्भेमें आ गई। उसकी आँखोंमें आँसू उमड़ आये।

परेश बाबूने कहा—तुम्हारी मौसीके लिए मैंने एक मकान ठीक कर रक्खा है।

सुचरिताने कहा— किन्तु वह तो—

परेश बाबू—भाड़ा नहीं दे सकेंगी! भाड़ा वे क्यों देंगी? भाड़ा तुम देना।

सुचरिता उनके कहने का मतलब न समझकर चुपचाप उनके मुँहकी ओर देखने लगी।

परेश बाबूने हँसकर कहा—तुम अपने ही मकानमें रहने देना, तब भाड़ा न देना पड़ेगा।

सुचरिता और भी आश्चर्य में डूब गई। परेश बाबूने कहा—तुम

नहीं जानती कि कलकत्तेमें तुम्हारे दो मकान हैं। एक तुम्हारा और एक सतीश का मृत्युके समय तुम्हारे पिता मुझे कुछ रुपया दे गये थे। उस रुपयेको किसी तरह बढ़ा कर उससे मैंने दो मकान मोल लिये हैं। इतने दिन तक वे भाड़े पर उठा दिये गये थे। भाड़े का रुपया जमा हो रहा था। तुम्हारे घर का भाड़ा कुछ दिनसे बन्द है। वह खाली पड़ा है। वहाँ रहने में तुम्हारी मौसी को कोई तकलीफ न होगी।

सुचरिताने कहा—वहाँ क्या वह अकेली रह सकेंगी।

परेश बाबूने कहा—तुम्हारे रहते वे अकेली क्यों रहेंगी?

सुचरिताने कहा—मैं अभी आपसे यह बात कहनेके लिए आई थी मौसी जानेके लिए तैयार थी। मैं सोच रही थी कि उसे इस तरह अकेली कैसे जाने दूँगी। इसीलिए आई हूँ। आप जो कहेंगे वही करूँगी।

परेश बाबूने कहा—इस घरके बगलमें जो यह गली है, इसके दो तीन घरके बाद ही तुम्हारा घर है। इस बरामदे पर खड़े होनेसे वह घर देख पड़ता है। वहाँ रहने से तुम लोगोंको अरक्षित अवस्था में रहनेका भय न होगा। मैं तुम्हारी खबर लेता रहूँगा।

सुचरिता के हृदय से मानो एक बहुत बड़ा बोझ उतर गया। घड़ीमें ग्यारह बज गये। फिर वे सोने को गये। सुचरिता भी अपनी मौसीके पास चली गई।

—:०:—

[४२]

दूसरे दिन सवेरे हरिमोहिनीने परेश बाबू के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया उन्होंने हड़बड़ाकर कहा—यह क्या ?

हरिमोहिनी ने आँखोंमें आँसू भर कर कहा—आपका ऋण मैं किसी जन्ममें भी न चुका सकूँगी। मेरे सदृश इतनी बड़ी अनाथाके लिये आपने उपाय कर दिया है। यह आपके सिवा और कोई नहीं कर सकता था। प्रार्थना करने पर भी मेरा कोई उपकार करनेवाला यहाँ नहीं। आपके ऊपर भगवान्‌की बड़ी कृपा है, इसीसे आप मेरे सदृश अभागिन के ऊपर भी कृपा कर सके हैं।

परेश बाबू बड़े संकुचित हो उठे। उन्होंने कहा—मैंने तो आपका कुछ उपकार नहीं किया है। कुछ किया है तो राधा रानी (सुचरिता) ने।

हरिमोहिनीने रोकर कहा—मैं जानती हूं, किन्तु राधा रानी भी तो आपकी ही है। उसका किया मैं आपका ही किया समझती हूँ। उसकी माँ जब चल बसी, उसके पिता भी न रहे, तब मैंने कहा कि लड़की बड़ी अभागिन है। किन्तु इसके बिगड़े नसीबको ईश्वर ऐसा अच्छा कर देंगे, यह मैं न जानती थी। ठौर-ठौर पर घूमती-फिरती आखिर जब मैं कलकत्ते आई और आपके दर्शन मिले तब मैंने समझा कि भगवान्‌ने मुझ पर भी दया की है।

"मौसी, माँ आपको लिवाने आई हैं।" विनयने घर में पैर रखनेके साथ यह बात हरिमोहिनीसे कहा—सुचरिताने उत्कण्ठित होकर—वे कहाँ हैं ?

विनयने कहा—नीचे आपकी माँ के पास बैठी हैं। सुचरिता झट नीचे चली गई।

परेश बाबूने हरिमोहिनीसे कहा—मैं आपके घरसे आपकी वस्तुओं को रख आता हूं।

परेश बाबूके चले जाने पर विनयने अचम्भेके साथ कहा—तुम्हारे घर की बात मैं नहीं जानता।

हरिमोहिनीने कहा—मैं भी तो नहीं जानती, केवल परेश बाबू जानते हैं। वह घर हमारी राधा रानीका है।

विनयने यह सुनकर कहा—मैंने सोचा था कि विनय संसारमें किसी के काम आवेगा, पर अब यह आशा भी जाती रही। अभी तक तो मुझसे माँकी कुछ सेवा बन नहीं पड़ी है, जो काम मुझे करना चाहिये उसे वे आप कर रही हैं। मौसीका भी कुछ काम न करके मैं उसीसे अपना काम कर लूँगा। मेरे नसीबमें केवल लेना ही लिखा है, देना नहीं।

कुछ देर बाद ललिता और सुचरिताके साथ आनन्दमयी आ पहुँची। हरिमोहिनीने कुछ आगे बढ़कर कहा—"भगवान् जब दया करते हैं तब किसी बातकी कमी नहीं रहती। बहन, आज तुम भी मिल गई।" यह कहकर उसे हाथ पकड़कर ले आई और चटाईके ऊपर बिठाया।

हरिमोहिनीने कहा—बहन, तुम्हारी चर्चा छोड़कर विनयके मुँहमें और कोई बात ही नहीं है।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—बचपनसे ही उसको यह रोग है वह जिस बातको पकड़ता है उसे शीघ्र नहीं छोड़ता। मौसीका नाम लेना भी अब शीघ्र ही शुरू होगा।

विनयने कहा—हाँ, यह होगा। यह मैं पहले ही कह रखता हूँ।

ललिताकी ओर देखकर आनन्दमयी मुसकुराती हुई बोली—जो वस्तु विनयके पास नहीं है उसका संग्रह करना वह जानता है, और संग्रह करके उसका आदर करना भी जानता है। तुम लोगोंको वह किस दृष्टिसे देख रहा है, यह भी मैं जानती हूँ। जिस बातको वह कभी

कल्पनामें भी नहीं ला सकता था, मानों उसे वह सहसा पा गया है। तुम लोगोंके पास उसके परिचय की घनिष्ठता होनेसे मुझे जितना हर्ष हुआ है वह मैं तुमसे क्या कहूँ। तुम्हारे इस घरमें विनयका जो इस तरह मन रम गया इससे उसका बड़ा उपकार हुआ है, इस बातको वह बखूबी समझता है और हृदयसे स्वीकार भी करता है।

ललिताने कुछ उत्तर देनेकी चेष्टाकी पर कुछ उत्तर न दे सकी। उसका मुंह लज्जासे लाल हो गया। सुचरिताने ललिताका सङ्कट देखकर कहा—विनयबाबू सबके हृदयका सद्भाव रखते हैं उसी लिए सब मनुष्योंका सद्भाव इनके पास आकर एकत्र होता है। यह इनमें विशेष गुण है।

विनयने कहा—तुम विनयको जितना बड़ा समझती हो उसकी उतनी बड़ी इज्जत संसारमें नहीं है। यह बात मैं तुमको समझाना चाहता हूँ, परन्तु मेरे मनमें इतना अधिक अभिमान है जिससे मैं समझा नहीं सकता, इसके आगे मैं अब कुछ नहीं बोल सकता। मेरी बात यहीं तक रही।

इसी समय वरदासुन्दरीने ऊपर आकर हरिमोहिनीकी ओर दृश्यपात तक न करके आनन्दमयीसे पूछा—आप हमारे घरकी बनी कोई वस्तु खा सकेंगी?

आनन्दमयीने कहा—खाने-पीनेमें क्या धरा है, हम आपके घरमें खानेसे क्या अजात होंगी? किन्तु आज नहीं, गोरा आ ले तब खाऊँगी।

आनन्दमयी गोराके परोक्षमें उसके विरुद्ध कोई काम कर न सकी।

वरदासुन्दरीने विनयकी ओर देखकर कहा—विनय बाबू तो यहाँ हैं मैं समझती थी, वे अभी तक नहीं आये हैं।

विनयने तुरन्त कहा—मैं जो आया हूँ सो आप समझती हैं कि बिना आपसे भेंट किये ही चला जाऊँगा?

वरदासुन्दरीने कहा—कल तो आप निमन्त्रित होने पर भी बिना भोजन किये चले गये। आज मालूम होता है, बिना निमन्त्रित ही भोजन करेंगे।

विनय—इसका तो मैं अत्यन्त लोभी हूँ। मासिकके अलावा ऊपरी लाभकी ओर खिंचाव अधिक होता है।

हरिमोहिनी मन ही मन विस्मित हुई। विनय इस घरमें खातापीता है। आनन्दमयी भी कुछ आचार विचार नहीं करती। इससे उसका मन कुछ उदास हुआ।

वरदासुन्दरीके चले जाने पर हरिमोहिनीने सङ्कोचके साथ पूछा—बहन, तुम्हारे स्वामी क्या—

आनन्दमयी—मेरे स्वामी कट्टर हिन्दू हैं।

हरिमोहिनीको अपार आश्चर्य हुआ। आनन्दमयीने उनके मनका भाव समझकर कहा—बहन, जब मैं समाज को श्रेष्ठ मानती थी तब समाजको मानकर ही चलती थी। किन्तु भगवान्ने मेरे घरमें एक ऐसी घटना कर दी जिससे मुझे समाजको छोड़ना पड़ा। उन्होंने जब स्वयं आकर मुझे जातिसे खारिज कर दिया तब मैं अब किससे डरूं!

हरिमोहिनीने इस कैफियतका अर्थ न समझकर पूछा—तुम्हारे स्वामी?

आनन्दमयी—इसके लिए वे मुझसे नाराज रहते हैं।

हरिमोहिनी—लड़के?

आनन्दमयी—लड़के भी खुश नहीं हैं। किन्तु उन्हें खुश करने से ही क्या होगा? बहन, मैं अपनी बात कहूँ? जो सर्वज्ञ हैं, वही समझेंगे।—यह कहकर आनन्दमयीने हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

हरिमोहिनीने समझा, शायद कोई पादरीकी स्त्री आनन्दमयी को किरिस्तानिन बना गई है। उसके मनमें बड़ी लज्जा उत्पन्न हुई।

—:०:—

सुचरिताके साथ ही लावण्यलता, ललिता और लीलावती सूनने लगीं। वे बड़े उत्साहके साथ सुचरिताका नया घर सजाने को गईं किन्तु उस उत्साहके भीतर गुप्त वेदनाके आँसू थे।

इतने दिन तक सुचरिता किसी न किसी ढङ्गसे परेश बाबूके छोटे-बड़े कितने ही काम कर दिया करती थी। कभी फूल दानीमें फूल सजाकर रखती; टेबलके ऊपर पुस्तकें सँवारकर रख देती और उनका बिछौना अपने हाथसे धूपमें सूखने को रख देती थी। नित्य स्नानके समय उनको समयका स्मरण करा दिया करती थी। इन कामोंको करके वह कभी अपने मनमें अभिमान न करती थी। सुचरिता आजकल जब परेश बाबूके कमरेका कोई साधारण काम करनेको आती थी तब वह काम परेश बाबू की दृष्टिमें बहुत बड़ा दिखाई देता था। और इससे उनके हृदयमें विशेष सन्तोष उत्पन्न होता था। यह काम अब दूसरे दिन दूसरे के हाथसे होगा, यह सोचकर सुचरिताकी आँखोंमें आँसू भर आते थे।

जिस दिन दो-पहरको भोजन करके सुचरिताके नये घर में जानेकी बात थी उस दिन सवेरे परेश बाबू ने अपने सूने कमरे में उपासना करनेके लिए जाकर देखा कि उनके आसनके आगेकी भूमिको फूलोंसे सजाकर सुचरिता वहीं, एक कोनेमें, उनके आनेकी प्रतीक्षा कर रही है।

उपासना समाप्त हो जाने पर जब सुचरिताकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे तब परेश बाबूने कहा—बेटी, रोती क्यों हो। पीछेकी ओर घूमकर तुम देखो, आगे का मार्ग तय करनेकी चेष्टा करो, सङ्कोच करनेकी आवश्यकता नहीं। जैसा समय आ पड़े, सुख या दुःख जो तुम्हारे सामने आ जाय, उन सबोंको चुप-चाप सह लिया करो; और अपनी शक्तिके अनुसार जहाँ तक हो सके अच्छा काम करो। मनमें खेदको कभी न आने दो। प्रसन्न रहना ही जीवनका मुख्य उद्देश है। ईश्वरको सम्पूर्ण रूपसे

आत्म समर्पण करके उन्हींको अपना एक मात्र सहायक समझो। इससे भूल होने पर भी लाभ के मार्गसे विचलित न हो सकोगी। और अपनेको पूर्ण रूप से ईश्वरको समर्पित न करके अन्यत्र मन लगाओगी तो तुम्हारे सब काम कठिन हो जायँगे। ईश्वर ऐसा ही करें जिसमें तुमको हमारे साधारण आश्रयकी आवश्यकता न हो।

उपासनाके बाद दोनोंने बाहर आकर देखा कि बैठनेके कमरेमें हारान बाबू प्रतीक्षा किये बैठे हैं। सुचरिताने आजसे किसीके विरुद्ध मनमें किसी तरहका विद्रोह भाव न रखनेका प्रण करके हारान बाबूको नम्रता-पूर्वक नमस्कार किया। हारान बाबूने अपनेको अत्यन्त दृढ़ करके गम्भीर स्वरमें कहा—सुचरिता, इतने दिन तक तुमने जिस सत्यका आश्रय किया था उससे आज पीछे हट रही हो। यह हम लोगोंके लिए बड़े शोकका अवसर है।

सुचरिताने कुछ उत्तर न दिया, किन्तु जो रागिनी उसके मनके भीतर शान्ति और दयाके साथ मिश्रित होकर बज रही थी उसमें कुछ बेसुरी आवाज आ पड़ी।

परेश बाबूने कहा—अन्तर्यामी भगवान् जानते हैं कि कौन आगे बढ़ रहा है और कौन पीछे हट रहा है। बाहरी बातोंका विचार करके हम लोग वृथा उद्विग्न होते हैं।

हारान बाबूने कहा—तो क्या आप कहना चाहते हैं कि आपके मन में कोई आशङ्का नहीं है? और आपसे पश्चात्ताप का भी कोई कारण नहीं है?

परेश बाबू ने कहा—हारान बाबू, काल्पनिक आशंकाको मैं मनमें जगह नहीं देता और अनुतापका कारण होना तभी मानूंगा जब मनमें अनुताप उत्पन्न होगा।

हारान०—यह जो आपकी कन्या ललिता अकेली विनय बाबू के साथ स्टीमर पर चली आई, क्या यह भी काल्पनिक है?

सुचरिताका मुंह क्रोधसे लाल हो गया। परेश बाबू ने कहा—हारान

बाबू, आपका मन किसी कारणसे उत्तेजित हो उठा है। इसलिए अभी इस सम्बन्धमें आपके साथ वार्त्तालाप करनेमें आपके प्रति अन्याय करना होगा।

हारान बाबू ने सिर उठाकर कहा—मैं किसी बातके जोशमें आकर कोई बात नहीं कह बैठता। मैं जो कहता हूं, उस सम्बन्धमें मुझे बोलने का पूर्ण अधिकार है। उसके लिए आप चिन्ता न करें। मैं आपसे जो कह रहा हूँ, वह मैं व्यक्तिगत भावसे नहीं कहता। मैं ब्राह्म-समाजकी ओरसे कहता हूं। न कहना अन्याय होगा, यह समझकर ही मैं यह कहता हूँ कि यदि आप आंख मूंदकर न चलते तो विनय बाबू के साथ जो ललिता अकेली चली आई, इस एक घटनासे ही आप समझ जाते कि आपका यह परिवार ब्राह्म-समाजके लङ्गरको तोड़कर बह जानेका उपक्रम कर रहा है। यह केवल आपके ही अनुताप का कारण न होगा, इससे सारे ब्राह्म समाज की अप्रतिष्ठा होगी।

परेश बाबूने कहा—किसीका कोई बाहरी व्यवहार देखकर ही निन्दा करता है, किन्तु विचार करने समय भीतर की बात देखनी होती है। केवल किसी घटनासे मनुष्यको दोषी मत बनाइए।

हारान बाबू ने कहा—यह घटना कुछ ऐसी-वैसी घटना नहीं है। आप इस घटनाकी बात सोचकर ही देखिए; आप ऐसे वैसे लोगोंको अपने घरमें आत्मीय भावसे ग्रहण करते हैं जो आपके घरके लोगोंको अपने समाजसे दूर ले जाना चाहते हैं। दूर ले ही तो गये, क्या यह आपको सूझता है?

परेश बाबू ने कुछ रुष्ट होकर कहा—आपकी सूझ विलक्षण है। आपके साथ मेरा मन कैसे मिलेगा?

हारान बाबू—सही है। नहीं मिलेगा। किन्तु मैं सुचरिताको ही साक्षी मानता हूँ। वही सच-सच कहे, कुछ दिनसे ललिताके साथ विनयका जो सम्बन्ध हुआ है वह क्या केवल बाहरी सम्बन्धमें है? क्या इस सम्बन्धमें आन्तरिक भाव नहीं पाया जाता? सुचरिता! तुम कहाँ चली? तुम्हारे

चले जानेसे काम नहीं बनेगा। इस बातका जवाब देना होगा। यह साधारण बात नहीं है।

सुचरिताने झिड़क कर कहा—साधारण हो चाहे न हो, इससे आपको क्या? इसमें आपको कुछ कहनेका अधिकार नहीं है।

हारान बाबूने कहा—अधिकार न रहने पर मैं चुप न बैठ रहता बल्कि इसका खयाल भी करता। समाजको तुम लोग भले ही न मानो किन्तु जब तक तुम लोग इस समाजमें हो तब तक समाज तुम लोगोंका विचार करेगा ही। तुम समाजके विरुद्ध कोई काम न कर सकोगी।

ललिता बवण्डरकी तरह घरमें प्रवेश करके बोली—यदि समाजने आपको विचारकके पद पर नियुक्त किया हो तो उस समाजसे बाहर हो जाना ही हम सबके लिए अच्छा होगा।

हारान बाबूने कुरसीसे खड़े होकर कहा—आपके आनेसे मैं बहुत प्रसन्न हुआ। आपके सम्बन्धमें जो नालिस दायर है उसका विचार आपके सामने ही होना ठीक है।

क्रोधसे सुचरिताकी भौंहें तन गईं। उसने कहा—हारान बाबू, आप अपने घरमें जाकर अपना इजलास करें गृहस्थके घरमें आकर आप बढ़ चढ़कर बोलें, उनकी निन्दा करें, आपके इस अधिकराको हम लोग किसी तरह नहीं मानेंगी। आओ बहन ललिता, बैठो।

ललिता जहाँकी तहाँ खड़ी रही। उसने कहा—सुनो बहन, मैं भागूँगी नहीं। हारान बाबूको जो कुछ कहना है, कहें। मैं सब सुन लेना चाहती हूँ। कहिए क्या कहते हैं?

हारान बाबू एकाएक रुक गये।

परेश बाबूने कहा—नहीं बेटी! आज सुरिता मेरे घरसे जायगी आज सबेरे-सवेरे मैं किसी तरहकी अशान्ति या कलह होने न दूँगा। हारान बाबू! आप बुद्धिमान् हैं। हमसे आज कितने ही अपराध क्यों न हो, आज आपको सब माफ करने होंगे।

हारान बाबू गम्भीर भाव धारण कर चुप बैठे रहे। सुचरिता जितना

ही उनको छोड़ना चाहती थीं, उतना ही बल करके वह इसको पकड़ रखना चाहते थे। उनको पूर्ण विश्वास था कि हम असाधारण नैतिक बलसे अवश्य ही जीतेंगे। अब भी उन्होंने हठ छोड़ दिया हो, यह भी नहीं। सुचरिताके प्रति उनका भाव नहीं है! अब उनके मनमें इस बातका सोच हुआ कि मौसीके साथ सुचरिता दूसरे मकानमें जायगी वहाँ उस पर मेरा जोर नहीं चलेगा इसी सोचसे वे बेचारे क्षुब्ध थे। इसीलिए आज अपने ब्रह्मास्त्रको खूब तेज कर लाये थे। आज सवेरे ही वे मिज़ाजको खूब कड़ा करके सब बातोंका फ़ैसला कर लेने को तैयार थे। आज सङ्कोचको मनसे हटाकर ही आये थे। किन्तु उनका विरुद्ध दल भी उसी प्रकार सङ्कोच दूर कर सकता है, ललिता और सुचरिता भी एकाएक तर्कसमे तीर निकालकर खड़ी होंगी, इसकी कभी उन्होंने कल्पना भी न की थी। वो जानते थे कि जब हम अपने नैतिक अग्निवाणको बड़े वेग से चलावेंगे तब हमारे विपक्षीका सिर नीचा हो जायगा। किन्तु ऐसा न हुआ अवसर भी हाथसे जाता रहा। किन्तु हारान बाबू हार माननेवाले न थे। उन्होंने मनमें कहा—सत्यकी जय होती है। पर यों ही तो जय होगी नहीं, इसके लिए लड़ाई करनी होगी। हारान बाबू कमर कसकर रणक्षेत्रमें प्रविष्ट हुये।

सुचरिताने हरिमोहिनीसे कहा—मौसी, मैं आज इन सबके साथ मिलकर भोजन करूंगी, तुम मनमें बुरा मत मानो।

हरिमोहिनी चुप हो रही। उसने मनमें विश्वास कर लिया था कि सुचरिता पूर्ण रूपसे मेरी हो गई, मैं उससे जो कहूँगी वही करेगी। विशेष कर जब सुचरिता अपनी सम्पत्ति के बल स्वाधीन होकर अपना घर सम्भालने चली है तब हरिमोहिनीको अब किसी बातका खौफ न रहेगा। वह सुचरिताको सोलह आने अपने पथ पर चला सकेगी। यही कारण है कि आज जब सुचरिताने आचार-विचार त्याग कर फिर सबके साथ इकट्ठी होकर भोजन करनेका प्रस्ताव किया तब यह बात हरिमोहिनी को अच्छी न लगी और वह चुप हो गई।

सुचरिताने उसके मनका भाव समझकर कहा—मैं तुमसे सच कहती हूं कि इससे ठाकुरजी प्रसन्न होंगे। मेरे उन्हीं अन्तर्यामी ठाकुर ने मुझे आज सबके साथ बैठकर भोजन करने का आदेश दिया है। उनकी बात न मानूँगी तो वे नाराज होंगे। मैं उनकी नाराजगीको तुम्हारे क्रोध की अपेक्षा अधिक डरती हूं।

जबसे हरिमोहिनी वरदासुन्दरी के द्वारा अपमानित होने लगी तब से सुचरिता ने उसके अपमान का अंश अपने ऊपर लेने के लिये उसका आचार ग्रहण किया था और आज जब उस अपमान से छुटकारा पाने का दिन उपस्थित हुआ तब सुचरिता उसका आचार न मानकर क्यों चल रही है, हरिमोहिनी इस बात को भली भांति नहीं समझ सकी। वह सुचरिता को समझा कर कोई बात न कहती थी। समझाना उसके लिये कठिन समस्या थी।

कुछ देर चुप रहकर उसने कहा—बेटी! मैं तुमसे एक बात कहती हूँ। तुम्हारे जीमें जो आवे करो, किन्तु इस दुसाध नौकरके हाथका पानी मत पियो।

सुचरिताने कहा—यह रामदीन बेहरा ही तो अपनी गाय का दूध दुहकर तुमको दे जाता है।

हरिमोहिनी ने नेत्र विस्फरित करके कहा—तुमने तो गजब किया! दूध और पानी एक हुआ।

सुचरिताने हँसकर कहा—अच्छा मौसी, रामदीन का छूआ जल आज मैं न पिऊँगी। किन्तु सतीश से तुम ऐसा करने को कहोगी तो वह ठीक इसका उलटा काम करेगा।

हरिमोहिनी—उसकी बात न्यारी है।

हरिमोहिनी जानती थी कि पुरुषों के आचार-विचार में संयम नियम की त्रुटि सहनी ही पड़ती है।

[४४]

हारान बाबूने प्रचण्ड रूप धारण कर रणक्षेत्रमें प्रवेश किया।

ललिताको अगिनबोट पर विनयके साथ आये आज प्रायः पन्द्रह दिन हो गये हैं। यह बात दो-चार मनुष्योंके कानमें जा चुकी है और धीरे-धीरे फैल रही है। ब्रह्म-समाजके हितैषी लोग पालकी गाड़ी करके परस्पर एक दूसरे के घर जाकर कह आये—आज कल जब ऐसी-ऐसी घटना होने लगी है तब ब्राह्म-समाजके भविष्यको घोर अन्धकारमें छिप गया समझना चाहिये। इसके साथ-साथ सुचरिता जो हिन्दू हुई है, और हिन्दू धर्मवाली मौसीके घर में रहकर नियम निष्ठाके साथ ठाकुरजी की सेवा करके दिन बिता रही है, यह बात भी घर-घरमें फैलने लगी।

बहुत दिनोंसे ललिता के मनमें एक कलह विवाद चल रहा था। वह नित्य रातको सोने के पहले कहती थी कि मैं कभी हार न मानूंगी और जागकर भी वह आँखें मलती हुई बोलती थी, चाहे जो हो, मैं कभी हार न मानूंगी, किसी तरह भी नहीं। यह मानसिक कलह और किसीके साथ नहीं केवल विनयके साथ थी। विनयकी चिन्ता उसके मनपर सम्पूर्ण रूपसे अधिकार किये बैठी थी। विनय नीचे बैठकर बातें कर रहा है, जानते ही उसका कलेजा उछलने लगता था। उसके मनकी सोची हुई सब बात छूमन्तरकी तरह उड़ जाती थी। विनय जहाँ दो दिन उसके घर न आया कि वह मारे सोच के मन ही मन पछाड़ खाने लगती थी। उसके ऊपर एक झूठ-मूठ का क्रोध और अपने ऊपर ग्लानि उत्पन्न हो आती थी।

एक दिन उसने परेश बाबूसे जाकर कहा—पिताजी! क्या मैं किसी कन्या पाठशाला में शिक्षा देनेका भार नहीं ले सकती?

परेश बाबू ने अपनी लड़की के मुँहकी ओर देखकर स्नेह-भरे स्वर में कहा—क्यों नहीं ले सकोगी बेटी ! किन्तु वैसा गर्ल्स स्कूल है कहाँ ?

ललिताने व्याकुल होकर कहा—क्या सचमुच पाठशालाएँ नहीं हैं ?

परेश बाबू ने कहा—कहीं देखने में तो नहीं आती।

ललिता—अच्छा, पिताजी ! क्या एक कन्या पाठशाला खोली नहीं जा सकती ?

परेश बाबू—क्यों नहीं खोली जा सकती ? परन्तु इसके लिए पूरा खर्च चाहिए और इसमें अनेक लोगों की सहायता की दरकार है।

ललिता जानती थी कि अच्छे काम की ओर चित्तका झुकाव होना ही कठिन है किन्तु उसके साधन-पथ में जो इतनी बाधाएँ हैं, यह वही पहले नहीं समझती थी। कुछ देर चुप-चाप बैठकर वह वहाँ से उठकर धीरे-धीरे चली गई। परेश बाबू अपनी लड़की के मानसिक दुःखका कारण ढूंढ़ने लगे। वे जब इस बात को सोचने लगे तब विनय के सम्बन्ध में जो हारान बाबू उस दिन कुछ कह गये थे वह भी उन्हें याद हो आया। उन्होंने लम्बी साँस लेकर अपने मन से पूछा—तो क्या मैंने भूल की है ? उसके सिवा कोई दूसरी लड़की होती तो विशेष चिन्ता का कारण न था, किन्तु ललिता के चरित्र को वे बहुत विशुद्ध मानते थे। छल प्रपञ्च किसे कहते हैं, यह तो वह जानती ही नहीं।

उसी दिन दोपहरको ललिता सुचरिताके घर गई। उसके घर में सजावटकी कोई चीज देखनेमें न आई। घरके भीतर दो चटाइयाँ बिछी थीं। उसी पर एक ओर सुचरिताका और दूसरी ओर हरिमोहिनीका बिछौना था। हरिमोहिनी चारपाई पर नहीं सोती हैं इस कारण सुचरिता भी उसके साथ एक कमरेमें नीचे बिछौना करके सोती है। दीवाल पर परेश बाबू का चित्र टंगा है। उस कमरेसे सटी कोठरीमें सतीशकी चारपाई बिछी है और एक कोनेमें एक छोटी टेबल पर दावात-कलम कापी-स्लेट और किताबे आदि लिखने-पढ़नेका सामान जहां-तहां बिखरा पड़ा है। एक आध कापी और किताब टेबलके नीचे भी गिरी पड़ी है।

भोजन के अनन्तर हरिमोहिनी अपनी चटाई पर लेटी है और नींद आनेकी बाट जोह रही है। सुचरिता अपने खुले केशोंको पीठकी ओर करके चटाई पर बैठी है और सिर नीचे किये, गोदमें तकिया रखकर हाथ में किताब लिये बड़े ध्यान से कुछ पढ़ रही है।

ललिताको एकाएक घरमें आते देख सुचरिताने मानों लजाकर झट हाथकी किताबको बन्द कर नीचे रख दिया। फिर लज्जाको लज्जासे ही दबाकर उस किताबको हाथमें ले लिया। यह किताब गोराके लेखोंके संग्रह के सिवा और कुछ न थी।

हरिमोहिनी झट उठ बैठी और बोली—आओ बेटी, ललिता, इधर आकर बैठो। तुम्हारा घर छोड़नेसे सुचरिता पर जो बीत रही है, सो मैं जानती हूं। यहाँ उसका जरा भी जी नहीं लगता। जी बहलाने ही के लिए वह किताब लेकर पढ़ने बैठती है। अभी मैं पड़ी-पड़ी यही सोच रही थी कि तुममें से कोई यहाँ आती तो अच्छा होता—इतनेमें तुम यहाँ आ ही तो गई। बेटी, तुम बहुत दिन जीओगी।

ललिताके मनमें जो बातें थीं, उन्हें सुचरिता के पास बैठकर सुनाना उसने आरम्भ किया। उसने कहा—बहन, इस मुहल्लेमें यदि लड़कियोंके लिए एक स्कूल खोल दिया जाय तो कैसा हो?

हरिमोहिनीने विस्मित होकर कहा—इसकी बात तो सुनो। क्या तुम स्कूल खोलोगी?

सुचरिता बोली—स्कूल कैसे जारी होगा? कोई सहायता भी तो करे। ऐसा कोई देखनेमें नहीं आता जो हम लोगों को इस कार्य में सहायता देगा। बाबूजीसे इस बात का जिक्र किया था?

ललिता—हम और तुम दोनों मिलकर पढ़ा सकेंगी। प्रार्थना करने पर शायद बड़ी बहन भी राजी हो जाय।

सुचरिता—सिर्फ पढ़ाने ही की बात तो नहीं है। किस प्रकार स्कूलका काम करना होगा, उसके लिये सब नियम चाहिए। एक मकानका प्रबन्ध

करना होगा। विद्यार्थिनियाँ चाहिए और खर्चके लिए कुछ रुपये भी चाहिए। ये सब काम क्या योंही हो जायँगे।

ललिता—बहन, यह कहनेसे कुछ न होगा। ऐसा कौन काम है जो यत्न करनेसे नहीं हो सकता। स्त्री होकर जन्म लिया है तो क्या इनसे मुँह छिपाकर रहेंगी, क्या हम सब संसारका कोई काम न करेंगी?

ललिताके मनमें जो दुःखका तार था, वह सुचरिताके हृदयमें बज उठा। वह कुछ जवाब न देकर मन ही मन सोचने लगी।

ललिताने कहा—मुहल्लेमें तो कितनी ही बे पढ़ी-लिखी लड़कियाँ हैं, हम लोग अगर उनको यों ही पढ़ाना चाहें तो वे बेहद, खुशी होंगी। उनमें जो पढ़ना चाहेंगी उन्हें तुम्हारे इस घरमें लाकर हम-तुम दोनों मिलकर पढ़ा दिया करेंगी। इसमें खर्च की क्या जरूरत है?

इस घरमें मुहल्लेकी लड़कियोंको एकत्र करके पढ़ानेकी बात सुनकर हरिमोहिनी उद्विग्न हो उठी। वह लोगों की भीड़-भाड़से बचकर एकान्तमें पूजा पाठ करके शुद्ध आचार विचारसे रहना चाहती थी। इसलिए वह ठाकुरजीकी सेवामें व्याघात पहुंचनेकी सम्भावनासे आपत्ति करने लगी।

सुचरिताने कहा—मौसी, तुम डरो मत; यदि लड़कियाँ जुटेंगी तो हम उन्हें नीचेके कमरेमें ही पढ़ा लिखा लेंगी। तुम्हारे इस ऊपरवाले कमरेमें हम उत्पात करने न आवेंगी। सुनो ललिता बहन, यदि पढ़नेवाली लड़-कियाँ मिलें तो मैं यह काम करने को राजी हूँ।

ललिता—अच्छा, एक बार यत्न करके देखूँगी।

हरिमोहिनी बार-बार कहने लगी—सभी बातोंमें तुम लोग किर-स्तानोंकी नकल करोगी तो कैसे चलेगा? गृहस्थके घरकी लड़कियोंको स्कूलमें पढ़ते मैंने नहीं देखा।

परेश बाबूके छतके ऊपर समीपवर्ती घरोंकी छत परकी स्त्रियोंमें परस्पर वार्तालाप होता था। इस परस्परकी बात-चीतमें बड़े विस्मयका विषय यह था कि पासवाले घरकी स्त्रियाँ इस घरके लड़कियोंकी जवानी

में भी, अब तक शादी न होने पर आश्चर्य करती और प्रायः रोज ही प्रश्न पर प्रश्न करती थीं।

इस छतके मित्रत्व विस्तारमें सबकी अपेक्षा लावण्यलता ही विशेष उत्साहित थी। दूसरेके घरका व्यावहारिक इतिहास जाननेकी उसे बड़ी चाह थी। उसके लिए यह एक विशेष कुतूहलका विषय था पड़ोसियोंके घरका नित्य नया समाचार वायुकी सहायतासे उसके कानोंमें आ जाता था। मानो सुननेका उसे एक रोग सा हो गया था।

ललिताने अपने सङ्कल्पित गर्ल्स स्कूलके लिये लड़कियोंके संग्रह करने का भार लावण्यको सौंपा। लावण्यने जब हर एक छतवाली स्त्री से इस प्रस्तावकी घोषणा कर दी तब बहुतेरी लड़कियाँ उत्साहित हो उठीं। ललिता प्रसन्न होकर सुचरिताके घरके निचले खण्डको चूनेसे पोतवाकर खूब झाड़ बुहारकर साफ करवाने लगी।

किन्तु उसका वह सजा सजाया स्कूलका घर सूना ही रह गया! पड़ोसके घरकी लड़कियोंके अभिभावक यह सुनकर कि हमारे घरकी लड़कियों को फुसलाकर पढ़ानेके बहाने ब्राह्म-समाजमें ले जानेका प्रस्ताव हो रहा है, अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे। जब उन्होंने सुना कि परेश बाबूकी लड़कियों के साथ हमारे घरकी बहू बेटियाँ छत पर जाकर बात-चीत करती हैं तब उन्होंने उन सबों को ऊपर जाने की एक दम मनाही कर दी और ब्राह्म पड़ोसी की लड़कियों के साधु सङ्कल्प पर असाधु भाषा का प्रयोग किया। बेचारी लावण्यने नित्य नियमानुसार हाथ में कंघी लेकर अपनी छत पर जाकर देखा कि पास वाली छतों पर नवयुवतियों के बदले आज बूढ़ी बूढ़ी स्त्रियाँ आ जुटी हैं।

ललिता इतने पर भी बाज न आई। उसने कहा—बहुतेरी गरीब ब्राह्म-बालिकाओं का फीसवाले स्कूलोंमें जाकर पढ़ना कठिन है, इसलिए उनको मुफ्त पढ़ाना स्वीकार करने से उनका विशेष उपकार हो सकता है।

इस विचारसे वह विद्यार्थिनियोंकी खोज में स्वयं लग पड़ी और सुधीरको भी लगा दिया।

उस समय परेश बाबूके घरकी लड़कियोंके पढ़ने-लिखनेका यश दूर-दूर तक फैल गया था ! यहाँ तक कि वह यश सत्यका भी अतिक्रम कर गया था। इसलिए कितने ही गरीब लड़कियोंके माँ-बाप खुश हो उठे कि वे ही हमारी लड़कियों को बिना फीसके पढ़ावेंगी।

पहले पाँच छः लड़कियोंको लेकर हीं ललिताने स्कूल जारी कर दिया। इस स्कूलके क्या क्या नियम होने चाहिये, कब क्या पढ़ाना होगा, इस विषयमें परेश बाबूसे परामर्श तक लेनेका अवसर ललिताको न मिला। वह एकाएक इस काममें प्रवृत्त हो गई। यहाँ तक कि सालके आखीरमें इम्तिहान हो जाने पर लड़कियोंको कैसा पुरस्कार देना चाहिए इस विषय पर लावण्य के साथ ललिता तर्क-वितर्क करने लगी। ललिता पुरस्कार या पाठके लिए जिन पुस्तकों का नाम लेती थी उन्हें लावण्य पसन्द न करती थी और इस विषयमें लावण्य जो कुछ कहती थी, यह ललिताको पसन्द न आता था। लड़कियोंकी परीक्षा कौन लेगा, इस पर भी बहस हुई। लावण्य यद्यपि हारान बाबू को जी. से पसन्द न करती थी तथापि वह उनके पाण्डित्य से परिचित थी और उनकी विद्या का सुयश सर्वत्र ख्यात है यह वह जानती थी। हारान बाबू उस पाठशाला के परीक्षक या निरीक्षक नियुक्त हों तो उस पाठशाला का विशेष नाम होगा, इस विषय में उसे कुछ भी सन्देह न था किन्तु ललिताने इस बातको एकदम अस्वीकार कर दिया।

दो ही तीन दिनके भीतर उसकी छात्रियों की संख्या घटते-घटते क्लास खाली हो गया। ललिता अपने सूने क्लासमें बैठकर लड़कियोंके आने को बाट जोहने लगी। किसीके पैरों की आहट सुनकर वह किसी छात्रीके आने को आशङ्का से चकित हो उठती थी। इस प्रकार जब दो-पहर बीत गया तब उसने समझा कि किसीने विघ्न डाला है।

पासमें जो छात्री रहती थी उसके घर ललिता गई। छात्री आँखोंमें आँसू भरकर रोती हुई सी बोली—माँ मुझको जाने नहीं देती हैं। उसकी

माँ ने कहा—'वहाँ जानेमें अनेक बाधाएँ हैं। क्या है, यह स्पष्ट नहीं बताया। ललिता बड़ी मानिनी है। वह दूसरी ओर अनिच्छाका लेशमात्र देखनेसे न हठकर सकती है और न कारण ही पूछ सकती है। उसने कहा—अगर बाधा है तो मत भेजो।

उसके बाद ललिता जिस घर में गई वहाँ यही बात सुनी कि सुचरिता अब हिन्दू हो गई है, वह जाति-पाँति मानती है, मूर्ति पूजती है, उसके घरमें जानेसे लड़कियोके चित्त पर उसका प्रभाव पड़ सकता है।

ललिताने कहा—अगर यही एक मात्र उज्र हो तो मेरे ही घर में स्कूल होगा।

किन्तु इससे भी आपत्तिका खण्डन न हुआ। इसमें कुछ और भी गाँठ लगी है। ललिताने अब और छात्रियोंके घर जाना उचित न समझ सुधीरको बुलाकर पूछा—सुधीर, सच-सच बतलाओ, क्या मामला है? क्यों लड़कियों का आना एकाएक बन्द हो गया?

सुधीर—हारान बाबू तुम्हारे इस स्कूल के विरुद्ध हो गये हैं। वह नहीं चाहते कि यह स्कूल चले।

ललिता—सुचरिता बहन के घर ठाकुरजी की पूजा होती है इसी से?

सुधीर—सिर्फ इतना ही नहीं।

ललिता ने अधीर होकर कहा—और क्या! कहते क्यों नहीं?

सुधीर ने कहा—बहुत बातें हैं।

ललिता—शायद मैं अपराधिनी समझी गई हूँ।

सुधीर चुप हो रहा। ललिताने क्रोध से मुँह लाल करके कहा—यह स्टीमरके द्वारा मेरी उस जल-यात्रा का दण्ड है। यदि मैंने वह अविचारका काम किया तो अच्छा काम करके प्रयाश्चित करने का मार्ग हमारे समाजमें एकबारगी बन्द मालूम होता है? क्या मेरे लिये सभी शुभ कर्म इस समाज में निषिद्ध हैं? मेरी और मेरे समाजकी आध्यात्मिक उन्नति का तुम लोगोने क्या यही मार्ग ठीक किया?

सुधीर ने बात को कुछ मुलायम करनेके अभिप्राय से कहा—विनय बाबू आदि कहीं इस विद्यालयके साथ सम्मिलित न हो पड़ें; इसीका भय वे लोग करते हैं ?

ललिताने क्रोध से आग बबूला होकर कहा—भय नहीं, समाजका भाग्य मानना चाहिये। योग्यता में विनय बाबू के साथ बराबरी करनेवाले कितने आदमी ब्रह्म-समाजियों में हैं ?

सुधीर ने ललिताके क्रोध से संकुचित होकर कहा—यह तो सही है। किन्तु विनय बाबू तो—

ललिता—यही न कहोगे कि वे ब्राह्म-समाज के अन्तर्गत नहीं हैं। इसीसे ब्राह्म-समाज उनको दण्ड देगा। ऐसे समाजको मैं गौरवास्पद नहीं समझती।

छात्रियोंको एकाएक अन्तर्ध्यान होते देख सुचरिता समझ गई थी कि ऐसा क्यों हुआ है, किसके द्वारा यह कुचक्र चल रहा है।

सुधीर के साथ बातें करके ललिता सुचरिता के पास गई और बोली—कहो बहन, कुछ सुना है ?

सुचरिताने मुसकुराकर कहा—सुना तो नहीं है किन्तु जानती सब हूँ।

ललिता ने कहा—क्या यह सब सहने की बात है ?

सुचरिता ने ललिता का हाथ पकड़ कर कहा—सहनेमें क्या मानहानि है ? पिताजी कैसे सहनशील हैं सब बातों को वे कैसे सह लेते हैं।

ललिता—बहन मैं तुम्हारी बात काट नहीं सकती, किन्तु मेरे मन में कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई बात सह लेना एक तरह से अन्याय को स्वीकार करना है।

सुचरिताने कहा—तुम क्या करना चाहती हो सो कहो।

ललिता—मैं क्या करूँगी इस पर मैंने अभी तक ध्यान नहीं दिया है। मैं यह नहीं बता सकती कि मैं क्या करूँगी परन्तु कुछ करना ही होगा। हम लोगो के सदृश कर्तव्य परायण स्त्रियों के पीछे जो लोग ऐसे खोटे भावमें पड़े हैं, वे अपने को चाहे जितना बड़ा क्यों न मानें परन्तु

वास्तव में वे नीच हैं। वे भले ही उत्पात मचावें मैं उनसे हार माननेवाली नहीं। कभी नहीं, किसी तरह नहीं। इसके लिये जो उनके जी में आवे करें।—यह कहते ही ललिता ने जोर से जमीन पर पैर पटका।

सुचरिता कुछ उत्तर देकर धीरे-धीरे ललिता के हाथ पर हाथ फेरने लगी कुछ देर पीछे बोली ललिता बहन, एक बार बाबूजी से पूछ देखो वे क्या कहते हैं ?

ललिता ने खड़ी होकर कहा—मैं अभी उनके पास जाती हूँ।

ललिताने अपने घरके फाटकके पास आकर देखा, विनय सिर झुकाये बाहर जा रहा है। ललिताको आते देख वह कुछ देर तक खड़ा हो रहा। ललिताके साथ मैं दो एक बातें करूँ या नहीं इस बातको वह मन ही मन सोचने लगा। किन्तु उसने अपनेको रोक ललिताके मुँहकी ओर देखे बिना ही उसे नमस्कार किया और सिर झुकाये ही झट चल दिया।

ललिताके हृदयमें मानों आगकी तर्पी बर्छी चुभ गई! वह बड़ी तीव्र गतिसे फाटक पार करके एकाएक अपनी माँ के कमरेमें गई। उसकी माँ उस समय टेबलके ऊपर एक लम्बी जमा खर्च की बही खोलकर बड़े ध्यान से कोई हिसाब करने की चेष्टा कर रही थी।

ललिता एक कुर्सी खींचकर टेबिलके पास बैठ गई तो भी वरदासुन्दरीने सिर न उठाया। ललिताने कहा—माँ!

वरदासुन्दरी—"बैठो बेटी, मैं यही—देखो बड़ा देरने —"यह कह कर वह बही के ऊपर और भी झुक रही।

ललिता ने कहा—मैं तुमको विशेष कष्ट न दूँगी सिर्फ एक बात जानना चाहती हूँ। विनय बाबू आये थे!

वरदासुन्दरी बहीकी ओर नजर किये ही बोली हाँ।

ललिता—उनके साथ तुम्हारी क्या बात-चीत हुई?

वरदासुंदरी—बहुत कुछ बातें हुईं।

ललिता—मेरे सम्बन्धमें कुछ बात हुई है?

वरदासुन्दरीने कहा—हाँ बेटी! हुई थी। जब देखा कि बात दिनों

दिन बढ़ती जा रही है, समाज के लोग चारों ओर निन्दा कर रहे हैं तब लाचार होकर उन्हें सावधान कर देना पड़ा।

लज्जासे ललितका सिर झुक गया। उसका कलेजा धड़कने लगा। उसने पूछा—क्या पिताजी ने विनय बाबू को यहाँ आने से मना कर दिया है?

वरदासुन्दरी—वे इन बातोंको थोड़े ही सोचते हैं? यदि सोचते तो शुरूसे ही ऐसा क्यों होने पाता?

ललिता—क्या हारान बाबू यहाँ आ सकेंगे!

वरदासुन्दरीने भौहें तानकर कहा—सुनो तो इसकी बात! हारान बाबू क्यों नहीं आवेंगे?

ललिता—तो विनय बाबू क्यों नहीं आवेंगे!

वरदासुन्दरीने फिर वही हाथमें लेकर कहा—ललिता, मैं तुमसे नहीं जीत सकती। अभी जाओ, मेरा जी मत जलाओ। मुझे बहुत काम है।

ललिता जब दोपहरको सुचरिताके घर स्कूलकी तैयारी करने गई थी तब वह अच्छा अवसर पा वरदासुन्दरीने विनयको बुलाकर अपना वक्तव्य कह सुनाया था। उसने सोचा था कि ललिताको इसकी खबर ही न मिलेगी। जब उसकी कलई इस तरह खुल पड़ी तब वह नई विपत्ति की आशङ्का करके डर गई। उसने समझा कि अब इस विरोधकी शान्ति शीघ्र न होगी और सहज ही इसका निबटेरा भी न होगा। अपने व्यवहार ज्ञान-हीन पतिके ऊपर उसका सब क्रोध उबल पड़ा। ऐसे अबोध पुरुषके साथ घरका काम चलाना स्त्रीके लिए बड़ी विडम्बना है।

ललिता अपने अशांत चित्तको लेकर वायुवेगसे चल पड़ी। नीचे के कमरेमें बैठे परेश बाबू चिट्ठी लिख रहे थे। वहाँ जाकर एकदम वह पूछ बैठी—पिताजी,क्या विनय बाबू हम लोगोंके साथ मिलनेके पात्र नहीं हैं?

प्रश्न सुनते ही परेश बाबू घरकी अवस्था को समझ गये। उनके घरके लोगोंके विषयमें उनके समाजमें जो आन्दोलन मच रहा है, वह परेश बाबू

से छिपा न था इसके लिए उन्हें कभी-कभी बड़ी चिन्ता करनी पड़ती है। विनयके प्रति ललिताके मनका भाव खिंच गया है, इस सम्बन्धमें यदि उनके मनमें सन्देह न होता तो वे बाहरकी बात पर कुछ भी ध्यान न देते! किन्तु विनयके ऊपर यदि यथार्थमें ही ललिताका अनुराग उत्पन्न हुआ तो ऐसी अवस्थामें क्या करना उचित है, यह प्रश्न वे कई बार अपने मनसे पूछ चुके हैं। जबसे उन्होंने खुल्लमखुल्ला ब्राह्म-धर्मकी दीक्षा ली है। तबसे यही पहले पहल उनके घर में एक संकटका समय उपस्थित हुआ है। इसलिए एक ओर उन्हें समाजका भय भीतर ही भीतर कष्ट दे रहा है और दूसरी ओर उनकी समस्त चित्तवृत्ति सिमट कर उनसे कह रही है कि ब्राह्मधर्म-ग्रहण के समय जैसे एक मात्र ईश्वरकी ओर दृष्टि रखकर ही मैं कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ हूँ, सत्य को ही पुत्र-सम्पत्ति-समाज आदि सबके ऊपर मानकर यह जीवन चिरकाल के लिए धन्य हो चुका है वैसे ही अब भी यदि कठिन परीक्षाका दिन आ गया है तो उसी सत्यकी ओर लक्ष्य रखकर मैं उत्तीर्ण हूँगा। ललिताके प्रश्नके उत्तरमें परेश बाबूने कहा—विनयको तो मैं बहुत अच्छा समझता हूँ। उसकी जैसी ही विद्या और बुद्धि है वैसा ही चरित्र भी उत्तम है।

कुछ देर चुप रहकर ललिता बोली—गौर बाबूकी माँ इधर दो दफे घर आई हैं। मैं सुचरिता बहन के साथ उनके घर जाना चाहती हूँ।

परेश बाबू सहसा कोई उत्तर न दे सके। वे बखूबी जानते थे कि जब हमारे घरकी आलोचना ब्राह्म-समाज में सर्वत्र हो रही है तब इस प्रकार वहाँ आने जाने से निन्दा और भी बढ़ जायगी। किन्तु उनकी आत्मा बोल उठी कि जब तक यह अन्याय नहीं है तब तक मैं रोक न सकूँगा। उन्होंने कहा—अच्छा, जाओ! मुझे काम है नहीं तो मैं भी तुम्हारे साथ चलता।

-:०:-

[४५]

स्वप्नमें भी विनयको इस बातकी आशंका न थी कि इष्ट मित्र और अतिथि की भाँति जहाँ मैं नित्य बेखटके जाता आता हूँ वहाँ एक ऐसा सामाजिक ज्वालामुखी पहाड़ छिपा है जो किसी समय भयङ्कर गोले बरसावेगा। जब वह पहले, आरम्भ में परेश बाबूके घरमें उनके परिवार के लोगोंसे मिलने जाता था तब उसके मनमें बड़ा संकोच होता था। उसे यह ठीक-ठीक मालूम न था कि मेरे अधिकारकी सीमा कहाँ तक है, इसलिए वह फूँक-फूँककर पैर रखता था। उसके जी में बराबर डर लगा रहता था कि मुझसे कोई काम अनुचित न हो पड़े। क्रमशः जब उसका भय दूर हो गया तब उसके मन से सब तरहकी झिझक हट गई। आज जब उसने एकाएक यह बात सुनी कि मेरे व्यवहार से ललिता को समाजके लोगोंके सामने निन्दित होना पड़ा है तब विनयका माथा ठनका।

एक दिन दोपहर-को वरदासुन्दरीने चिट्ठी लिखकर विनयको बुलाकर पूछा—विनय बाबू, आप तो हिन्दू हैं? विनयके 'हाँ' कहने पर फिर उसने पूछा—हिन्दू समाजको तो आप छोड़ न सकेंगे? विनयके इसे असम्भव बताने पर वरदासुन्दरीने कहा—"तो क्यों अपने"—इस "क्यों" का कोई उत्तर विनय के मुँह में न आया। वह अपराधी की भाँति सिर नीचा किये बैठा रहा। उसने समझा मानो मेरी चोरी पकड़ी गई। मेरी एक ऐसी बात सब लोगोंके सामने जाहिर हो गई है, जिसे मैंने सूर्य, चन्द्र और वायु से भी छिपा रखना चाहा था। वह बार-बार इसी बातको सोचने लगा, परेश बाबू क्या कहते होंगे, ललिता अपने मनमें क्या कहती होगी और सुचरिता ही मुझे कैसा समझती होगी।

इसके बाद परेश बाबूके कोठेका दरवाजा पार करते ही उसने ललिताको देखा, जिससे उसकी इच्छा हुई कि ललिता से इस अन्तिम

समय मिल लूँ और विदा कर उसके आगे अपमानका बोझ सिर पर लेकर पूर्व परिचयके सम्बन्ध सूत्र को अच्छी तरह तोड़कर हो जाऊँ। किन्तु किस तरह इसमें सफलता होगी, इसका एक भी उपाय उसे न सूझा। इसने वह ललिताके मुँहकी ओर देखे बिना ही चुपचाप हाथ जोड़कर चला गया।

घरसे बाहर निकल कर उसका मन इस तरह छटपटाने लगा जैसे पानीसे बाहर सूखी धरती पर मछली आ पड़ी हो। वह जिधर जाता है उधर ही अपने को निराधार पाता है। मानों उसके जीवन का सहारा किसी ने छीन लिया हो। उसे सारा संसार अन्धकारमय दीखता है।

विनय स्वप्नावस्थित की भाँति चलते-चलते आनन्दमयीके घर आ पहुँचा। किन्तु वहाँ उसे न पाया। तब वह छतों के ऊपर उस सूने कोठेमें गया जिसमें गोरा सोता था।

छतके ऊपर कपड़े सूखने को डाले गये थे। तीसरे पहरको, धूप कम होने पर जब आनन्दमयी उन्हें उठाने आई तब गोरा के कोठेमें विनय को देखकर वह अचम्भे में आ गई। आनन्दमयीने झट उसके पास आकर उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहा—विनय, तुम्हारा मुँह क्यों सूख गया है? तुम ऐसे उदास क्यों दीखते हो? ठीक ठीक कहो बेटा।

विनय उठ बैठा और बोला—माँ, मैं जब पहले परेश बाबूके घर जाने-आने लगा तब गोराको मेरा वहाँ जाना-आना अच्छा न लगता था, वह मुझ पर क्रोध करता था उसके क्रोधको मैं तब अयुक्त समझता था, किन्तु उसका क्रोध अयुक्त नहीं था, मेरी ही मूर्खता थी।

आनन्दमयीने मुस्कुराकर कहा—तू तो मेरा चतुर लड़का है। इसीसे मैं तुझसे कभी कुछ नहीं कहती। अब बीच में तुमने अपने भीतर मूर्खता का कौन सा लक्षण देखा?

विनयने कहा—माँ; हमारा समाज और समाजोंसे एकदम जुदा है, इस बात को मैं कभी न सोचता था। उन सबोंके बन्धुत्व व्यवहार और भेंट मुलाकातसे मुझे बड़ा आनन्द होता था और कुछ उपकार भी जान पड़ता था। इसीसे मैं उनके पास एकदम खिंच गया था। किन्तु इस

बातको मैंने एक बार भी कभी न सोचा था कि वह घनिष्टता किसी दिन मेरे लिए विशेष चिन्ताका कारण होगी।

आनन्दमयी—तुम्हारी बात सुनकर अब भी तो मेरे मनमें किसी चिन्ता का उदय होता नहीं।

विनयने कहा—माँ, तुम नहीं जानती कि मैं समाजमें उन सबोंके प्रति एक भारी अशान्ति फैलाने का अपराधी हुआ हूँ। लोगोंने इस प्रकार निन्दा करना आरम्भ कर दिया है कि मैं अब वहाँ जाने योग्य नहीं हूँ—

आनन्दमयी बोली—गोरा एक बात बार-बार मुझसे कहता था, वह मुझे खूब याद है। वह कहता था कि जहाँ भीतर किसी जगह कोई अन्याय छिपा है, वहाँ बाहर शान्ति रहने पर भी अमङ्गल की आग सुलगती रहती है और वह किसी दिन भभककर अवश्य हानि पहुँचाती है। यदि उनके समाजमें अशान्ति फैली है तो तुम्हें अनुताप करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। देखना, इससे अच्छा ही फल होगा। हाँ तुम्हें अपना व्यवहार शुद्ध रखना चाहिए।

इसी बातका तो विनयके मनमें भारी खटका था। मेरा अपना व्यवहार-शुद्ध है या नहीं, यह ठीक ठीक उसकी समझमें न आता था। इसका फैसला वह आप न कर सकता था। ललिता जब अन्य समाज की है, उसके साथ विवाह होना जब सम्भव नहीं है तब उस पर विनयका अनुराग होना ही, एक गुप्त पापकी तरह, उसे सन्ताप दे रहा था और इस पाप के दुस्तर प्रायश्चित्तका जो समय उपस्थित हुआ है, इस बातको सोचकर वह और भी व्याकुल हो रहा था।

विनय सहसा बोल बोल उठा— मां, शशिमुखीके साथ जो मेरे विवाह का प्रस्ताव हुआ था वह हो जाने ही से अच्छा होता। जहाँ मेरा अधिकार है वहीं किसी तरह मेरा बद्ध हो रहना उचित है।

आनन्दमयीने हंसकर कहा—समझ गई; तुम शशिमुखी को अपने घरकी वहू बनाकर नहीं, किन्तु उसे घरकी साँकल बनाकर रखना चाहते हो।

इसी समय दरवानने आकर खबर दी, परेश बाबूके घर की दो स्त्रियाँ आई हैं। सुनते ही विनयकी छाती धड़क उठी। उसने मनका मुझको सावधान करने ही के लिए वे दोनों आनन्दमयीसे शिकायत करने आई हैं। उसने खड़े होकर कहा—तो मैं अब जाता हूँ।

आनन्दमयीने झट खड़ी हो उसका हाथ पकड़कर कहा—विनय, अभी मत जाओ। नीचेके कमरे में बैठो।

नीचे जाते समय विनय यों मन ही मन कहने लगा—इसकी तो कोई आवश्यकता न थी। जो हो गया सो हो गया। मैं तो मर जाने पर भी अब वहाँ नहीं जा सकता। अपराधका उत्ताप जब आग की तरह एका-एक हृदय में धधक उठता है तब उस उत्तापसे जल मरने पर भी अप-राधीकी वह शोकाग्नि शीघ्र नहीं बुझती।

सड़कके सामने नीचे गोरा की जो बैठक थी उसमें जब विनय जारहा था उसी समय महिम अपनी तोंदको अचकनके बटन बन्धनसे मुक्त करते-करते आफिससे अपने घर लौट आया। उसने विनयका हाथ पकड़कर कहा—वाह! विनय बाबू तो भले मौके पर मिल गये। मैं तुमको कई दिनों से खोज रहा था।—यह कहकर वह विनयको बड़े आदरसे गोराकी बैठक में ले गया और उसे एक कुरसी पर बिठाकर आप भी बैठा।

"अरे कोई है! तम्बाकू भरकर ले आओ।" नौकरको यह आज्ञा दे उसने काम की बात चलाई। पूछा—विनय बाबू: इस विषय में तुमने क्या निश्चय किया?

अब तो विनय का भाव पहलेसे बहुत कोमल दिखाई पड़ा। यद्यपि विशेष उत्साह लक्षित न हुआ तथापि यह भी नहीं कि बात टाल देने की कोई चेष्टा दिखाई दी हो। तब महिम ने एक बारगी विवाह का दिन मुहूर्त पक्का करना चाहा।

विनय ने कहा—गोरा आ ले।

महिम ने आश्वास्त होकर कहा—उसके आनेमें तो अभी कई दिनों की देर है। अच्छा, कुछ जलपान करोगे तो मँगाऊँ? कहो क्या कहते हो?

विनयसे जलपान का आग्रह कर चुकने पर महिम अपनी क्षुधा निवारण करने घरके भीतर गया। गोरा की टेवल पर से कोई किताब खींच कर विनय उसके पन्ने उलटने लगा।

नौकरने आकर कहा—माँ बुलाती हैं।

विनय ने पूछा—किसको?

नौकर—आपको।

विनय—वहाँ और लोग हैं?

नौकर—जी हाँ।

छतके ऊपर पैर रखते ही सुचरिताने पहले ही की तरह अपने स्वाभाविक स्निग्ध कण्ठसे कहा—"आइए, विनय बाबू।" यह सुधा सिन्चित स्वर सुनकर विनयने मानो आशातीत धन पाया।

विनय जब घरके भीतर आया तब उसको देख कर सुचरिता और ललिता को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने सोचा कि विनय को न जाने क्या हो गया है, जिसका चिन्ह इस थोड़े से ही समयमें इसके चेहरे पर झलकने लगा है। जैसे किसी सरस श्यामल खेत पर टिड्डी-दलके उतर पड़नेसे वह सूख जाता है, उसी खेतकी तरह विनय का सहास्य मुख फीका हो गया है। ललिताके मन में वेदना और करुणा के साथ-साथ कुछ आनन्द का आभास दिखाई दिया।

और दिन होता तो ललिता एकाएक विनयके साथ बात न करती—किन्तु आज जैसे ही विनय घरमें आया वैसे ही उसने कहा—विनय बाबू, आपसे एक बातका विचार करना है।

विनय के हृदयमें यह शब्द आनन्दके रूपमें लहराने लगा। वह मारे खुशीके भौंचक सा हो रहा। उसकी मुरझाई हुई आशा लता ललिता के शीतल वाक्य-जलसे एकाएक लहलहा उठी। विनयके उदास चेहरे पर तुरन्त प्रसन्नता की झलक दिखाई देने लगी।

ललिताने कहा—हम कई बहनें मिलकर एक छोटी सी कन्या-पाठशाला खोलना चाहती हैं।

विनयने उत्साहित होकर कहा—कन्या-पाठशाला स्थापित करना तो बहुत दिनसे मेरे जीवन का एक संकल्प है।

ललिता—आपको इस कार्यमें हमारी सहायता करनी पड़ेगी।

विनय—मुझसे जहाँ तक हो सकेगा, पीछे न हटूंगा।

ललिता—हम लोगों को ब्राह्म समझकर हिन्दू लोग हमारा विश्वास नहीं करते। इस विषय में आपको कुछ भार अपने ऊपर लेना होगा।

विनयने प्रसन्न होकर कहा—आप अन्देशा न करें। मैं वह भार लेने को तैयार हूं।

आनन्दमयी—हाँ, यह अवश्य भार लेगा! लोगोंको बातोंमें भुला कर वशमें कर लेना यह खूब जानता है।

ललिता—पाठशालाका काम किस नियमसे करना होगा, उसके लिए क्या सामान दरकार है, समय नियत करना, क्लासबन्दी करना, किस क्लास में कौन सी किताब पढ़ाई जायगी—ये सब काम आप कीजियेगा।

ये सब काम तो विनयके लिए कुछ कठिन नहीं है, किन्तु वह कुछ सोचकर एकाएक ठिठक गया। वरदासुन्दरी ने जो अपनी लड़कियोंके साथ उसे मिलनेको मना कर दिया है और समाजमें उन सबोंके विरुद्ध जो आन्दोलन हो रहा है, इसकी कुछ भी खबर क्या ललिता को नहीं है। ऐसी हालत में विनय यदि ललिताका अनुरोध रखने की प्रतिज्ञा करे तो वह अन्याय या ललिताके लिए अनिष्ट तो न होगा? यह प्रश्न उसे आघात पहुँचाने लगा। इस ओर ललिता यदि किसी शुभ कार्य में उससे सहायता की प्रार्थना करे तो उस अनुरोधका यथा साध्य पालन करना विनय अपने जीवन उद्देश्य समझेगा।

ललिता की बात से सुचरिता को भी बड़ा आश्चर्य हुआ। स्वप्न में उसे इसकी भावना न थी कि ललिता एकाएक इस तरह विनय से कन्या-पाठशाला के लिए अनुरोध करेगी। एक तो विनयके विषय में समाजमें चारो ओर घोर आनदोलन हो रहा है, उस पर फिर ऐसा बर्ताव! ललिता

सब बातें जान बूझकर अपनी इच्छा से ऐसा काम करने को उद्यत हुई है, यह देख सुचरिता डर गई। ललिता के मनमें विद्रोहका भाव जाग उठा है, यह वह समझ गई। किन्तु क्या बेचारे विनयको इस विद्रोह में सम्मिलित करना उचित है? सुचरिता अपने मनके आवेशको न रोक सहसा बोल उठी—इस विषय में एक दफे पिताजी से सलाह कर लेना आवश्यक है।

सुचरिताने जो चतुराईके साथ इस प्रस्तावमें बाधा डाली, यह विनय समझ गया। इससे उसके मनकी आशंका और भी बढ़ गई। यह बात भली भाँति जान पड़ी कि जो सङ्कट हुआ है उसे सुचरिता जानती है और ललितासे भी वह छिपा नहीं है, तब ललिता क्यों इस तरह करती है। कुछ भी स्पष्ट ज्ञान नहीं होता।

ललिताने कहा—पिता जी से तो पूछना ही होगा। विनय बाबू राजी हों तो पिता जी से पूछ लूँगी। वे कभी आपत्ति न करेंगे। उन्हें भी हमारे इस विद्यालयमें योग देना होगा। आनन्दमयीकी ओर देखकर कहा—आपको भी हम न छोड़ेंगी।

आनन्दमयी ने हँसकर कहा—मैं तुम्हारे स्कूलमें झाड़-बुहार आऊँगी, इससे अधिक काम मेरे द्वारा और क्या होगा।

विनय ने कहा—यही यथेष्ट होगा। स्कूल एकबारगी स्वच्छ हो जायगा।

सुचरिता और ललिता के चले जाने पर विनय एकाएक पैदल ही ईडन गार्डन की ओर चल दिया। महिम ने आनन्दमयी के पास आकर कहा—विनय मेरे उस प्रस्ताव पर बहुत कुछ राजी हो गया है! अब जहाँ तक हो सके शीघ्र काम कर लेना अच्छा है।

आनन्दमयी ने विस्मित होकर कहा—क्या कहते हो! विनय फिर कब राजी हुआ? मुझसे तो उसने कुछ नहीं कहा।

महिम—आज ही मेरे साथ उनकी बातचीत हो गई है। वह कहता है, गोरा के आने पर मुहूर्त्त स्थिर किया जायगा।

आनन्दमयी ने सिर हिलाकर कहा—महिम, मैं तुमसे कहती हूँ, तुमने ठीक नहीं समझा।

महिम—मेरी बुद्धि चाहे जितनी मोटी हो, किन्तु सीधी बात समझने के योग्य मेरी उमर जरूर हुई है, यह तुम निश्चय जानो।

आनन्दमयी—मैं जानती हूँ, तुम मुझ पर क्रोध करोगे, किन्तु इस बात में जरूर कोई बखेड़ा खड़ा होगा।

महिम ने मुँह लटकाकर कहा—बखेड़ा खड़ा करने से ही खड़ा हो जाता है।

आनन्दमयी—महिम, तुम जो कहोगे सब सहूँगी, किन्तु जिस बात से कोई उपद्रव होगा मैं उसमें शामिल न हो सकूँगी। यह केवल तुम्हारी ही भलाई के लिए है।

महिम ने रुष्ट होकर कहा—मेरी भलाई की सोचने का भार यदि मेरे ही ऊपर रहने दो तो तुम्हें कोई बात सोचने-समझने की आवश्यकता न पड़े और मेरा भी इसी में भला होगा। बल्कि शशिमुखी का ब्याह हो जाने पर फिर जहाँ तक तुमको हो सके मेरी भलाई की चिन्ता करना—कहो क्या कहती हो?

आनन्दमयी ने इसका कुछ उत्तर न दे एक लम्बी साँस ली। महिम पाकेट से पान का डिब्बा निकालकर उसमें से एक बीड़ा पान ले मुँह में रख चबाते-चबाते चला गया।

—:o:—

ललिताने आकर परेश बाबूसे कहा—हम लोग ब्राह्म हैं, इसलिए कोई हिन्दू लड़की हमारे पास पढ़ने नहीं आना चाहती। इसीसे सोचती हूँ, हिन्दू-समाजके किसी आदमीको इस मामलेमें शामिल करनेसे काम में सुबीता होगा। क्या कहते हो बाबूजी?

परेशबाबू ने पूछा—हिन्दू समाजका आदमी कहाँ मिलेगा?

ललिताने कहा—क्यों, मिलेगा क्यों नहीं? यहीं देखो, विनय बाबू हैं।

परेश बाबूने कहा— विनय राजी क्यों होंगे?

ललिताने कहा—सो वह राजी हो सकते हैं।

परेश बाबू जरा देर स्थिर होकर बैठे रहे। फिर बोले—सब बातों पर गौर करके देखने पर कभी नहीं राजी होंगे।

ललिता ने कहा—बाबू जी, तो फिर हम लोगोंका यह स्कूल किसी तरह चल न सकेगा!

परेश बाबू ने कहा—इस समय उसके चलने में अनेक बाधाएँ देख पड़ रही हैं चेष्टा करने से बहुत सी अप्रिय बातें जोर पकड़ेंगी।

ललिता अब वहाँ अधिक देर न टहर कर अपने कमरे में जाकर देखा, डाक से उसके नाम एक चिट्ठी आई है। हस्ताक्षर देखकर मालूम हुआ कि उसकी बचपन की सहेली शैलबाला की लिखी चिट्ठी है। उसका व्याह हो चुका है, और वह अपने स्वामी के साथ बाँकीपुर में रहती है।

चिट्ठी में लिखा था—"तुम लोगों के बारे में तरह तरह की बातें सुनकर मन बहुत खराब हो रहा था। बहुत दिनसे सोचती हूँ कि चिट्ठी लिख कर खबर लूँ—लेकिन फुरसत ही नहीं मिलती। किन्तु परसों एक

आदमीसे (उसका नाम नहीं बताऊँगी) जो खबर मिली, उसे सुनकर तो जैसे सिर पर गाज गिर पड़ी ! मैं तो सोच भी नहीं सकती कि ऐसा सम्भव हो सकता है। किन्तु जिन्होंने लिखा है, उन पर अविश्वास करना भी कठिन है। किसी हिन्दू युवकके साथ तुम्हारे विवाहकी सम्भावना उपस्थित है ? यह बात अगर सत्य हो, तो...इत्यादि-इत्यादि ।'

क्रोधसे ललिताके सारे शरीरमें जैसे आग लग गई। वह घड़ी भर भी रूक न सकी। उसी दम चिट्ठी के उत्तर में लिखा—'खबर सच है कि नहीं, इसके लिये तुम्हारा प्रश्न करनाही मुझे आश्चर्य की बात जान पड़ती है। ब्रह्म समाजके आदमीने तुमको जो खबर दी है, उसकी सचाई भी क्या जाँचनी होगी ? इतना अविश्वाश उसके उपरान्त, किसी हिन्दू युवकके साथ मेरे विवाहकी सम्भावना होनेकी खबर पाकर तुम्हारे सिरपर गाज गिर पड़ी है, किन्तु मैं तुमसे निश्चय कह सकती हूँ ब्राह्म समाजमें भी ऐसे कुछ सुप्रसिद्ध साधु-युवक हैं, जिनके साथ विवाहकी आशंका ब्रजपात ही के तुल्य भयंकर है और मैं ऐसे भी दो एक हिन्दू युवकोंको जानती हूँ जिनके साथ व्याह होना हर एक ब्राह्म-कुमारीके लिए गौरव और सौभाग्य की बात है। इससे अधिक और एक भी बात मैं तुमसे कहना नहीं चाहती।"

इधर उस दिन-दिन भरके लिये परेश बाबूका काम काज बन्द हो गया। वह चुपचाप बैठे बैठे बहुत देर तक सोचते रहे। उसके बाद सोचते हुए धीरे-धीरे सुचरिताके घर में जाकर उपस्थित हुए। परेश बाबू का चिन्तित मुख देखकर सुचरिताका हृदय व्यथित हो उठा। काहे के लिए उन्हें चिन्ता है, सो भी वह जानती है, और इसी चिन्ता को लेकर वह कई दिन से दुःखी हो रही है।

परेश बाबू सुचरिता के साथ एक एकान्त स्थानमें बैठे, और बोले—बेटी, ललिताके सम्बन्धमें चिन्ता का समय उपस्थित हुआ है।

सुचरिता ने परेश बाबूके मुख पर अपनी करुणापूर्ण दृष्टि स्थापित करके कहा—जानती हूँ बाबू जी।

परेश बाबू—मैं समाजके द्वारा होने वाली निन्दाकी बात नहीं सोचता। मैं सोचता हूँ—अच्छा ललिता क्या······।

परेश बाबू के संकोच को देख कर सुचरिताने खुद उस मामलेको स्पष्ट कर लेने की चेष्टा करते हुए कहा—ललिता बराबर अपने मनकी बात मेरे आगे खोलकर कह देती है। किन्तु इधर कुछ दिनसे वह मेरे आगे उस तरह अपने हृदय की थाह नहीं देती। मैं खूब समझ रही हूँ कि···

परेश बाबू बीच ही में बोल उठे—ललिताके मनमें ऐसे किसी भाव का उदय हुआ है, जिसे वह आप भी स्वीकार करना नहीं चाहती। मैं तो सोचकर भी कुछ ठीक नहीं कर पाता कि क्या करनेसे उसकी ठीक मीमाँसा हो जा सकती है। अच्छा, तुम क्या कहती हो, विनयको अपने परिवारके भीतर जाने आने देकर ललिता का कुछ अनिष्ट किया गया है?

सुचरिता—बाबू जी, आप तो जानते हैं, विनय बाबूमें कोई भी दोष नहीं है, उनका स्वभाव-चरित्र निर्मल है। साधारणतः उनके जैसे स्वभावके सरल भद्र पुरुष कम ही देख पड़ते हैं।

परेश बाबू जैसे कोई एक नया तत्व पा गये। वह कह उठे—ठीक कहा तुमने राधे ठीक कहा! वह अच्छे आदमी हैं कि नहीं, यही देखने की बात है—अन्तर्यामी ईश्वर भी वही देखते हैं। विनयको भला आदमी सज्जन समझनेमें मैंने जो भूल नहीं की है, उसके लिए मैं उन्हीं अन्तर्यामी स्वामी को बारम्बार प्रणाम करता हूँ।

एक गोरख धन्धा सुलझ गया—परेश बाबूके जैसे जान आ गई। परेश बाबू अपने देवताके निकट अन्याय करके अपराधी नहीं हुए हैं यह सोच कर उनके मनमें फिर किसी प्रकारकी कुछ भी ग्लानि नहीं रही। यह अत्यन्त सहज बात इतनी देर तक न समझ कर वह क्यों इस तरह पीड़ा का अनुभव कर रहे थे, यह सोच कर उन्हें बड़ा आश्चर्य मालूम पड़ा। सुचरिता के सिर पर हाथ रख कर उन्होंने कहा—तुम्हारे निकट मुझे आज एक नई शिक्षा मिली बेटी!

सुचरिता उसी दम उनके पैर छूकर कहने लगी—ना ! ना ! यह क्या कहते हैं आप बाबू जी !

परेश बाबूने कहा—सम्प्रदाय ऐसी चीज है कि वह सबसे सहज बात को ही बिलकुल भुला देती है कि मनुष्य सब मनुष्य ही हैं। मनुष्य स्वयं ब्राह्म, हिन्दू, मुसलमान आदि समाजके गढ़े हुए नामोंकी बातको विश्व सत्य की अपेक्षा बड़ा बना डालकर एक गोरखधन्धा तैयार कर लेता है। अब तक मैं वृथा ही उसमें भटकता हुआ मर रहा था।

जरा देर चुप रह कर फिर कहने लगे—ललिता अपनी कन्या पाठशाला का विचार किसी तरह छोड़नेको तैयार नहीं है। वह इस सम्बन्ध में विनय की सहायता लेने के लिए मेरी सम्मति चाहती है।

सुचरिता—ना बाबू जी, अभी कुछ दिन उसे रहने दीजिए !

परेश बाबू—क्यों अभी रहने क्यों दिया जाय।

सुचरिता—नहीं तो माँ बहुत नाराज हो उठेंगी।

परेश बाबूने सोच कर देखा, यह बात तो ठीक है।

—:o:—

[४७]

चार दिन बाद चिट्ठी हाथमें लिये हारान बाबू वरदासुन्दरी के निकट आ कर उपस्थित हुए। आज कल परेश बाबूकी आशा उन्होंने बिलकुल ही छोड़ दी है।

हारान बाबूने वह चिट्ठी वरदासुन्दरीके हाथमें देकर कहा—मैंने पहले ही से आप लोगोंको सावधान कर देनेकी बहुत चेष्टाकी है। उनके लिए आप लोगोंका अप्रिय भी हो गया हूँ। इस समय चिट्ठीसे ही आप समझ सकेंगी कि भीतर-भीतर मामला कहाँ तक आगे बढ़ गया है।

शैलबालाको ललिताने जो चिट्ठी लिखी थी वही वह चिट्ठी थी। वरदासुन्दरीने उसे पढ़ा। फिर कहने लगी—आप ही बताइए, मैं किस तरह जान सकती हूँ! कभी जो मैं मनमें भी नहीं ला सकी, वहीं हो रहा है। मगर मैं कहे रखती हूं आप इसके लिये मुझको दोष न दीजियेगा। सुचरिताको तो आप सब लोगोंने ही मिलकर, बहुत भली-बहुत भली, कहकर एकदम सिर पर चढ़ा लिया था; ब्राह्म समाजमें ऐसी और कोई भी लड़की नहीं है, कहकर आप ही लोगोंने उसका दिमाग आसमान पर चढ़ा दिया है। अब अपनी उस आदर्श ब्राह्म कुमारी की कीर्त्ति संभालिए। विनय और गोराको तो वही इस घरमें लाई है। मैं फिर भी विनयको बहुत कुछ सुधार कर अपनी ही राह पर खींच कर लिये आ रही थी; मगर उसीके बाद उसने न जाने कहाँ से अपनी एक मौसीको लाकर हमारे ही घरमें मूर्ति पूजा शुरू कर दी, और विनयको भी ऐसा बिगाड़ दिया कि अब वह मुझे देखते ही भाग खड़ा होता है। इस समय जो कुछ हो रहा है, उसकी जड़में आप लोगोंकी वह सुचरिता ही है। मैं बराबर पहले ही से जानती थी कि वह लड़की कैसी लड़की है; लेकिन कभी कोई आधी

बात भी उसे नहीं कहो। मैं हमेशासे उसे इस तरह पालती पोसती और आदर प्यार करती आ रही हूँ कि किसी को यह नहीं मालूम हो सका कि वह मेरी अपनी पेट की लड़की नहीं है। आज उसी का अच्छा फल मुझे उससे मिला! इस समय मुझे यह चिट्ठी बेकार आप दिखाते हैं आपही लोग जो जान पड़े, करें! मैं नहीं जानती।

हारान बाबूने यह बात आज स्पष्ट स्वीकार करके अत्यन्त उदार भाव से पश्चात्ताप प्रकट किया कि उन्होंने पहले वरदासुन्दरी को पहचाना नहीं था—वह उनके सम्बन्धमें भूल कर बैठे थे। अन्तको परेश बाबूको बुलाकर वहीं चिट्ठी उनके हाथमें दे दिया, परेशने दो तीन बार उसे पढ़कर कहा—तो फिर, क्या हुआ।

वरदासुन्दरीने उत्तेजित हो कर कहा—क्या हुआ! और क्या होना चाहिए! अब और बाकी ही क्या रहा? ठाकुर पूजा, जाति-पाँति का पचड़ा मानना, सभी तो हो गया, अब केवल हिन्दूके घर तुम्हारी लड़की का ब्याह होना भर ही रह गया है! वह भी हो जाय—बस। उसके बाद प्रायश्चित करके हिन्दू-समाजमें दाखिल हो जाओगे - मैं लेकिन कहे रखती हूं...।

परेश बाबू ने जरा हँस कर कहा—तुमको कुछ भी कहना न होगा। कमसे कम अब भी कहने का समय नहीं हुआ! मेरा कहना यह है कि तुम क्यों यह ठीक किये बैठी हो कि हिन्दू के घर में ही ललिताका ब्याह ठीक हो गया है। इस चिट्ठी में उस तरहकी कोई बात मैं देखता नहीं।

वरदा०—क्या होने से तुम देख पाते हो, सो तो आज तक मैंने समझ नहीं पाया। समय रहते पहले ही अगर तुम देख पाते, तो आज इतनी बड़ी घटना घटती ही नहीं। बताओ तो, चिट्ठी में आदमी इससे बढ़कर और कहाँ तक खोलकर लिख सकता है!

हारान—मुझे जान पड़ता है, ललिता को यह चिट्ठी दिखाकर उसका अभिप्राय क्या है, यह उसीसे पूछना उचित है। आप लोग अगर अनुमति दें, तो मैं ही उससे पूछ सकता हूँ।

इसी समय सहसा आंधी की तरह उस स्थानमें प्रवेश करके ललिता ने कहा—बाबू जी, यह देखो, ब्राह्म-समाजसे आजकल इस तरह की गुम-नाम चिट्ठियाँ आती हैं।

परेश बाबूने ललितासे चिट्ठी लेकर पढ़ी। विनयके साथ ललिताका ब्याह गुप्त रूपसे पक्का हो गया है, यह निश्चित मानकर पत्र लेखक ने तरह-तरह की भर्त्सना, धमकी और उपदेशकी बातोंसे यह चिट्ठी पूर्ण की है। उसीके साथ यह सब चर्चा भी थी कि विनय का मतलब अच्छा नहीं है, वह दो दिन बाद ही अपनी ब्राह्म समाजी स्त्री को त्याग करके फिर हिन्दूके घरमें ब्याह कर लेगा—इत्यादि।

परेशके पढ़ चुकने पर हारान बाबूने वह चिट्ठी लेकर पढ़ी। उसके बाद कहा—ललिता यह चिट्ठी पढ़कर तो तुम्हें क्रोध आता है, किन्तु ऐसी चिट्ठी लिखने का कारण क्या तुमने आपही नहीं खड़ा कर दिया है। अच्छा, बताओ तुमने अपने हाथसे यह चिट्ठी किस तरह लिखी है।

वह दूसरी चिट्ठी देखकर दम भर ललिता स्तब्ध हो कर खड़ी रही। उसके बाद बोली—जान पड़ता है, शायद शैल के साथ इस सम्बन्ध में आपकी चिट्ठी पत्री चल रही है?

हाराननें इसका स्पष्ट उत्तर न देकर कहा—ब्राह्म समाज के प्रति कर्त्तव्य स्मरण करके शैल तुम्हारी यह चिट्ठी भेज देने के लिये बाध्य हुई है।

ललिता कठिन भाव से तन कर खड़ी हो कर बोली—अब ब्राह्म समा कहना चाहता है, कहे!

हाराननें कहा—विनय बाबूके और तुम्हारे सम्बन्धमें यह जो अफवाह फैल रही है, उस पर यद्यपि मैं किसी तरह विश्वास नहीं कर सकता; किन्तु तो भी, तुम्हारे मुख से मैं उसका स्पष्ट प्रतिवाद सुनना चाहता हूँ।

ललिताकी दोनों आंखें अङ्गारेकी तरह जलने लगीं। उसने एक

कुर्सी की पीठ कांपते हुये हाथोंसे जोरसे पकड़ कर कहा—क्यों, किसी तरह भी विश्वास नहीं कर सकते ?

परेश बाबूने ललिताकी पीठ पर हाथ फेर कर कहा—ललिता, इस समय तुम्हारा मन स्थिर नहीं है। यह बात-चीत पीछे मेरे साथ होगी—अभी रहने दो।

हारान ने कहा—परेश बाबू, आप बात को दबा देने की चेष्टा न कीजिये।

ललिता फिर प्रज्वलित हो कर बोली—दबा देने की चेष्टा बाबू जी करेंगे। बाबूजी आप लोगों की तरह समय के प्रकाशसे नहीं डरते—सत्य को बाबूजी ब्राह्म-समाजसे भी बड़ा जानते हैं। मैं आपसे स्पष्ट कहे देती हूँ, मैं विनय बाबूके साथ व्याह को कुछ भी असम्भव या अन्याय नहीं समझती ?

हारान कह उठे—किन्तु क्या यह पक्का हो गया है कि वह ब्राह्म-धर्म की दीक्षा ग्रहण करेंगे।

ललिताने कहा—कुछ भी नहीं हुआ। और ऐसी ही क्या बात है कि दीक्षा लेनी ही होगी।

वरदासुन्दरीने अब तक कोई बात नहीं कही थी। उनकी इच्छा थी कि आज हारान बाबूकी ही जीत हो, और अपना अपराध स्वीकार करके परेश बाबूको पश्चाताप करना पड़े। मगर अब उनसे रहा नहीं गया। बोल उठीं—ललिता, तू पागल हो गई है क्या! कहती क्या है!

ललिताने कहा—नहीं माँ, यह पागलपनकी बात नहीं—जो कुछ मैंने कहा है ? वह खूब सोच समझकर कहा है ! मुझे लोग इस तरह चारों ओरसे बाँधने आवेंगे, तो मैं उसे कभी सह नहीं सकूँगी। मैं हारान बाबू, वगैरहके इस समाजके बन्धन से अपनेको मुक्त करूँगी।

हारानने कहा—उच्छृङ्खलता को तुम मुक्त कहती हो।

ललिता—ना, नीचताके आक्रमणसे, असत्यकी गुलामीसे, छुटकारे

को ही मैं मुक्त कहती हूँ ! जहाँ पर मैं कोई अन्याय कोई अधर्म नहीं देखती, वहाँ ब्राह्म-समाज क्यों मुझे स्पर्श करेगा, क्यों बाधा देगा ?

हारान बाबूने कहा—परेश बाबू, यह देखिये ! मैं जानता था, कि अन्तको ऐसी ही एक घटना घटित होगी। मुझसे जहाँ तक हो सका, मैंने आप लोगों को सावधान करने की चेष्टा की—लेकिन कुछ फल नहीं हुआ !

ललिता ने कहा—देखिये हारान बाबू, आपको भी सावधान कर देने का एक विषय है। आपकी अपेक्षा जो लोग सभी बातों में बड़े हैं, उन्हें सावधान कर देने का अहङ्कार आप अपने मनमें न रखिएगा।

इतना कहकर ललिता वहाँ से निकलकर चली गई।

वरदासुन्दरी ने कहा—यह सब क्या हो रहा है ! अब क्या करना चाहिए उसी की सलाह करो !

परेश०—जो कर्तव्य है, उसी का पालन करना होगा। किन्तु इस तरह हङ्गामे के साथ सलाह करने से तो कर्तव्यका निश्चय नहीं होता। मुझे जरा माफ करना होगा। इस सम्बन्धमें मुझसे कुछ न कहो। मैं जरा अकेले बैठना चाहता हूं !

[४८]

सुचरिता सोचने लगी—ललिता यह क्या कर बैठी ! कुछ देर चुप रह कर ललिताके गले में हाथ डालकर सुचरिता ने कहा—मगर मुझे तो बहन, डर लग रहा है !

ललिताने पूछा—काहे का डर है ?

सुचरिताने कहा—इधर ब्राह्म-समाजमें चारों ओर हलचल मच गई है, किन्तु इधर अगर अन्त को विनय बाबू न राजी हुए तो !

ललिताने सिर झुकाकर दृढ़ स्वर से कहा—वह अवश्य ही राजी होंगे !

सुचरिताने कहा—तू तो जानती है बहन, हारान बाबू माँ को यह आश्वासन दे गये हैं कि विनय कभी अपने समाजको छोड़कर यह व्याह करने को राजी न होंगे। ललिता, क्यों तू ने सब पहलुओं पर विचार किये बिना हारान बाबूके आगे यह बात इस तरह कह डाली।

ललिताने कहा—कह डालने के लिए अब भी मुझे पछतावा नहीं हो रहा है ! हारान बाबूने सोचा था कि वह और उनका समाज मेरा, शिकार के जानवर की तरह, पीछा करके मुझे एकदम अथाह समुद्रके किनारे तक ले आया है। यहाँ मुझे आत्म-समर्पण करने के लिए लाचार ही होना पड़ेगा। वह नहीं जानते, मैं इस समुद्र में कूद पड़नेसे नहीं डरती; उनके शिकारी कुत्तोंके पीछा करनेसे विवश होकर उनके फन्देमें घुसनेसे ही डरती हूँ।

सुचरिता ने कहा—अच्छा, एक बार जरा बाबू जी से सलाह करके देखूँ।

ललिताने कहा—बाबू जी कभी शिकारियोंके दलमें शामिल न

होंगे, यह मैं तुमसे निश्चय कहती हूँ। उन्होंने तो कभी हम लोगों को जंजीरमें बाँधना नहीं चाहा। उनके मतके साथ जब किसी दिन कुछ हमारी राय नहीं मिलती है, तब क्या उन्होंने जरा भी क्रोध या नाराजगी जाहिर की है—क्या कभी ब्राह्म-समाजके नाम की दुहाई देखकर हमारा मुँह बन्द कर देने की चेष्टाकी है ? इसी के लिये माँ कितनी ही बार कितना ही नाराज हुई हैं; किन्तु बाबू जी को अगर कुछ भय था, तो यही की कहीं हम खुद सोचने-विचारने का साहस न खो बैठें। इस तरह करके जब उन्होंने मनुष्य बनाया है, तब अन्तको क्या वह हारान बाबू जैसे समाजके जेल-दरोगा के हाथमें हमको सौंप देंगे ?

सुचरिताने कहा - अच्छा, मान लिया, बाबू जीने कुछ बाधा न डाली। उसके बाद क्या किया जायगा, बोलो !

ललिताने कहा—तुम लोग अगर कुछ न करोगे, तो मैं खुद...।

सुचरिता व्यस्त हो उठ कर बोली—ना, ना, तुझे कुछ भी न करना होगा बहन ! मैं इसका कुछ उपाय करती हूँ।

सुचरिता परेश बाबूके पास जानेको प्रस्तुत हो रही थी, इसी समय परेश बाबू खुद शामको उसके पास आकर उपस्थित हुए।

परेश बाबूने कोमल स्वरसे कहा—राधे, सब सुना तो होगा।

सुचरिता—हाँ बाबूजी, सब सुन चुकी हूँ। मगर आप इतनी चिन्ता क्यों करते हैं ?

परेश—मैं तो और कुछ नहीं सोचता, मुझे चिन्ता यही है कि ललिताने जो तूफान उठाकर खड़ा कर दिया है, उसके सारे आघातोंको वह सह सकेगी !

सुचरिताने कहा—समाजकी ओरसे होने वाला कोई उत्पीड़न ललिता को किसी दिन भी परास्त नहीं कर सकेगा, यह मैं आपसे जोर देकर कह सकती हूँ।

परेशने कहा—मैं यह बात खूब निश्चय करके जानना चाहता हूँ कि

ललिता केवल क्रोधके आवेशमें आकर विद्रोह करके उद्धत भाव नहीं प्रकट कर रही है।

सुचरिताने सिर झुकाकर कहा—न बाबूजी, अगर यह बात होती, तो मैं उसकी बात बिलकुल सुनती ही नहीं। उनके मनमें जो बात खूब गहरी जमी हुई थी, वही अकस्मात आघात पाकर एकदम बाहर निकल पड़ी है। इस समय उस बातको किसी तरह दबा देनेकी चेष्टा करनेसे ललिता जैसी लड़कीके लिए वह कभी भला न होगा। बाबूजी, विनय बाबू तो आदमी बड़े अच्छे हैं।

परेश०—अच्छा, विनय क्या ब्राह्म समाजमें आनेको राजी होगा?

सुचरिता—सो तो मैं ठीक कह नहीं सकती। अच्छा बाबूजी, एक बार गोरा बाबूकी माँके पास हो आऊँ?

परेश०—मैं भी यही सोच रहा था कि उनके पास हो आना अच्छा होगा।

आनन्दमयीके घरसे रोज सवेरे विनय एक बार अपने घर आता था। आज सवेरे आने पर उसे एक चिट्ठी मिली। चिट्ठी में किसी का नाम नहीं था। चिट्ठी में इस बारे में लम्बा चौड़ा उपदेश था कि ललिता के साथ व्याह करने से वह विनय के लिये किसी तरह सुखदायक नहीं हो सकता, और ललिताके लिए भी वह अमङ्गल ही का कारण होगा। सब के अन्त में यह लिखा था कि इतने पर भी अगर विनय ललिता को व्याहने से निवृत्ति न हो, तो यह बात वह सोचकर देखे कि ललिता का फेफड़ा कमजोर है—डाक्टर लोग उसके क्षय-रोग की आशंका करते हैं।

विनय इस तरहकी गुमनाम चिट्ठी पाकर हतबुद्धि सा हो गया। विनयने कभी खयाल भी नहीं किया कि झूठ मूठ भी ऐसी बात की सृष्टि हो सकती है। कारण यह तो किसीसे छिपा नहीं है। समाजकी बाधाके कारण ललिताके साथ विनयका विवाह किसी तरह नहीं हो सकता। किन्तु ऐसी चिट्ठी जब उसके हाथ में आकर पहुँची है, तब समाजके बीच इस सम्बन्धमें निस्सन्देह बहुत अधिक आलोचना हो गई है। इससे समाजके आदमियोंके निकट ललिता कितनी और कैसी अपमानित हो रही है, यह सोचकर विनयका मन चंचल और दुखी हो उठा।

विनय इस तरह चंचल होकर जिस समय बरामदेमें टहल रहा था, उसी समय देखा, हारान बाबू रास्तेमें चले आ रहे हैं। उसी समय उसकी समझमें आगया कि वह उसीके पास आ रहे हैं। और, उस गुमनाम पत्रके पीछे एक बहुत बड़ी हलचल मौजूद है, यह भी उसने निश्चय जाना।

और दिनकी तरह विनयने अपनी स्वभाव सिद्ध प्रगल्भता नहीं प्रकट

की। वह हारानको कुर्सी पर बिठाकर चुपचाप उनके बोलनेकी प्रतीक्षा करने लगा।

हारान ने कहा—विनय बाबू आप तो हिन्दू हैं न ?

विनय—हाँ, हिन्दू तो हूँ ही।

हारान—मेरे इस प्रश्न से नाराज न होइएगा। अनेक समय ऐसा होता है कि हम लोग चारों ओर की अवस्था पर विचार किये बिना अंधे होकर चलते हैं—इससे संसारमें दुःखकी सृष्टि होती है। ऐसी जगह पर यदि कोई ये सब प्रश्न उठावे कि हम क्या हैं ? हमारी सीमा कहाँ है ? हमारे आचरण का फल कहाँ तक पहुँचाता है, तो वह अप्रिय सत्य होने पर भी प्रश्नकर्ता को अपना मित्र ही समझियेगा।

विनयने हँसने की चेष्टा करके कहा—वृथा आप इतनी भूमिका बाँध रहे हैं ! अप्रिय प्रश्न से पागल हो उठकर किसी प्रकार अत्याचार करने का स्वभाव ही मेरा नहीं है। आप बेखटके अपनेको निरापद समझकर मुझसे सब तरहके प्रश्न कर सकते हैं।

हारान०—मैं आपके ऊपर किसी इच्छाकृत अपराधका दोषारोपण नहीं करना चाहता। किन्तु विवेचना की त्रुटिका फल भी विषमय हो उठ सकता है, यह बात आपसे अगर न भी कही जाय तो, उसे आप खुद समझ सकते हैं।

विनयने मन-ही-मन विरक्त होकर कहा—जिसके कहनेकी आवश्यकता नहीं है, उसे भले ही आप न कहें अब असल बात जो हो, वही कहिये।

हारान०—आप जब हिन्दू-समाज में हैं, और उस समाज को छोड़ना भी जब आपके लिए असम्भव है, तब परेश बाबू के परिवार के भीतर क्या आपका इस तरह आना-जाना उचित है, जिससे समाजमें उनकी लड़कियों के सम्बन्धमें कोई अप्रिय बात उठ सके ?

विनयने कुछ देर गम्भीर होकर और चुप रहकर कहा—देखिए हारान बाबू समाजके आदमी किस घटनासे कौन बात पैदा कर लेंगे यह बहुत कुछ इनके अपने स्वाभाव पर ही निर्भर है। उसकी सारी जिम्मेदारी अपने

ऊपर मैं नहीं ले सकता। परेश बाबू की लड़कियोंके सम्बन्धमें यदि आप लोगोंके समाजमें किसी प्रकार की आलोचना का उठना सम्भव हो, तो उसमें उन लड़कियोंके लिये लज्जाका विषय उतना नहीं है जितना कि आप लोगोंके समाजके लिये।

हारान०—किसी कुमारीको उसकी माँ का साथ छोड़कर अगर बाहरी मर्दके साथ अकेले एक जहाज पर भ्रमण करनेके लिये प्रयत्न किया जाय, तो उस सम्बन्ध में किस समाज को आलोचना करने का अधिकार नहीं है यह मैं आपसे पूछता हूँ।

विनय०—बाहर की घटनाको भीतरके अपराधके साथ आप लोग भी अगर एक ही आसन दें, तो फिर हिन्दू-समाज को छोड़कर आप लोगोंके ब्राह्म समाजमें आने की क्या जरूरत थी? सो वह चाहे जो हो। इन सब बातोंको उठाकर बहस करनेकी कोइ जरूरत मैं नहीं देखता। मेरा क्या कर्त्तव्य है, सो मैं खुद सोचकर ठीक करूँगा। आप इस सम्बन्ध में मेरी कुछ सहायता न कर सकेंगे।

हारान०—मैं आपसे अधिक कुछ नहीं कहना चाहता मेरा अन्तिम वक्तव्य यही है कि आपको इस समय परेश बाबूके परिवारसे दूर रहना होगा। नहीं तो अत्यन्त अन्याय होगा। आप लोगोंने परेश बाबूके घरके भीतर प्रवेश करके केवल एक अशान्ति पैदा कर दी है। आप लोगों को यह खबर नहीं है कि आपने उन लोगोंका कैसा अनिष्ठ किया है।

हारान बाबूके चले जाने पर विनयके मनके भीतर एक वेदना शूलकी तरह चुभने लगी।

—:०:—

[५०]

जिस समय विनयके घर पर हारान बाबूका आगमन हुआ, ठीक उसी समय अविनाशने आनन्दमयीके पास जाकर खबर दी कि विनयके साथ ललिताका व्याह पक्का हो गया।

आनन्दमयीने कहा—यह बात कभी सच नहीं है।

अविनाश—क्यों सच नहीं है? विनयके लिए क्या यह असंभव है?

आनन्द०—सो मैं नहीं जानती, लेकिन इतनी बड़ी बात विनय कभी मुझसे छिपा न रखता।

अविनाश ने बारम्बार यह कहा कि उसने यह खबर ब्राह्म-समाजके एक खास आदमीसे पाई है, और वह पूर्ण विश्वास योग्य है। विनयका ऐसा शोचनीय परिणाम अवश्य ही होगा—इस बात को वह बहुत पहलेसे ही जानता था, यहाँ तक कि गोराको भी उसने इस बारेमें सावधान कर दिया था, यही आनन्दमयीके निकट घोषणा करके अविनाश बड़े आनन्द से नीचेकी दालानमें महिमको भी यह शुभ समाचार सुना गया।

आज विनय जब आया, तब उसका मुँह देख कर ही आनन्दमयी समझ गई कि उसके अन्तःकरणमें एक विशेष दुःख उत्पन्न हुआ है। उसे भोजन कराकर, अपनी कोठरीमें बुला ले जाकर आनन्दमयी ने बिठलाया, और पूछा—विनय, तुझे क्या हुआ है, बता तो?

विनय—माँ, यह चिट्ठी पढ़ कर देखो।

आनन्दमयीके पत्र पढ़ चुकने पर विनयने कहा—आज सबेरे हारान बाबू मेरे डेरेमें आये थे। वह मुझे बहुत डाँट फटकार गये हैं।

आनन्द०—क्यों?

विनय—वह कहते हैं, मेरा आचरण उन लोगोंके समाजमें परेश बाबूकी लड़कियोंकी निन्दाका कारण बन गया है।

आनन्दमयी—लोग जो कहते हैं कि ललिताके साथ तेरा व्याह ठीक हो गया है, इसमें तो मुझे निन्दाका विषय कुछ भी नहीं देख पड़ता !

विनय—विवाह अगर सम्भव होता तो बेशक कुछ निन्दाकी बात न होती। किन्तु जहाँ जिसकी कोई सम्भावना नहीं है, वहाँ इस तरहकी अफवाह उड़ाना कितना बड़ा अन्याय है। खास कर ललिताके बारेमें इस तरहकी अफवाह उड़ाना अत्यन्त नीचता है—बड़ी ही बुजदिली है !

आनन्द०—तुमसे अगर कुछ पौरुष हो, तो इस निन्दा और अपमानके हाथसे तू अनायास ही ललिताकी रक्षा कर सकता है।

विनयने विस्मित होकर कहा—किस तरह माँ ?

आनन्दमयी—किस तरह क्या ? ललितासे व्याह करके !

विनय०—क्या कहती हो माँ ! अपने विनयको क्या तुम समझती हो, सो तो मेरी कुछ समझमें नहीं आता ! तुम सोचती हो, विनय अगर एक बार केवल कह दे कि मैं व्याह करूँगा, तो जगत्में उसके ऊपर बात ही नहीं उठ सकती—केवल मेरे इशारेकी अपेक्षा में ही सब लोग नजर लगाये बैठे हैं !

आनन्द०—मुझे तो इतनी बातें सोचनेकी जरूरत नहीं देखती। तू अपनी तरफसे जो कुछ कर सकता है उतना ही करनेसे तू अपने फर्जसे छुट्टी पा जायगा। तू कह सकता है कि मैं व्याह करनेको राजी हूँ।

विनय०—मैं अगर ऐसी असंगत बात कहूँगा, तो क्या वह ललिताके लिए अपमानजनक न होगी ?

आनन्द०—उसे तू असंगत क्यों कहता है ! तुम दोनोंके व्याहकी अफवाह जब उड़ चुकी है, तब निश्चय ही वह सङ्गत समझ कर ही उड़ाई गई है। मैं तुझसे कहती हूँ कि तुझे कुछ सङ्कोच न करना होगा।

विनय—लेकिन माँ गोराका ख्याल भी तो करना है।

आनन्दमयीने दृढ़ स्वरमें कहा—ना, भैया इस मामले में गोराके ख्यालकी जरूरत ही नहीं है। मैं जानती हूँ वह नाराज होगा, क्रोध

करेगा, और मैं नहीं चाहती कि तुझ पर वह क्रोध करे। लेकिन तू क्या करेगा! ललिताके ऊपर अगर तुझे श्रद्धा हो, तो उसके सम्बन्धमें सदाके लिए समाजमें एक अपमान रख छोड़ना तुझसे हो ही नहीं सकता—तू ऐसा होने ही नहीं दे सकता।

विनयने कहा—माँ, तुमको जितना ही देखता हूँ, उतना ही विस्मित हो जाता हूँ! तुम्हारा मन एकदम इस तरह साफ कैसे हुआ! तुम्हें क्या पैरों से नहीं चलना पड़ता—ईश्वरने क्या तुमको पङ्ख दे रक्खे हैं? तुम संसार पथ में चलने में कहीं नहीं अटकती!

आनन्दमयी ने हँस कर कहा—ईश्वर ने मेरे अटकने की कोई सामग्री नहीं रक्खी! मेरी सारी राह एकदम साफ कर दी है?

विनय—लेकिन, माँ, मैं मुँहसे चाहे जो कहूँ, मेरा मन तो अटक जाता है! इतना समझता-बूझता हूँ, पढ़ता सुनता हूँ, बहस करता हूँ, मगर अकस्मात अचानक देख पाता हूँ कि मेरा मन बिल्कुल मूर्ख ही रह गया है।

इसी समय महिम ने वहाँ पैर रखते ही विनयसे ललिताके सम्बन्ध में ऐसे अत्यन्त उजड्डपन और रूखेपन से प्रश्न करना शुरू कर दिया कि विनयका हृदय सङ्कोचसे पीड़ित हो उठा। वह आत्म-दमन करके सिर झुकाकर चुपचाप कुछ उत्तर न देकर बैठा रहा। तब महिम सब पक्षोंके प्रति तीक्ष्ण आघात करके अत्यन्त अपमान करने वाली कुछ बातें कहकर वहाँ से चला गया।

विनय चारों ओर इस तरह लाँछना की मूर्ति देखकर सन्नाटे में आकर बैठ रहा। आनन्दमयीने कहा—जानता है विनय, अब तेरा क्या कर्त्तव्य है?

विनयने सिर उठाकर उनके मुँह की ओर देखा। आनन्दमयी ने कहा—तुझे उचित है कि तू एक बार परेश बाबूके पास जा उनके साथ बातचीत करनेसे ही सब साफ हो जायगा।

-:०:-

[५१]

सुचरिताने अचानक आनन्दमयी को देखकर विस्मित होकर कहा—मैं तो आपही के पास जानेके लिये तैयार हो रही थी।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—तुम मेरे पास आने को तैयार हो रही हो, यह तो मैं नहीं जानती थी, किन्तु तुम जिस बातके लिये आनेको तैयार हो रही थी, उसकी खबर पाकर मुझसे रहा न गया, मैं चली आई।

आनन्दमयी को खबर मिलने की बात सुनकर सुचरिता को सचमुच बड़ा आश्चर्य हुआ। आनन्दमयीने कहा बेटी, विनयको मैं अपने लड़के ही की तरह जानती हूं। उसी विनयके सम्पर्कसे उस समय भी, जब तुम को देखा सुना नहीं था, मैंने तुम्हें मन ही मन कितनी ही असीसें दी हैं! तुम लोगोंके साथ कोई अन्याय होने की बात सुनकर भला मैं किस तरह स्थिर रह सकती हूँ? मेरे द्वारा तुम लोगों का कुछ उपकार हो सकेगा या नहीं, सो तो नहीं जानती; किन्तु मन न जाने कैसा हो उठा, इसीसे तुम लोगोंके पास दौड़ी आई हूं। बेटी विनयकी ओरसे कुछ अन्याय हुआ है क्या?

सुचरिता—कुछ भी नहीं। जिस बातको लेकर खूब हलचल मची हुई है, उसके लिए ललिता ही जिम्मेदार है। ललिता अचानक किसीसे कुछ कहे-सुने बिना ही स्टीमर पर चली आवेगी, इसकी विनय बाबू ने कल्पना भी नहीं की थी। मगर लोग इस ढङ्गसे इस बात को उठा रहे हैं, जैसे वे दोनों जने गुप्त रूपसे इसके लिए सलाह कर चुके थे। उधर ललिता ऐसी तेजस्विनी लड़की है कि इसकी कुछ भी सम्भावना नहीं कि वह प्रतिवाद करे या किसी तरह समझाकर सब खुलासा हाल किसीसे कहे कि असलमें किस तरह क्या घटना हुई थी।

आनन्द०—इसका तो कुछ एक उपाय करना ही होगा। इन सब बातों को सुनने के बाद से विनय के मन में तो रत्ती भर भी शान्ति नहीं है। वह तो अपने को ही अपराधी माने बैठा है।

सुचरिता ने अपना लाल हो रहा मुख जरा नीचे करके कहा—अच्छा, आप क्या समझती हैं कि विनय बाबू...।

आनन्दमयी ने सङ्कोच पीड़ित सुचरिता को अपनी बात पूरी करते न देखकर कहा—देखो बेटी, मैं तुमसे कहती हूं ललिता के लिये विनयको जो करने को कहोगी, वह वही बिला उज्र करेगा। विनय को मैं उसके बचपनसे देखती आती हूं वह अगर एक बार आत्म समर्पण कर दे, तो फिर कुछ भी अपने हाथमें नहीं रख सकता सर्वस्व ही समर्पण कर देता है। इसी कारण मुझे बहुत भय रहता है कि कहीं उसका ऐसी जगह मन जाय, जहाँ से उसे कुछ भी फेर पाने की कोई आशा न की जा सकती हो।

सुचरिता के मनके ऊपर से एक बोझ हट गया। उसने कहा—ललिता के सम्मतिके लिये आपको कुछ भी चिन्ता न करनी होगी—मैं उसका सब हाल जानती हूं। किन्तु विनय बाबू क्या अपना समाज छोड़ने को राजी होंगे।

आनन्द—समाज शायद उसे त्याग कर सकता है, किन्तु वह पहले से ही गले पड़कर क्यों समाज त्याग करने जायगा बेटी, इसका क्या कुछ प्रयोजन है?

सुचरिता—आप क्या कहती हैं,माँ? विनय बाबू हिन्दू समाजमें रह कर ब्राह्म घरकी लड़की ब्याहेंगे?

आनन्द—वह अगर ऐसा करनेको राजी हो तो उसमें तुम लोगोंको क्या आपत्ति है?

सुचरिता को अत्यन्त गड़बड़झाला जान पड़ा उसने कहा—मेरी तो समझ में नहीं आता कि ऐसा किस तरह समझना होगा?

आनन्द—मुझे तो यह खूब ही सहज जान पड़ता है बेटी। देखो, मेरे घरसे जो नियम चलता है, उस नियम को मानकर मैं नहीं चल पाती और इसीलिये लोग मुझे क्रिस्तान भी कहते हैं। किसी काम-काजके समय मैं अपनी इच्छासे ही अलग रहती हूँ। तुम सुनकर हँसोगी बेटी, गोरा मेरी दालनमें पानी तक नहीं पीता। किन्तु इसीसे मैं यह क्यों कहूंगी कि यह घर मेरा घर नहीं है यह समाज मेरा समाज नहीं है। मैं तो कह ही नहीं सकती। सब निन्दा और अपमान सिर आँखों पर धारण कर मैं यही घर और यही समाज लिये हूँ—और उसमें मेरा तो कुछ काम नहीं अटकता, मुझे तो कुछ कठिनाई नहीं होती है। अगर इस तरह अटकाव हो कि आगे काम न चल सके तो फिर ईश्वर जो राह दिखावेंगे वही राह पकड़ूँगी। किन्तु जो मेरा है, उसे अंत तक अपना ही कहूंगी। हाँ वे अगर मुझे स्वीकार न करें, तो उसकी बात वे जानें।

सुचरिता की समझमें अब भी मामला साफ नहीं हुआ। उसने कहा—मगर देखिये, ब्राह्म-समाज का जो मत है, विनय बाबू का अगर·········।

आनन्द—उसका मत भी तो उसी तरह का है। ब्राह्म-समाज का मत तो दुनियासे निराला नहीं है। तुम्हारे पत्रोंमें जो सब उपदेश छपते हैं, उन्हें तो विनय अक्सर पढ़कर सुनाया करता है। मुझे तो किसी जगह फर्क नहीं समझ पड़ता!

इसी समय 'सुची दीदी' कहकर कोठरीसे प्रवेश करते ही आनन्दमयी को देखकर ललिता लज्जासे लाल हो उठी। उसने सुचरिता का मुख देखकर ही समझ लिया कि अब तक उसी की बातें हो रही थीं। कोठरीसे भाग सकनेसे ही उसकी जान जैसे बचती; किन्तु उस समय वहाँसे भाग खड़े होने का उपाय न था।

आनन्दमयी कह उठी—आओ बेटी ललिता, आओ!

यह कहकर हाथ पकड़ कर उसे जरा विशेष रूपसे पास खींच कर आनन्दमयी ने बिठलाया। जैसे ललिता उनकी कुछ विशेष रूपसे अपनी चीज हो उठी है।

अपनी पहले बात चीत के सिलसिलेमें ही आनन्दमयी सुचरितासे कहने लगी—देखो बेटी, भले के साथ बुरे का मिलना ही सबसे कठिन है, किन्तु तो भी पृथ्वी पर उसका भी मिलन देखा जाता है, और उससे भी सुख दुख के साथ चलता जाता है। यह भी नहीं है कि सब समय सर्वथा उसका फल बुरा ही हो, भलाई भी होती है। यह भी जब सम्भव हुआ, तब केवल मत का जरा फर्क जहां है, वहाँ उस जरासे फर्क के लिये दो आदमी, जिसका हृदय मिल चुका है, क्यों नहीं मिल सकते—यह तो मेरी समझ में नहीं आता। मनुष्य का असल मेल क्या मत पर ही निर्भर है?

सुचरिता सिर झुकाये बैठी रही। आनन्दमयी ने कहा—तुम्हारा ब्राह्म-समाज भी क्या मनुष्य के साथ मनुष्य को मिलने न देगा? ईश्वरने भीतर जिनको एक कर दिया है उनको तुम्हारा समाज क्या बाहर से अलग कर रक्खेगा?

आनन्दमयी जो इस विषयको लेकर इतने ऐसे आंतरिक उत्साहके साथ अलोचना कर रही थीं, सो क्या केवल ललिताके साथ विनयके व्याह की बाधा दूर करने ही के लिये सुचरिताके मनमें इस सम्बन्धमें कुछ दुविधाके भावका अनुभव करके वह दुविधा दूर करने के लिए उनका समग्र मन जो उद्यत हो उठा, इसके भीतर क्या और एक उद्देश्य नहीं था? सुचरिता अगर ऐसे संस्कार में फँसी रहे, तो उससे किसी तरह काम नहीं चलेगा। विनयके ब्राह्म हुये बिना व्याह न हो सकेगा, यही अगर सिद्धान्त हुआ, तो बड़े दुःखके समय भी आनन्दमयी जो इधर कुछ दिनसे जिस आशाको प्रश्रय देकर खड़ा कर रही थीं वह मिट्टी में मिल जायगी! आज ही विनयने यह प्रश्न उनसे पूछा था कि माँ, ब्रह्म-समाजमें क्या नाम लिखाना होगा? यह भी क्या स्वीकार करूँगा?

आनन्दमयीने इसके उत्तरमें कहा था—ना, ना, इसकी तो कुछ जरूरत नहीं देखती।

विनयने पूछा—अगर वे लोग इसके लिये जिद्द करें—जोर डालें?

आनन्दमयीने देर तक चुप रह कर कहा—ना, यहाँ पर जोर नहीं डाला जा सकेगा—जोर नहीं चलेगा।

सुचरिता आनन्दमयीकी इस अलोचनामें शरीर नहीं हुई—वह चुपके बैठी रही। उन्होंने समझा सुचरिता का मन अब भी अनुमोदन नहीं करता।

आनन्दमयी मनमें सोचने लगीं—मेरा मन जो समाजके सब संस्कारों को छोड़ सका है, सो इसी गोराके स्नेहसे। तो क्या गोराके ऊपर सुचरिता का मन नहीं आया? अगर मन आता, तो वह छोटी सी बात ही इतनी बड़ी न हो उठती।

आनन्दमयीका मन जरा उदास हो गया। गोराके जेलखानेसे छूटनेमें और केवल दो दिन बाकी है। वह अपने मनमें सोच रही थी कि उसके लिये एक सुख का क्षेत्र प्रस्तुत हो रहा है। अबकी चाहे जिस तरह हो गोरा को बन्धनमें बाँधना ही होगा, नहीं तो वह कहाँ, किस विपत्तिमें जा पड़ेगा, इसका कुछ ठिकाना नहीं। किन्तु गोराको बाँध लेना तो ऐसी वैसी लड़की का काम नहीं है। इधर हिन्दू समाज की किसी लड़कीके साथ गोराका व्याह करना भी अन्याय होगा। इसी कारण इतने दिन तक अनेक कन्याके व्याह की चिन्तासे पीड़ित पिताओं की अर्जी उन्होंने एक दम नामंजूर कर दी थी। गोरा कहता है कि मैं व्याह न करूँगा। उन्होंने माँ होकर एक दिन भी इसका प्रतिवाद नहीं किया। इससे लोगोंको बड़ा आश्चर्य होता था। अबकी गोराके दो एक लक्षण देखकर वह मन-ही-मन उत्फुल्ल हो उठी थी। इसी कारण सुचरिताके मौन-विरोध ने उन्हें बड़ी चोट पहुँचाई। किन्तु सहज ही हार छोड़ने वाली स्त्री नहीं है। मनमें कहा—अच्छा देखा जायगा।

-:०:-

[५२]

परेश बाबूने कहा—विनय, तुम एक सङ्कटसे ललिताका उद्धार करने के लिये ऐसा दुःसाहसिक काम करो; यह मैं नहीं चाहता। समाजकी आलोचनाका विशेष मूल्य नहीं है। आज जिस विषय पर तरह-तरहकी गप्पें उड़ रही हैं दो दिनके बाद वह किसीको याद भी न रहेगा।

ललिताके प्रति कर्तव्य पालन ही के लिये विनय कटिबद्ध होकर आया था और इस विषयमें उसे कुछ भी सन्देह न था। वह जानता था कि इस विवाह से समाजमें विरोध उपस्थित होगा। और इससे भी बढ़कर उसे यह भय था कि गोरा बहुत क्रोध करेगा। किन्तु केवल कर्तव्य बुद्धिकी दुहाई देकर इन सब अप्रिय कल्पनाओंको उसने मनसे हटा दिया था। ऐसी अवस्था में परेश बाबूने जब एकाएक उसकी कर्तव्य-बुद्धि पर असम्मति प्रकटकी तब विनयने उसे किसी तरह काटना न चाहा।

उसने कहा—मैं आपके स्नेह-ऋणको कभी चुका न सकूंगा। मेरे कारण यदि आपके घरमें दो दिनके लिए भी कोई तनिक सी अशान्ति हो तो वह मैं कभी नहीं सह सकता।

परेशबाबू—विनय, तुम मेरे कहनेका आशय ठीक-ठीक नहीं समझते। मेरे ऊपर जो तुम्हारी श्रद्धा है उससे मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। किन्तु उस श्रद्धा को शिरोधार्य करके कर्तव्य पालन के अभिप्राय से जो तुम मेरी कन्या से व्याह करने को प्रस्तुत हुए हो यह मेरी कन्या के लिये गौरवकी बात नहीं। इसीलिए मैंने तुमसे कहा था कि कोई ऐसा भारी सङ्कट नहीं, जिसके लिए तुम्हें कुछ त्याग स्वीकार करने की आवश्यकता हो।

जो हो, विनयको कर्तव्यके हाथसे छुटकारा मिला। किन्तु पिंजरे का

द्वार खुला पानेसे पक्षी जैसे झटपट उड़ जाता है वैसे विनय का मन निष्कृतके खुले मार्ग पर दौड़ न सका। कर्त्तव्य बुद्धिको उपलक्ष्य करके वह बहुत दिनोंसे संयमके बन्धनको आवश्यक समझ उसे तोड़ बैठा है। जहाँ उसका मन डरकर एक पग आगे बढ़ता और फिर अपराधीकी भाँति पीछे हट आता था, वहाँ अब वह निर्भय हो डेरा डाल बैठा है। अब उसको वहाँसे लौटना कठिन है। जो कर्त्तव्य बुद्धि उसे घसीटकर यहाँ तक ले आई है वह कह रही है कि अब जरूरत नहीं, चलो, यहाँ से लौट चलो। मन कहता है, नहीं तुमको जरूरत नहीं है तो तुम लौट जाओ; मैं यहीं रहूँगा ?

परेश बाबूने जब कोई भाव छिपा रखने का अवसर न दिना तब विनयने कहा—आप ऐसा न समझें कि मैं किसी कर्त्तव्यके अनुरोधसे यह कष्ट स्वीकार करना चाहता हूँ ? यदि आप सम्मति दे तो मेरे लिए इससे बढ़कर और सौभाग्य क्या हो सकता है। केवल मुझे भय है पीछे—

सत्यप्रिय परेश बाबूने सङ्कोच रहित होकर कहा—तुम जिस बात का भय करते हो उसकी कोई बुनियाद नहीं। मैंने सुचरिता से सुना है,ललिता का मन तुमसे विमुख नहीं है।

विनय के मनमें एक आनन्दकी विद्युत् चमक गई। ललिताके मनकी एक गूढ़ बात सुचरितासे प्रकट हुई है कब, कैसे प्रकट हुई ? दोनों सखियोंमे इस तरहके गुप्त भाषण होनेका रहस्यमय सुख, विनयके हृदयमें तीव्र आघात पहुँचाने लगा।

विनय ने कहा—यदि आप मुझे योग्य समझते हैं तो इससे बढ़कर मेरे लिए आनन्द की बात और क्या हो सकती है।

परेश बाबू—तुम जरा ठहरो मैं ऊपर हो आऊँ।

वे वरदासुन्दरी से सलाह लेने गये। वरदासुन्दरी ने कहा—विनयको ब्राह्म-धर्म की दीक्षा लेनी होगी।

परेश बाबू—हाँ, वह तो लेनी ही होगी।

वरदासुन्दरी—यह पहले ही ठीक हो जाना चाहिए। विनयको यहीं बुलाओ न।

ऊपर आने पर विनयसे वरदासुन्दरीने कहा—तो दीक्षाका दिन निश्चित हो जाय!

विनय ने कहा—दीक्षाकी क्या आवश्यकता है?

वरदासुन्दरी—आवश्यकता नहीं है? यह क्या कहते हो? दीक्षा ग्रहण किये बिना ब्राह्म समाजमें तुम्हारा ब्याह कैसे होगा?

विनय कुछ न बोला, सिर नीचा करके बैठा रहा। विनय हमारे घर में विवाह करने को राजी हुआ है, यह सुनकर परेश बाबूने समझ लिया था कि वह दीक्षा ग्रहण करके ही ब्राह्म-समाज में प्रवेश करेगा।

विनय ने कहा—ब्राह्म-समाजके धार्मिक मत पर तो मेरी श्रद्धा है और अब तक मेरा व्यवहार भी उसके विरुद्ध नहीं हुआ है। तो फिर विशेष भाव से दीक्षा लेने की जरूरत क्या?

वरदासुन्दरीने कहा—यदि मत मिलता है तो दीक्षा लेने में ही क्या क्षति है!

विनयने कहा—मैं एकदम हिन्दू समाजको छोड़ दूँ, यह मुझसे न हो सकेगा।

वरदासुन्दरीने कहा—तो इस बातकी आलोचना करना ही आपके लिये अनुचित हुआ है। क्या आप हम लोगोंका उपकार करने हीके लिए दया करके, मेरी कन्या के साथ ब्याह करनेको राजी हुए हैं?

विनय को इस बातकी बड़ी चोट लगी। उसने देखा, उसका प्रस्ताव सचमुच इन लोगोंके लिए अपमानजनक हो उठा है।

शिष्ठ विवाह (सिविल मैरिज) का आईन पास हुए प्रायः एक वर्ष हुआ था। उस समय गोरा और विनयने समाचार पत्रोंमें इस कानूनके विरुद्ध तीव्र समालोचना की थी। आज उस शिष्ट (सिविल) विवाहको स्वीकार कर विनय अपने को हिन्दू न माने, यह बड़ी मुश्किल बात है।

विनय हिन्दू समाज में रहकर ललितासे ब्याह करे, यह बात परेशबाबू

की आत्माने स्वीकार न की। लम्बी साँस लेकर विनय उठ खड़ा हुआ और परेश बाबू तथा वरदासुन्दरीको प्रणाम करके कहा—मुझे माफ कीजिए। मैं अब इस बातको बढ़ाकर अपराधी बनना नहीं चाहता। यह कहकर वह घरसे चला गया।

सीढ़ीके पास आकर उसने देखा, सामने बरामदे के एक कोनेमें छोटा डेस्क लेकर ललिता अकेली बैठी चिट्ठी लिख रही है। पैरोंकी आहट सुनते ही ललिताने आँख उठाकर विनय के मुँहकी ओर देखा। उसकी क्षणिक दृष्टिने विनयके चित्तको चँचल कर दिया। विनयके साथ ललिता का कुछ नया परिचय नहीं है। कई बार उसने उसके मुँहकी ओर देखा है। किन्तु आज उसकी दृष्टिमें कुछ और ही रहस्य भरा था। ललिताके मन की जो बात सुचरिता जान गई है वह आज ललिताके करुणा-भरे नेत्रोंमें उमड़ कर सजल मेघ की भाँति विनय को दिखाई दी। विनय की भी उस ओर टकटकी बँध गई। वह बड़े कष्ट से अपने मन की गति को रोककर ललिता से कुछ सम्भाषण किये बिना सीढ़ी से उतर कर चला गया।

[५३]

गोराने जेलसे छूटकर देखा कि परेश बाबू और विनय फाटकके बाहर उसकी प्रतीक्षामें खड़े हैं।

परेश बाबूको शान्ति और स्नेहसे भरा स्वाभाविक शान्त मुँह देखकर उसने जैसी प्रसन्नता और भक्तिसे उनके चरणोंकी धूल सिरमें लगाई वैसी भक्ति या प्रसन्नता इसके पूर्व उसने कभी नहीं दिखाई थी। परेश बाबू ने गोराको बड़े प्यारसे गले लगाया।

गोरा हँसकर विनय का हाथ पकड़ कर कहा—विनय, स्कूलसे आरम्भ कर कालेज तक हम तुम दोनोंने एक साथ शिक्षा प्राप्तकी, सदा एक साथ रहे। किन्तु इस विद्यालय में मैं तुम्हें छोड़कर अकेला चला आया।

विनय न तो इसपर हँस ही सका और न कोई बात ही बोल सका।

गोरा ने पूछा—माँ कैसी हैं?

विनय—अच्छी तरह हैं।

परेश बाबूने कहा—आओ! तुम्हारे लिये देरसे गाड़ी खड़ी है।

तीनों गाड़ी में सवार होकर पहुँचे फिर स्टीमरके द्वारा चल करके दूसरे दिन सबेरे सबके सब कलकत्ते पहुँचे। गोरा के कई महीनों में घर आनेकी बात सुन पहले ही से उसके घरके फाटक पर दर्शकोंकी खासी भीड़ जम गई थी! किसी करह उन लोगोंके हाथ से छुटकारा पाकर गोरा भीतर आनन्दमयीके पास पहुंचा। आनन्दमयी आज खूब सबेरे स्नानादिक कर्म करके उससे मिलनेके लिये प्रस्तुत हो बैठी थी। गोराने उनके पैरोंमें गिरकर प्रणाम किया आनन्दमयीके आँखोंसे आसू बहने लगे। इतने दिन जिन आँसुओंको वह रोके हुए थी उन्हें आज किसी तरह न रोक सकी।

कृष्णदयाल गङ्गास्नान करके ज्योंही घर पर आये त्योंही गोरा उनसे मिलने गया। दूर ही से उनको प्रणाम किया। कृष्णदयाल संकुचित हो कुछ दूर एक आसन पर बैठे। गोराने कहा—पिताजी, मैं प्रायश्चित करना चाहता हूँ।

कृष्णदयाल—इसका तो मैं कोई प्रयोजन नहीं देखता। तुमको यह सब करना न होगा। मैं इसमें अपनी सम्मति नहीं दे सकता।

आनन्दमयीने चौकेमें गोरा और विनय का आसन रखवाया।

भोजन करके जब दोनों मित्र छत के ऊपरवाली निर्जन कोठरी में जा बैठे तब उन दोनों में पहले कौन क्या बात बोले, इसी का कुछ देर मन ही मन विचार होता रहा। इस एक महीनेके भीतर विनय के सम्बन्ध में जो एक नई बात उठ खड़ी हुई है, वह आज गोरा से कैसे कहे यह उसकी समझ में न आया। गोरा परेश बाबू के घर के लोगों का कुशल-समाचार पूछना चाहता था, परन्तु कुछ न पूछ सका। विनय स्वयं उसकी चर्चा करेगा, यह सोच वह उसकी अपेक्षा कर रहा था। हाँ, उसने परेश बाबू से उनकी लड़कियों की कुशल अवश्य पूछा था। किन्तु वह केवल शिष्टता का प्रश्न था। "वे सब अच्छी तरह हैं' इस समाचार से भी कुछ अधिक ब्योरेवार हाल जा नने लिए उसका मन विशेष उत्सुक था।

विनय सावधान होकर बैठा और बोला—इधर एक अनिवार्य घटना से ललिता के साथ मेरा सम्बन्ध बेतरह उलझ गया है। यदि मैं उससे व्याह करूँगा तो बहुत दिनों तक उसे समाज में अन्याय और अमूलक अपमान सहना पड़ेगा।

गोरा—कैसे क्या उलझ गया है, वह सुना चाहता हूं।

विनय—इसके भीतर बहुत बातें हैं, जो क्रमशः तुमसे कहूँगा। किन्तु इस बात को तुम अभी मान लो।

गोरा—अच्छा, मैं मान लेता हूं। किन्तु इस सम्बन्धमें मेरा कहना यही है कि यदि घटना अनिवार्य है तो उसका दुःख भी अनिवार्य समझो।

यदि समाज में ललिता को अपमान का दुःख भोगना ही बदा है तो उसका कोई उपाय नहीं।

विनय—किन्तु उस दुःख का निवारण करना तो मेरे हाथ में है।

गोरा— है तो अच्छा ही है। किन्तु यह हठ करने से तो न होगा। कोई अन्य उपाय न रहने से चोरी करना या खून करना भी तो मनुष्य के हाथ में है किन्तु यह क्या कोई कर्त्तव्य है? ललिता के साथ विवाह करके तुम उसके प्रति कर्त्तव्य करना चाहते हो, क्या यही तुम्हारे कर्त्तव्य की इति श्री है? अपने समाज के प्रति तुम्हारा कोई कर्तव्य नहीं?

विनय—मालूम होता इस जगह तुम्हारे साथ मेरा मत न मिलेगा। मैं व्यक्ति की ओर आकृष्ट होकर समाज के विरुद्ध कोई बात नहीं बोलता। मैं कहता हूँ, व्यक्ति और समाज दोनों के ऊपर एक धर्म है। उसी के ऊपर दृष्टि रखकर चलना होगा। जैसे व्यक्ति का बचाना मेरा परम कर्तव्य नहीं वैसे समाजका मन रखना भी मेरा परम कर्त्तव्य नहीं। एक मात्र धर्म की रक्षा करना ही मेरा परम कर्त्तव्य है।

गोरा—जो धर्म व्यक्तिगत नहीं, समाजगत नहीं, उसको मैं धर्म नहीं मानता। विनयकी आँखे रङ्ग गईं। उसने कहा—मैं मानता हूं। व्यक्ति और समाज की भित्ति पर धर्म नहीं है, धर्मकी दीवार पर ही व्यक्ति और समाज स्थित है। समाज जिसे चाहे उसी को यदि धर्म मान लिया जाय तो यह समाज का मानों एक तरह से नाश करना हुआ। यदि समाज मेरी किसी धर्म सङ्गत स्वाधीनता में बाधा डाले तो इस अनुचित बाधा को न मानकर चलने ही में समाजके प्रति कर्त्तव्य पालन कहा जायगा। यदि ललिता से मेरा व्याह करना अन्याय नहीं है, वरंच उचित है, तो ऐसी अवस्था में समाज प्रतिकूल होने के करण उससे निरस्तर हो जाना ही मेरे लिये अधर्म होगा।

गोरा—न्याय अन्याय क्या अकेले तुम्हारे ही ऊपर निर्भर है? इस विवाह के द्वारा तुम अपनी भावी सन्तानों को कहाँ ले जाओगे, इस बात को भी तो एक बार सोचो।

विनय—इसी तरहके सोच विचार से मनुष्य सामाजिक अन्याय को चिरस्थायी कर डालता है। साहब की लात खाकर जो किरानी कई दिनों तक अपमान सहन करता है उसे तुम दोष क्यों देते हो? वह भी तो अपनी सन्तान की बात सोचकर ही वैसा करता है!

गोरा—मैं तुम्हारे साथ वितण्डावाद करना नहीं चाहता। इसमें तर्क की बात कुछ नहीं है। इसमें केवल हृदय के द्वारा एक समझने की बात है। ब्राह्म-बालिका के साथ व्याह करके तुम देश के सर्व साधारण लोगोंसे अपने को अलग करना चाहते हो, यही मेरे लिए अत्यन्त खेद का विषय है। तुम यह काम कर सकते हो, पर मुझसे तो ऐसा काम कभी नहीं हो सकता। इसी जगह मुझमें और तुम में प्रभेद है। समझ-बूझमें अन्तर नहीं है। मेरा प्रेम जहाँ है, वहाँ तुम्हारा नहीं। तुम जहाँ छूरी चलाकर अपने को मुक्त करना चाहते हो वहाँ तुम्हारा कुछभी मोह नहीं, परन्तु मेरे तो वहाँ होठों प्राण आते हैं। मैं अपने भारतवर्ष को चाहता हूं। तुम चाहे उसे जितना दोष दो। जितनी गालियाँ दो, मैं उसी को चाहता हूं। उससे बढ़कर मैं अपने को या और किसी मनुष्य को नहीं चाहता। मैं ऐसा कोई काम करना नहीं चाहता हूं जिससे भारतवर्षके साथ मेरा रत्ती भी विच्छेद हो।

विनय कुछ उत्तर देना ही चाहता था कि इतने में गोरा ने कहा—नहीं तुम वृथा मेरे साथ विवाद करते हो। यही दुनिया जिस भारतको त्याग रही है, जिसका अपमान कर रही है, उसी के साथ मैं अपमान के आसन पर बैठना चाहता हूँ। यह जातिभेद का भारतवर्ष, यह कुसंस्कार भरा भारतवर्ष, यह मूर्तिपूजक भारतवर्ष मेरा है और मैं इसका हूं। तुम यदि इससे अलग होना चाहते हो तो मुझसे भी अलग होगे।

यह कह कर गोरा कमरे से निकलकर छतके ऊपर घूमने लगा। विनय चुपचाप बैठा रहा। नौकरने आकर गोरासे कहा कि आपको माँ जी बुला रही हैं।

गोरा जब आनन्दमयी के पास गया, तब उसके मुँह पर प्रसन्नता

झलक रही थी। मालूम होता था जैसे उसकी आँखें सम्मुख स्थित सब पदार्थों के पीछे कोई अपूर्व मूर्ति देख रही है। गोरा का चित्त आनन्द उद्भ्रांत था इस कारण वह पहले की भाँति न पहचान सका कि घर में माँ के पास कौन बैठा है।

सुचरिताने खड़ी होकर गोरा को अभिवादन किया। गोराने कहा—अच्छा ! आप आई हैं, बैठिये।

"आप आई हैं।" गोराने ऐसे भाव से कहा, जैसे सुचरिता का आना असाधारण रूपसे हुआ है। मानो इसका आगमन एक विशेष आविर्भाव है।

एक दिन इसी सुचरिता को देखकर, उसके साथ बात चीत करके, गोरा घर छोड़कर भाग गया था। जितने दिन वह अपने ऊपर भाँति भाँति के कष्ट और देश का काम लेकर घूम रहा था, उतने दिन सुचरिता की बात वह मनसे बहुत कुछ अलग रखता था। मानो सुचरिता उसके स्मृतिपथ से हट गई थी। परन्तु कैदखानेके भीतर वह सुचरिता के स्मरण को किसी तरह मनसे दूर न कर सका। एक दिन वह था, जब गोराके मनमें कभी इस बातका उदय तक न होता था कि भारतवर्ष में स्त्रियाँ हैं। इतने दिन बाद सुचरिता को देखकर ही स्त्रियों का अस्तित्व उसके मनमें उदित हुआ। जिस विषयका ज्ञान उसे स्वप्न में भी न था, वह एकाएक हृदय-पट पर प्रतिबिम्बित होने से उसका बलिष्ट स्वभाव काँप उठा।

जेल से बाहर होते ही गोरा ने जब परेश बाबू को देखा, तब उसका मन आनन्द से उल्लसित हो उठा। वह केवल परेश बाबू से भेंट होनेका ही आनन्द न था बल्कि उस आनन्द के साथ गोरा की इन कई दिनोंकी सङ्गिनी कल्पनाने भी बहुत कुछ अपनी माया मिला दी थी, पहले यह उसकी समझ में न आया किन्तु कुछ ही देर में वह समझ गया। स्टीमर पर आते-आते उसने भली भाँति अनुभव किया कि परेशबाबू जो उसे खींच रहे हैं' वह केवल अपने ही गुण से नहीं।

[५४]

गोराका मन उस समय भावके आवेशमें पड़ा था। वह सुचरिताको एक व्यक्ति विशेष नहीं देख रहा था, वह उसे एक भावके रूपमें देख रहा था। भारतकी नारी-प्रकृति सुचरिताकी मूर्त्तिमें उसके आगे प्रकट हुई। भारतमें गृहको पुण्य, सौन्दर्य और प्रेमसे मधुर और पवित्र करनेके लिए ही इसका आविर्भाव गोराको समझ पड़ा। जो लक्ष्मी भारतके शिशुको पालकर बड़ा करती है, रोगीकी सेवा करती है, तापग्रस्तको सान्त्वना देती है; तुच्छको भी प्रेमके गौरवसे प्रतिष्ठा देती है। जिन्होंने दुख और दुर्गतिमें भी हममें से दीनतक पुरुष को भी त्याग नहीं किया—अवज्ञा नहीं की, जो हमसे पूजा करने योग्य होकर भी हममेंसे अयोग्यतम पुरुषकी भी अनन्य भाव से पूजा करती आ रही है, जिनके निपुण सुन्दर दोनों हाथ हम लोगों के काममें उत्सर्ग किये हुए हैं और जिनका चिर सहनशील क्षमापूर्ण प्रेम अक्षय दानके रूपमें हमने ईश्वरसे पाया है, उन्हीं लक्ष्मीके एक प्रकाशको गोरा अपनी माताके पास प्रत्यक्ष बैठे देखकर गम्भीर आनन्दकी अनुभूति से पूर्ण हो उठा।

इसीसे गोराने जब सुचरितासे कहा—आप आई हैं, तब वह केवल प्रचलित शिष्टाचारके सम्भाषण रूपमें उसके मुखसे नहीं निकला—इस अभिवादन सम्भाषण के भीतर उसके जीवनका एक नया मिला हुआ आनन्द और विस्मय भरा हुआ था।

कारावासके चिन्ह कुछ-कुछ गोराके शरीर में मौजूद थे। वह पहले की अपेक्षा अधिक रोगी-सा दुर्बल हो गया है। जेलके भोजनमें उसकी अश्रद्धा और अरुचि रहनेके कारण उसने महीने भर तक एक प्रकारसे उपवास ही किया है। उसका उज्ज्वल शुभ्र वर्ण भी पहलेकी अपेक्षा कुछ

मलीन हो गया है। उसके केश बहुत छोटे करके छांटे जानेके कारण मुखका दुबलापन और भी अधिक देखा जाता है।

गोराके शरीरकी इस शीर्णताने ही सुचरिताके मनमें विशेष करके एक वेदनापूर्ण सम्मानका भाव जगा दिया। उसका जी चाहने लगा कि वह प्रणाम करके गोराकी चरण-रज मस्तक में लगा ले! जिस प्रज्वलित आगका धुआँ और काष्ट फिर देख नहीं पड़ता, उसी विशुद्ध अग्निकी शिखा के समान उसे गोरा देख पड़ा। एक करुणा मिश्रित भक्तिके आवेगसे सुचरिताका अन्तःकरण कांपने लगा। उसके मुँहसे कोई बात नहीं निकली।

आनन्दमयीने कहा—मेरे लड़की अगर होती, तो कैसा सुख होता, सो अबकी बार मुझे जान पड़ता है गोरा! तू जितने दिन यहाँ नहीं था, उतने दिन सुचरिताने मुझे कितनी साँत्वना दी है, सो मैं तुमसे क्या कहूं! बेटी, तुम शरमा रही हो, लेकिन तुमने मेरे दुःखके दिनोंमें मुझे कितना सुख दिया है, यह बात तुम्हारे सामने कहे बिना मुझसे रहा कैसे जा सकता है!

गोराने गहरी कृतज्ञतासे परिपूर्ण दृष्टिसे सुचरिताके लज्जित मुखको और एक बार देखकर आनन्दमयीसे कहा—मां, तुम्हारे दुःखके समय वह तुम्हारे दुःखका भाग लेने आई थी, और आज तुम्हारे सुखके दिनमें भी तुम्हारा सुख बढ़ाने आई हैं! जिनका हृदय महान और उदार है, उनकी ऐसी ही अकारण मैत्री होती है।

विनयने सुचरिताका संकोच देखकर कहा—दीदी! चोरके पकड़ लिए जाने पर वह चारों ओरसे सजा पाता है। आज तुम इन सभीके निकट पकड़ गई हो, उसीका यह फल भोग रही हो। अब भागोगी कहाँ? मैं तुमको बहुत दिनसे पहचानता हूं किन्तु किसीके आगे कुछ जाहिर नहीं किया, चुप मारे बैठा हूं—मनमें खूब जानता हूँ कि अधिक दिन तक कुछ छिपा नहीं रहता।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—तुम चुप क्यों नहीं हो! तुम चुप रहने वाले लड़के हो न।—जिस दिनसे इसने तुम लोगों से जान पहचान कर

पाई है बेटी उसी दिनसे बराबर तुम्हारे गुण गाकर भी इसका जी नहीं भरता।

विनय—सुन रक्खो दीदी, मैं गुणग्राही हूं, अकृतज्ञ नहीं हूँ, इसकी शहादत और सबूत सब सामने हाजिर है।

सुचरिता—इससे तो वह केवल अपने गुण का परिचय दे रहे हैं।

विनय—किन्तु मेरे गुण का परिचय मेरे निकट आप कुछ नहीं पावेंगी। अगर मेरे गुण का परिचय प्राप्त करना चाहें, तो माँ के पास आइयेगा—आश्चर्य से अवाक् हो जाइयेगा—उनके मुखसे जब अपने गुण सुनता हूँ तो मैं खुद ही आश्चर्य-चकित हो जाता हूँ! माँ अगर मेरा जीवनचरित्र लिखें, तो मैं अभी मरने को तैयार हूँ।

आनन्द०—सुनती हो लड़के की बातें।

गोरा—विनय तुम्हारे माँ-बाप ने तुम्हारा नाम सार्थक ही रक्खा था।

विनय—जान पड़ता है, उन्होने मुझसे और किसी गुण की प्रत्याशा नहीं की थी, इसीसे वे मेरे विनय गुण की ही दुहाई दे गये हैं। नहीं तो उन्हें हास्यास्पद होना पड़ता।

इसी तरह प्रथम आलाप का सङ्कोच दूर हो गया।

बिदा होते समय सुचरिता ने विनय से कहा—आप जरा एक बार हमारे उधर न आइयेगा।

[५५]

विनय ने यह समझ लिया था कि ललिता के साथ उसके विवाहके प्रसंगकी आलोचना करनेके लिये ही सुचरिता उसको बुला गई है। इस प्रस्ताव को उसके तय कर देनेसे ही तो मामला ख़तम नहीं हो गया। विनय सुचरिताके घर जब पहुँचा। हरिमोहिनी उस समय रसोई बनानेका उद्योग कर रही थी। विनय वहाँ रसोईके द्वार पर ब्राह्मण संतान के मध्यान्ह भोजन का दावा मन्जूर करा कर ऊपर चला गया।

सुचरिता कुछ सिलाईका काम कर रही थी। उसने उसी पर नज़र रख कर अंगुली-चालन करते करते कहा—देखिये विनय बाबू जहाँ भीतर की बाधा नहीं है, वहाँ क्या बाहरकी प्रतिकूलताको मान कर चलना होगा?

गोराके साथ जिस समय बहस हुई थी, उस समय विनयने उसके विरुद्ध युक्तियों का प्रयोग किया था। किन्तु जब सुचरिता के साथ उसी विषय की आलोचना होने लगी, तब उसने उससे उलटे पक्ष की युक्तियोंका प्रयोग किया! ऐसी दशामें यह कौन ख्याल कर सकेगा कि गोरा के साथ उसका कुछ भी मन विरोध है।

विनयने कहा—दीदी, बाहर की बाधाको तुम लोग भी तुच्छ नहीं मानते।

सुचरिता—उसका कारण है विनय बाबू! हमारी बाधा ठीक बाहरकी बाधा नहीं है। हम लोगोंका समाज धर्म विश्वके ऊपर ही प्रतिष्ठित है। किन्तु आप जिस समाजमें हैं, उसमें आपका बन्धन केवल सामाजिक बन्धन मात्र है इसी कारण यदि ललिताको ब्राह्म-समाज छोड़कर जाना हो, तो उसमें जितनी भारी क्षति है, आपके सम्मुख आपको उतनी क्षति नहीं हो सकती।

इसी समय शतीश एक अंगरेजीका अखबार लेकर वहां उपस्थित हुआ। सुचरिता अखबारको लेकर पढ़ने लगी।

उस ब्राह्म समाजी अखबारमें एक खबर यह थी किसी प्रसिद्ध ब्राह्म परिवारमें हिन्दू समाजके युवकके साथ ब्याह होनेकी जो आशंका उत्पन्न हुई थी, वह हिन्दू युवककी असम्मति होनेके कारण दूर हो गई है। इसी उपलक्षको लेकर उक्त हिन्दू-युवककी निष्ठाके साथ तुलना करके उस ब्राह्म परिवारकी शोचनीय दुर्बलताके सम्बन्धमें खेद भी प्रकट किया गया था।

सुचरिताने अपने मनमें कहा, चाहे जिस तरह हो, विनयके साथ ललिताका ब्याह कराना ही होगा। किन्तु वह तो इस युवकके साथ बहस करके न होगा। सुचरिताने अपने यहां आनेके लिये ललिताको एक चिट्ठी लिख दी। उसमें यह नहीं लिखा कि विनय यहाँ मौजूद है।

हरिमोहिनीने कमरे में प्रवेश करके पूछा—विनय इस समय कुछ जल-पान करेगा या नहीं। विनयने उत्तरमें कहा—ना। तब हरिमोहिनी कमरे के भीतर आकर बैठ गई।

हरिमोहिनी जितने दिन परेशबाबूके घर थी, उतने दिन विनयके ऊपर उनका खूब आकर्षण था। किन्तु जबसे सुचरिता को लेकर वह जुदे घरमें रह कर अलग अपनी गिरस्ती बाँध बैठी है, तबसे इन सब लोगों का आना-जाना उनके लिए अत्यन्त रुचिकर हो उठा है। आजकल आचार-विचारमें सुचरिता जो उन्हें सम्पूर्ण मान कर नहीं चलती, उसका कारण उन्होंने इन सब लोगोंके सङ्ग-दोषको ही ठीक कर लिया है। यद्यपि वह जानती है कि विनय ब्राह्म समाजी नहीं है, तो भी उन्हें इसका स्पष्ट अनुभव हो रहा है कि विनयके मनमें कोई हिन्दू-संस्कारकी दृढ़ता भी नहीं है। इसीसे अब वह पहलेकी तरह उत्साहके साथ इस ब्राह्मण बालक को बुलाले जाकर ठाकुर जी के प्रसाद का अपव्यय नहीं करती थीं।

आज बातचीतके सिलसिले में हरिमोहिनी विनयसे पूछ बैठी—अच्छा भैया, तुम तो ब्राह्मणके लड़के हो; फिर क्यों संध्या पूजा कुछ भी नहीं करते?

विनय०—मौसी, दिन रात पाठ रटनेके फेरमें पड़ कर गायत्री-संध्या

वगैरह सब कुछ भूल गया हूं।

हरिमो०—परेश बाबूने भी तो लिखा पढ़ा है—वह तो अपने धर्म की सबेरे-शाम कुछ पूजा-उपासना अवश्य करते हैं।

विनय०—मौसी वह जो कुछ करते हैं, सो तो केवल मन्त्र रट कर नहीं किया जा सकता। उनके समान अगर कभी हो सकूँगा, तो उनकी तरह उनकी राह पर चलूंगा।

हरिमोहिनीने कुछ तीव्र स्वरमें कहा—तब तक न हो बाप-दादे हीकी तरह उन्हींकी राह पर क्यों न चलो। न इधर न उधर, यह क्या अच्छा है? आदमीका एक कुछ तो धर्मका परिचय होता ही है। न रान, न गंगा; भैया रे – यह कैसा ढङ्ग है।

इसी समय ललिता कमरेमें प्रवेश करके विनयको देखते ही चौंक उठी। हरिमोहिनीसे पूछा—दीदी कहाँ हैं!

हरिमो०—राधारानी नहाने गई है।

ललिताने कहा—दीदी ने मुझे बुला भेजा था।

हरिमो०—तब तक बैठो न, वह अभी आती ही होगी!

ललिताकी ओर भी हरिमोहिनीका मन अनुकूल नहीं था। हरिमोहिनी इस समय सुचरिताको उसके पहलेके सारे घिरावसे मुक्त करके संपूर्ण रूपसे अपनी मुट्ठीमें, अपने आधीन कर लेना चाहती है। परेश बाबूकी ओर लड़कियाँ यहाँ जल्दी-जल्दी नहीं आती, एक मात्र ललिता ही जब-तब आकर सुचरिता को लेकर बातचीत किया करती है। मगर वह मौसीको अच्छा नहीं लगता। वह अक्सर दोनोंकी बातचीतमें खलल डाल कर सुचरिता को किसी न किसी कामका नाम लेकर वहाँसे उठा ले जाने की चेष्टा करती है। या यह कहकर खेद प्रगट करती है कि आज कल सुचरिता पहलेकी तरह मन लगा कर पढ़ने लिखने नहीं पाती। मगर उधर सुचरिता जब पढ़ने लिखनेमें ध्यान देती है, तब वह कहनेसे भी बाज नहीं आती कि औरतोंके लिये अधिक पढ़ना लिखना अनावश्यक और अनिष्टकर है। असल बात यह है कि वह जिस तरह अनन्य भावसे

सुचरिताको घेर कर बिल्कुल अपने घेरेमें रखना चाहती है वैसा किसी तरह कर नहीं पाती। इसीसे कभी सुचरिताके साथियों पर और कभी उसकी शिक्षा पर दोषारोपण करती है।

ललिता और विनयको लेकर अथवा ताक पर बैठे रहना हरिमोहिनीके लिये सुख कर हो, यह बात नहीं; तथापि उन दोनों पर चिढ़ होनेके कारण ही वह वहाँ पर उस समय बैठी रही। उन्होंने समझ लिया था कि विनय और ललिताके बीच एक रहस्यपूर्ण सम्बन्ध है। इसीसे उन्होंने मन ही मन कहा—तुम्हारे समाजमें चाहे जो रीति हो, मैं अपने इस घरमें यह सब निर्लज्जताके साथ मिलना जुलना, न होने दूँगी।

उधर ललिताके मनमें भी एक विरोधका भाव उठा हुआ था। कल सुचरिताके साथ आनन्दमयीके घर जानेका उसने भी इरादा किया था; किन्तु जाने के समय किसी कारणवश वह जा नहीं सकी। गोराके ऊपर ललिता की भारी श्रद्धा है, किन्तु विरोधका भाव भी अत्यन्त तीव्र है। इस खयाल को वह किसी तरह अपने मनसे भगा नहीं पाती थी कि गोरा सभी तरह उसके प्रतिकूल है। यहाँ तक कि जिस दिन गोरा जेलखानेसे छूटा है उसी दिन से विनय की ओर भी उसके मनके भाव में एक परिवर्तन हो गया है। कई दिन पहले भी इस बात को खूब स्पर्धा के साथ ही उसने मन में स्थान दिया था कि विनय के ऊपर उसका एक जोर और दखल है। किन्तु अब यह कल्पना करते ही वह विनय के विरुद्ध कमर बाँधकर खड़ी हो गई कि गोरा के प्रभाव को विनय किसी तरह अपने ऊपर से हटा नहीं सकेगा।

ललिता को कमरे में प्रवेश करते देखते ही विनय के मन में एक आन्दोलन प्रबल हो उठा। ललिता के सम्बन्धमें विनय किसी तरह अपने सहज भाव की रक्षा नहीं कर सकता? जब से उन दोनों के विवाह की सम्भावना का समाचार वा अफवाह समाज में फैल गई है, तबसे ललिता को देख पाते ही विनय का मन, बिजली से चञ्चल चुम्बक-शलाका की तरह, स्पन्दित होता रहता है।

कमरेमें विनय को बैठे देखकर सुचरिता के ऊपर ललिताको क्रोध हुआ उसने समझा, अनिच्छुक विनय के मन को अनुकूल करने के लिए ही सुचरिता उसके पीछे पड़ गई है और इस टेढ़े को सीधा करने के लिये आज उसकी पुकार हुई है।

उसने मौसी की ओर देखकर कहा—दीदी से कह देना, इस समय मैं अब और ठहर नहीं सकती। फिर किसी समय आऊँगी।

यह कह कर विनय की ओर दृष्टिपात मात्र न करके ललिता तेजी के साथ चली गई। तब फिर विनय के पास हरिमोहिनी का बैठे रहना अनावश्यक होने के कारण वह भी घरके काम धन्धे के बहाने उठ गई।

नहा धोकर और शतीश को खिलाने-पिलानेके बाद स्कूल भेजकर सुचरिता जब विनय के पास आई,उस समय वह सन्नाटेमें बैठा हुआ था। सुचरिताने पहले का प्रसङ्ग फिर नहीं उठाया। विनय भोजन करने बैठा, लेकिन उसके पहले कुल्ला नहीं किया।

हरिमोहिनीने कहा—अच्छा तुम तो हिंदू आचार-विचारकी कोई बात मानते ही नहीं,—फिर तुम्हारे ब्राह्म हो जानेमें ही क्या दोष था।

विनयने मन-ही-मन कुछ आघात पाकर कहा—हिन्दू-धर्मको जिस दिन मैं छुआ छूत और खाने-पीनेके निरर्थक मात्र जानूंगा, उस दिन ब्राह्म, ईसाई, मुलमान आदिमें से कुछ एक हो जाऊँगा। अब भी हिन्दू धर्मके ऊपर मुझे उतनी अश्रद्धा नहीं हुई है।

विनय जब सुचरिताके घरसे बाहर निकला उस समय उसका मन अत्यन्त विकल हो रहा था। वह जैसे चारों ओरसे ही धक्के खाकर एक आश्रय-हीन शून्यके भीतर आ पड़ा था। 'क्यों मैं ऐसे अस्वाभाविक स्थान-में आकर पहुँच गया', यही सोचते सोचते सिर नीचा करके विनय धीरे धीरे सड़क पर चलने लगा। हेदुआ तालाब के पास आकर वहाँ एक पेड़के नीचे बैठ गया। अब तक उसके जीवन में छोटी बड़ी जो भी समस्या आकर उपस्थित हुई है उसने अपने मित्र गोराके साथ आलोचना

करके, बहस करके, उसकी मीमाँसा कर ली है। आज वह राह भी नहीं खुली है—आज उसे अकेले ही सोचना विचारना होगा।

सूर्यके ढल पड़ते ही जहाँ पर छाया थी, वहाँ धूप आ गई। तब विनय तरु तल छोड़कर फिर सड़क पर चलने लगा! कुछ दूर जाते ही अचानक सुन पड़ा—"विनय बाबू ओ विनय बाबू!" और उसके बाद ही सतीशने आकर उसका हाथ पकड़ लिया! उस दिन शुकवार था स्कूल की पढ़ाई खतम करके सतीश उस समय घरको लौट रहा था।

सतीशने कहा—चलिए विनय बाबू, मेरे साथ घर चलिए!

विनय०—यह क्या हो सकता है सतीश बाबू!

सतीश—क्यों नहीं हो सकता?

विनय०—इतना जल्दी जल्दी तुम्हारे घर जानेसे लोग उसे सह कैसे सकेंगे?

सतीशने विनय की इस युक्ति को बिल्कुल ही प्रतिवाद के अयोग्य समझ कर केवल इतना ही कहा—नहीं; चलिए।

परेश बाबू के घर के सामने होकर ही सुचरिता के घर जाना होता है! परेश बाबू के घर के नीचे के खण्ड का बैठकखाना रास्ते से ही देख पड़ता है। उस बैठक के सामने पहुँचते ही सिर उठा कर एक बार उधर देखे बिना विनय से नहीं रहा गया। उसने देखा, टेबिल के सामने परेश बाबू बैठे हैं—कुछ बातचीत कर रहे हैं या नहीं यह नहीं जाना जा सका; और, ललिता रास्ते की ओर पीठ करके परेश बाबू की कुर्सी के पास एक छोटे से बेंत के मोढ़े पर छात्री की तरह चुपचाप बैठी है।

सुचरिताके घरसे लौट आने के बाद जो क्षोभ ललिता के हृदय को अशान्त बना रहा था; उसे दूर करने का और कोई उपाय वह नहीं जानती थी; इससे धीरे-धीरे परेश बाबू के पास आकर बैठी थी। परेश बाबू के भीतर ऐसा एक शान्ति का आदर्श था कि असहनशील ललिता अपनी चंचलता दबाने के लिए कभी-कभी उनके पास आकर चुपचाप बैठी

रहती थी। परेश बाबू अगर पूछते थे कि क्या है ललिता ? तो वह कहती थी—कुछ नहीं बाबू जी तुम्हारी इस कोठरी में खूब टण्डक है।

आज ललिता चोट खाये हुये हृदयको लेकर उनके पास आई है, यह परेश बाबू स्पष्ट समझ गये थे। उनके अपने अन्तःकरण के भीतर भी एक वेदना छिपी हुई मौजूद थी। इसीसे उन्होंने धीरे-धीरे ऐसी एक बात उठाई थी जो व्यक्तिगत जीवनके तुच्छ सुख दुःख के बोझ को एक दम हल्का कर दे सकती है।

पिता और कन्या की इस निर्जन आलोचना के दृश्य को देखकर दम भर के लिये विनय के पैर रुक गये—सतीश क्या कह रहा था, सो उसके कानों तक पहुँचा ही नहीं। सतीशने उस घड़ी उससे युद्ध विद्याके सम्बन्ध में एक अत्यन्त जटिल दुरुह प्रश्न किया था। एक बाघोंके दलको पकड़ कर बहुत दिन तक सिखाकर अपने पक्ष की सेना के अग्रभागमें खड़ाकरके युद्ध किया जाय तो इस युक्ति से जय की सम्भावना कैसी है, यही उसका प्रश्न था! अब तक दोनों मित्रोंके सवाल जवाब बिना किसी बाधाके चले आ रहे थे, अबकी एकाएक बाधा पाकर सतीशने विनयके मुखकी ओर देखा; उसके बाद विनयकी दृष्टि का अनुसरण करके परेश बाबू को बैठकखाने में नजर डालते ही वह ऊँचे स्वर से चिल्लाकर कह उठा—दीदी, दीदी! ओ ललिता दीदी! यह देखो, मैं विनय बाबूको रास्तेमें पकड़ लाया हूं।

सतीशके इस बहादुरी दिखाने से लज्जाके मारे विनयके पसीना आ गया। पल भर के भीतर ही बैठक के भीतर ललिता कुर्सी छोड़कर उठ खड़ी हुई परेशबाबूने गलीकी ओर मुँह फेर कर देखा—सब मिलाकर एक भारी काण्ड हो गया है।

तब विनय सतीशको बिदा कर लाचार होकर परेश बाबू के घर में घुसा।

बैठकमें जाकर विनयने देखा, ललिता चली गई है। उसे सब कोई

शान्ति भङ्ग कराने वाले दस्यु की तरह देखते हैं, यह ख्याल करके विनय, सकुंचित हो उठा, और कुर्सी पर बैठ गया।

शारीरिक स्वास्थ्य इत्यादिके सम्बन्धमें प्रश्न करके साधारण शिष्टाचार हो चुकते ही विनयने एकदम कहना शुरू कर दिया कि मैं जब हिन्दूसमाज के आचार-विचारको श्रद्धाके साथ नहीं मानता, और नित्य ही उसका उल्लंघन करता रहता हूं, तब ब्राह्म-समाजका आश्रय ग्रहण करना ही मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। मेरी यही इच्छा है कि मैं आप ही के निकट दीक्षा ग्रहण करूँ।

यह इच्छा और यह विचार पन्द्रह मिनट पहले तक भी विनय के मनमें स्पष्ट आकारमें कदापि न था। परेश बाबू क्षण भर चुप रह कर बोले—अच्छी तरह सब बातों पर गौर करके देख तो लिया है न ?

विनय०—इसमें और तो कुछ सोचने या गौर करनेकी बात नहीं है, केवल यही देखने का विषय है कि मेरा कार्य न्याय है या अन्याय। सो यह खूब सादी सी बात है। हम लोगोंने जो शिक्षा पाई है, उसके द्वारा किसी तरह निष्कपट चित्तसे केवल आचार विचार को ही उल्लंघनीय धर्म नहीं मान सकता। इसी कारण मेरे व्यवहार अथवा आचरणमें पग पग पर अनेक प्रकारकी असङ्गति देख पड़ती है—जो लोग श्रद्धाके साथ हिन्दू समाज का आश्रय लिए हुए हैं, उनके साथ संसर्ग रखनेके कारण उनको मैं केवल आघात ही पहुँचाया करता हूँ। यह मैं अत्यन्त अन्याय कर रहा हूँ, इस बारे में मेरे मन को कुछ भी सन्देह नहीं है। ऐसे स्थल में, ऐसी दशा में और कोई बात न सोचकर अपने अन्याय को दूर करने के लिये ही मुझे प्रस्तुत होना होगा। नहीं तो मैं अपनी ही दृष्टि में अपने सम्मान की रक्षा न कर सकूँगा।

परेश बाबूको समझानेके लिए इतनी बातोंका प्रयोजन नहीं था; ये सब बातें विनयने अपने मनको जोरदार बनानेके लिए ही कही। वह एक न्याय अन्यायके द्वन्द्व-युद्धके बीच में ही पड़ गया है, और इस युद्धमें सब त्याग कर न्यायके पक्षमें ही जय प्राप्त करनी होगी—यह बात कह कर

उसकी छाती फूल उठी, फैल गई। मनुष्यत्व की मर्यादा तो रखनी ही होगी। परेशने पूछा—धर्म विश्वासके बारेमें ब्राह्म समाज के साथ तुम्हारा मन तो मिलता है न

विनय जरा देर चुप रह कर बोला—आपसे सच बात कहूँ, पहले मुझे ख्याल था कि मेरा शायद एक कुछ धर्म विश्वास है, और उसे लेकर उसके लिए अनेक लोगों के साथ अक्सर बहुत कुछ वाद विवाद भी किया है, किन्तु आज मैंने निश्चय जान लिया कि धर्म विश्वास मेरे जीवनमें परिणत नहीं पा सका—पक्का नहीं हुआ। और इतना कुछ जो मैं समझ सका हूं, सो केवल आपको देखकर। मेरे जीवनमें धर्मका कोई सत्य प्रयोजन नहीं पड़ा, और उसके प्रति मेरा सत्य विश्वास नहीं पैदा हुआ, इसी कारण मैंने कल्पना और युक्ति कौशलके द्वारा इतने दिन हम लोगोंके समाजके प्रचलित धर्मको तरह-तरहकी सूक्ष्म व्याख्याओंसे केवल तर्क निपुणताका रूप दे रक्खा है। यह सोचनेकी मुझे जरूरत ही नहीं होती कि कौन धर्म सत्य है।

परेश बाबूके साथ बातें करते-करते ही विनय अपनी वर्तमान अवस्था के अनुकूल युक्तियोंको आकार देकर साक्षात् उपस्थित करने लगा। यह काम वह ऐसे उत्साहके साथ करने लगा, जैसे अनेक दिनके तर्क-वितर्कके बाद वह इस स्थिर सिद्धान्त में आकर पहुँचा है।

तथापि परेश बाबूने और भी कुछ दिनका समय लेनेके लिए उससे कहा, और अपने इस कथन पर खास तौर पर जोर दिया। इससे विनय ने सोचा, उसकी दृढ़ताके ऊपर परेश बाबू का संशय है। अतएव उसका आग्रह भी उतना ही बढ़ने लगा। उसका मन एक सन्देह-रहित स्थान पर आकर खड़ा हुआ है, किसी कारणसे अब उसके जरा भी डिगनेकी सम्भावना नहीं है—यही उसने बार-बार कहना शुरू किया। दोनों ओर से ललिताके साथ विवाहका कोई जिक्र ही नहीं हुआ।

इसी समय घरके किसी कामके लिए वरदासुन्दरीने वहाँ प्रवेश किया जैसे विनय वहाँ उपस्थित ही नहीं है, ऐसे भावसे अपना काम करके वह

वहाँसे जानेको उद्यत हुईं। विनयने समझा था, परेश बाबू अभी वरदासुन्दरीको बुलाकर उसके मत परिवर्तनकी नई खबर उन्हें जतावेंगे। किन्तु उन्होंने कुछ भी स्त्रीसे नहीं कहा। वास्तवमें परेश बाबूकी अब भी यही धारणा थी कि अभी किसी से यह समाचार कहने का समय ही नहीं आया। उनकी इच्छा थी कि यह बात अभी-सभीसे छिपी रहे, किन्तु वरदासुन्दरी जब विनयके प्रति सुस्पष्ट अवज्ञा और क्रोध प्रकट कर चले जाने को उद्यत हुईं, तब किसी तरह विनयसे चुप नहीं रहा गया। उसने गमनोन्मुख वरदासुन्दरीके पैरोंके पास सिर नवाकर प्रणाम किया, और कहा —मैं आज आपके पास ब्राह्म समाजमें दीक्षा लेनेका प्रस्ताव लेकर आया हूँ। मैं अयोग्य हूँ, किन्तु आप लोग मुझे योग्य बना लेंगे यही मुझे भरोसा है।

सुनकर विस्मित वरदासुन्दरी घूम कर खड़ी हो गईं, और धीरे-धीरे भीतर आकर बैठ गईं। उन्होंने जिज्ञासाकी दृष्टिसे परेश बाबूके मुखकी ओर देखा।

परेशने कहा—विनय बाबू दीक्षा लेनेके लिए अनुरोध करते हैं।

सुनकर वरदासुन्दरीके मनमें एक जय लाभ का गर्व अवश्य उपस्थित हुआ, किन्तु सम्पूर्ण आनन्द नहीं हुआ! यह क्यों? इसका कारण यही है कि उनके मन में भीतर ही भीतर बड़ी इच्छा थी कि अब की दफे परेश बाबू को यथेष्ट शिक्षा मिल जाय—अपनी लापरवाही की सजा पाकर उनकी आँखें आइन्दा के लिए खुल जायँ। उनके स्वामी को भारी और बहुत पश्चाताप करना होगा, इस भविष्यवाणी की घोषणा को वह खूब जोर के साथ बारम्बार कर चुकी थी। और, इसी कारण सामाजिक आन्दोलन से परेश बाबू को यथेष्ट विचलित न होते देख कर वरदासुन्दरी मन ही मन अत्यन्त असहिष्णु हो उठ रही थी। इसी बीच में सारे संकट की ऐसे अच्छे ढँग से एक मीमाँसा हो जाना वरदासुन्दरी को विशुद्ध प्रसन्नता नहीं पहुँचा सका। उन्होंने मुख का भाव गम्भीर बना कर कहा—यह

दीक्षा का प्रस्ताव और कुछ दिन पहले ही अगर होता तो हम लोगोंको इतना अपमान, इतना दुःख, न उठाना पड़ता।

परेश ने कहा—हम लोगों के दुःख कष्ट या अपमान की तो कोई बात हो नहीं रही है—विनय बाबू दीक्षा लेना चाहते हैं।

वरदासुन्दरी कह उठी—केवल दीक्षा?

विनयने कहा—वही अन्तर्यामी, जानते हैं कि आप लोगों का दुःख अपमान सब मेरा ही है।

परेश—देखो विनय, तुम धर्म की दीक्षा लेना जो चाहते हो, उसे एक आवान्तर विषय न करो। मैं तुमसे पहले और भी एक दिन कह चुका हूँ कि हमारे किसी सामाजिक सङ्कट में पड़ने की कल्पना करके तुम किसी गुरुतर कार्य में प्रवृत्त न होना।

वरदा०—यह तो ठीक है, लेकिन हम सबको जालमें डालकर चुप होकर बैठ रहना भी तो इनका कर्त्तव्य नहीं है।

परेश०—चुप होकर बैठ न रह कर चंचल हो उठनेसे जालमें और भी उलझ जाना होता है, और मजबूत गाँठ पड़ जाती है। कुछ-न-कुछ कर उठना ही कर्त्तव्य नहीं कहलाता—अनेक समय ऐसा होता है कि कुछ न कुछ करना ही सबसे बढ़कर कर्त्तव्य समझा जाता है।

वरदा०—यही होगा। मैं मूर्ख स्त्री ठहरी, सब बातें अच्छी तरह समझ नहीं सकती। अब क्या बात पक्की हुई यही जानकर मैं जाना चाहती हूँ—मुझे बहुत काम करने हैं।

विनयने कहा—परसों रविवारको ही मैं दीक्षा लूँगा। मैं चाहता हूँ, अगर परेश बाबू···।

परेश कह उठे—जिस दीक्षासे मेरा परिवार किसी फलकी आशा कर सकता है, वह दीक्षा मैं नहीं दे सकता। तुमको इसके लिए ब्राह्म-समाज में प्रार्थना-पत्र भेजना होगा।

विनय का मन उसी दम संकुचित हो गया। ब्राह्मसमाज में बदस्तूर दीक्षाके लिए प्रार्थना करनेके लायक मन की अवस्था तो विनय की नहीं

है—खास कर इस कारण और भी कि [illegible] साथ उसके सम्बन्धमें इतनी अलोचना हो गई है। कौन मुँह लेकर किस भाषामें वह प्रार्थनाका पत्र लिखेगा ! वह चिट्ठी जब ब्राह्म पत्रिकामें प्रकाशित होगी, तब वह किस तरह चार आदमियोंमें सिर उठा सकेगा ? वह चिट्ठी गोरा पढ़ेगा, आनन्दमयी पढ़ेगी। उस चिट्ठीके साथ और कोई इतिहास तो रहेगा ही नहीं उसमें केवल इतनी ही बात जाहिर होगी कि विनयका चित्त एकाएक ब्राह्म धर्मकी दीक्षा लेने के लिये उद्यत हो उठा है लेकिन बात तो उतनी ही सच नहीं है, उसे और भी कुछ शामिल करके न देखनेसे विनयके लिए लज्जा ढकनेका तनिक भी आवरण नहीं रहता !

विनयको चुप होते देखकर वरदासुन्दरीको भय हुआ। उन्होंने कहा—यह तो ब्राह्म समाजके किसी कार्यकर्त्ताको जानते पहचानते नहीं हैं—हम लोग ही सब बन्दोबस्त कर देंगे। मैं आज अभी हारान बाबूको बुलाये भेजती हूँ। अब तो और समय नहीं हैं—परसों ही तो रविवार है !

इसी समय देखा गया, सुधीर बैठकखानेके सामनेसे ऊपर जा रहा है। वरदासुन्दरीने उसे बुलाकर कहा—सुधीर, विनय बाबू परसों हमारे समाजमें दीक्षा लेंगे।

सुधीर अत्यन्त प्रसन्न हो उठा। सुधीर मन-ही-मन विनयका एक विशेष भक्त था। विनयके ब्राह्म-समाजमें अपने दलमें पानेकी खबरसे उसे भारी उत्साह हुआ। विनय जैसी बढ़िया अँगरेजी लिख सकता है, उस की जैसी विद्या बुद्धि है, उसके देखते उसका ब्राह्म-समाजमें शामिल न होना ही उसके लिए अत्यन्त असंगत सुधीरको जान पड़ता था। विनय जैसा आदमी किसी तरह ब्राह्म-समाजके बाहर नहीं रह सकता, इसीका प्रमाण पाकर सुधीर की छाती गर्व और आनन्द से फूल उठी। उसने कहा परसों रविवार तक ही क्या इसकी तैयारी हो सकेगी ? बहुतोंको खबर ही नहीं पहुंच सकेगी।

सुधीरकी यही इच्छा है कि विनयकी दीक्षाको एक दृष्टान्त या आदर्श की तरह सर्व साधारणके सामने उपस्थित किया जाय।

वरदासुन्दरीने कहा—ना, ना, इसी रविवारको हो जायगी। सुधीर तुम दौड़ जाओ, हारान बाबू को जल्द बुला लाओ।

जिस अभागेके दृष्टान्त द्वारा सुधीर ब्राह्म-समाजको अजेयशक्ति वाला सर्वत्र घोषित करनेकी कल्पनासे उत्तेजित हो उठ रहा था; उसका चित्त उस समय संकुचित होकर एकदम बूँद सा बना जा रहा था ! जो काम मनके भीतर केवल तर्क और युक्तिसे विशेष कुछ भी नहीं था उसीका बाहरी चेहरा देखकर व्याकुल हो उठा।

हारान बाबूकी पुकार पड़ते ही विनय उठ खड़ा हुआ। वरदासुन्दरीने कहा—जरा बैठ जाओ, हारान बाबू अभी आते हैं ज्यादा देर न होगी।

विनय—ना, मुझे माफ कीजियेगा।

वह इस समय इस घिरावसे दूर हट जाकर खुलेमें सब बातों पर अच्छी तरह गौर करने का मौका पावे तो उसकी जान बचे।

विनयके उठते ही परेश बाबूने उठकर उसके कंधे पर एक हाथ रख कर कहा—विनय, चटपट कुछ न करो—शांत होकर, स्थिर होकर सब बातें सोचकर देखो। अपने मन को पूर्ण रूप से अच्छी तरह समझे बिना जीवन के इतने बड़े एक काम में प्रवृति होना ठीक नहीं।

—:०:-::*::-:०:—

[५६]

वरदासुन्दरीने जब हारान बाबूको बुलाकर सब बातें कहीं तब वह कुछ देर गम्भीर भाव धारण किये बैठे रहे और बोले—इस विषयमें एक बार ललिता से भी पूछ लेना आवश्यक जान पड़ता है।

ललिताके आनेपर हारान बाबू अपने गाम्भीर्यकी मात्राको ऊपर चढ़ा कर बोले—देखो ललिता, तुम्हारे जीवनके एक बहुत बड़े दायित्वका समय आ पहुँचा है। एक ओर अपना धर्म और दूसरी ओर अपने मन की प्रवृत्ति, इन दोनोंके बीचमें तुमको मार्ग बनाकर चलना होगा।

ललिता कुछ न बोली, चुप हो रही।

हारान बाबूने कहा—शायद तुम सुन चुकी हो, तुम्हारी अवस्था पर दृष्टि करके या किसी दूसरे ही कारणसे विनय बाबू आखिर हमारे समाजमें दीक्षा लेने को राजी हुये हैं।

ललिताने पहले यह बात न सुनी थी। सुननेसे उसके मनमें क्या भाव उत्पन्न हुआ, इसेभी उसने प्रकाशित न किया। उसकी आँखें मानों निर्निमेष हो गईं। वह पत्थरकी प्रतिमाकी भांति स्थिर हो बैठी रही।

हारान बाबू ने कहा—विनयकी इस बाध्यतासे परेश बाबू वास्तवमें बड़े प्रसन्न हैं। किन्तु इसमें वास्तविक आनन्द होने की कोई बात है या नहीं, यह तुम्हींको निश्चय करना होगा। इस लिये मैं आज तुमसे ब्राह्म-समाजके नाम पर अनुरोध करता हूं कि अपनी उन्माद-भरी प्रवृत्तिको तब तक एक ओर हटा रक्खो, और केवल धर्मकी ओर दृष्टि करके अपने मन से पूछो—इसमें प्रसन्न होनेका यथार्थ कारण क्या है?

ललिता अब भी कुछ न बोली। हारान बाबूने समझा, ललिता मेरे मतमें आ गई है। अतएव वह दूने उत्साहके साथ बोले—दीक्षा! दीक्षा जीवनकी एक पावनी शक्ति है, क्या वही बात आज एक अनधिकारी से

मुझको कहनी पड़ेगी। उस दीक्षाको कलुषित करना होगा! सुख, सुविधा या प्रेमशक्ति के खिंचावसे हम ब्राह्म-समाजमें असत्यको घुसने दें, कपटको सादर आह्वान करें! क्यों, ललिता! तुम्हारे जीवनके साथ ब्राह्म समाज की इस दुर्गतिका इतिहास क्या सदाके लिए मिश्रित न हो रहेगा! ललिता इस पर भी कुछ न बोली, और वहां से चली गई।

वरदासुन्दरीको भी हारान बाबूकी बात अच्छी न लगी। अब वह किसी तरह विनयको छोड़ना न चाहती थी। उसने हारानबाबूसे अनेक व्यर्थ अनुनय-विनय करके, आखिर रुष्ट होकर, उसे बिदा कर दिया। वह इस कारण-बड़ी कठिनाईमें पड़ी कि उसने न तो परेश बाबूको अपने पक्षमें कर पाया और न हारानबाबूको ही!

जब तक दीक्षा लेने की बातको विनय मामूली तौरसे देख रहा था तब तक बड़ी दृढ़ताके साथ अपने संकल्पको प्रकाशित कर रहा था। किन्तु जब उसने देखाकि इसके लिये उसे ब्राह्म-समाजमें निवेदन करना होगा और इस विषय पर हारान बाबूके साथ परामर्श करना पड़ेगा तब वह एकाएक घबरा गया। मैं कहाँ जाकर किससे सलाह लूँ, यह उसकी समझ में न आया। यहाँ तक कि आनन्दमयीके पास जाना भी उसके लिये कठिन हो गया। सड़क पर जाकर टहलने की शक्ति भी उसमें न रही। इसी से वह अपने ऊपर वाले सूने कमरे में जाकर तख्त पर लेट रहा।

साँझ होनेमें अब विलम्ब नहीं है। अँधेरे घरमें चिराग बत्ती करनेके लिए नौकर को आते विनय मना करना ही चाहता था कि इतनेमें किसीने विनयको नीचे से पुकारा।

उसने देखा, आँगनमें जीनेके सामने ही शतीशके साथ वरदासुन्दरी खड़ी हैं। फिर वही बात वही विचार। विनय बड़ी घबराहटके साथ सतीश और वरदासुन्दरी को ऊपरके कमरे में ले गये।

वरदासुन्दरीने सतीशसे कहा—बेटा सतीश तू कुछ देरके लिए बरामदेमें जाकर बैठ।

विनयने उसे कितनी ही चित्राङ्कितपुस्तकें देकर पासवाले एक कमरे में चिराग जलाकर, बिठाया।

बरदासुन्दरीने कहा—विनय, तुमतो ब्राह्म समाज में किसी को जानते नहीं हो। तुम एक चिट्ठी लिखकर मुझे दे दो, मैं कल सवेरे स्वयं जाकर सम्पादक महाशय को देकर सब बन्दोबस्त कर दूँगी जिससे रविवार को ही तुम्हारी दीक्षा हो जाय। तुमको अब कुछ भी तरद्दुस्त करना न पड़ेगा।

विनय इस पर कोई उज्र न कर सका। उसने बरदासुन्दरीकी आज्ञाके अनुसार एक चिट्ठी लिखकर उसको दे दी। जो हो, अब एक मार्गकी आवश्यकता थी जिससे कि दुविधामें पड़ने का उपाय न रह जाय।

ललिता के साथ विवाह की चर्चा भी वरदासुन्दरीने छेड़ दी। वरदासुन्दरी के चले जाने पर विनय के मनमें कुछ और ही भाव उदय होने लगा यहाँ तक की ललिता का स्मरण भी अब उसके हृदय में असह्य हो गया।

वरदासुन्दरी घर लौटकर आशा करने लगी कि ललिता को आज मैं प्रसन्न कर सकूँगी। ललिता विनयको हृदयसे चाहती थी यह बरदासुन्दरी भली भांति जानती थी। इसलिए उन दोनोंके विवाहकी बात पर समाजमें पहले खूब आन्दोलन मचा था। पीछे वह अपनेको छोड़ सभी को इसके लिए अपराधी समझने लगी। कई दिनों तक उसने एक तरह से ललिताके साथ बातचीत करना छोड़ दिया था। किन्तु आज जब बात का फैसला हो गया तब वह अपनी इस सफलताको ललिताके निकट प्रकाशित करके उसके साथ सन्धि स्थापन करनेके लिए व्यग्र हो उठी। ललिताके पिताने तो सब मिट्टी कर दिया था ललिता स्वयं भी तो विनय को रास्ते पर न ला सकी हारान बाबूसे भी कोई सहायता न मिली अकेली वरदासुन्दरी ही ने सब उलझनों को सुलझाया है।

यों सोचते सोचते जब वह घर आई तब उसने सुना कि ललिता आज सवेरे ही सोनेको चली गई है; उसका जी अच्छा नहीं है। वरदासुन्दरीने मन ही मन हँसकर कहा—मैं उसका जी अच्छा कर दूँगी।

एक चिराग जला हाथमें ले, ललिताके शयन गृहमें जाकर देखा, वह अब भी बिछौने पर न सोकर एक आराम कुरसी पर पड़ी है।

ललिता तुरन्त उठ बैठी और बोली—मां तुम कहाँ गई थी।?

उसके स्वरमें कुछ तीव्रता थी। वह पहले सुन चुकी थी, कि माँ सतीशको लेकर विनयके घर गई हैं।

वरदासुन्दरीने कहा—मैं विनयके घर गई थी।

ललिता—क्यों?

इस क्योंसे वरदासुन्दरीके मनमें कुछ क्रोध हुआ। ललिता समझती है, मैं केवल इसका अनिष्ट ही करती फिरती हूँ। जा तू बड़ी अकृतज्ञ है?

वरदासुन्दरीनेकहा—क्यों गई थी, यह मैं बताती हूँ। यह कहकर विनयकी वह चिट्ठी उसने ललिताको आँखोंके सामने रख दी। वह चिट्ठी पढ़कर ललिताका मुँह लाल हो गया। वरदासुन्दरी अपनी कार्य-सफलता प्रकट करनेकी इच्छासे कुछ बढ़ा-चढ़ाकर बोली—यह चिट्ठी क्या विनयके हाथसे सहज ही निकल सकती थी! मैंने बड़ी-बड़ी युक्तियों से यह चिट्ठी उससे लिखवाई है, यह काम दूसरेसे कदापि न हो सकता।

ललिता दोनों हाथोंसे मुंह ढाक कर आराम कुरसी पर पड़ रही। वरदासुन्दरीने समझा मेरे सामने ललिता अपने हृदयके प्रबल वेगको प्रकाशित करनेमें लजाती है। वह कोठेसे बाहर हो गई।

दूसरे दिन सबेरे चिट्ठी लेकर ब्राह्म-समाजमें जानेके समय वरदासुन्दरीने देखा ललिताने उस चिट्ठीको टुकड़े टुकड़े कर फाड़ डाला।

[५७]

दिनको तीसरे पहर जब सुचरिता परेश बाबू के पास जाने का विचार कर रही थी तब नौकरने आकर खबर दी, एक बाबू आये हैं। कौन बाबू? विनय बाबू? नौकरने कहा—नहीं, अत्यन्त गोरे रङ्गका एक लम्बा सा बाबू है। सुचरिता बोली—बाबूको ऊपर के कमरेमें ले जाकर बिठाओ।

आज सुचरिता कौन कपड़ा पहने हुए है और कैसे पहने हुए है, इसका कुछ भी खयाल उसके मनमें न था। इस समय बड़े आईनेके पास खड़ी होकर उसने देखा तो उसे वह कपड़ा किसी तरह पसन्द न आया। एक तो कपड़ा उसके पसन्द लायक नहीं; दूसरे वह भी मामूली तरहसे पहने हुए थी, जिसे देखकर वह और भी लज्जित हुई। पर उस समय कपड़ा बदलने का समय न था। काँपते हुए हाथ से आँचल और बालोंको सँवारकर, सुचरिता धड़कते हुए हृदयको लेकर ऊपरके कमरेमें गई। देखा ठीक सामने गोरा कुर्सी पर बैठा है।

"मौसी आपको देखनेके लिए बहुत दिनोंसे व्याकुल हो रही हैं, मैं उनको खबर दे आती हूं" यह कह कर वह चौखटके भीतर हरिमोहिनी को लेने के लिए चली गई।

आज गोराकी ओर देखते ही हरिमोहिनी एकदम आश्चर्यमें डूब गई। ऐं! यह तो सच्चा ब्राह्मण है। मानों होमकी प्रज्वलित अग्नि है। मानों यह कर्पूरकाय महादेव है। उसके मनमें एक ऐसी भक्तिका संचार हुआ कि गोरा ने जब उसको प्रणाम किया तब वह संकुचित हो गई और अपनेको प्रणाम लेनेके अयोग्य जान कुण्ठित हो उठी।

हरिमोहिनीने कहा—बेटा! तुम्हारे विषयमें मैंने बहुत बातें सुनी है, तुम्हीं गौर हो? तुम यथार्थमें गौर हो!

किस बुद्धिसे हाकिमने तुमको जेल दिया मैं यही सोच रही हूँ ।

गोराने हँसकर कहा—अगर आप मजिस्ट्रेट होतीं तो जेलखानेमें चूहे छछून्दरका डेरा होता ।

हरिमोहिनीने कहा—नहीं बाबू, संसारमें चोर डाकुओंकी क्या कमी है जो उनके बदले साधुओंको जेलका कष्ट भोगना पड़े । क्या मजिस्ट्रेटके आँखें न थी ? तुम चोर न डाकू फिर उसने तुम्हें कैदकी सजा क्यों दी ? तुम तो भगवानके पूरे भक्त हो; सच्चे देश हितैषी हो; यह तुम्हारा चेहरा देखने ही से मालूम है ।

गोराने कहा—मनुष्यके मुँह को देखने से पीछे भगवानके रूप का स्मरण न हो आवे, इसीसे मजिस्ट्रेट केवल कानूनकी किताबकी ओर देखकर काम करता है किसी मनुष्य का मुँह देखकर काम नहीं करता ।

हरिमोहिनी—जब छुट्टी मिलती है तब मैं राधारानीसे तुम्हारी रचनावली पढ़वा कर सुनती हूं । कब तुम्हारे मुँहसे अच्छी-अच्छी बातें सुनूं मैं इसी प्रत्याशामें इतने दिन से थी । मैं मूर्ख स्त्री और जन्म की दुखिनी हूँ न हित की सब बातें मेरी समझमें आती हैं और न समझ कर उन पर ध्यान ही देती हूं । किन्तु अब तुमसे कुछ ज्ञानकी शिक्षा पाऊँगी ।

गोराने नम्रतासे सिर झुका लिया । इस बातका कुछ उत्तर नहीं दिया ।

हरिमोहिनीने कहा—आज तुमको कुछ खाकर जाना होगा । तुम्हारे सदृश विशुद्ध ब्राह्मण कुमारको मैंने बहुत दिनोंसे नहीं खिलाया । आज जो कुछ मौजूद है उसीसे मुँह मीठा कर लो । किसी दिन तुमको मेरे घर अच्छी तरह भोजन करना होगा । मैं आज से ही नेवता दे रखती हूं ।

यह कहकर जब हरिमोहिनी गोराके लिए जल-पानकी व्यवस्था करने गई तब सुचरिता की छाती धड़कने लगी ।

गोरा झट पूछ बैठा—आज विनय आपके यहां आया था ?

सुचरिता दबी जबान से बोली—जी हां ।

गोरा—उसके बादसे विनयके साथ मेरी भेट नहीं हुई है, किन्तु वह क्यों आया था यह मैं जानता हूँ ।

गोरा यह कहकर चुप हो रहा सुचरिता भी चुप हो रही।

कुछ देरके बाद गोरा ने कहा—आप लोग जो ब्राह्म-मत के अनुसार विनय का व्याह कर देना चाहती हैं यह क्या उचित है?

इस बातकी ठेस लगनेसे सुचरिताके मनसे सङ्कोचका भाव एकदम दूर हो गया। उसने गोराके मुँहकी ओर देखकर कहा—क्या आप मुझसे यही कहलाना चाहते हैं कि ब्राह्म मतसे विवाह होना अच्छा नहीं है?

गोरा मैं आपसे केवल यही नहीं कहलाना चाहता; मैं तो आपसे बहुत कुछ कहलाने की आशा रखता हूँ। आप किसी एक दलकी व्यक्ति नहीं हैं, यह आपको अपने मनमें विचारना चाहिए और पांच आदमियों की बातमें पड़कर आप अपने तईं हीन न समझें।

सुचरिता सावधान होकर बोली—क्या आप किसी दलमें नहीं हैं।

गोरा—नहीं, मैं तो हिन्दू हूं। हिन्दू कोई दल नहीं, कोई सम्प्रदाय नहीं। हिन्दू एक जाति है। यह जाति इतनी बड़ी है कि कोई इस जाति के जातित्वको किसी संज्ञाके द्वारा सीमा बद्ध करे, यह नहीं हो सकता।

सुचरिता—यदि हिन्दू कोई सम्प्रदाय नहीं तो वह साम्प्रदायिक झमेलेमें क्यों पड़ता है?

गोरा—मनुष्यको कोई मारने जाता है तो वह अपनेको क्यों बचाना चाहता है? वह सजीव है, उसके प्राण हैं, इसीलिए न? पत्थर ही एक ऐसा निर्जीव पदार्थ है जो सब प्रकारके आघातोंको चुपचाप सह लिया करता है।

सुचरिताने कहा—जिसे मैं धर्म समझती हूं उसे यदि हिन्दू आघात समझें तो ऐसी दशामें आप मुझे क्या करनेकी सलाह देंगे?

गोरा—तब मैं आपको यही सलाह दूंगा कि जिसको आपने कर्तव्य समझ लिया है वह यदि हिन्दू जातिकी इतनी बड़ी सत्ताके लिए हानि-कारक आघात गिना जाय तो आपको खूब सोच विचार कर देखना होगा कि आपकी समझमें कोई भूल या धर्मान्धता तो नहीं है। आपने सब ओर भली भांति सोचकर देखा है कि नहीं? अपने दलके लोगोंके संस्कार

को केवल अभ्यास या आलस्य वश सत्य कहकर एक इतना बड़ा उत्पात करनेकी प्रवृत्ति होना ठीक नहीं।

सुचरिता कुछ उत्तर न देकर चुपचाप गोराकी बात सुनती जा रही थी। यह देखकर गोराके मनमें दयाका संचार हो आया वह जरा रुककर कोमल स्वरमें बोला—मेरी बातें शायद आपको सुनने में कठोर मालूम हुई हों, पर इससे आप मुझे विरुद्ध पक्षका मनुष्य समझ मनमें विद्रोहका भाव न रक्खें। अगर मैं आपको विरुद्ध पक्षकी समझता तो आपसे ये बातें न कहता। आपके हृदयमें जो एक स्वभाविक उदार शक्ति है, वह समाजके भीतर रहकर संकुचित हो रही है, इसीका मुझे बड़ा खेद है।

सुचरिताका मुँह लाल हो गया। उसने कहा—नहीं, नहीं, आप मेरे लिए कुछ सोच न करें। आपको जो कहना हो, कहिए।

गोराने कहा—मुझे अब और कुछ कहना नहीं है। आप भारतवर्ष को अपनी सरल बुद्धि और सरल हृदय के द्वारा देखें। इसे आप प्यार करें। भारतवर्ष के लोगों को यदि आप अब्राह्म की दृष्टि से देखेंगी तो अवश्य उन्हें तुच्छ समझ उनका अपमान करेंगी। तब आपको केवल उनकी भूल ही भूल सूझेगी। जहाँ से उनके सम्पूर्ण गुण-दोष देख पड़ेंगे वहाँ तक आप न पहुँच सकेंगी। ईश्वर ने इन्हें भी मनुष्य बनाया है। इनका विचार भिन्न है, मार्ग भी एक नहीं। इनका विश्वास और संस्कार भी अनेक प्रकार के हैं। किन्तु सभी का आधार एक मनुष्यत्व है।

सुचरिता सिर नीचा किये सुन रही थी। उसने एक बार गोरा के मुँह की ओर देखकर कहा—आप मुझे क्या करने को कहते हैं?

गोरा—और कुछ नही कहता, मैं सिर्फ इतना ही कहता हूँ कि आपको यह बात खूब सोचकर देखनी होगी कि हिन्दू धर्म पिताकी भांति—नाना भावोंके, नाना मतों के, लोगों को अपनी गोद में लेने के लिए सदा प्रस्तुत रहता है—अर्थात् एक हिन्दू धर्म ही ऐसा है जो संसार में मनुष्यों को मनुष्य समझ अङ्गीकार करता है; समाज को व्यक्ति जान उसे मनुष्यों से भिन्न जाति का जीव नहीं मानता।

इसी समय सतीश घरमें आया। और धीरे-धीरे बोला—हारान बाबू आए हैं। सुचरिता चौंक उठी, मानो किसी ने चाबुक मारा हो। हारान बाबू का आना उसे अच्छा न लगा। उसे किसी तरह टाल देने ही में उसने अपना कुशल समझा और उनका आना गोरा को जाहिर न हो, यह भी उसकी आन्तरिक इच्छा थी। सतीश की धीमी आवाज गोरा के कान तक न पहुंची होगी, यह समझकर सुचरिता झट वहाँ से उठी। उसने जीने से नीचे उतर हारान बाबू के सामने खड़ी होकर कहा—मुझे क्षमा कीजिये, आज आपके साथ बातचीत करने की सुविधा न होगी।

हारान बाबू—सुविधा क्यों न होगी।

सुचरिता इसका सीधा उत्तर न देकर बोली—कल यदि आप पिता जी के यहाँ आवें तो मुझसे भेंट हो सकेगी।

हारान बाबू—मालूम होता है, इस समय आपके यहाँ कोई बैठा है?

इस प्रश्न को भी सुचरिता ने उड़ा दिया। उसने कहा—आज मुझे फुरसत नहीं। आज कृपा कर मुझे क्षमा करें।

हारान बाबू—किन्तु सड़क से गौर बाबू का कंठस्वर सुन पड़ा है, मालूम होता है वे अभी यहीं हैं।

इस प्रश्नको वह टाल न सकी, मुँह लाल करके बोली—हाँ, हैं तो।

हारान बाबू ने कहा—अच्छी बात है, उनसे भी मुझे कुछ कहना था। यदि आपको बात-चीत करने की फुरसत न हो तो कोई हर्ज नहीं है तब तक गौर बाबू से बातचीत करूँगा।

यह कह कर और सुचरिता से सम्मति की प्रतीक्षा किये बिना ही वह जीने से ऊपर जाने लगे। सुचरिता हारान बाबू के प्रति कोई लक्ष्य न करके ऊपर के कमरे में गई और गौर बाबू से बोली—मौसी आपके लिए जलपान तैयार करने गई हैं, उन्हें देख आऊँ।—यह कह कर वह चली गई और हारान बाबू गम्भीर भाव धारण करके एक कुर्सी पर जा बैठे।

हारान बाबू ने गोरा से कहा—आप कुछ दुर्बल दिखाई देते हैं?

गोरा—जी हाँ, दुर्बल होने का कारण ही था।

हारान बाबूने कण्ठस्वर को कुछ कोमल करके कहा—इसीसे तो, ओफ ! आपको बड़ा कष्ट सहना पड़ा है ।

गोरा—जितने कष्ट की आशा की जाती है उससे अधिक कुछ भी नहीं हुआ ।

हारान—विनय बाबू के सम्बन्ध में आपसे कुछ पूछना है । आपने सुना ही होगा कि उन्होंने आगामी रविवार को ब्राह्मसमाज में दीक्षा लेने का निश्चय किया है ।

गोरा—जी नहीं, मैंने तो नहीं सुना ।

हारान बाबू ने पूछा—आपकी इसमें सम्मति है ?

गोरा—विनय तो मेरी सम्मति की अपेक्षा नहीं रखता ।

हारान बाबू—क्या आप समझते हैं कि विनय बाबू पक्के विश्वासके साथ यह दीक्षा लेने को तैयार हुए हैं ?

गोरा—जब वह दीक्षा लेनेको राजी हुआ है, तब आपका यह पूछना बिलकुल अनावश्यक है ।

हारान बाबू—जब प्रवृत्ति प्रबल हो उठती है तब हम लोगों को यह विचार कर देखने का अवसर नहीं मिलता कि किसे मानना चाहिए और किसे नहीं । आप तो मनुष्य का स्वभाव जानते ही हैं ।

गोरा—जी नहीं, मैं मनुष्य के स्वभाव के ही विषय में व्यर्थ आलोचना नहीं करता ।

हारान बाबू—आपके साथ मेरा या मेरे समाज का मत नहीं मिलता तो भी मैं आप पर श्रद्धा करता हूँ । मैं बखूबी जानता हूँ कि आपको अपने विश्वास से, चाहे वह सत्य हो या मिथ्या, कोई किसी प्रलोभन से हटा नहीं सकता । किन्तु—

गोरा ने रोक कर कहा—मुझ पर जो आपकी कुछ श्रद्धा बच रही है क्या वह इतनी मूल्यवान् है कि उससे वंचित होने के कारण विनय को विशेष हानि सहनी पड़े । संसार में भली बुरी वस्तुएँ अवश्य हैं किन्तु

आप अपनी श्रद्धा या अश्रद्धा द्वारा उनका मूल्य निरूपण करें तो भले ही करें, पर बात इतनी है कि आप संसार के लोगोंसे उसे ग्रहण करने के हेतु आग्रह न करें।

हारान बाबू—अच्छा, उस बात की मीमांसा अभी न होनेसे भी काम चल जायगा। किन्तु मैं आपसे पूछता हूं कि विनय जो परेश बाबू के घर विवाह करना चाहते हैं सो क्या आप उसमें रोकटोक न करेंगे ?

गोरा ने लाल आखें करके कहा—मैं विनय के सम्बन्ध में आपके साथ क्या यह आलोचना कर सकता हूँ ? जब आप मानव स्वभाव से परिचित हैं तब आपको यह भी जानना उचित था कि विनय मेरा मित्र है, आपका नहीं।

हारान बाबू—इस घटना के साथ ब्राह्म समाज का सम्बन्ध है, इस लिए मैंने यह बात चलाई है, नहीं तो—

गोरा—मैं तो ब्राह्म समाज का कोई नहीं हूं, मुझसे आपका यह कहना न कहने के बराबर है।

इसी समय सुचरिता घर में आई। हारान बाबूने उससे कहा—सुचरिता, तुमसे मुझे कुछ कहना है।

गोरा के सामने सुचरिताके साथ अपनी विशेष घनिष्टता प्रकट करने ही के लिए हारान बाबू ने निष्प्रयोजन यह बात कही थी। सुचरिता ने इसका कुछ उत्तर न दिया। गोरा भी अपने आसन पर अटल भाव से बैठा रहा। हारान बाबू को सुचरिता के साथ बात करने का अवकाश देने को उसने वहाँ से हट जाने की कोई चेष्टा न की।

हारान बाबू ने कहा—सुचरिता उठो, उस कमरे में चलो तो तुमसे मुझे जो कहना है, वह मैं कह दूँ।

सुचरिता ने इस बात को अनसुनी कर गोरा की ओर देखकर कहा—गोरा बाबू, आपके लिए जलपान का सब सामान ठीक हो गया। आप इस कमरे में चलिए। मौसी जलपान लेकर यहीं आतीं, परन्तु वे हारान

बाबू के सामने नहीं निकलतीं इसीलिए वे बड़ी देर से आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।

यह आखिरी बात हारान बाबू के मन में चोट पहुँचाने ही के मतलब से सुचरिता ने कही। आज उसने बहुत सहा है, तो भी चोट के बदले चोट लगाये बिना न रह सकी।

गोरा उठा। हारान बाबू धृष्ट की तरह बोले—मैं तब तक बैठता हूँ।

सुचरिता—व्यर्थ क्यों बैठिएगा? बातचीत करने का समय न रहेगा।

तो भी हारान बाबू न उठे। सुचरिता और गोरा दोनों वहाँ से चले गये।

गोराको इस घरमें इस प्रकार बैठे देख और सुचरिता के व्यवहार पर लक्ष्य करके हारान बाबूका मन लोहा लेनेको तैयार हो गया। क्या सुचरिता ब्राह्म-समाजसे यों भ्रष्ट हो नीचे गिर जायगी? उसकी रक्षा करनेवाला कोई भी नहीं है? इसका प्रतिरोध करना ही होगा।

हारान बाबू दराजसे कागज खींच सुचरिता को पत्र लिखने बैठे। हारान बाबूके मनमें कितने ही अन्ध विश्वास थे। उनमें एक यह भी था कि सत्य की दुहाई देकर जब हम किसी को फटकार बताते हैं तब हमारा ओजस्वी वाक्य विफल नहीं हो सकता।

भोजन के उपरान्त हरिमोहिनी के साथ बड़ी देर तक बात करके गोरा जब अपनी छड़ी लेने के लिये सुचरिताके कमरेमें गया तब सूर्यास्त हो चुका था। हारान बाबू चले गये हैं। सुचरिताके नामकी लिखी एक-चिट्ठी टेबल पर खुली पड़ी है। वह इस तरह से रक्खी हुई हैं कि कमरे के भीतर प्रवेश करते ही उस पर दृष्टि पड़े।

उस चिट्ठीको देखते ही गोराके हृदय का भाव बदल गया। जो पहले मक्खन से भी मुलायम था वह एकाएक पत्थर से भी बढ़कर कठोर हो गया। चिट्ठी हारान बाबूके हाथ की लिखी है, इसमें कोई सन्देह न रहा। सुचरिता पर जो हारान बाबूका एक विशेष अधिकार है यह गोरा जानता था। इस अधिकारमें कोई अन्तर आ पड़ा है, यह वह न

जानता था। आज जब शतीशने सुचरिताके कानमें हारान बाबूके आने की बात कही और सुचरिता चौंकर बड़ी शीघ्रतासे नीचे चली गई तथा फिर थोड़ी ही देर बाद उसे अपने साथ ऊपर ले आई गोराके मनमें इससे बड़ी चिन्ता हुई। इसके बाद जब हारान बाबूको कमरेमें अकेला छोड़ सुचरिता गोराको जलपान कराने के लिए ले गई तब यह व्यवहार भी गोरा को अच्छा न लगा परन्तु अधिक घनिष्ठताकी जगह ऐसा रूखा व्यवहार हो सकता है, यह समझ कर गोराने इसे आत्मीयताका ही लक्ष्य समझा। इसके अनन्तर टेबल पर यह चिट्ठी देखकर गोराके मनमें एक भारी धक्का लगा। पत्र बड़ी ही रहस्यमय वस्तु है। वह बाहरसे केवल नाम दिखाकर भीतर सब बातें रख लेती है जिससे मनुष्य भांति-भांतिके तर्क-वितर्क करने लग जाते हैं, मूल कुछ न रहने पर भी उन्हे आकाश-पातालकी बातें सोचनी पड़ती है।

गोराने सुचरिताके मुँहकी ओर देखकर कहा—मैं कल आऊँगा।

सुचरिताने नीची नजर करके कहा—बहुत अच्छा।

विनय ने आनन्दमयी से कहा—मां, मैं परसों ब्राह्म-समाज में दीक्षा लूंगा!

आनन्दमयी ने विस्मित होकर कहा—यह कैसी बात है विनय? दीक्षा लेना क्या ऐसा ही जरूरी हो पड़ा है?

विनय—हाँ, लेना जरूरी हो पड़ा है।

आनन्द०—तेरा जो कुछ विश्वास है, उसे लेकर क्या तू हमारे समाज में रह नहीं सकता?

विनय—रहने से कपट करने का पाप होगा।

आनन्द०—कपट न करके रहने का तुझे साहस नहीं है? समाज के लोग उस दशा में कष्ट देंगे—तो कष्ट सहकर तू रह नहीं सकेगा?

विनय—माँ, मैं अगर हिन्दू समाज के मत में न चलूं तो...।

आनन्द०—हिन्दू समाज में अगर तीन सौ तैंतीस करोड़ मत चल सकते हैं, तो तेरा ही मत क्या नहीं चलेगा?

विनय—मगर मां हमारे समाज के लोग अगर कहें कि तुम हिन्दू नहीं हो, तो मेरे जबरदस्ती कहने से ही क्या मैं हिन्दू बना रहूँगा।

आनन्द०—मुझे तो मेरे समाज के लोग ईसाई कहते हैं तो भी मुझे उनके ईसाई कहने से ही उनकी वह बात मुझे मान लेनी ही होगी, ऐसा तो मैं नहीं समझती जिसे मैं उचित जानती-मानती हूं उसके लिए कहीं भाग कर बैठ रहने को मैं न्याय समझती हूँ।

विनय इसका उत्तर देने जा रहा था। आनन्दमयी ने कुछ कहने न देकर कहा—विनय मैं तुझे बहस न करने दूंगी। यह बहस की बात नहीं है! मैं देख पा रही हूँ कि मेरे साथ बहस करने का बहाना लेकर तू जबरदस्ती अपने को बहलाने की चेष्टा करता है। किन्तु इतने बड़े गुरु-तर मामले में इस तरह धोखाधड़ी चलाने का इरादा मत कर!

विनय से सिर झुका कर कहा—लेकिन माँ, मैं तो चिट्ठी लिखकर वचन दे आया हूँ कि कल दीक्षा लूँगा।

आनन्द०—यह हो न सकेगा। परेश बाबू से अगर तू समझा कर कहेगा, तो वह कभी दीक्षा लेने के लिये तुझ पर दबाव न डालेंगे।

विनय—परेश बाबू को इस दीक्षा लेने के मामले में कुछ उत्साह नहीं है! वह इस अनुष्ठान में सम्मिलित नहीं हैं।

आनन्द०—तो फिर कुछ सोचना न होगा।

विनय—ना, माँ, बात पक्की हो गई है, अब लौटाई नहीं जा सकेगी।

आनन्द० - गोरा से तो कहा है?

विनय०—गोरा के साथ मेरी भेंट नहीं हुई। खबर मिली है कि वह सुचरिता के घर गया था।

इस समय आँगन में पालकी के कहारों की आवाज सुन पड़ी। किसी स्त्री के आने की कल्पना करके विनय बाहर चला गया।

ललिता ने आकर आनन्दमयी को प्रणाम किया। आज आनन्दमयी ने किसी तरह ललिता के आने की प्रत्याशा नहीं की थी। विस्मित होकर ललिता के मुख की ओर देखते ही वह समझ गई कि विनय की दीक्षा आदि के मामले को लेकर कहीं पर कुछ सङ्कट उपस्थित हुआ है और इसीसे ललिता इस समय उनके पास आई है।

उन्होंने बात छेड़नेकी सुविधा कर देनेके लिने कहा—बेटी, तुम्हारे आनेसे मुझे बड़ी खुशी हुई। अभी विनय यहीं था, कल वह तुम्हारे समाजमें दीक्षा लेगा, यही जिक्र अभी मेरे साथ हो रहा था।

ललिता—वह दीक्षा क्यों ले रहे हैं? उसका क्या कुछ प्रयोजन है?

आनन्दमयीने विस्मित होकर कहा—प्रयोजन नहीं है बेटी?

ललिता—मैं तो सोचकर कुछ प्रयोजन नहीं देख पाती? अकस्मात इस तरह दीक्षा लेने जाना उनके लिये अपमानकी बात है। यह अपमान वह काहेके लिये स्वीकार करने जाते है?

काहेके लिये ? यह बात क्या ललिता नहीं जानती ? इसके भीतर क्या ललिताके लिये आनन्दमयीकी बात कुछ भी नहीं ?

आनन्दमयीने कहा—कल दीक्षाका दिन है, जबान दे चुका है—अब उसे पलटने का कुछ उपाय नहीं है। विनय तो यही कह रहा था।

ललिताने आनन्दमयीके मुखकी ओर अपनी प्रदीप्त दृष्टि स्थिर करके कहा—इन सब मामलोंमें पक्की बातचीतके कुछ भी माने नहीं है। यदि परिवर्तन आवश्यक हो, तो वह करना ही होगा।

आनन्द०—बेटी तुम मुझसे लज्जा न करो। मैं सब बातें तुमसे खुलासा करके कहती हूं। अभी कुछ ही देर हुई। मैं विनयको समझा रही थी कि उसका धर्म विश्वास चाहे जो और चाहे जैसा हो समाजको त्याग करना उसे उचित भी नहीं है, जरूरी भी नहीं है। मुँह से चाहे जो वह कहे, वह भी इस बातको नहीं समझता—यह भी मैं नहीं कह सकती। लेकिन बेटी उसके मन का भाव तुमसे तो छिपा नहीं है ; वह निश्चय जानता है कि समाजको छोड़े बिना तुम लोगों के साथ उसका सम्बन्ध हो नहीं सकता। लज्जा न करो बेटी ठीक-ठीक कहो।

ललिताने आनन्दमयीके आगे सिर उठाकर कहा—माँ तुम्हारे आगे मैं बिल्कुल लज्जा नहीं करूंगी। मैं तुमसे सच कहती हूं कि मैं यह सब कुछ नहीं मानती। मैंने खूब अच्छी तरह सोचकर देख लिया है कि यह कोई जरूरी बात नहीं है कि मनुष्य का कोई भी धर्म, विश्वास समाजसे क्यों न हो उसे छोड़कर ही मनुष्य परस्पर मिल सकते हैं—यह बात कभी हो ही नहीं सकती। तब तो बड़ी बड़ी दीवारें उठाकर एक एक सम्प्रदाय को एक एक घेरेके भीतर रख देना ही उचित है।

आनदमयीका मुख आनन्दकी आभासे उज्ज्वल हो उठा। उन्होंने कहा—आहा, तुम्हारी बातें सुनकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ। मैं तो यही बात कहती हूँ। एक मनुष्यके साथ मनुष्यका रूप गुण या स्वभाव कुछ भी नहीं मिलता, तब भी तो उस भेद के कारण दो मनुष्य के मिलने में कोई रुकावट नहीं होती—फिर मत और विश्वासके भेद से ही क्या

रुकावट होगी ? बेटी, तुमने मेरी जान बचा ली, मुझे विनयके लिये बड़ी चिन्ता हो रही थी। मुझे मालूम है कि उसने अपना मन और सभी कुछ तुम लोगोंको दे दिया है। तुम लोगोंके साथ सम्बन्धमें यदि उसके कहीं पर कुछ आघात लगेगा तो, उसे वह तो किसी तरह सह नहीं सकेगा। इसीसे उसे इस काममें बाधा देने से मेरे मनमें कैसी व्यथा हो रही थी, सो वह अन्तर्यामी ही जानते हैं। किन्तु उसका कैसा सौभाग्य है उसका ऐसा सङ्कट तुमने इतने सहज में दूर कर दिया। अच्छा एक बात तुमसे पूंछती हूँ—परेश बाबूके साथ क्या यह बात चीत कुछ हुई है ?

ललिताने लज्जाको दबा कर कहा—नहीं हुई। किन्तु मैं जानती हूं वह ये सब बातें ठीक समझेंगे।

आनन्द०—वह क्यों न समझेंगे ! अगर वह ऐसे समझदार न होते तो ऐसी बुद्धि,ऐसा मनका जोर तुम कहाँ से पाती ? बेटी मैं विनय को बुला लाऊँ। तुमको खुद बात चीत करके उससे सब बातें तयकर लेना उचित है। इसी समय मैं एक बात और तुमसे कह लूँ बेटी। विनयको मैं उस समय से देखती आ रही हूँ,जब वह जरा सा था। वह ऐसा लड़का है कि उसके लिये चाहे जितना दुःख तुम लोग स्वीकार कर लो,वह उस सारे दुःखको सार्थक कर देगा। यह मैं जोर देकर करती हूँ। मैंने अकसर सोचा है कि विनय को जो प्राप्त करेगी ऐसी कौन भाग्यवती होगी ! बीच बीचमें अनेक बार अनेक सम्बन्ध आये; मगर मुझे कोई पसन्द नहीं हुआ आज देखती हूँ वह भी कम भाग्यशाली नहीं है। इतना कहकर आनन्दमयी उँगली छुआ कर ललिताके चिबुकका चुम्बन किया और विनय को बुला कर ले आईं। कौशलसे लछमिनियाको दालान में बिठाकर वह ललिता के लिये खाने पीने पीनेके प्रबन्धका बहाना करके अन्यत्र चली गईं।

आज अब ललिता और विनयके बीच सङ्कोचका अवकाश नहीं था। उन दोनों के जीवन में जिस एक कठिन संकट का आविर्भाव हुआ है उसी के आह्वानसे उन्होंने परस्परके सम्बन्धको सहज और बड़ा करके देखा। आज उनके बीच में किसी आवेश के भावने आकर रंगीन पर्दा नहीं

डाल दिया। उन दोनोंके हृदय मिल गये हैं और उनके दोनों जीवनों की धाराएँ गंगा और यमुना की तरह एक पुण्य तीर्थ में मिल कर एक होने के लिये परस्पर निकट हो आई है—इस बारे में कुछ भी किसी ने कोई आलोचना न करके इस बात को विनीत गम्भीर भावसे चुपचाप अकुण्ठित चित्तसे मान लिया। समाजने उन दोनो जनोंको बुलाया नहीं किसी मतने उन दोनों जनों को मिलाया नहीं, उनका यह बन्धन कोई कृत्रिम बन्धन नहीं है इस बात को स्मरण करके उन्होंने अपने मिलनको ऐसे एक धर्मका मिलन अनुभव किया, जो धर्म अत्यन्त बृहत उदार भावसे सरल है, जो किसी छोटी बात के लिये झगड़ा नहीं करता जिसमें कोई पंचायत का पण्डित बाधा नहीं दे सकता। ललिताका मुख और आँखें उज्ज्वल हो उठीं। उसने कहा—आप झुककर अपनेको हीन बना कर मुझे ग्रहण करने आवें, यह अगौरव मुझसे सहा न जायगा! आप जिस जगह है, वहीं अविचलित बने रहें, यही मैं चाहती हूँ।

विनयने कहा—आपकी भी जहाँ प्रतिष्ठा, है वहीं स्थिर रहें—आपको कुछ भी हिलना न होगा। प्रीति यदि प्रभेदको स्वीकार नहीं कर सकती, तो फिर जगत में किसी तरहका प्रभेद क्यों है?

दोनोंने प्रायः बीस मिनट तक जो बात चीत की, उसका सराँश बस इतना हो सकता है, जो कि ऊपर कहा गया है। वे इस बात को भूल गये कि हम हिन्दू हैं, या ब्राह्म। उनके मनके भीतर यही बात स्थिर दीपशिखा की तरह जलने लगी कि वे दो मानवआत्मा हैं।

—:०:—

[५९]

परेश बाबू उपासनाके उपरान्त अपनी बैठक के सामनेके बरामदेमें चुपचाप बैठे थे। सूर्य अभी-अभी अस्त हुए थे।

इसी समय ललिताको साथ लिए विनयने वहाँ प्रवेश कर उनको प्रणाम किया।

परेश बाबू दोनों को इस तरह वहाँ उपस्थित होते देखकर कुछ विस्मित हुए। पास बैठने देने के लिए कुर्सी न होनेके कारण उन्होंने कहा—चलो, कमरे के भीतर चलो। विनय ने कहा—ना, आप उठें नहीं। यह कह कर वह वहीं जमीन पर बैठ गया। ललिता भी जरा हट कर परेश बाबू के पैरों के पास बैठ गई।

विनयने कहा—हम दोनों जने एक साथ आपका आशीर्वाद लेने आये हैं। यही हमारे जीवन की सत्य दीक्षा होगी।

परेश बाबू विस्मित होकर दोनोंके मुँह की ओर ताकने लगे।

विनयने कहा—बँधे हुए नियम के अनुसार बँधे हुये शब्दोंके द्वारा समाजमें प्रतिज्ञा ग्रहण मैं नहीं करूँगा। जिस दीक्षा से हम दोनों जनोंका जीवन नत होकर सत्यके बन्धनमें बँधेगा, वह दीक्षा आपका आशीर्वाद ही है। हम दोनों ही जनोंका हृदय भक्तिसे आपके ही चरणोंके निकट प्रणत हुआ है। हम दोनोंका जो मंगल है, वह ईश्वर आपके हाथ से दे देंगे।

परेश बाबू कुछ देर तक कोई बात न कह कह स्थिर भावसे बैठे रहे। परेश बाबू ने कहा—विनय! तो तुम ब्राह्म न होगे?

विनय—ना।

परेश—तुम हिन्दू-समाज में ही रहना चाहते हो?

विनय—हाँ।

परेशबाबू ने ललिता के मुखकी ओर देखा। ललिताने उनके मनका भाव समझकर कहा—बाबूजी, मेरा जो धर्म है, वह मेरा है, और सदा रहेगा। मुझे असुविधा हो सकती है; कष्ट भी हो सकता है; किंतु जिन लोगों के साथ मेरे मत का, यहाँ तक कि आचरण का, मेल नहीं है, उन्हें गैर बनाकर दूर हटाकर रक्खे बिना मेरे मेरे धर्म में बाधा पड़ने की बात मैं किसी तरह अपने मन में नहीं ला सकती।

परेशबाबू चुप रहे। ललिता ने फिर कहा—पहले मुझे जान पड़ता था, ब्राह्म-समाज से अलग होना जैसे समस्त सत्य से अलग होना है। किन्तु इधर कुछ दिन से मेरी वह धारणा बिलकुल जाती रही है।

परेश बाबू म्लान भाव से जरा मुसकराते थे।

ललिताने कहा—बाबू जी मैं तुमको यह जताने में असमर्थ हूँ कि मुझमें कितना बड़ा परिवर्तन हो गया है। ब्राह्म-समाज के भीतर मैं जिन सब लोगों को देख रही हूं, उनमें से अनेक के साथ मेरा धर्म-मत एक होने पर भी उनके साथ तो मेरा किसी तरह ऐक्य नहीं है, तो भी 'ब्राह्म-समाज' के नाम का आश्रय लेकर उन्हीं को मैं विशेष करके अपना कहूं और पृथ्वी के अन्य सभी मनुष्यों को अपने से दूर रक्खूँ, इसका कुछ भी अर्थ आज कल मैं नहीं समझ पाती!

परेश बाबूने अपनी विद्रोही कन्या की पीठ पर धीरे-धीरे हाथ फेरते कहा—व्यक्तिगत कारण से जिस समय मन उत्तेजित रहता है, उस समय क्या विचार ठीक तौर से किया जा सकता है? पूर्व-पुरुष से लेकर सन्तान सन्तति पर्यन्त मनुष्यकी जो एक पूर्वापरता है, उसके मङ्गल को देखने के लिए समाज का प्रयोजन होता है। वह प्रयोजन तो कृत्रिम प्रयोजन नहीं है। तुम लोगों के भावी वंश के भीतर जो दूर व्यापी भविष्य निहित है, उसका भार जिसके ऊपर स्थापित है, वही तुम्हारा समाज है। उसकी बात क्या न सोचोगी।

विनय ने कहा—हिन्दू समाज है।

परेश—हिन्दू-समाज अगर तुम लोगों का भार न ले, अगर तुम लोगों को न स्वीकार करे!

विनय ने आनन्दमयी की बात याद करके कहा—उसे अपने तईं स्वीकार कराने का भार हम लोगों को लेना होगा। हिन्दू समाज तो सदा से बराबर नए-नए सम्प्रदायों को आश्रय देता आया है। हिन्दू समाज सभी धर्म-सम्प्रदायों का समाज हो सकता है।

परेश—जबानी बहस में एक चीज को ढंग से दिखाया जा सकता है, किन्तु कार्य्य के समय वह ढंग पाया नहीं जाता। नहीं तो कोई क्या खुशी से पुरातन समाज को छोड़ सकता है? जो समाज मनुष्य के धर्म-बोध को बाहरी आचार की बेड़िया डालकर एक ही जगह कैद करके बिठा रखना चाहता है, उसे मानने से अपने को चिर दिन के लिए काठ की पुतली बनाकर रखना पड़ता है।

विनय—हिन्दू समाजकी अगर वही संकीर्ण अवस्था हो गई हो, तो उससे उसे मुक्ति देनेका भार हम लोगोंको लेना होगा। जहाँ घरकी खिड़की और दरवाजों की संख्या बढ़ा देने से ही घर में हवा और प्रकाश आ सकता है, वहाँ कोई चिढ़ कर पक्की इमारत को गिरा देना नहीं चाहता।

ललिता कह उठी—बाबूजी, मैं इन सब बातोंको समझने में असमर्थ हूँ! किसी समाजकी उन्नतिका भार लेनेके लिये मेरा कोई इरादा नहीं। किन्तु चारों ओर से ऐसा एक अन्याय मुझे धक्के देता हुआ ठेल रहा है कि मेरे प्राण जैसे हाँफ उठे हैं। किसी भी कारणसे यह सब सहकर सिर नवाकर रहना मुझे उचित नहीं है। उचित अनुचित भी मैं अच्छी तरह नहीं समझती, किन्तु बाबूजी, मुझसे यह सहा न जायगा।

परेशबाबूने स्नेहपूर्ण स्वर में कहा—और भी कुछ समय ठहरना क्या अच्छा न होगा? इस समय तुम्हारा मन चंचल है।

ललिता—ठहरने में मुझे कुछ आपत्ति नहीं है। किन्तु मैं निश्चय जानती हूँ, मिथ्या बातें और अन्याय, अत्याचार और भी बढ़ता ही रहेगा। इसीसे मुझे बड़ा भय होता है कि असह्य होने के कारण पीछे अकस्मात

कहीं ऐसा कुछ न कर डालूँ, जिससे तुमको भी कष्ट मिले । तुम यह न खयाल करो बाबूजी कि मैंने कुछ सोचा नहीं । मैंने खूब अच्छी तरह सोचकर देखा है कि मेरा जैसा संस्कार और शिक्षा है, उससे ब्राह्म-समाज के बाहर शायद मुझे बहुत सङ्कोच और कष्ट स्वीकार करना होगा; किन्तु मेरा मन कुछ कुण्ठित नहीं होता—बल्कि मनके भीतर एक जोर पैदा हो रहा है, एक आनन्द हो रहा है । मुझे अगर कुछ चिन्ता है, तो बस यही बाबूजी कि पीछे मेरा कोई काम तुम्हें कुछ कष्ट न पहुँचावे !

यह कहकर ललिता धीरे धीरे परेशबाबू के पैरों पर हाथ फेरने लगी ।

परेशबाबूने जरा मुस्कराकर कहा—बेटी, मैं अगर केवल अपनी ही बुद्धि के ऊपर भरोसा करता, तो मेरी इच्छा और मत के विरोध से कोई काम होने पर मैं दुःख पाता । तुम लोगों के मनमें जो आवेग उपस्थित हुआ है, वह सम्पूर्ण अमङ्गल है—यह बात मैं जोरके साथ कह नहीं सकता । मैं भी एक दिन विद्रोह करके घर छोड़कर निकल आया था—किसी सुविधा या असुविधा की बात नहीं सोची । समाजके ऊपर आजकल जो यह घात-प्रतिघात चल रहा है, इससे समझ पड़ता है कि उन्हीं जगदीश्वर की शक्ति का कार्य चल रहा है । वह परम पिता अनेक ओर से तोड़ फोड़ कर, गढ़ कर, संशोधन करके, किस चीज को किस भाव से खड़ा करेंगे, यह मैं क्या जानूँ ! ब्राह्म-समाज या हिन्दू समाज का खयाल उन्हें नहीं है—वह मनुष्य को केवल देखते हैं ।

परेश बाबू कुर्सी छोड़ कर उठ खड़े हुए, और बोले—विनय तुम लोग सब बातोंको साफ करके सोच-विचार कर नहीं देखते । तुम्हारे अकेले या और किसी के मतामत की बात नहीं हो रही है । विवाह तो केवल व्यक्तिगत बात नहीं है, वह एक सामाजिक कार्य है—यह भूल जाने से कैसे चलेगा ? तुम लोग कुछ अवकाश लेकर सोच कर देखो । अभी कोई राय पक्की न कर डालो ।

इतना कहकर परेश बाबू वहाँसे बागको चले गये, और वहाँ अकेले ही टहलने लगे ।

ललिता भी वहाँ से जानेके लिए उद्यत होकर फिर जरा ठहर गई, और उसने विनय की ओर पीठ करके—हम लोगोंकी इच्छा अगर अनुचित इच्छा न हो, और वह इच्छा अगर किसी एक समाजके विधानके साथ आद्यन्त न मिले तो सिर नीचा करके हमारे पीछे लौट जाने की बात किसी तरह मेरी समझ में नहीं आती। समाजमें असत्य व्यवहारके लिये स्थान है, केवल न्याय सङ्गत आचरण के लिये ही स्थान नहीं है? विनयने धीरे-धीरे ललिताके पास आकर खड़े होकर कहा—मैं किसी भी समाज को नहीं डरता। हम दोनों जने मिल कर अगर सत्यका आश्रय ग्रहण करें तो हमारे समाज जैसा इतना बड़ा समाज और कहाँ पाया जायगा?

वरदासुन्दरीने इसी समय आँधीकी तरह दोनों जनोंके सामने आकर कहा—विनय, मैंने सुना है, तुम दीक्षा न लोगे—क्यों?

विनय—दीक्षा मैं योग्य गुरु से लूँगा—किसी समाज से नहीं।

ललिताने कहा—विनय बाबूकी दीक्षाके बारेमें ब्राह्म-समाजके सब आदमियोंकी तो सम्मति नहीं है। ब्राह्म-समाजका मुख पत्र तो तुमने पढ़ कर देखा है? ऐसी दीक्षा लेने की जरूरत क्या है?

वरदा०—दीक्षा लिये बिना विवाह कैसे होगा?

ललिता—क्यों न होगा?

बरदा०—हिन्दू मत से होगा क्या?

विनय—सो हो सकता है। जो कुछ बाधा है, वह मैं दूर कर दूँगा।

कुछ देर तक वरदासुन्दरीके मुखसे बात नहीं निकली। उसके बाद रुँधे हुए गले से उन्होंने कहा—विनय, जाओ तुम जाओ! इस घर में फिर तुम न आना।

—:०:—

[६०]

सुचरिता निश्चय जानती थी कि गोरा आज आवेगा। सवेरेसे ही उसका कलेजा धड़क रहा था। सुचरिता के मनमें गोरा के आगमन की प्रत्याशा के आनन्दके साथ कुछ भय भी मिला हुआ था। गोरा उसे जिस ओर खींच रहा था, और बालपन से उसका जीवन-वृक्ष अपनी जड़ और डाल-पात लेकर जिस ओर फैल रहा था, इन दोनों के बीच पड़कर वह घबरा रही थी। मैं अपना पैर किस ओर बढ़ाऊँ, यह उसकी समझ में न आता था।

कल जब मौसी के घरमें गोरा ने ठाकुरजी को प्रणाम किया तब सुचरिता के मनमें यह बात बेतरह खटकी। गोरा ने प्रणाम तो किया ही है, क्या उसका विश्वास भी ऐसा ही है, या उसने ऊपर के मनसे प्रणाम किया है? इस बातको बार बार सोचकर वह किसी तरह अपने मनको शान्त न कर सकी।

सुचरिता के कमरे में गोरा ने ज्योंही पैर रक्खा त्योंही सुचरिता ने पूँछा—क्या आप इस मूर्ति की भक्ति करते हैं?

गोरा ने एक अस्वाभाविक बलके साथ कहा—हाँ, भक्ति करता हूँ।

यह सुनकर सुचरिता सिर नवाकर चुप हो रही। उसकी इस नम्र नीरव वेदनासे गोराके मनमें कुछ चोट लगी। वह झट बोल उठा—देखो, मैं तुमसे सच कहता हूँ। मैं ठाकुरजीकी भक्ति करता हूँ या नहीं यह ठीक-ठीक नहीं कह सकता। किन्तु मैं अपनी देश-भक्ति की भक्ति करता हूँ। इतने दिनोंसे समस्त देशकी पूजा जहाँ पहुँचती है, वही स्थान मेरे लिए पूज्य है। क्रस्तान पादरीकी भाँति वहाँ किसी तरह विष दृष्टि नहीं डाल सकता।

सुचरिता मन ही मन कुछ सोचती हुई गोरा के मुँह की ओर देखती

रही। गोरा ने कहा—मेरी बातको ठीक-ठीक समझना तुम्हारे लिए बड़ा कठिन है, यह मैं जानता हूँ। क्योंकि लगातार इतने दिनों तक एक सम्प्रदायके भीतर होने से इन सब विषयों पर सहज दृष्टिपात करने की तुम्हारी शक्ति चली गई है। जब तुम अपनी मौसीके घरमें ठाकुरजीको देखती हो तब तुम केवल पत्थर को ही देखती हो। लेकिन मैं तुम्हारी मौसीके भक्तिपूर्ण हृदयको ही देखता हूँ। उसे देखकर क्या मैं कभी क्रोध कर सकता हूं या अपमान कर सकता हूँ क्या तुम समझती हो कि यह हृदय का देवता पत्थर का देवता है?

मैं किसीको धर्मशिक्षा दे सकूँ ऐसी योग्यता मुझमें नहीं है; किन्तु मेरे देश के लोगों की भक्ति पर तुम लोग हंसो, इसे मैं कभी नहीं सह सकूंगा। तुम अपने देश के लोगोंसे पुकारकर कहती हो,—तुम मूर्ख हो, मूर्तिपूजक हो, मैं उन सभोंको ब्रुल कर जताना चाहता हूं कि नहीं, तुम मूर्ख नहीं हो, तुम पौत्तालिक नहीं हो, तुम ज्ञानी हो, तुम भक्त हो। हम लोगोंके धर्म तत्व में जो महत्व है, भक्तित्व में जो गम्भीरता है, उस पर श्रद्धा-प्रकाश के द्वारा मै अपने देश के हृदय को जाग्रत करना चाहता हूँ। जहाँ उसकी सम्पत्ति है,वहीं उसके गौरवको मैं स्थापित करना चाहता हूं। मैं अपने देश-वासियों का सिर नीचा होने न दूंगा। यही मेरा प्रण है। तुम्हारे पास भी आज मैं इसीलिए आया हूं। जब से मैंने तुमको देखा है तबसे एक नई बातें मेरे मनमें अनुभूत हुई है। इतने दिन तक मैं उस बातको न सोचता था। अब मैं समझता हूँ कि केवल पुरुषकी दृष्टिसे ही भारतवर्ष पूर्ण रूपसे देखा नहीं जायगा। हमारे देश की स्त्रियोंकी दृष्टि जिस दिन उस पर पड़ेगी उसी दिन उसका देखना सफल होगा। तुम्हारे साथ एक-दृष्टिसे मैं अपने देशको कब देखूंगा, यह उत्कट इच्छा मेरे मन को जला रही है। अपने भारतवर्ष के लिये हम अकेले मरने को तैयार हैं, किन्तु बिना तुम्हारी सहायताके उसका अन्धकार पूरे तौर से दूर न हो सकेगा। अगर तुम उससे दूर रहोगी तो भारतवर्ष की सेवा जैसी चाहिए, न होगी।

हाय ! कहाँ वह भारतवर्ष ! कहां कितनी दूर पर यह सुचरिता थी ! कहाँ से भारतवर्ष का साधक आ पड़ा। यह भाव में भूला हुआ साधक सबको हटाकर क्यों इसी के पास आ खड़ा हुआ ! सबको छोड़कर क्यों उसने इसीको पुकारा। कोई सन्देह न किया, कोई बाधा न मानी। कहा, तुम्हारे न रहने से काम न चलेगा। मैं तुमको लेने ही के लिए आया हूँ। तुम्हारे दूर रहनेसे यज्ञ पूरा न होगा। सुचरिता की आंखों से आँसुओं की धारा बह चली। क्यों वह चली, यह वह समझ न सकी।

गोरा ने सुचरिता के मुंह की ओर देखा। उस दृष्टिके सामने सुचरिता ने अपने आंसू भरी आँखें नीचे न कीं। ओस-कणसे भरे हुए कमल-पुष्पकी भांति वे आंखें आत्म-विस्मृत भाव में गोरा के मुंह की ओर विकसित हो रहीं।

हरिमोहिनीका कण्ठस्वर सुन गोरा चौंक पड़ा और मुंह फिराकर घरकी ओर देखने लगा।

हरिमोहिनी ने कहा—बेटा, कुछ मुंह मीठा करके जाना।

गोरा झट बोल उठा—आज नहीं, मुझे माफ कीजिए, मैं अभी जाता हूँ।

यह कहकर गोरा और किसी बात की अपेक्षा न करके बड़ी तेजी से चला गया।

कुछ ही देर बाद परेशबाबू आ गये। सुचरिता के कमरे में पहुंच कर उन्होंने कहा—

विनय अब दीक्षा न लेगा।

सुचरिता कुछ न बोली। परेशने कहा—विनयके दीक्षा लेनेके प्रस्ताव पर मुझे पूरा सन्देह था, इसीसे मैं उसके अस्वीकार करने से कुछ विशेष क्षुब्ध नहीं हुआ। किन्तु ललिता की बात के ढङ्गसे मालूम हुआ है कि दीक्षा न लेने पर भी विनय के साथ व्याह करने में उसे कोई बाधा नहीं दिखाई देती।

सुचरिता हठात् खूब जोरसे बोल उठी—नहीं, कभी नहीं होगा।

परेश बाबूने अचम्भे के साथ पूछा—क्या नहीं होगा ?

सुचरिता—विनयके ब्राह्म न होने से ब्याह कैसे होगा ?

परेश—हिन्दू-मत से।

सुचरिता ने सिर हिलाकर कहा—नहीं, नहीं, आजकल ये क्या बातें हो रही है। ऐसी बात मन में आने देना भी उचित नहीं। क्या अन्तमें शालग्राम पूजकर ललिताका ब्याह होगा ? यह मैं किसी तरह होने न दूँगी !

गोरा ने सुचरिता के मनको अपनी ओर खींच लिया है, कोई यह न कहे, इसलिए आज वह हिन्दू मत से विवाह की बात पर एक अस्वाभाविक आक्षेप प्रकट कर रही है। इस आक्षेप के भीतर की असल बात यही है जिससे परेशबाबू समझें कि सुचरिता उनको छोड़ कहीं न जायगी। वह अब भी उनकी समाज का, उनकी मतका, उनके उपदेश का उलल्लंघन न करेगी। वह उनके शिक्षा-रूपी बन्धन को किसी तरह तोड़ न सकेगी।

परेश ने कहा—विवाह के समय शालग्रामको साक्षी रूप में न रखने को विनय राजी हो गया है। इसमें तुम क्या कहती हो ?

सुचरिता कुछ सोचकर बोली—तो हमारे समाज से ललिताको निकल जाना पड़ेगा।

परेश—इसके विषयमें मुझे बहुत चिन्ता करनी पड़ी है। किसी मनुष्यके साथ जब समाजका विरोध हो तब दो बातें सोचनी पड़ती है। दोनों दलोंमें न्याय किस ओर है, दोनों दलोंमें प्रबल कौन है। समाज की प्रबलतामें तो सन्देह ही नहीं हो सकता, अतएव विद्रोही को दुःख झेलना पड़ेगा। ललिता बार-बार मुझसे कहती है कि मैं केवल दुःख सहन करनेको ही तैयार नहीं हूँ वरन् इसमें आनन्द का अनुभव भी कर रही हूँ।' यदि यह बात सत्य हो और इसमें कोई अन्याय न पाया जाय तो मैं उसे क्यों रोकूँ ?

सुचरिता—पिताजी, यह कैसे होगा !

परेश—मैं जानता हूँ कि इसमें कोई संकट अवश्य उपस्थित होगा

किन्तु ललिता के साथ विनयके व्याहमें जब कुछ दोष नहीं, वरन व्याह होना ही उचित है, तब यदि समाजमें विग्रह उपस्थित हो तो उस विग्रह को हम विग्रह नहीं मानेंगे। मनुष्यको समाज के दबाव में पड़कर कर्तव्यसे संकुचित हो रहना ठीक नहीं। मनुष्यका कर्तव्य सोचकर समाजको ही अपनी स्थिति सुधारनी चाहिये। इस कारण जो लोग दुःख स्वीकार करने को राजी हैं, मैं उनकी निन्दा नहीं कर सकता।

सुचरिता ने कहा—इसमें तो सबसे बढ़कर आप ही को दुःख स्वीकार करना होगा।

परेश—यह बात सोचने की नहीं है।

सुचरिता ने पूछा—तो क्या आपने सम्मति दे दी है?

परेश ने कहा—नहीं, अभी तो नहीं दी है किन्तु देनी ही होगी। ललिता जिस मार्ग में जा रही है, उस मार्ग में मुझे छोड़ कौन उसे आशीर्वाद देगा और ईश्वरको छोड़ उसका सहायक कौन होगा?

परेशबाबू जब चले गये तब सुचरिता स्थिर होकर बैठी रही। वह जानती थी कि परेश बाबू ललिता को हृदय से कितना प्यार करते हैं। वह ललिता नियत मार्ग को छोड़कर एक अपरिचित मार्गसे चलने को तैयार हो गई है। इससे उनका मन कितना व्याकुल हो रहा है, यह समझनेमें उसको कुछ कठिनाई न रही।

—:०:—

[६१]

आज सवेरे से गोरा के घर में खूब धूमधाम है। पहले महिमने हुक्का पीते-पीते यहां आकर गोरासे पूछा—मालूम होता है, इतने दिन बाद विनय ने अपना बन्धन काट डाला !

गोरा की समझमें यह बात न आई। वह भाईके मुँहकी ओर देखने लगा। महिमने कहा—मेरे आगे कपट करने से क्या होगा ? तुम्हारे मित्रकी बात तो अब छिपी नहीं रही। सर्वत्र डङ्का पिट गया। यह देखो न।

यह कहकर महिमने गोरा के हाथमें एक समाचार पत्र दिया। उसमें रविवारको विनयके ब्राह्म-समाजमें दीक्षा लेनेकी बात खूब बढ़ा-चढ़ाकर छापी गई थी ।

गोराने जब कहा—मैं यह हाल नहीं जानता तब महिमने पहले उसके इस कथन पर विश्वास नहीं किया। पीछे वह विनयके इस गहरे कपट व्यवहार पर बार-बार आश्चर्य करने लगा, और चलते समय कह गया कि स्पष्ट वाक्य से शशिमुखी के व्याह में सम्मति देकर उसके बाद जब विनय अपनी सम्मति बदलने लगा था तभी हमको समझ लेना चाहिए था कि उसके सर्वनाशका आरम्भ हो गया है।

अविनाश हाँफते-हाँफते आकर बोला—गोरा यह क्या जिसका कभी स्वप्नमें भी अनुभव न हुआ था विनय बाबूने आखिर—

अविनाश अपने कथनको पूरा भी नहीं कर सका। विनयको इस लांछनासे उसको इतना हर्ष हो रहा था कि इस पर कृत्रिम खेद करना उसके लिए कठिन हो पड़ा।

देखते-देखते गोराके दलके प्रधान-प्रधान सभी लोग आ जुटे। विनय

के विषयमें उन सबोंमें खूब उत्तेजना-पूर्ण आलोचना होने लगी। अधिकांश लोग एकमत से बोले—इस घटना में आश्चर्य की कोई बात नहीं। कारण यह कि विनय के व्यवहार में बराबर एक दुबिधा और दुर्बलता का लक्षण दिखाई देता आया है। वास्तवमें हमारे दलमें विनयने कभी मनसा वाचा कर्मणा आत्म-समर्पण नहीं किया। बहुतोंने कहा—'विनय आरम्भ से ही अपनेको किसी तरह गोरा के बराबर धर्मनिष्ठ बनानेकी चेष्टा करता था और यह बात हमें न सुहाती थी।' और लोग जहाँ भक्तिका सङ्कोच रहनेके कारण गोरासे यथोचित दूर रहते थे वहाँ विनय जबर्दस्ती उससे ऐसा लिपटा रहता मानों वह सर्वसाधारणसे भिन्न है और गोराका समकक्ष है; गोरा विनयको चाहता था इसलिए सब लोग उसकी इस स्पर्द्धा को सह लेते थे—इस प्रकारके बे-रोक टोक अहङ्कारका यही परिणाम हुआ करता है।

उन लोगोंने कहा—हम लोग विनयके सदृश विद्वान् नहीं हैं, हम लोगोंमें अत्याधिक बुद्धि भी नहीं है, किन्तु भैया हम लोग एक आदर्श को मानकर चलते हैं। आचार्यने जो पथ दिखा दिया है उसे छोड़ नहीं सकते। हम लोगोंके जो मनमें है वह मुँहमें है। हम आज कुछ करें और कल कुछ, वह हम लोगोंसे नहीं हो सकता। इससे भले ही हम लोगोंको कोई मूर्ख कहे,, निर्बोध कहे, चाहे जो कहे।

गोराने इन बातोंमें कुछ योग न दिया। वह चुपचाप शान्त बैठा रहा।

जब सब लोग एक-एक कर चले गये, तब गोराने देखा कि विनय उसके कमरेमें न आकर जीनेके ऊपर जा रहा है। इससे गोराने झट कोठे से निकल उसे पुकारा—विनय।

विनय जीनेसे उतरकर गोराके कोठेमें आया। गोराने कहा—विनय बाबू! मैं नहीं जानता कि मैंने तुम्हारे साथ, बिना जाने, क्या अन्याय किया है जो तुमने मुझे एकाएक इस तरह परित्याग कर दिया है।

आज गोराके साथ कुछ विवाद अवश्य होगा, यह बात विनय पहले ही से सोचकर दिलको मजबूत करके ही आया था। जब

विनयने गोराका मुँह उदास देखा, और उनके कण्ठस्वर स्नेह-जनित वेदनाका अनुभव किया तब मनको जिस कठोरताका कवच पहना कर लाया था, वह कवच एक ही पलमें टुकड़े-टुकड़े उड़ गया।

वह बोल उठा—भाई गोरा, तुमने समझने में भूल की है। जीवन में अनेक परिवर्तन होते हैं; कितनी ही वस्तुओंका त्याग करना पड़ता है। किन्तु इससे मैं मित्रत्व को क्यों छोड़ूँगा?

गोराने जरा ठहरकर कहा—विनय, क्या तुमने ब्राह्म-धर्मकी दीक्षा ले ली है?

विनय—नहीं; न ली है और न लूँगा।

गोरा—ललिता से ब्याह करोगे?

विनय—हाँ।

गोरा—हिन्दू पद्धतिसे?

विनय—हाँ।

गोरा—परेश बाबूकी राय है!

विनय—यह उनकी चिट्ठी देख लो।

गोरा ने परेशकी चिट्ठी दो मर्तबा पढ़ी। उसके अन्त में यही लिखा था—"मैं अपनी पसन्द या ना पसन्दकी बात न कहूँगा, तुम्हारी सुविधा या असुविधाकी भी कोई बात कहना नहीं चाहता। मेरा किस मत पर विश्वास है, मेरा समाज क्या है, यह तुम जानते हो। ललिताने बचपन से क्या शिक्षा पाई है और किस संस्कार के बीच पलकर वह मनुष्य हुई है, वह भी तुमसे छिपा नहीं। इन सब बातोंको अच्छी तरह देख सुनकर तुमने अपना मार्ग ठीक कर लिया है। अब मुझे कुछ कहना नहीं। जहाँ तक मेरी बुद्धि सोच सकी है, मैंने सोच लिया है। सोचकर यही देखा कि तुम दोनोंके विवाहमें बाधा देने का कोई धर्म सङ्गत कारण नहीं? क्योंकि तुम पर मेरी पूर्ण श्रद्धा है। इस जगह समाज में यदि कोई बाधा हो तो तुम उसे स्वीकार करने को बाध्य नहीं। मुझको केवल इतना ही कहना है कि यदि तुम समाज को

लाँघना चाहते हो तो इसके लिए तुमको समाजसे बड़ा बनना होगा। यदि तुम अपनेको बड़ा न बना सकोगे तो समाज-बन्धनको तोड़कर निकल आना तुम्हारे लिए श्रेयस्कर न होगा। तुम्हारा प्रेम, और तुम्हारा सम्मिलित जीवन, केवल प्रलय-शक्तिकी सूचना न देकर उत्पत्ति और पालनका तत्व धारण करे, इस पर सदैव ध्यान रखना होगा। केवल इसी एक काममें सहसा एक प्रचण्ड दुःसाहस दिखलानेसे काम न चलेगा। इस दुःसाहसके अनन्तर तुमको अपने जीवन के समस्त कार्यको वीरतत्व-सूत्रमें गूँथना होगा; नहीं तो तुम बहुत नीचे उतर आओगे। क्योंकि बाहरसे समाज तुमको सर्वसाधारण की श्रेणीमें भी नहीं रख सकेगा। यदि तुम अपने प्रभावसे इन साधारण मनुष्योंकी अपेक्षा बड़े न हो सकोगे तो साधारण लोगोंकी दृष्टि में भी तुम छोटे जँचोगे। वे लोग भी तुम्हें नीची दृष्टि से देखेंगे। तुम्हारे भविष्य शुभाशुभके लिए मेरे मनमें यथेष्ट आशङ्का बनी है। किन्तु इस आशङ्काके कारण तुमको रोक रखनेका मुझे कोई अधिकार नहीं। क्योंकि संसार में जो साहस करके अपने जीवनके द्वारा नये-नये प्रश्नों की मीमांसा करने को तैयार हैं वे ही समाज को बड़ा बना सकते हैं। जो केवल सामाजिक नियम मान कर चलते हैं। वे केवल समाज को ढोते हैं, उसे आगे बढाना नहीं चाहते। इसलिये मैं अपनी भीरुता और चिन्ता लेकर तुम्हारा मार्ग न रोकूँगा। तुमने जिसे अच्छा समझा है, अनेक विघ्न रहते भी उसका पालन करो। ईश्वर तुम्हारी सहायता करे। ईश्वर अपनी सृष्टि को किसी एक अवस्थामें बाँधकर नहीं रखता। वह सबको अनेक अवस्थाओं में बदलता रहता है। जो संसारके पथ-प्रदर्शक हैं वही तुम लोगों का मार्ग दिखावें मेरे ही मार्ग से तुमको सदा चलना होगा, ऐसा आदेश मैं नहीं दे सकता। तुम्हारी अवस्थाके जब हम थे तब हम भी रस्सी खोलकर किनारेसे सम्मुख वायुकी ओर नाव ले चले थे किसी के निषेध वाक्य पर हमने ध्यान न दिया था। आज भी उसके लिए हम पश्चात्ताप नहीं करते। यदि अनुताप करने का कारण संग-

ठित होता तो उसी, से क्या ? मनुष्य भूल करेगा, उसके कितने ही साधन व्यर्थ भी होंगे, वह दुःख भी पावेगा किन्तु इससे वह हाथ पर हाथ रख-कर बैठ न रहेगा। जो उचित समझेगा उसके लिए वह आत्म समर्पण करेगा ही। इसी तरह यह निर्मल-जलवाली संसार-नदी की धारा चिरकाल तक बहती रहेगी। इससे कभी कभी किनारा टूटकर कुछ कालके लिए क्षति पहुँच सकती है, इस भयसे उसके प्रवाहको बांध देना प्रलयको बुलाना है, यह मैं भली भांति जानता हूँ। अतएव जो शक्ति तुमको अनिवार्य वेगसे सामाजिक नियमके बाहर खींचकर लिए जा रही है उसी को भक्तिपूर्वक प्रमाण करके मैं उसके हाथ तुम दोनों को सौंपता हूँ। वही दोनोंकी जीवन-सम्बन्धी सारी निन्दा, ग्लानि और आत्मीय जनोंके चिरविच्छेदको सार्थक करे। जो तुम दोनों को दुर्गम पथ पर लिए जा रही है वही तुमको गन्तव्य स्थान तक पहुँचा देगी।"

इस चिट्ठीको पढ़कर गोरा चुप हो रहा। उसे चुप देख विनयने कहा—परेश बाबूने अपनी ओर से जैसी सम्मति दी है वैसे ही तुमको भी सम्मति देनी पड़ेगी।

गोरा—परेश बाबू सम्मति दे सकते हैं, क्योंकि नदीकी जिस धारा में किनारे टूटते हैं, वह उन्हीं की है; परन्तु मैं सम्मति नहीं दे सकता, क्योंकि हमारी धारा किनारे (वंश) की रक्षा करती है। हमारे इस किनारे पर हजारों लाखों वर्ष की गगनभेदी कीर्ति विद्यमान है। हम कुछ नहीं कह सकते, यहाँ प्रकृति का नियम ही काम करेगा।

विनय ने कहा—अच्छा तुम इतना ही बतलाओ कि तुम हमारे इस विवाह को पसन्द करोगे या नहीं।

गोरा—नहीं करूँगा, कदापि नहीं।

विनय—और—

गोरा—और क्या, तुम्हें छोड़ दूँगा ! तुमसे कोई सम्पर्क न रक्खूँगा।

विनय—अगर मैं तुम्हारा मुसलमान मित्र होता तो ?

गोरा—तो उसकी बात ही अलग होती। पेड़ की डाल टूट कर यदि आप ही अलग हो पड़े तो पे उसे किसी तरह फिर पूर्ववत् अपना नहीं बना सकता। किन्तु बाहर से जो लता आकर उससे लिपटती है उसे वह आश्रय देता ही है। यहाँ तक कि अन्धड़ से टूटकर गिर पड़ने पर भी उसे नहीं छोड़ता। किन्तु अपना जब पराया हो जाय तो उसको छोड़ने के सिवा और कोई गति नहीं। इसीलिए तो इतने विधि निषेध हैं, इतनी खैंचातानी है !

विनय—इसी से कहता हूँ कि त्याग का कारण इतना हलका और उसका विधान इतना सुलभ होना उचित न था। जिस समाजमें अत्यन्त साधारण आघात लगनेसे ही जुदाई होती है और यह जुदाई हमेशाके लिये रह जाती है उस समाज में मनुष्यको स्वच्छन्द होकर चलने फिरने और काम धन्धा करने में कितनी बाधा पहुँचती है, क्या तुम इस बातको सोचकर नहीं देखते ?

गोरा - उस चिन्ताका भार मेरे ऊपर नहीं, समाज के ऊपर है। समाज उसकी, जैसी चाहिये, चिन्ता कर रहा है।

विनयने हँसकर कहा—मैं भी इतने दिनों तक ये सब बातें इसी तरह कहता था। आज मुझे भी यह बात किसीके मुँहसे सुननी होगी, यह कौन जानता था। बात बनाकर बोलनेका दण्ड आज मुझे अवश्य भोगना पड़ेगा, यह मैं अच्छी तरह समझ गया हूँ ?

गोरा—भुनगा जब आगमें गिरने जाता है तब वह भी ठीक तुम्हारी भांति, इसी तरह, तर्क करता है। इसलिए मैं अब तुमको व्यर्थ समझाने की चेष्टा न करूँगा।

विनयने कुरसी से उठकर कहा—अच्छी बात है, तो मैं जाता हूँ; एक बार माँ से भेंट कर आऊँ।

[६२]

हरिमोहिनी ने पूछा—राधारानी, कल रात को तुमने ब्यालू क्यों नहीं की ?

सुचारिताने चकित होकर कहा—की तो थी।

हरिमोहिनीने उसकी ढकी हुई भोजन-सामग्री दिखाकर कहा कहाँ खाया है, सब सामान तो रक्खा हुआ है।

तब सुचरिता को स्मरण हो आया कि कल खाने की बात उसे याद न थी।

हरिमोहिनी ने रूखे स्वर में कहा—ये बातें अच्छी नहीं। मैं तुम्हारे परेश बाबूको जहाँ तक जानती हूं; वे तुम्हारे इन रङ्ग-ढङ्गों को पसन्द नहीं करेंगे। उनके दर्शनसे मनुष्य का मन शान्त होता है।

हरिमोहिनीके कहने का उद्देश क्या है, यह सुचरिता समझ गई। पहले तो उसके मनमें कुछ संकोच हो आया। गोरा के साथ मेरे व्यावहारिक सम्बन्धकी नितान्त साधारण स्त्री-पुरुषके सम्बन्धके साथ तुलना करके एक ऐसे अपवाद का कटाक्ष मेरे ऊपर हो सकता है; इस बातको उसने कभी न सोचा था। इसलिए हरिमोहिनी की टेढ़ी बात से वह क्षुब्ध हो गई। किन्तु वह फिर तुरन्त ही सँभलकर बैठी और हरिमोहिनी के मुँह की ओर देखने लगी।

सुचरिता ने उसी समय निश्चय कर लिया कि मैं गोरा के सम्बन्धकी बातोंमें किसीके आगे कुछ संकोच न करूँगी। उसने हरिमोहिनीसे कहा—मौसी, तुम तो जानती ही हो कल गोरा बाबू आये थे। उनके मुँहसे निकले हुए गम्भीर विषयने मेरे मनको इस तरह विमुग्ध कर दिया कि मुझे खानेका भी सुधि न रही।

हरिमोहिनी जैसी बात सुनना पसन्द करती थी ठीक वैसी गोरा की बात न होती थी। वह भक्तिकी बात सुनना चाहती थी। किन्तु गोरा के मुँहसे भक्तिकी बात वैसी सरस और रोचक न निकलती थी।

आज सबेरे गोरा जब सुचरिता के घर पहुँचा तब हरिमोहिनी ठाकुर जी की पूजा कर रही थी। सुचरिता अपनी बैठक में टेबल पर पुस्तक आदि वस्तुओंके सँवारनेमें लगी थी। ठीक इसी समय सतीशने आकर खबर दी कि गौर बाबू आये हैं। सुचरिता सुनकर विशेष उत्कण्ठित न हुई। मानों वह पहले ही से जानती थी कि गौर बाबू आज आवेंगे।

गोरा कुरसी पर बैठते ही बोला—आखिर विनयने हम लोगों को छोड़ ही दिया

सुचरिता—छोड़ेंगे कैसे! वे तो ब्राह्म-समाजमें सम्मिलित नहीं हुए।

गोरा—ब्राह्म-समाज में सम्मिलित हो जाता तब तो कोई बात ही न थी। तब वह किसी तरह हमारे पास ही रहता। वह हिन्दू-समाजका गला खूब कसकर पकड़े हुए है, यही बात सबसे बढ़कर कष्टप्रद है। इससे हमारे समाज को वह एकदम छोड़ देता तो बड़ा उपकार करता।

सुचरिता ने मन में गहरी चोट खाकर कहा—आप समाज को इस प्रकार अत्यन्त एकान्त दृष्टि से क्यों देखते हैं? समाज के ऊपर जो आप इतना अधिक विश्वास रखते हैं यह क्या आपका स्वाभाविक विश्वास है, क्या अपने ऊपर बलप्रयोग करके ही ऐसा करते हैं?

गोरा—ऐसी अवस्थामें यह बलप्रयोग करना ही स्वाभाविक है। जहाँ गिरने का खौफ है, वहाँ पैर पर जोर देकर ही चलना होता है। यह चारों ओर जो विरुद्धता का साम्राज्य फैल रहा है, उससे मेरे वाक्य और व्यवहार में कुछ बाहुल्य पाया जाता है, यह अस्वाभाविक नहीं है।

सुचरिता—यह जो चारों ओर आप विरुद्धता देख रहे हैं, उसे एकाएक अन्याय और अनावश्यक क्यों समझ रहे हैं? यदि समयकी गति में समाज बाधा दे तो समाजको आघात सहना पड़ेगा।

गोरा—समयकी गति जलकी तरङ्गकी भांति होती है। वह पार्श्ववर्त्ती भूमिको काटकर गिराती है, इससे हम यह नहीं मान सकते कि सूखी जमीन का कटकर गिरना ही उसका धर्म है। तुम यह मत समझो कि हम समाज की भली-बुरी बातों पर कुछ विचार नहीं करते। वह विचार करना इतना सहज हो गया है कि आज-कलके छोकरे भी विचारक हो उठे हैं।

किन्तु मैं तुमसे सच कहता हूँ कि तुम्हारी समझ उन सबोंसे कहीं बढ़कर है। तुम्हारी दृष्टि जहाँ तक पहुँचती है, उनमें किसीकी दृष्टि वहाँ तक पहुँचते नहीं देखी। तुममें गहरी दृष्टि-शक्ति है, यह मैं तुमको देखकर पहले ही समझ गया था। इसीसे मैं अपने इतने दिनोंकी हृदयकी सब बातोंको लेकर तुम्हारे पास आया हूँ। मैंने अपने जीवनकी घटनाओं को खोलकर तुम्हारे सामने रख दिया है। तुम उस पर विवेचना करो। मैं तुमसे कोई बात सङ्कोचवश छिपाना नहीं चाहता।

सुचरिता—आप जब इस तरह बोलते हैं तब मेरे मनमें बड़ी व्याकुलता मालूम होती है। आप मुझसे क्या चाहते हैं कहिए। मैं किस लायक हूं, मुझे क्या करना होगा! मैं आपकी आशाको कहाँ तक पूरी कर सकूँगी, यह मैं नहीं जानती! मेरे हृदयमें जो एक भाव का आवेग आ रहा है, वह क्या है मैं कुछ नहीं समझती। सच पूछिए तो मुझे भय केवल इतना ही है कि मेरे ऊपर जो आपका विश्वास है उसे किसी दिन अपनी भूल समझकर कहीं आपको पछताना न पड़े।

गोराने गम्भीर स्वर में कहा—भूलकी बात क्या कहती हो। तुमको अच्छी तरह जाँचकर ही मैंने तुम पर विश्वास किया है! तुममें कितनी बड़ी शक्ति है, यह मैं तुम्हें दिखा दूँगा। तुम मनमें किसी बात का सोच न करो! तुम्हारी योग्यता प्रकट करने का भार मेरे ऊपर है। तुम मेरे ही भरोसे यह बात रहने दो।

हरिमोहिनी ठाकुरकी पूजा करके रसोई-घरमें जा रही थी। सुचरिता के निःशब्द कमरेमें कोई मनुष्य है यह भी उसे न जान पड़ा। किन्तु कमरे के भीतर दृष्टि डालकर हरिमोहिनी ने देखा, सुचरिता और गोरा

चुपचाप बैठे कुछ सोच रहे हैं, दोनों में किसी तरह का कोई सम्भाषण नहीं है। तब उसका क्रोध अपनी सीमा तक पहुँच गया। किसी तरह अपने को संभाल द्वार पर खड़ी हो उसने पुकारा—राधारानी!

सुचरिता उठकर उसके पास गई। हरिमोहिनीने मीठे स्वर में कहा—बेटी, आज एकादशी है, मेरा जी अच्छा नहीं है। तुम रसोईघरमें आकर चूल्हा जलाओ, मैं तब तक गौर बाबूके पास बैठती हूं।

मौसीका भाव देख सुचरिता उठ कर रसोई-घरमें चली गई। कमरेमें हरिमोहिनीके आते ही गोरा ने उसे प्रणाम किया। वह कोई बात न बोलकर कुरसी पर बैठ गई। कुछ देर मुँह फुलाये चुप रही, फिर गोरा-की ओर देखकर बोली—तुम ब्राह्म नहीं हो?

गोरा—जी नहीं।

हरिमोहिनी—हमारे हिन्दू-समाजको तुम मानते हो?

गोरा—जी हाँ, मानता हूँ।

हरिमोहिनी—तो तुम्हारा व्यवहार कैसा है?

हरिमोहिनीके इस प्रतिकूल भाषणका कुछ अर्थ न समझ गोरा चुपचाप उसके मुँहकी ओर देखने लगा।

हरिमोहिनीने कहा—राधारानी अब अबोध बालिका नहीं है, वह अब सयानी हुई। तुम उसके आत्मीय नहीं हो, तुमसे उसका कोई नाता भी नहीं। तब इस तरह, रोज-रोज आकर उसके साथ घरटों बातें करना कैसी बात है! वह स्त्री है, घर का काम-धन्धा करेगी। उसकी इन सब बातोंमें रहने की क्या जरूरत! इससे उसका मन दूसरी ओर जा सकता है। तुम तो बड़े ज्ञानी हो—देशके सभी लोग तुम्हारी प्रशंसा करते हैं किन्तु हमारे देशमें ये बातें कभी नहीं थीं। किसी शास्त्र में भी नहीं लिखी हैं।

यह सुनकर गोरा के मनमें बड़ा धक्का लगा। सुचरिता के सम्बन्ध में ऐसी बात मैं किसीके मुँह से सुन सकता हूं, इसका स्वप्नमें भी विचार उसने नहीं किया था।

वह कुछ देर चुप रहकर बोला—ये ब्राह्म-समाजमें हैं। इनको बराबर इसी तरह सबके साथ मिलते देखता हूँ, इसीसे मैंने इस बात पर कभी ध्यान नहीं दिया।

हरिमोहिनी—वह ब्राह्म-समाजमें है, यह बात मैंने मान ली, किन्तु तुम तो हिन्दू-समाजमें हो, तुम तो इन बातोंको कभी पसन्द नहीं करते बड़ी रात तक, तुमने उसके साथ बात-चीतकी, तो भी तुम्हारा कहना खतम न हुआ। आज फिर सबेरे ही आ पहूँचे। वह भी सबेरे से तुम्हारे पास बैठी रही न भाण्डार में गई न रसोई घरमें गई। आज एकादशी के दिन वह मेरी कुछ सहायता करती, यह भी उससे न हुआ। क्या यही शिक्षा उसको दी जा रही है। तुम्हारे घरमें भी तो बहू बेटियाँ हैं क्या घरका सभी काम-धन्धा बन्द करके तुम उन्हें भी ऐसी ही शिक्षा देते हो

गोरा के पास इन बातोंका कोई उत्तर न था उसने इतना ही कहा—ये ऐसी ही शिक्षा पाकर इतनी बड़ी हुई है इसलिए मैं इनके साथ बातचीत करने में कुछ बुरा नहीं मानता!

हरिमोहिनी—वह भले ही शिक्षा पाए हुए हो किन्तु जितने दिन मेरे पास है, और मैं जब तक जीती हूँ, यह बात न चलेगी। उसको मैं बहुत कुछ उस रास्तेसे लौटा लाई हूँ। जब मैं परेश बाबू के घर में थी तब चारों ओर यह अफवाह फैल गई थी कि मेरे साथ मिलकर वह हिन्दू हो गई है। इसके बाद इस घर में आने पर न मालूम तुम्हारे विनय के साथ क्या-क्या बातें होने लगी। फिर उसका मिजाज बदल गया। सुना है,अब वे ब्राह्म कन्यासे व्याह करने जाते हैं, जायँ। बड़ी-बड़ी कठिनाईसे विनयको यहाँसे हटाया है। एकके हटते ही फिर दूसरा आ गया। हारान नामका एक आदमी आने लगा। उसे जब मैं आते देखती थी, झट सुचरिता को लेकर ऊपरके कमरे में जा बैठता था वह अपना अधिकार यहाँ न जमा सका इस तरह मैं उन लोगों से बचकर इसे बहुत कुछ अपने मत पर ला सकी हूँ। इस मकानमें आने पर उसने सबका छुआ खाना आरम्भ किया था। कलसे उसने ऐसा करना बन्द

किया है। कल रसोई-घरसे अपना भोजन वह आप ही ले गई। एक दुसाध नौकर नित्य पानी लाता था, उसे पानी लानेको मना कर दिया है। आपसे मैं हाथ जोड़कर यही बिनती करती हूँ कि आप लोग उसे अब मत बहकाइए। उसके सुवरे स्वभाव को स्थिर रहने दीजिए। संसार में जो कोई मेरे थे, मर गए सिर्फ यही एक—मेरी जो कुछ समझिए—बच रही है, इसके भी अपने समीपीय आत्मीय जनों में मुझे छोड़ और कोई नहीं है। इसे आप छोड़ दीजिए। इसके पुराने घर में तो कितनी ही बड़ी बड़ी लड़कियाँ हैं, लावण्य है, लीला है, वे भी बुद्धिमती और पढ़ी लिखी हैं। यदि आप को कुछ विशेष वार्तालाप करना हो तो उनके पास जाकर कीजिए, कोई आपको न रोकेगा।

गोरा कुछ न बोला, ज्यों का त्यों बैठा रहा। हरिमोहिनी उसे चुप देख फिर बोली—आप सोचकर देखिए अब कहीं इसका ब्याह कर देना ही होगा उम्र भी अधिक हो गई है। आप क्या कहते हैं, वह सदा इसी तरह अविवाहिता ही रहेगी?

इस विषय में साधारण भाव से गोरा के मन में कोई सन्देह न था। उसका भी मत यही था किन्तु सुचरिता के सम्बन्धमें उसने आज तक कभी अपने मत का प्रयोग करके नहीं देखा। सुचरिता गृहिणी होकर किसी एक गृहस्थ के घर के भीतर गृहकार्य में नियुक्त है, यह कल्पना रूपसे भी कभी उसके मनमें न आया था। वह सोचता था; सुचरिता जैसी आज है वैसी ही सदा रहेगी।

गोराने पूछा—आपने अपनी बहनौतीके ब्याह की बात सोची है या नहीं?

हरिमोहिनी—सोचती ही हूंगी। मैं न सोचूँगी तो कौन सोचेगा?

गोरा—क्या हिन्दू-समाजमें उसका ब्याह हो सकेगा!

हरिमोहिनी—चेष्टा करके देखूँगी। यदि वह ठिकानेके साथ रहे, ठीक तरह से चले तो मैं उसको हिन्दू-समाजमें चला दे सकूँगी। इन बातों को मैंने मन ही मन ठीक कर रक्खा है।

गोराने इस संबन्ध में अधिक पूछताछ करना उचित न समझा, पर तो भी वह बिना पूँछे न रह सका। पूँछा—क्या कोई उपयुक्त वर कहीं ढूँढ़ा।

हरिमोहिनी—हाँ ढूँढ़ा तो है। वर अच्छा ही है, कैलास—मेरा देवर। कुछ दिन हुए, उसकी स्त्री मर गई। पसन्द लायक सयानी लड़की नहीं मिलती, इसीसे इतने दिन से बैठा है नहीं तो वैसा बाँका लड़का कहाँ मिलेगा। राधारानी के साथ उसका ठीक मिलान होगा।

गोरा के हृदय में जितनी ही सुइयाँ चुभने लगी उतना ही वह कैलास के सम्बन्ध में प्रश्न करने लगा।

हरिमोहिनीके देवरोंमें कैलास ही अपने विशेष यत्नसे थोड़ा बहुत लिखा पढ़ा था। कहाँ तक पढ़ा था, यह हरिमोहिनी न बतला सकी। अपने भाई-बन्धुओंमें वही विद्वान कहा जाता है। गाँवके पोस्टमास्टरके खिलाफ जिले में जो दरख्वास्त दी गई थी। वह कैलासचन्द्र के ही हाथ की लिखी थी। उसने ऐसी सुललित भाषा में सब बातें लिख दी थीं कि पोस्ट अफिसका एक बड़ा बाबू स्वयं आकर तहकीकात कर गया था। इससे गाँवके सभी लोगों ने कैलासकी योग्यता पर आश्चर्य प्रकट किया। इतनी गंभीर शिक्षा पाने पर भी आचार और धर्ममें कैलासकी निष्ठा कुछ कम नहीं हुई है।

कैलासका सारा इतिहास सुन लेने पर गोरा उठ खड़ा हुआ। हरिमोहिनीको प्रणाम करके वह चुपचाप चलता हुआ।

जीनेसे उतरकर गोरा जब आँगनसे सदर फाटक की ओर जा रहा था तब आँगन के एक ओर रसोई घर में सुचरिता रसोई बनाने में लगी हुई थी। गोराके पैरोंकी आहट पाकर वह द्वार पर आ खड़ी हुई। गोरा किसी ओर दृक्-पात न करके बाहर चला गया। सुचरिता लम्बी साँस लेकर फिर रसोई के काम में लगी।

गोरा जब गलीके मोड़ के पास आया तब हारान बाबू से उसकी भेंट हुई। हारान बाबूने जरा हँसकर कहा—आज इतने सबेरे ही।

गोराने इसका कोई जवाब न दिया। हारान बाबू ने फिर जरा मुस-कुरा कर पूछा—मालूम होता है, वहीं गये थे। सुचरिता घर ही पर है!

गोरा—जी हाँ।

यह कहकर वह बड़ी तेजीसे आगे बढ़ गया। हारान बाबू ने सीधे सुचरिता के मकानमें घुसकर रसोई घरके खुले द्वार की ओर झाँककर देखा। सुचरिता को देखते ही वह द्वारके सामने खड़ा हो गया। सुचरिता के भागने का रास्ता बन्द हो गया। मौसी भी उसके पास न थी।

हारान बाबूने पूँछा—गोरासे अभी गली के मोड़ पर भेंट हुई थी। मालूम होता है, वे बड़ी देर से यहीं थे?

सुचरिता उसकी बातका कोई जवाब न दे रसोई के बर्तन-बासन लें अत्यन्त व्यस्त हो उठी। मानों अभी दम लेनेकी फुरसत नहीं है, ऐसा भाव उसने दिखाया। किन्तु हारान बाबू इससे बाज आनेवाले न थे। उसने उसी जगह खड़े होकर बात चीत करना आरम्भ कर दिया। हरिमोहिनीने जीनेसे नीचे उतर दो-तीन बार खाँसा। इससे भी कुछ फल न हुआ। हरिमोहिनी हारान बाबू के सामने ही चली आती, किन्तु वह जानती थी कि एक बार यदि मैं इनके सामने आऊँगी तो इस घर में इस उद्यमशील युवक के अदम्य उत्साहसे मैं और सुचरिता दोनों कहीं आत्म-रक्षा न कर सकेंगी। इस कारण वह हारान बाबू की परछाँही देखते ही इतना बड़ा घूँघट काढ़ती थी कि देखने से मालूम होता था, वह कलकी आई नई बहू है।

हारान बाबूने कहा—सुचरिता, मैं नहीं जानता कि आखिर तुम किस रास्ते चलोगी और कहाँ जा पहुँचोगी। शायद तुमने सुना ही होगा कि ललिताके साथ विनय बाबूका हिन्दू मतसे ब्याह होगा। तुम जानती हो इसका दोष किसके माथे मढ़ा जायगा?

सुचरिता से कोई उत्तर न पाकर हारान बाबूने स्वरको कुछ मुलायम करके गम्भीर भावसे कहा—तुम्हीं इसके जिम्मेदार समझी जाओगी।

हारान बाबूने फिर यों कहना शुरू किया—तुम्हींने विनय और गोरा को अपने घरमें बिठा-चिठाकर उन्हें यहाँ तक बढ़ाया है कि वे अब तुम्हारे ब्राह्म-समाजके किसी व्यक्ति को कुछ मन में नहीं लाते। तुम्हारे ब्राह्म-समाजके सभी श्रेष्ठ लोगों की अपेक्षा यही दोनों हिन्दू युवक तुम्हारे लिए विशेष मान्य हो उठे हैं। इसका फल क्या हुआ है सो देखती हो न ? क्या मैं पहले ही से तुमको बराबर सावधान करता नहीं आता हूँ ? आज क्या हुआ, यह आँख पसारकर देखा न ! आज ललिता को कौन रोकेगा ? तुम सोचती हो, ललिता के ऊपर से ही होकर विपत्ति की आँधी चली जायगी ! लेकिन ऐसा नहीं है। आज मैं तुमको सावधान करने आया हूँ। अब तुम्हारी बारी है। आज ललिता की दुर्घटनासे तुम जरूर ही मन ही मन पछता रही हो, किन्तु वह दिन दूर नहीं जिस दिन तुम अपने अधःपतन पर जरा भी न पछताओगी। किन्तु अब भी सँभलने का समय है। सुबह का भूला अगर शाम को घर आ जाय तो वह भूला नहीं कहलाता। एक बार तुम सोच देखो, एक दिन कितनी बड़ी आशाके भीतर हम तुम दोनों पड़े थे। हम लोगोंके कितने ही शुभ सङ्कल्प थे और हमने कितने ही काम की बातें सोच रक्खी थीं। क्या वे सब नष्ट हो गई है ! कभी नहीं। हमारी उस आशाकी क्यारी अब भी वैसी ही लहलहा रही है। सिर्फ एक बार तुम मुँह फेरकर देखो, जिधर जा रही हो उधरसे एक बार लौट आओ।

सुचरिता तब तेल में तरकारी भून रही थी चूल्हे परसे कड़ाही को नीचे उतार मुँह फिराकर दृढ़ता भरे स्वर में बोली—मैं हिन्दू हूँ।

हारान बाबूने एकदम हतबुद्धि होकर कहा—तुम हिन्दू हो ?

सुचरिता—जी हाँ, मैं हिन्दू हूँ हिन्दू !

यह कहकर वह फिर कड़ाहीको चूल्हे पर चढ़ाकर बार-बार तरकारी को उलटने-पलटने लगी।

हारान बाबू कुछ देर तक इस चोटको किसी तरह बरदाश्त करके

तीव्र स्वर में बोले—मालूम होता है, इसीसे गोरा बाबू सबेरे-शाम आकर तुमको मन्त्र देते हैं !

सुचरिता नजर नीची किये ही बोली—हाँ, मैंने उन्हींसे मन्त्र लिया है, वही मेरे गुरु हैं।

हारान बाबू इतने दिन तक अपने ही को सुचरिता का गुरु जानते थे। किन्तु उनका गुरुत्व-अधिकार आज गोरा ने छीन लिया है; सुचरिता के मुँह से यह बात उनको बरछी की तरह छिदने लगी।

उन्होंने कहा—तुम्हारे गुरु चाहे जितने बड़े लोग हों, क्या तुम समझती हो कि हिन्दू समाज तुमको ग्रहण करेगा ?

सुचरिता—यह बात मैं नहीं जानती, समाजको भी नहीं जानती। मैं सिर्फ यही जानती हूं कि मैं हिन्दू हूं।

हारान बाबूने कहा—तुम जान रक्खो कि इतने दिन तक तुम कँवारी रही। अब तक तुम्हारा विवाह नहीं हुआ ! इतने ही से तुम हिन्दू-समाजमें अग्राह्य हो गई, तुम्हारी जाति जा चुकी है।

सुचरिता ने कहा—इसका आप वृथा शोच न करें किन्तु मैं आपसे फिर कहती हूँ— मैं हिन्दू हूँ।

हारान बाबू ने कहा—परेश बाबू से जो धर्म शिक्षा पाई थी, वह भी तुमने अपने नये गुरु के पैरों-तले विसर्जन कर दी !

सुचरिता—मेरा धर्म क्या है सो अन्तर्यामी जानता है। उस बात पर मैं किसीके साथ कोई आलोचना करना नहीं चाहती। आप जान लीजिए, मैं हिन्दू हूँ।

हारान बाबू आपेसे बाहर बोल उठे—तुम चाहे कितनी बड़ी हिन्दू ही क्यों न बनो, उससे कोई फल न होगा। यह मैं तुमसे कहे जाता हूँ। गोरा को तुम विनय न समझो। तुम अपने को हिन्दू-हिन्दू कहकर गला फाड़कर मर भी जाओगी तो भी गोरा बाबू तुमको ग्रहण करें, ऐसी आशा तुम स्वप्न में भी न करो। शिष्यको लेकर गुरुआई करना

सहज है किन्तु इससे वें तुमको ले जाकर गृहणी बनावें इस बात की कभी मन में कल्पना भी न करना।

खाना पकाना सब भूलकर सुचरिता विद्युत-वेग से खड़ी होकर बोली—आप यह क्या कह रहे हैं?

हारान बाबू—यही कह रहा हूँ कि गौर-बाबू कभी तुमसे ब्याह न करेंगे

सुचरिता की आँखें लाल हो गईं। वह बोली—विवाह? मैंने आपसे कहा नहीं है कि वे मेरे गुरु हैं?

हारान—सो तो कहा है किन्तु जो नहीं कहा है, वह भी तो हम अपने बुद्धिबल से जान सकते हैं।

सुचरिता—आप अभी यहाँ से चले जायँ। मेरा अपमान न करें। खैर, अब ऐसी बात न बोलें। यह बात मैं आज आपसे कह रहती हूँ कि आज से मैं आपके सामने बाहर न हूँगी।

हारान—हमारे आगे अब किस बिरते पर निकलोगी? अब तुमने कलेवर जो बदल डाला है! अब तुम हिन्दू रमणी! सूर्य भी तुम्हें नहीं देख सकेगा, मैं किस गिनती में हूं। परेश बाबूके पाप का घड़ा भर गया। वे इस ढलती उम्र में अपनी करनी का फल भोगें। हम जाते हैं।

सुचरिता खूब जोर से रसोई घर का द्वार बन्द करके बैठ रही और आँचल का कपड़ा मुँह में ठूँसकर रोने की आवाज को दम साधकर रोकने लगी। हारान बाबू चले गये।

हरिमोहिनी दोनों का कथोपकथन सुन रही थी। आज उसने सुचरिता के मुँह से जो सुना वह सुनने की उसे आशा न थी। उसका हृदय हर्ष से फूल उठा? वह बोली—नहीं होगा! मैं जो एकाग्र मनसे अपने गोपीवल्लभ की पूजा करती हूँ वह क्या सब वृथा जायगी।

हरिमोहिनीने तुरन्त अपने पूजा-गृहमें जाकर अपने ठाकुरजी को साष्टाङ्ग प्रणाम किया और पूजाके काममें लग गई।

[६३]

सुचरिताके सामने खुलकर मन लगाकर जैसे गोराने बातकी है, वैसे और किसीके आगे नहीं की।

किन्तु आज हरिमोहिनीकी बातें सुनकर एकाएक उसे खयाल आ गया कि ऐसी ही मुग्धता देखकर एक दिन उसने विनय को यथेष्ट तिरस्कार किया था, उसकी दिल्लगी उड़ाई थी। आज वह अज्ञात भाव से अपने को उसी अवस्थाके बीच खड़े होते देखकर चौंक उठा।

गोरा जब घर पहुँचा तब देखा माँ फर्श पर बैठी आँखों पर चश्मा चढ़ाये एक कापी लिये हुये कुछ लिख रही हैं। गोराको देखकर, चश्मा उतारकर कापी बन्दकर, उन्होंने कहा—बैठो।

गोराके बैठने पर आनन्दमयीने कहा—तुम्हारे साथ मुझे एक सलाह करनी है। विनयके व्याहकी खबर तो सुन चुके हो।

गोरा चुप रहा। आनन्दमयीने कहा—विनयके चाचा नाराज हो गये हैं, वे लोग कोई न आवेंगे। उधर परेश बाबूके घरमें भी इस व्याहके होने में सन्देह है। विनय को ही दोनों ओरका सारा बन्दोबस्त करना होगा। इसीसे मैं कह रही थी कि हमारे उत्तर के हिस्सेका घर तो किराये पर उठा हुआ है—उसके ऊपरी खण्डका किरायेदार चला गया है। उसी दूसरे खण्डमें अगर विनयके व्याहका प्रबन्ध किया जाय तो बड़ी सुविधा होगी।

गोरा—क्या सुविधा होगी।

आनन्द०—मैं न रहूँगी, तो उसके व्याहमें सब देखे सुनेगा कौन। वह तो बड़ी आफत में पड़ जायगा। उस घर में अगर व्याहका ठीक हो

जाय तो मैं इसी घरसे सब ठीक-ठीक इन्तजाम कर दे सकती हूँ—कुछ झंझट न करना होगा।

गोरा—यह न होगा माँ।

आनन्द०—क्यों न होगा? उन (पति) को मैंने राजी कर लिया है।

गोरा—नहीं माँ यह ब्याह यहाँ न हो सकेगा—मैं कहता हूँ मेरी बात सुनो।

आनन्द०—क्यों विनय तो उन लोगोंके मनसे ब्याह नहीं कर रहा है।

गोरा—ये सब बहसकी बातें हैं। समाज के साथ वकालत नहीं चलेगी। विनयकी जो खुशी हो सो करे—हम इस ब्याहको नहीं मान सकते। कलकत्ता शहर इतना बड़ा है—यहाँ घरों की तो कमी नहीं है। उसका अपना डेरा ही खाली है।

आनन्दमयी यह जानती थी कि घर बहुत मिल सकते हैं। किन्तु उनको यह बात खटक रही थी कि विनय आत्मीय बन्धु सबसे परित्यक्त हो कर बिल्कुल बन्धुबान्धव हीन बदनसीब आदमी की तरह किसी तरह अपने डेरेमें बैठकर ब्याहकी रस्म पूरी कर लेगा। इसी कारण उन्होंने अपने घर के उस जुदे हिस्सेमें जो किराये पर उठाया जाता है विनयका ब्याह करने का विचार मनमें पक्का कर चुकी थी। इससे यह होगा कि समाजके साथ कोई झगड़ा न खड़ा करके वह अपने ही घरमें इस शुभ कार्यका अनुष्ठान करके सन्तुष्ट हो सकेंगी।

गोरा की दृढ़ आपत्ति देखकर लम्बी साँस छोड़कर उन्होंने कहा—तुम लोगोंको अगर इतना नापसन्द है, तो दूसरी ही जगह किरायेका घर ठीक करना होगा। लेकिन उससे मेरी बड़ी खींचतान होगी। खैर जब यह हो ही नहीं सकता तब इसके लिये सोच करना वृथा है।

गोराने कहा—माँ, इस ब्याह में तुम शामिल होगी तो बात नहीं बनेगी।

आनन्द०—यह कैसी बात है गोरा, तू कहता क्या है अपने विनयके ब्याहमें मैं न शामिल हूँगी, तो और कौन होगा।

गोरा—यह किसी तरह न हो सकेगा माँ।

आनन्द०—गोरा! विनयके साथ तेरा मत न मिले तो कोई बात नहीं लेकिन इसीके लिये क्या उसके साथ शत्रुता करनी चाहिए।

गोरा कुछ उत्तेजित हो उठकर कहने लगा—माँ, यह तुम अन्यायकी बात कह रही हो। आज जो मैं विनय के ब्याह में हँसी खुशी के साथ शामिल नहीं हो सकता यह मेरे लिये सुख की बात नहीं है। विनयको मैं कितना चाहता हूँ यह बात और कोई भले ही न जाने तुम तो जानती हो। किन्तु माँ, यह स्नेह की बात नहीं है—इसके भीतर शत्रुता मित्रता रत्ती भर नहीं है। विनय इसके सब फलाफलको जान बूझकर ही काम करने जा रहा है। हमने उसे नहीं छोड़ा उसीने हम लोगों को छोड़ दिया है अतएव इस समय जो विच्छेद हुआ है उससे उसे ऐसी कोई चोट न पहुँचेगी जो उसकी प्रत्याशा से परे हो।

आनन्द०—गोरा, यह ठीक है कि विनय जानता है कि इस ब्याहमें तुम्हारे साथ उसका किसी तरह का सम्बन्ध नहीं रहेगा। किन्तु यह भी वह निश्चय जानता है कि इस शुभ कर्ममें मैं उसको किसी तरह त्याग न कर सकूँगी। उसकी स्त्रीको मैं आशीर्वाद करके घरमें न लाऊँगी—यह बात अगर विनय समझता—तो मैं सच कहती हूँ वह प्राण निकल जाने पर भी यह ब्याह न कर सकता मैं क्या विनय के मनको जानती नहीं।

यह कहकर आनन्दमयीने आँखके किनारेसे एक बूँद आंसू पोंछ डाला। विनयके लिये गोराके मन में जो गहरी वेदना थी वह उन्मथित हो उठी। तथापि उसने कहा—माँ तुम समाजमें हो और समाजके निकट ऋणी हो—यह बात तुम्हें याद रखनी होगी।

आनन्द०—गोरा मैं तो तुमसे बार बार कह चुकी हूँ कि समाजके साथ मेरा सम्बन्ध बहुत दिनसे टूट चुका है। उसके लिये समाज मुझे घृणा करता है और मैं भी उससे दूर रहती हूँ।

गोरा—माँ, तुम्हारी इस बातसे मुझे सबसे अधिक चोट पहुँचती है।

आनन्दमयीने अपनी अश्रुधाराक्रांत स्निग्ध दृष्टिसे गोराके सारे शरीर को छूकर कहा—बच्चा, ईश्वर जानते हैं, तुझे इस आघातसे बचानेकी शक्ति मुझमें नहीं है।

गोराने उठ खड़े होकर कहा—तो फिर मुझे क्या करना होगा, सो तुमसे कहूँ? मैं विनयके पास जाता हूं—उससे कहूँगा—तुमको अपने ब्याहके मामले में लपेटकर वह समाजके साथ तुम्हारे विच्छेद को और भी न बढ़ावे। क्योंकि यह उसका अत्यन्त अन्याय और स्वार्थपरताका काम होगा।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—अच्छा तू जो कर सके वह कर। उससे जाकर कह, उसके बाद मैं देख लूँगी।

गोराके चले जाने पर आदन्दमयी बहुत देर तक बैठी बैठी सोचती रही। उसके बाद धीरे धीरे उठकर अपने स्वामीके रहने के स्थान को चली गईं।

आनन्दमयीको देखकर वह व्यस्त हो उठे। आनन्दमयी उनसे काफी फासले पर कोठरी की चौखट पर बैठकर बोलीं—देखो, बड़ा अन्याय हो रहा है!

कृष्णदयाल सांसारिक न्याय अन्यायके बाहर पहुँच चुके थे। इसीलिए लापरवाहीके साथ पूछा—क्या अन्याय?

आनन्द०—गोराको अब एक दिन भी बहलाकर रखना उचित न होगा। धीरे धीरे बात बहुत बढ़ती जाती है।

गोराने जिस दिन प्रायश्चित्तका प्रसंग उठाया था उसी दिन कृष्ण-दयालके मन यह बात आई थी। उसके बाद योग साधना की विविध प्रक्रियाओंमें उलझ पड़नेसे उन्हें इस बात पर विचार करने का अवकाश नहीं मिला।

आनन्दमयीने कहा—शशिमुखीके ब्याह की बात चीत हो रही है।

जान पड़ता है, इसी फागुनके महीनेमें होगा। अब तक घरमें जितनी दफे कुछ सामाजिक काम काज हुआ है, मैं किसी-न-किसी बहानेसे गोरा को लेकर और जगह चली गई हूँ। वैसा बड़ा कोई काम-काज भी तो इस बीच में नहीं हुआ। लेकिन अबकी शशीके ब्याह में उसके लिए क्या प्रबन्ध करोगे? अन्याय रोज ही बढ़ता जा रहा है। मैं भगवान के आगे दोनों बेला हाथ जोड़कर क्षमा-प्रार्थना करती हूँ—वह जो दण्ड देना चाहें, सो मुझीको दें किन्तु मुझे डर लगता है कि अब गोरा को रोका ना जा सकेगा—उसे लेकर जरूर मुश्किल होगी। अब मुझे आज्ञा दो, मेरे भाग्यमें जो बदा होगा, सो होगा, मैं उससे सब हाल खुलासा करके कह दूँ!

कृष्णदयालने कहा - तुम क्या पागल हो गई हो! यह बात आज जाहिर होनेसे मुझे कठिन जवाबदेहीका सामना करना पड़ेगा—पेंशन तो बन्द हो ही जायगी, शायद पुलीस भी आफत मचावे। जो हो गया, सो हो गया, जहाँ तक जितना सँभालकर चल सको वहाँ तक संभालो। अगर न संभाल सको, तो उसमें भी विशेष दोष न होगा।

कृष्दयालने ठीक कर रक्खा था कि उनकी मृत्यु के बाद जो होना हो, सो हो। वह तो फिर स्वतन्त्र हो जायँगे। मरनेके बाद वह न जान सकेंगे कि और पर क्या गुजरी। फिर उन्हें उन सब बातों पर दृष्टि करनेकी, या घबरानेकी, कुछ दरकार न होगी।

क्या करना चाहिए, यह कुछ भी निश्चित न कर सकनेके कारण उदास मुँह लिये आनन्दमयी उठ कर चली आई।

—:०:—

[६४]

प्रातःकाल संध्यापूजा करके गोराने अपनी बैठकमें जाते ही देखा, परेश बाबू बैठे हैं। उसके हृदयके भीतर जैसे एक बिजली की लहर दौड़ गई। गोराकी नस-नस तक यह बात माने ,बिना न रह सकी कि परेश के साथ किसी एक सूत्रसे उसके जीवन की एक निगूढ़ आत्मीयताका योग है। गोराने परेशको प्रणाम किया ।

परेशने कहा-- विनयके व्याहकी बात तुमने अवश्य सुनी होगी।

गोरा—हाँ।

परेश—वह ब्राह्म मतसे व्याह करनेको तैयार नहीं है।

गोरा—तब तो उसे व्याह करना ही मुनासिब नहीं है।

परेश जरा हँस दिये इस बात को लेकर कुछ बहस नहीं की। उन्होंने कहा—हमारे समाजका कोई आदमी इस व्याहमें शरीक न होगा। सुनता हूँ, विनयके आत्मीयों में से कोई नहीं आने वाला है। अपनी कन्या की ओर केवल मैं हूं, और विनयकी ओर जान पड़ता है, तुम्हारे सिवा और कोई नहीं है। इसीलिये इस बारेमें तुम्हारे साथ सलाह करना है।

गोराने सिर हिलाकर कहा—इस बारेमें मेरे साथ सलाह किस तरह होगी। मैं तो इसके बीचमें नहीं हूं।

परेशने विस्मित होकर गोराके मुखकी ओर क्षण भर देखते रह कर कहा—तुम नहीं हो!

परेशके इस विस्मयसे दम भरके लिए गोराको सङ्कोच मालूम हुआ। मगर सङ्कोच मालूम पड़नेके कारण ही उसी दम दूनी दृढ़ताके साथ उसने कहा—मैं इस व्याहमें कैसे रह सकता हूं।

परेश—मैं जानता हूं कि तुम उके मित्र हो।

गोरा—मैं उसका मित्र अवश्य हूं, किन्तु यही तो संसारमें मेरा एक मात्र बन्धन और सबसे बढ़ कर बन्धन नहीं है।

परेश—गोरा! तुम्हारी समझमें क्या विनयके आचरणमें कुछ अन्याय या अधर्म प्रकट हो रहा है?

गोरा—धर्मके दो पहलू हैं। एक नित्य और एक लौकिक। धर्म जिस जगह समाजके नियममें प्रकट होता है, वहां भी उसकी अवहेलना नहीं की जा सकती वैसा करनेसे संसार का विनाश हो जायगा।

परेश—नियम तो असंख्य हैं, तो क्या यही मान लेना होगा कि सभी नियमोंमें धर्म प्रकट हो रहा है?

यह कह कर परेशबाबू उठ खड़े हुए—गोरा भी कुर्सी छोड़कर उठा। परेशने कहा—मैंने सोचा था, ब्राह्म-समाजके अनुरोधसे मुझे शायद इस विवाहसे जरा अलग रहना होगा—तुम विनयकी मित्रताके नाते सब काम सुसम्पन्न कर दोगे। इसी जगह पर आत्मीयता की अपेक्षा मित्रके लिए जरा सुबीता है, उसे समाजका आघात नहीं सहना पड़ता; किन्तु तुम भी जब विनयको छोड़ देनाही कर्तव्य समझते हो, तब मेरे ही ऊपर सब भार आ पड़ा है—यह काम मुझीको अकेले निबाहना होगा।

उस समय गोरा यह नहीं जानता था कि 'अकेले' का अर्थ यहाँ केवल परेश बाबूके डीलसे ही है। वरदासुन्दरी उसके विरुद्ध खड़ी थीं, घरकी और स्त्रियां भी प्रसन्न न थीं, हरिमोहिनीकी आपत्ति की आशंका करके परेश बाबूने सुचरिताको इस ब्याहकी सलाहमें भी नहीं बुलाया था। उधर ब्राह्म-समाजके सभी लोग उनके ऊपर खड्ग-हस्त हो उठे थे और विनयके चाचाकी ओरसे उन्होंने जो दो पत्र पाये थे, उसमें उन्हें कुटिल कुचक्री, लड़केको फुसला लेने वाला आदि कहकर खूब गालियाँ दी गई थी।

परेशके जाते ही अविनाश और गोराके दलके और भी दो एक आदमियोंने गोराके बैठकखानेमें प्रवेश कर परेश बाबूको लक्ष्य करके हँसी-दिल्लगीका उपक्रम किया। गोरा कह उठा—जो भक्तिके पात्र हैं,

उनको भक्ति करनेकी क्षमता अगर न हो तो कम से कम उनकी दिल्लगी करनेकी क्षुद्रतासे अपनी रक्षा करो।

गोराको मजबूरन फिर अपने दलके लोगोंके साथ पहलेके अभ्यस्त काममें लग जाना पड़ा। किन्तु फीका सब फीका! यह कुछ भी नहीं है। इसे कोई काम ही नहीं कहा जा सकता है। इसमें कहीं भी जान नहीं है। इस तरह केवल लिख-पढ़ कर लेक्चर देकर, बातें और बहस करके दल बांध कर तो कोई काम नहीं होता, बल्कि बहुत कुछ बेकारके काम जमा हो रहे हैं।

इधर प्रायश्चित की सभाका आयोजन चल रहा था। इस आयोजन में गोराको जरा विशेष उत्साह मालूम पड़ा है। वह प्रायश्चित्त केवल जेलखानेकी अपवित्रताका प्रायश्चित्त नहीं है। इस प्रायश्चित्तके द्वारा सभी ओर सम्पूर्ण रूपसे ममता त्यागकर फिर एक बार जैसे नई देह लेकर अपने कर्म-क्षेत्रमें वह नया जन्म प्राप्त करना चाहता है। प्रायश्चित्त का विधान लेलिया गया है, दिन भी ठीक होगया है। अविनाशने गुप्त रूपसे अपने दलके लोगोंके साथ सलाह की है कि उस दिन सभा में सब पंडितों के द्वारा, धान्य, दूर्वा, फूल चन्दन आदि विविध उपचारों से अर्चा कराकर गोराको हिन्दू धर्म प्रदीपकी उपाधि दी जायगी।

इस तरह उस दिनकी कार्य प्रणालीको अत्यन्त हृदयग्राही और फल प्रद बना देनेके लिए गोरासे छिपाकर उसके दलके लोगोंमें परस्पर नित्य परामर्श चलने लगा।

[६५]

हरिमोहिनीको उसके देवर कैलासका पत्र मिला। वह लिखता है—"आपकी चरणोंकी कृपासे यहाँ कुशल है, आप अपने कुशल-समाचारसे हमारी चिन्ता दूर कीजिए।" कहना व्यर्थ है कि हरिमोहिनीने जबसे उनका घर छोड़ा है तबसे वे इस चिन्ताको बराबर सहन करते आये हैं, तथापि कुशल समाचार जानने के लिए आज तक उन लोगोंने कभी कोई चेष्टा नहीं की थी। किन्तु हरिमोहिनीसे इस व्याहकी बात सुनते ही अब उनकी चिन्ता असह्य हो उठी है। कैलासने घर भरके लोगों की ओरसे प्रणाम और कुशल-प्रश्न लिखकर अन्तमें लिखा था—"आप जिस लड़की की बात लिखती हैं उसका सब हाल खुलासा लिखिये। आपने कहा है, उसकी उम्र १२-१३ वर्ष की होगी। जान पड़ता है, लड़की बढ़नहार है, देखनेमें कुछ बड़ी मालूम होती होगी; इससे कोई विशेष हानि नहीं। उसकी जो सम्पत्तिकी बात लिखी है, उसमें उसका स्वत्व कैसा है यह जांच कर लिखिये तो मैं अपने बड़े भाईको सूचित कर उनकी सलाह लूँगा। शायद उनकी असम्मति न होगी। यदि फुरसत मिलेगी तो आकर लड़की को देख लूँगा।"

हरिमोहिनीने इतने दिन किसी तरह कलकत्तेमें रहकर समय बिताया था। किन्तु जब उसके मनमें ससुराल देखनेकी आशा अंकुरित हुई तब एकदम अधीर हो उठी। विदेश का रहना उसे अत्यन्त क्लेशकर मालूम होने लगा। दिन रात यही चाहती थी कि कब यहाँ से भागूँ। वह इस चेष्टा में लगी कि अब सुचरिताको किसी तरह राजी करके व्याहका दिन चुपचाप नियतकर ऊपर ही ऊपर काम निकाल लूँगी तो भी झटपट कोई काम करनेका साहस उसको न हुआ।

सुचरिता ने देखा, गोराका आना जाना एकदम बन्द हो गया। वह समझ गई कि हरिमोहिनीने उससे जरूर कुछ कहा है। उसने मनमें कहा, नहीं आये तो क्या! वही मेरे गुरु हैं, वही मेरे गुरु हैं।

इसी बीच एकदिन दोपहरके बाद ललिताने आकर बड़े प्यारसे सुचरिताको गले लगाया और गद्गद् कंठसे कहा—सुचरिता बहन !

सुचरिता—कहो बहन, क्या हाल है ?

ललिता—सब ठीक हो गया।

सुचरिता—कौन दिन नियत हुआ है ?

ललिता—सोमवार।

सुचरिता—मण्डप कहाँ होगा ?

ललिताने सिर हिलाकर कहा—मैं नहीं जानती, पिताजी जानते हैं।

सुचरिताने ललिताको गले लगाकर कहा—खुश हो न !

ललिता—खुश क्यों न हूंगी !

सुचरिता—जो तुमने चाहा था सो सब मिल गया। अब किसीके साथ झगड़ा करनेकी बात न रही। इसीसे डरती हूँ, पीछे तुम्हारा उत्साह कम न हो जाय। उत्साह न रहनेसे किसके साथ झगड़ोगी ?

ललिताने हँसकर कहा—क्यों, क्या झगड़ा करनेवालोंका अभाव है ? अब बाहर खोजना न पड़ेगा।

सुचरिताने ललिताके गालमें उँगली गड़ाकर कहा—हाँ, समझ गई। अभीसे कलहका सब सामान दुरुस्त हो रहा है। मैं विनयसे कह दूँगी। अभी समय है बेचारा सावधान हो जाय।

ललिता ने कहा—तुम्हारे बेचारे को अब सावधान होने का समय नहीं। अब उसके छूटनेका कोई उपाय नहीं। जन्म-कुण्डलीमें जो कष्ट लिखा था वह फलित हुआ! अब सिर पीटना और रोना मात्र है !

सुचरिताने गम्भीर भावसे कहा—मैं कितनी खुश हुई हूँ सो तुमसे क्या कहूँ। विनयके सदृश स्वामी पाकर तुम उसके योग्य हो सको, यही मेरी ईश्वर से प्रार्थना है।

ललिता—मैं किसीके योग्य होऊँ इसके लिए तो प्रार्थना और मेरे योग्य कोई हो इसके लिए प्रार्थना नहीं! वाह! इस सम्बन्धमें एक बार उनसे बात करके देखो उनका मत क्या है सो सुन रक्खो। नहीं तो तुम्हारे मनमें भी अनुताप होगा कि इतने बड़े अद्‌भुत मनुष्य का आदर इतने दिन तक हमसे कुछ क्यों न हो सका। तुम अपनी इस अज्ञानता पर अब भी बिना पछताये न रहोगी।

सुचरिताने कहा—जो हो, इतने दिन पर तो उसे तुम्हारा जैसा एक जौहरी मिला है। उस अनमोल रत्नके मूल्यमें जो तुम सर्वस्व देना चाहती हो उसमें अब पछताने की कोई बात नहीं। मेरे सदृश गवाँरसे आदर पानेकी उसे अब जरूरत ही न होगी।

"होगी नहीं खूब होगी!" यह कहकर ललिताने खूब जोरसे सुचरिता का गाल मल दिया। वह "हिस" कर उठी। ललिताने फिर हँसकर कहा—मुझ पर तुम्हारा आदर बराबर बना रहना चाहिए यह न होगा कि मुझे धोखा देकर किसी और का आदर करने लग जाओ।

सुचरिता ने ललिताके गाल पर गाल रखकर कहा—किसी को नहीं, किसी को न दूँगी—तुम चाहे जिसे दो।

ललिताने कहा—किसी को नहीं! एक दम किसी को नहीं?

सुचरिता सिर्फ अस्वीकार-बोधक सिर हिलाया। तब ललिता जरा हटकर बैठी और बोली—देखो बहन, तुम तो जानती हो, तुम और किसीको आदर देती तो मैं कदापि सह्य न कर सकती। इतने दिन तक मैंने तुमसे न कहा था आज कहती हूँ। जब गौर बाबू मेरे घर आते थे तब—बहन, मुझे जो कुछ कहना है, आज अवश्य कहूँगी। मैंने तुमसे कभी कोई बात नहीं छिपाई। किन्तु नहीं जानती, यह एक बात मैंने तुमसे कभी क्यों नहीं कही। इसके लिये मेरे मनमें बड़ा ही कष्ट है। वह बात आज बिना कहे मैं तुम्हारे पाससे बिदा न हो सकूँगी। जब गौर बाबू मेरे घर आते थे तब मुझे बड़ा क्रोध होता था! क्रोध क्यों होता था? तुम समझती थी कि मैं कुछ जानती ही नहीं? मैंने देखा, तुम

मेरे आगे उनका नाम भी न लेती थी। इससे मेरे मन में और भी क्रोध होता था। तुम जो मुझसे बढ़कर उनको प्यार करती थी यह मुझे असह्य मालूम होता था। नहीं बहन, आज मुझे वह बात कहने दो, उनके निमित्त मैंने कितना कष्ट पाया है उसे मैं क्या कहूँ। आज भी तुम मुझसे वह बात न कहेगी, यह मैं जानती हूँ किन्तु आज न कहनेसे अब मुझे क्रोध न होगा। मैं बहुत खुश हूँगी, अगर तुम्हारा—

सुचरिता ने झट ललिताका मुँह बन्द करके कहा—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, वह बात मुँह पर न लाओ। वह बात सुननेसे मैं धरती में समा जाना चाहती हूँ।

ललिता—क्यों बहन, वे क्या।

सुचरिता व्याकुल होकर बोल उठी—नहीं, नहीं ललिता, पागलकी तरह बात न कर; जो बात मन में न समा सके वह मुँह में न ला।

ललिताने सुचरिताके इस सङ्कोचसे खिसियाकर कहा—बहन, यह तुम्हारी सरासर भूल है। मैंने खूब सोचकर देखा है; मैं तुमसे सच कहती हूँ—

ललिता का हाथ छुड़ाकर सुचरिता कोठेसे बाहर हो गई। ललिता उसके पीछे दौड़कर उसे पकड़ लाई और बोली—अच्छा, अच्छा अब मैं न कहूँगी।

सुचरिता—फिर कभी!

ललिता—मैं इतनी बड़ी प्रतिज्ञा न कर सकूँगी। यदि मेरा दिन आवेगा तो कहूँगी नहीं तो नहीं। यह बात आज यहीं तक रही।

इधर कई दिनोंसे हरिमोहिनी छिपे-छिपे सुचरिता पर नजर रखती थी, और बराबर उसके पास ही पास फिरा करती थी। सुचरिता इस बातको समझ गई थी और हरिमोहिनी की यह सन्देह-पूर्ण सतर्कता उसके हृदय पर बोझ सी मालूम हो रही थी।

ललिताके चले जाने पर सुचरिता अत्यन्त क्लान्त चित्त होकर टेबलके ऊपर दोनों हाथोंके बीच सिर रखकर रोने लगी। तब हरिमोहिनी ऊपर

से नीचे उतर आई और सुचरिताके पास जाकर बोली—राधा रानी ? यह सब क्या हो रहा है ? मेरी तो समझमें ही नहीं आता।

सुचरिता—मौसी, तुम दिन रात मेरे ऊपर ऐसी सतर्क दृष्टि क्यों रखती हो ?

हरिमोहिनी—क्यों रखती हूँ सो क्या तुम नहीं जानती ? तुम न कुछ खाती हो न पीती हो, मुँह मूँदकर रोती रहती हो। यह कैसा लक्षण है ! मैं बच्ची नहीं हूँ, क्या मैं इतना भी नहीं समझ सकती ?

सुचरिता—सच पूछो तो तुम कुछ नहीं समझती। तुम ऐसी भयानक भूल समझ रही हो, ऐसा नासमझी का काम कर रही हो, जो अब मुझसे किसी तरह बरदाश्त नहीं होता।

हरिमोहिनी—अच्छा, अगर मैं गलत समझती हूँ तो तुम अच्छी तरह समझाकर क्यों नहीं कहती ?

सुचरिता ने सब सङ्कोच हटाकर कहा—अच्छा तो मैं कहती हूँ। मैंने अपने गुरुसे एक ऐसी शिक्षा पाई है जो मेरे लिए बिलकुल नई है, उसको पूर्ण रूपसे ग्रहण करने के लिए विशेष शक्ति की आवश्यकता है। मुझमें वह शक्ति नहीं है, इसीकी मुझे चिन्ता है। मैं और किसी बातके लिए कुछ नहीं सोचती। किन्तु तुम हमारे सम्बन्ध को बुरी दृष्टिसे देखती हो, तुमने मेरे गुरुको अपमानित करके बिदा कर दिया है, तुमने उनसे जो कुछ कहा है सब तुम्हारी भूल है। तुम मेरे विषय में जो सोचती हो, सब झूठ है। तुम अन्याय कर रही हो। उनके सदृश महान् पुरुषको तुम लाञ्छित कर सको ऐसी तुम्हारी सामर्थ्य नहीं। किन्तु तुमने मुझ पर ऐसा अत्याचार क्यों किया है ! मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है !

हरिमोहिनी हतबुद्धि हो वहीं बैठी रहीं। उसने मन ही मन कहा—अरे दादा ! ऐसी बात तो मैंने सात जन्म में भी न सुनी थी।

सुचरिता को कुछ ठण्डी होनेका समय देकर कुछ देर बाद हरिमोहिनी उसे खाने के लिए बुला ले गई। जब वह खानेको बैठी तब हरिमोहिनी ने कहा—देखो राधा रानी, मेरी उम्र कम नहीं, मेरे, सब बाल पक गये।

अब मैं बुढ़िया हुई। हिन्दू-धर्म में जो-जो काम करना चाहिये वह बालपनसे ही करती आती हूँ और बहुत कुछ देखा सुना भी है। तुम यह सब कुछ नहीं जानती। इसीलिए गोरा तुम्हारा गुरु बनकर तुम्हें ठग रहा है! उनकी बातें कुछ-कुछ सुनी है। उनमें कहीं शास्त्र-सम्बन्धी विषय का लेश नहीं। वह सब अपने बनाये शास्त्र की बातें करता है। मेरे पास उसकी सब कलई खुल गई है। तुम कलकी लड़की हो, यह सब बातें क्या जानोगी! मैंने सच्चे गुरु से उपदेश पाया है। मैं तुमसे कहे देती हूँ, तुमको यह कुछ न करना होगा। जब समय आवेगा तब सब कुछ आप ही हो जायगा। मेरे जो गुरु हैं वे ऐसे धूर्त नहीं हैं। वे तुमको मन्त्र देंगे। तुम डरो मत, जैसा होगा मैं तुमको हिन्दू समाज में ले आऊँगी। तुम ब्राह्म-घर में थी या न थीं; यह कौन जानता है! तुम्हारी उम्र कुछ अधिक हो गई, इससे क्या ऐसी बड़ी-बड़ी तो लड़कियां हैं। तुम्हारी जन्मपत्री तो किसी ने देखी नहीं है! और जब तुम्हारे पास रुपया है तब किसी तरह का कोई विघ्न न होगा। सब हो जायगा। तुम घबराओ मत मल्लाहके लड़के को कायस्थ बनाकर समाज में चलते मैंने अपनी आँख से देखा है। मैं हिन्दू-समाज में ऐसे कुलीन घर तुमको चला दूँगी कि किसी की मजाल नहीं, जो कुछ बोल सके। वही समाज के मुखिया हैं। इसके लिए तुमको इतनी असाध्य साधना, इतनी गुरु-भक्ति न करनी होगी। इतना रो-धोकर मरना न होगा।

हरिमोहिनी जब ये-बातें विशद रूपसे कह रही थी, तब सुचरिता को भोजन जहर सा मालूम हो रहा था। वह मुंहमें कौर देती थी, परन्तु निगला नहीं जाता था। उसने बड़ी मुश्किलसे कुछ खाया।

हरिमोहिनी ने जब सुचरिता से कोई उत्तर न पाया तब उसने मन में कहा—यह बड़े गुरु की चेली है, यह मेरा कहा न मानेगी।

इधर हिन्दू-हिन्दू कहकर रोती है—उधर उतने बड़े सुयोगकी बात पर ध्यान तक नहीं देती। न प्रायश्चित करना होगा, न कोई कैफियत देनी होगी, सिर्फ इधर उधर-थोड़ा-बहुत रुपया खर्च करके अनायास ही समाजमें मिल जायगी। इसमें भी जिसको उत्साह नहीं, वह अपने को हिन्दू कहती है, ब्राह्म होकर हिन्दू बननेका बड़ा शौक है। गोरा कितना बड़ा धूर्त है और वह सुचरिता पर कितना बड़ा प्रभाव डाले हुए है, यह सब हरिमोहिनी सोचने लगी।

सुचरिता के पास जो कुछ धन सम्पत्ति है, उसीको हरिमोहिनीने अनर्थका मूल समझा। अभी जिस जालमें सुचरिता फँसी है उसका परिणाम पीछे क्या होगा, यह भी हरिमोहिनी की दृष्टि पर चढ़ गया। हरिमोहिनी इस धूर्तके हाथसे सम्पत्ति-सहित किसी तरह छुड़ाकर अपने देवरके हाथ सौंप देने ही में कुशल समझने लगी। किन्तु सुचरिता का मन कुछ मुलायम हुए बिना काम न चलेगा, यह सोच उसके हृदयको पिघलाने की आशासे वह दिन-रात सुचरिता को अपनी ससुराल और अपने देवर का सुयश सुनने लगी।

इधर कई दिनोंसे परेश बाबू अनेक प्रकार की चिन्ताओं और कामोंमें फँस जानेके कारण सुचरिता के यहाँ न जा सके। सुचरिता रोज ही उनके आनेकी राह देखती थी और उसके मनमें कुछ कष्ट और संकोच भी होता था। परेश बाबूके साथ जो एक धार्मिक शुभ सम्बन्ध है वह कभी टूट नहीं सकता, यह वह निश्चय जानती थी किन्तु बाहर के दो-एक बड़े-बड़े सूत्रोंमें खिंच जानेकी वेदना भी उसे चैन नहीं लेने देती थी। इधर हरिमोहिनी उसे दिन रात तंग किये रहती है, इसलिए सुचरिता आज परेश बाबू के घर गई और बोली—पिताजी, आप कैसे हैं?

परेश बाबूने सहसा अपनी चिन्ता में बाधा पाकर कुछ देर तक खड़े हो सुचरिताके मुँहकी ओर देखा, और कहा—राधा अच्छी तरह हूं।

दोनों घूमने लगे। परेश बाबूने कहा—सोमवारको ललिताका ब्याह होगा।

सुचरिता सोच रही थी कि इस विवाहमें किसी सलाह या सहायता के लिए मेरी बुलाहट क्यों न हुई और यह बात वह उनसे पूछना चाहती थी, परन्तु पूछने का साहस न होता था, क्योंकि उसकी ओर भी इस दफे कोई बाधा आ पड़ी थी। नहीं तो वह बुलाने की अपेक्षा न रखती।

सुचरिता के मनमें जिस बात का सोच हो रहा था; परेश बाबूने ठीक उसी बातका उत्थान किया। कहा—राधा, इस दफे मैं तुमको बुला न सका।

सुचरिता—क्यों नहीं बुला सके?

सुचरिता के इस प्रश्नका कोई उत्तर न देकर परेश बाबू उसकी ओर देखने लगी। सुचरिता अब स्थिर न रह सकी; वह जरा सिर झुका कर बोली—यह सोच कर कि मेरे मन में कुछ परिवर्तन हो गया है।

परेश—हाँ, यही सोच रहा था। मैं तुमसे अनुरोध कर तुम्हें संकोच में डालना नहीं चाहता था।

सुचरिता—मैंने आपसे सब बातें कहनेका निश्चय किया था, किन्तु आपके दर्शन भी दुर्लभ हो गये, कहती किससे। इसीलिए आज मैं यहाँ आई हूं। मैं अपने मनका भाव स्पष्ट रूपसे आपके निकट प्रकट कर सकूँ, यह योग्यता मुझमें नहीं है मुझे इसीका डर है, कदाचित सब बातें आपके सामने मुझसे ठीक-ठीक न कही जा सकें।

परेश—मैं जानता हूं, ये सब बातें स्पष्ट कहना सहज नहीं है। तुमने जिस पदार्थको अपने मनमें केवल भावके भीतर पाया है उसको तुम अनुभव मात्र कर सकती हो किन्तु वाक्य द्वारा उसका स्वरूप नहीं दरसा सकतीं।

सुचरिता ने सन्तोष पाकर कहा—हाँ, यही ठीक है। किन्तु मेरा अनुभव ऐसा प्रबल है कि आपसे क्या कहूँ। मालूम होता है, जैसे मैंने नया जीवन पाया हो, नई चेतना पाई हो, इस तरह मैंने कभी आज तक अपने को नहीं देखा था। इतने दिन मानों मेरे साथ मेरे देशके व्यतीत और भविष्यकाल का कोई सम्बन्ध ही न था। किन्तु वह विश्वव्यापी सम्बन्ध कितना बड़ा सत्य है, यह ज्ञान मैंने आज अपने हृदयमें ऐसे

अद्‌भुत रूपसे पाया है कि अब उसे किसी तरह भूल नहीं सकती। मैं आपसे सच कहती हूँ, मैं हिन्दू हूँ, यह बात पहले किसी तरह मेरे मुँह से नहीं निकल सकती थी। किन्तु अब मेरा मन बड़ी दृढ़ताके साथ निःसंकोच हो कह रहा है, मैं हिन्दू हूँ। इसमें मैं एक विशेष आनन्दका अनुभव कर रही हूँ ?

इसी समय एक आदमीने आकर परेश बाबू के हाथ में एक चिट्ठी दी। परेश बाबूने कहा चश्मा नहीं है, कुछ अंधेरा भी हो गया है। सुचरिता तुम्हीं चिट्ठी पढ़ो।

सुचरिता ने चिट्ठी पढ़कर उन्हें सुना दी। ब्राह्म-समाज की एक कमेटी से उनके पास यह पत्र आया है, उसके नीचे अनेक ब्राह्म-समाजियों के हस्ताक्षर है। पत्र का सारांश यही है कि परेश बाबू ने ब्राह्म-मतके प्रतिकूल अपनी कन्या के विवाह में सम्मति दी है और वे उस विवाह में भी योग देनेको प्रस्तुत हुए हैं। ऐसी अवस्था में ब्राह्म-समाज किसी तरह उन्हें सभ्य श्रेणी में नहीं रख सकता। यदि उनको इस विषय में कुछ कहना हो तो आगामी रविवार के पहिले ही उनके हाथ का पत्र सभा के पास आना चाहिए। उस दिन उस पर विचार करके अधिकाँश लोगोंके मत से अन्तिम निश्चय होगा।

परेश बाबू ने चिट्ठी लेकर पाकेट में रख ली। वे फिर धीरे-धीरे टहलने लगे सुचरिता भी उनके पीछे-पीछे घूमने लगी। क्रमशः साँझका अँधेरा घना हो उठा। बाग के दाहिने पास के गली में रोशनी जलती देख पड़ी। सुचरिता ने कोमल स्वर में कहा—आपके उपासना करनेका समय हो गया है। आज मैं आपके साथ उपासना करूँगी।—यह कहकर सुचरिता उनका हाथ पकड़ उन्हें उपासना-गृह में ले गई ! वहाँ पहले ही आसन बिछा था और एक मोम-बत्ती जल रही थी। परेश-बाबू ने आज बड़ी देर तक चुपचाप उपासना की ! अन्त में एक छोटी सी प्रार्थना करके वे आसन से उठ पड़े। बाहर आते ही देखा, उपासना-गृहके दर्वाजे के पास बाहर ललिता और विनय चुपचाप बैठे हैं। उन

दोनोंने झट उनके पैर छूकर प्रणाम किया। परेश बाबू ने उनके सिर पर हाथ रख मन ही मन आशीर्वाद दिया। फिर सुचरिता से कहा—बेटी मैं कल तुम्हारे यहाँ आऊँगा। आज कुछ काम करना है। यह कहकर अपने कोठे में चले गये।

उस समय सुचरिता की आँखोंसे आँसू गिर रहे थे। वह चित्रवत् निश्चेष्ट हो चुपचाप बरामदे के अन्धकारमें खड़ी रही।

सुचरिता जब जाने को उद्यत हुई तब विनयने उसके सामने आकर मीठे स्वरमें कहा—बहन, तुम हमें आशीर्वाद न दोगी। यह कहकर ललिताको साथ ले विनयने सुचरिता को प्रणाम किया। सुचरिताने गद्‌-कण्ठसे जो कहा वह उसके अन्तर्यामी के सिवा और किसी ने न सुना।

परेश बाबूने अपने कोठेमें आकर ब्राह्म-समाज की कमिटीको पत्र लिखा। उसमें उन्होंने लिखा, ललिताके विवाहका काम मुझीको सम्पादन करना होगा। अब ईश्वरके निकट मेरी यही एकमात्र प्रार्थना है कि वे सब समाजों के आश्रयसे निकालकर मुझे अपने चरणों में शरण दें।

[६६]

सुचरिता ने परेश बाबू के मुँहसे जो कुछ ज्ञानकी बातें सुनीं वे गोरा से कहनेके लिए उसका मन व्याकुल हो उठा। जिस भारतवर्ष की ओर गोराने अपनी दृष्टि को प्रसारित कर और चित्तको प्रबल प्रेमसे आकृष्ट किया है वह भारतवर्ष क्षयके मुँह में प्रवेश करने चला है। क्या गोरा इस बात को न सोचता होगा ? इतने दिन भारतवर्ष से अपनी आभ्यन्तरिक व्यवस्थाके बलसे अपनेको बचा रक्खा है। इसके लिये भारतवासियों को सावधान होकर चेष्टा करनेकी तादृश आवश्यकता न थी। क्या अब उस तरह निश्चिन्त हो बैठनेसे भारतवर्ष की रक्षा हो सकती है ? क्या अब पहले की तरह केवल पुरानी व्यवस्थाके भरोसे घर के भीतर बैठ रहनेसे भारतका रोग दूर हो सकता है ?

सुचरिता सोचने लगी, इसके भीतर मेरा भी तो एक काम है। वह काम क्या है ? गोरा को इस समय मेरे सामने आकर आदेश करना और पथ दिखा देना उचित था। वे मुझे इस तरह त्याग दें यह कभी न होगा। मेरे पास उनको आना ही होगा। मेरी खोज खबर उनको लेनी ही होगी। उनको सारी लोक लज्जा से हाथ धोना ही पड़ेगा। वे चाहे जितने बड़े शक्तिमान् पुरुष क्यों न हो, उनको मेरा प्रयोजन है, यह बात उन्होंने अपने मुँहसे मेरे आगे कही थी। आज एक साधारण बातमें पड़कर वे उसको कैसे भूल गये।

सतीश दौड़कर सुचरिता के पास आया और उसके बदनसे सटकर बोला—बहन ! सोमवारको ललिता बहन का ब्याह है। मैं अब कई दिन उनके घर में ही रहूंगा। उन्होंने मुझको बुलाया है।

सुचरिता—यह बात मौसी से कही है ?

सतीशने कहा—मौसीसे कहा था। उसने क्रोध करके कहा कि मैं यह कुछ नहीं जानती। अपनी बहनसे जाकर कह, वह जो समझेगी वही होगा। बहन, तुम मुझे रोको मत; मेरे पढ़ने-लिखनेमें कोई बाधा न होगी। मैं रोज पढ़ूँगा। विनय बाबू मुझे पाठ पढ़ा देंगे।

सुचरिता—तुम काम काजके घरमें जाकर अपनी चाल से सबको हैरान कर दोगे।

सतीशने व्यग्र होकर कहा—नहीं बहन मैं! कोई उपद्रव न करूँगा।

इसी समय आनन्दमयी उस घरमें आई। सुचरिता का हृदय प्रफुल्लित हो उठा। उसने आनन्दमयीको प्रणाम किया।

आनन्दमयी ने सुचरितासे कहा—बेटी, मैं तुम्हारे साथ कुछ सलाह करने आई हूँ। तुम्हें छोड़ और कोई ऐसा नहीं दीखता जिससे कुछ पूछूँ। विनयने कहा है "विवाह मेरे ही घरमें होगा"। मैंने कहा; यह कभी न होगा। तुम बड़े नवाब बने हो? हमारी लड़की योंही सीधे तुम्हारे घर जाकर ब्याह कर आवेगी! यह न होगा।—मैंने एक मकान ठीक किया है, वह तुम्हारे इस घरके पास ही है। मैं अभी वहीं से आ रही हूँ। परेश बाबू से कहकर तुम उन्हें राजी कर लेना।

सुचरिता—पिताजी राजी हो जायँगे।

आनन्दमयी—इसके बाद तुमको भी वहाँ जाना होगा। इसी सोमवारको ब्याह है। इसके भीतर ही हमें सब बातों को ठीक करना होगा। समय तो अब अधिक नही है। मैं अकेली ही सब काम सँभाल सकती हूँ; किन्तु वहाँ तुम्हारे न रहनेसे विनयको बड़ा दुःख होगा। वह मुँह खोलकर तुमसे अनुरोध नहीं कर सकता। यहाँ तक कि वह मेरे पास भी सङ्कोच-वश तुम्हारा नाम नहीं लेता। इसीसे मैं समझती हूँ कि तुम पर उसका मानसिक आग्रह बहुत है और ललिता के मनमें भी बड़ा खेद होगा।

सम्मिलित हो सकोगी!

आनन्दमयी—सम्मिलित होनेकी बात क्या कहती हो! मैं क्या बाहर की हूं जो शरीक न होऊँगी। यह तो अपने घर का काम है। सब काम मुझको करना होगा। विनय क्या मेरा दूसरा है? किन्तु मैंने उससे कह रक्खा है कि इस विवाहमें सब काम मैं लड़की की ओर से करूँगी। वह मेरे घरमें ललितासे व्याह करने आ रहा है।

माँ होकर भी वरदासुन्दरी ने अपनी प्यारी बेटी ललिता को इस शुभ काममें त्याग दिया है, इसी से आनन्दमयी का हृदय दया से परिपूर्ण हो गया है। इसी कारण वह ऐसी चेष्टा कर रही है जिससे इस विवाहमें किसी तरहकी कोई त्रुटि न होने पावे। वह ललिताको माँका आसन ग्रहण कर उसे विवाह मण्डपमें लावेगी। यदि दो चार निमन्त्रित व्यक्ति आवेंगे तो उनके आदर सत्कार में किसी तरह की त्रुटि न हो, इसकी देख भाल करेगी। और इस नये घरको ऐसे ढङ्ग से सजावेगी जिससे ललिताके मनमें मकानकी सजावट पर कोइ खेद न रह जाय।

सुचरिता—इससे आपके घरमें कोई विरोध तो उपस्थित न होगा? महिम जिद्द पकड़े हुए है, उसे स्मरण करके आनन्दमयी ने कहा—ऐसा हो सकता है, परन्तु उससे क्या होगा। कुछ बखेड़ा होगा ही। चुपचाप सह लेनेसे कुछ दिनोंमें सब उपद्रव शान्त हो जायगा।

आनन्दमयी के आनेकी खबर हरिमोहिनी पा गई थी। वह अपने हाथका काम सँवार कर धीरे-धीरे उस कोठेमें आई, और बोली—बहन आप अच्छी तो हैं? न कभी दर्शन देती हो न खबर ही लेती हो!

आनन्दमयी ने कहा—तुम्हारी बहनोती को लेने आई हूँ।

यह कहकर उसने अपना अभिप्राय प्रकट किया। हरिमोहिनी कुछ देर मुँह फुलाये चुप रही, पीछे बोली—मैं तो इस कार्य में न ज सकूँगी?

आनन्दमयी—नहीं बहन, तुम क्यों जाओगी? मैं तुमको चलने के लिए नहीं कहती। सुचरिता के लिये तुम कोई चिन्ता न करो, मैं तो उसके साथ ही रहूँगी।

हरिमोहिनी—तो मैं कहती हूं, सुनो; राधा रानी तो लोगों से कहती है, मैं हिन्दू हूँ। अब उसकी मति गति हिन्दूधर्म की ओर फिर गयीं है। यदि वह हिन्दू-समाज में आना चाहे तो उसे सावधान होकर रहना पड़ेगा। अभी से तो कितनी कच्ची-पक्की बातें लोग बोलेंगे परन्तु मैं उनकी बात चलने न दूँगी। तो भी अबसे इसे सँभल कर चलना चाहिये। लोग तो पहले यही पूछ बैठेंगे कि इतनी बड़ी उम्र हो गई, अब तक इसका ब्याह क्यों न हुआ? इस बात को किसी तरह छिपा देने से हिन्दू समाज मान लेगा, अच्छा वर खोजने से न मिलेगा यह भी नहीं। किन्तु यह यदि फिर अपनी पुरानी चाल पकड़ेगी तो मैं क्या करूँगी, कहाँ तक सँभालूँगी! तुम तो हिंदू घर की स्त्री हो, तुम तो सब जानती हो, तुम ऐसी बात किस मुँह से कहती हो! अगर तुम्हारी अपनी होती तो क्या तुम उसे इस बिवाह में जाने देती? तुमको तो दिन-रात इसी बात की चिन्ता लगी रहती कि लड़की का व्याह कब कैसे हो।

आनन्दमयी ने विस्मित होकर सुचरिता के मुँहकी ओर देखा। उसका मुँह क्रोध से लाल हो गया था।

आनन्दमयी ने कहा—मैं कोई जोर देना नहीं चाहती, अगर सुच-रिता को जाने में उज्र हो तो मैं—

हरिमोहिनी बोल उठीं—तुम लोगों का भाव कुछ भी मेरी समझ में नहीं आता। तुम्हारा ही बेटा तो इसे हिंदू मत में लाया है और तुम कुछ जानती ही नहीं! जैसे तुम आकाश से उतर आई हो!

जो हरिमोहिनी परेश बाबूके घरमें अपराधिनीकी तरह डरकर रहती थी, जो किसी को अपनी ओर कुछ भी अनुकूल पाकर उसे एकांत आग्रह के साथ रहती थी वह हरिमोहिनी आज कहाँ है? अपने अधि-कारको सुरक्षित रखने के लिये वह आज बाघिनकी तरह खड़ी है। उसकी सुचरिता को उसके पाससे छीन लेनेके लिए चारों ओर भाँति-भाँति की शक्तियाँ लगाई जा रही हैं, इस संदेहसे बराबर चौकन्नी रहती है। कौन हित है, कौन अनहित, यह भी वह नहीं समझती। इस

कारण उसके मनमें आज और भी हलचल मच गई है। पहले जिसने सारे संसार को सूना देखकर श्री गोपीरमणजी की सेवा में अपने व्याकुल चित्त को समर्पित कर दिया था उस देव पूजा में भी आज उसका जी नहीं लगता। इधर कुछ ही दिनोंमें हरिमोहिनी के मुँह और आँखों की भाव-भङ्गी तथा बचन-व्यवहारमें इस अभावनीय परिवर्तनका लक्षण देख आनन्दमयी एकदम चौंचक सी हो रही। सुचरिता के लिये उसके कोमल हृदयमें परिताप होने लगा। अगर वह जानती कि सुचरिता एक छिपे हुए संकट जालमें फंसी है तो वह कभी उसे बुलाने न आती। अब किस उपाय से सुचरिता को इस आघात से बचा सकेगी, यह उसके लिए एक अत्यन्त शोचनीय विषय हो गया!

गोरा को लक्ष्य करके हरिमोहिनी ने जब बात की तब सुचरिता सिर नीचा करके चुपचाप कोठेसे चली गई।

आनन्दमयी ने कहा—बहन, तुम डरो मत; मैं पहले न जानती थी! मैं उसे वहाँ जानेके लिए विवश करूंगी। तुम भी अब उससे कुछ मत कहो। वह पढ़ी-लिखी है, उस पर अधिक दबाव डालोगी तो शायद वह न सह सके।

आनन्दमयी जब जाने लगी तब सुचरिता ने अपने कोठेसे निकल उसे प्रणाम किया। आनन्दमयी ने स्नेह और दया के साथ उसका सिर छू करके कहा—बेटी; मैं आऊंगी, तुमको सब खबर दे जाऊंगी कोई विघ्न न होगा। ईश्वर की कृपा से यह शुभ काम सम्पन्न हो जायगा।

सुचरिता कुछ न बोली।

दूसरे दिन सबेरे जब आनन्दमयी लछमिनियाको साथ ले नये मकानके चिर-सञ्चित कूड़े करकट को साफ कराने गई और वह अपने हाथ से भी झाड़ने-बुहारने लगी, उसी समय सुचरिता आ पहुंची। आनन्दमयी ने झट झाड़ू फेंक उसे छाती से लगा लिया।

इसके बाद घर आँगन साफ करनेकी धूम मच गई। कोई झाड़ने-बुहारने, कोई पानी लाने, कोई गायके गोबरसे लीपने और कोई दीवाल साफ करने लगीं। जो मजदूरिनें काम करने को आई थीं उन सबों में सुचरिता ने काम बाँट दिये। वे अपने-अपने काम में लग गईं। आनन्दमयी और सुचरिता बड़ी मुस्तैदीके साथ काम कराने लगीं। परेश बाबूने खर्च के लिए सुचरिता के हाथ में कुछ रुपया दिया था, वह रुपया लेकर दोनों खर्च का चिट्ठा तैयार करने लगी।

कुछ ही देर के बाद ललिता को साथ ले परेश बाबू स्वयं वहाँ उपस्थित हुए। ललिता को अपना घर असह्य हो गया था कोई उससे बोलता न था। बोलनेकी बात दूर रही, कोई उसकी ओर प्रसन्न दृष्टि से देखता भी न था। उन लोगोंकी यह उदासीनता पग-पग पर उसे चोट पहुँचाने लगी। आखिर वरदासुन्दरीके साथ समवेदना प्रकट करनेके लिए जब झुन्ड के झुन्ड उसके बन्धु-बान्धव आने लगे तब परेश बाबूने ललिता का इस मकानसे अन्यत्र ले जाना ही अच्छा समझा। ललिता बिदा होते समय वरदासुन्दरीको प्रणाम करने गई तो वह मुह फेरकर बैठी रही और उसके चले जाने पर आँसू गिराने लगी। ललिता के इस विवाहोत्सवमें लावण्य और लीलाका मन विशेष उत्सुक था। अगर वे किसी उपाय से छूट पातीं तो दौड़कर ललिताका विवाह देखने जातीं। किन्तु ललिता जब चली गई तब ब्राह्म-परिवारके कठोर कर्त्तव्यका स्मरण करके वे मुह लटकाकर चुपचाप बैठ रहीं। दर्वाजे के पास ललिता ने सुधीरको देखा, किन्तु सुधीरके पीछे उसके समाजके और कई प्रवीण व्यक्ति थे, इस कारण उसके साथ कोई बातचीत न हो सकी। गाड़ीमें बैठनेके साथ ललिता ने देखा, बेन्चके एक कोनेमें कागजमें लपेटी कोई चीज रक्खी है! खोलकर देखा, जरमन सिलवरका एक फूलदान है। उस पर अँगरेजी भाषामें वाक्य खुदा था, "प्रसन्न दम्पतिको ईश्वर चिरायु करें।" और एक कार्ड पर सुधीरके नामका पहला अक्षर अंगरेजी में लिखा था। ललिता ने आज छातीको पत्थर कर प्रण किया

था कि मैं आँसू न गिराऊँगी, किन्तु पिताके घरसे विदा होते समय अपने बाल्य सहचरका यह स्नेहोपहार हाथ में लेते ही उसकी आँखोंसे झर झरकर आँसू गिरने लगे। परेश बाबू आँखें मूँदे स्थिर बैठे रहे। कुछ देरमें गाड़ी नये मकान के फाटक पर जा पहुँची।

"आओ बेटी, आओ", कहकर आनन्दमयी ललिताके दोनों हाथ पकड़ बड़े प्यारसे घरके भीतर ले आई। मानो वह उसके आनेकी प्रतीक्षा में ही बैठी थी।

परेश बाबू ने सुचरितासे कहा—"ललिता मेरे घरसे एक दम विदा होकर आई है।" यह कहते समय उनका कण्ठस्वर कम्पित हो गया।

सुचरिता ने कहा—यहाँ उसे किसी तरह की तकलीफ न होगी।

परेश बाबू जब जानेको उद्यत हुए तब आनन्दमयी ने घूँघट डाल कर उनके सामने आ उन्हें नमस्कार किया। परेश बाबूने भी सिर नवाया। आनन्दमयी ने कहा—ललिताके लिए आप कुछ भी चिन्ता न करें। आप जिसके हाथमें ललिता को सौंप रहे हैं उसके द्वारा वह कभी कोई दुःख न पावेगी। भगवानने इतने दिन बाद मेरे एक अभाव को दूर कर दिया। मेरे लड़की न थी वह मुझे मिली! विनय की बहू के कारण मेरे कन्या न रहने का दुःख मिटेगा, मैं बहुत दिनोंसे इस आशा में बैठी थी। यदि ईश्वर ने देर करके मेरा मनोरथ पूरा किया तो उसने ऐसी लड़की दी और ऐसी अद्‌भुत रीतिसे दी जो सब प्रकार मेरे मनके अनुकूल हुई। मेरा ऐसा भाग्य होगा, यह मैंने कभी सोचा भी न था।

ललिताके विवाहका आन्दोलन आरम्भ होनेके बाद यही पहले पहल परेश बाबूके चित्त ने संसार में एक जगह एक किनारा देखा और सच्ची सान्त्वना पाई।

[६७]

जेलखानेसे निकल कर आनेके बादसे गोराके पास दिन भर इतने लोग आने जाने लगे कि गोराके लिये घरमें रहना असह्य और असाध्य हो उठा। इसी कारण गोराने फिर पहलेकी तरह दिहातमें घूमना शुरू कर दिया।

सबेरे कुछ खा-पीकर वह घरसे निकल जाता था, और एकदम रात को घर आता था। गाँवोंमें इस तरह घर-घर घूमता, लोगोंके सुख दुःख की खबर लेता है, वह उन लोगोंकी समझमें कुछ भी न आता था। यहाँ तक कि उन लोगोंके मनमें तरह-तरहके सन्देह उत्पन्न हुआ करते थे। किन्तु गोरा उनके सारे सन्देह संकोचको ठेलकर उनके बीचमें विचरण करने लगा।

उसने जितना ही उन लोगोंके भीतर प्रवेश किया उतना ही केवल एक ही बात उसके मनके भीतर घूमने फिरने लगी। उसने देखा, इन सब दिहातोंमें समाजका बन्धन शिक्षित भद्र समाज की अपेक्षा अधिक है। प्रत्येक घरका खाना-पीना सोना-बैठना काम-काज सब कुछ समाजके निर्निमेष नेत्रोंके आगे दिन-रात विद्यमान है! हर एक आदमीको ही लोकाचारके ऊपर एक अत्यन्त सहज विश्वास है—उसके सम्बन्ध में वे लोग जरा-सी भी बहस नहीं करते। किन्तु समाजका बन्धन और आचार निष्ठा इन लोगोंको कर्म क्षेत्रमें कुछ भी बल नहीं देती। इन लोगोंके समान ऐसे भयभीत, असहाय, अपने हिताहितका विचार करनेमें अक्षम अपाहिज जीव जगत्में कहीं है या नहीं, इसमें सन्देह है।

गोरा यह देखे बिना नहीं रह सका कि इस आचारके अक्षसे मनुष्य

मनुष्य के रक्तको चूसकर उसे निष्ठुर भावसे निःसत्व और निःस्वत्व बना रहा है। कितनी ही बार उसने देखा है, समाजमें काम-काजमें कोई किसी पर कुछ भी दया नहीं करता। एक आदमीका बाप बहुत दिनसे रोगमें भोग रहा था, उस बापकी दवा दरमत और पथ्यमें लड़के बेचारेका सर्वस्व स्वाहा हो गया, पर इस मामलेमें किसीके भी निकटसे कुछ भी सहायता उसे नहीं मिली।

किन्तु दिहातोंमें जहाँ बाहरकी शक्तियोंका संघात उस तरह काम नहीं करता, वहाँकी निश्चेष्टताके बीच गोराने स्वदेशकी गम्भीरता दुर्बलता की जो मूर्ति है, यहाँ देख पाई। जो धर्म सेवा रूपसे, प्रेम रूपसे करुणा रूपसे आत्म-त्याग और मनुष्यके प्रति श्रद्धाके रूपसे सबको शक्ति देता है, आश्रय देता है, कल्याण देता है वह कहीं पर भी नहीं देख पड़ता। जो आचार केवल बीचमें रेखा खींचता है, त्याग करताहै, पीड़ा पहुँचाता है, जो बुद्धिको भी कहीं अमल नहीं देना चाहता, जो प्रीतिको भी दूर खेद रखता है, वही सबको उठते बैठते सभी मामलोंमें केवल बाधा देता रहता है। दिहातके भीतर इस मूढ़ बाध्यताका अनिष्ट कर कुफल इतने भिन्न भिन्न प्रकारोंसे गोराकी आँखोंके आगे आने लगा।

गोराने पहले ही देखा, गाँवके नीच जातियोंके बीच स्त्रियोंकी संख्या कम होनेके कारण अथवा अन्य चाहे जिस कारणसे हो बहुत रुपये खर्च करने पर मर्दोंको ब्याहके लिए स्त्री मिलती है। अनेक मर्दों को जीवन भर और अनेकको अधिक अवस्था तक अविवाहित रहना पड़ता है। उधर विधवा विवाहके सम्बन्धमें कठिन निषेध है। इससे घर घर समाज का स्वास्थ्य दूषित हो रहा है और इसके अनिष्ट तथा असुविधाका अनुभव समाजका हर एक मनुष्य ही करता है। इस अकल्याणको चिर-गोल तक लाद कर चलने के लिये सभी बाध्य हैं; किंतु इसका प्रतिकार करनेका उपाय कहीं किसीके भी हाथमें नहीं है। शिक्षित समाजमें जो कड़ा आचारको कहीं भी शिथिल नहीं होने देना चाहता, उसी गोराने यहां आचारको आघात किया। उसने इस आचारके पुरोहितोंको वशमें

किया किन्तु समाजके लोगों की सम्मति किसी तरह न पा सका। वे गोरा के ऊपर क्रुद्ध होकर कहने लगे—अच्छा तो है, ब्राह्मण लोग जब विधवाओंका व्याह करेंगे तब हम लोग भी करेंगे।

उनके क्रोधका प्रधान कारण यही है कि उन्होंने समझा, गोरा उन्हें हीन जाति जानकर उनका अनादर करता है—गोरा यही प्रचार करने आया है कि उनके जैसे लोगों के लिये अत्यन्त हीन आचारको ग्रहण करना ही श्रेय है।

गाँवोंमें विचर कर गोराने यह भी देखा कि मुसलमानोंके भीतर वह वस्तु है, जिसके सहारे उन लोगोंको एक करके खड़ा किया जाता है। गोराने ध्यान देकर देखा है कि गाँवमें कोई आपद-विपद उपस्थित होने पर मुसलमान लोग जैसी घनिष्टता के साथ परस्पर एक दूसरेसे पास आ कर जमा हो जाते हैं, हिंदू लोग वैसा नहीं करते। गोराने बार बार सोचकर देखा है कि इन दोनों निकटतम पड़ोसी समाजोंके बीच इतना बड़ा अन्तर क्यों हुआ? जो उत्तर इसका उसके मनमें उदित होता है, उसे मानने के लिये किसी तरह उसका जी नहीं चाहता।

शिक्षित समाजमें गोराने जब लेख लिखा है, बहस की है, व्याख्यान दिया है, तब वह औरोंको समझानेके लिये, औरों को अपनी राहमें लानेके लिए स्वभावतः ही अपनी बातोंको उसने कल्पनाके द्वारा मनोहर वर्णसे रँजित किया है। उसने स्थूलको सूक्ष्म व्याख्या से ढका है, अनावश्यक भगनावशेष मात्रको भी भावकी चन्द्रिकामें मोहमय चित्रकी तरह बनाकर दिखलाया है। देशके लोगोंका एक दल देशके प्रति विमुख है, देशकी बातों और वस्तुओंको बुरी दृष्टि से देखता है, यही समझ कर, गोराने स्वदेशके प्रति अपने प्रबल अनुरागके कारण, उस महत्व-विहीन दृष्टिपातके अपमानसे बचानेके लिये, स्वदेशकी सभी बातों और वस्तुओंको अति उज्ज्वल भावके आवरणसे ढँक रखनेकी दिन रात चेष्टा की है।

टसरका कोट पहिने, कन्धे पर डुपट्टा डाले और हाथमें एक बैग लट-काये स्वयं कैलाशचन्द्रने आकर हरिमोहिनीको प्रणाम किया। उसकी उम्र पैंतीस सालके लगभग होगी। कद मझोला है, चेहरा देखनेसे बदन मजबूत मालूम होता है। हजामत बनवाये कुछ दिन हो जानेसे दाढ़ीमें कुशाग्रकी भाँति बाल निकल आये हैं।

हरिमोहिनी मुद्दतके बाद ससुरालके आत्मीयको देख हर्षित होकर बोली "अच्छा, कैलाश बाबू हैं। आइये, आइये, बैठिए" यह कहकर उसने झट एक कम्बल बिछा दिया हाथ-पैर धोनेको लोटेमें पानी लाकर रख दिया।

कैलाशने कहा - अभी इसकी जरूरत नहीं। आपकी तबियत तो अच्छी है?

तबियतका अच्छा रहना एक अपवाद जानकर हरिमोहिनी कहा—"तबियत अच्छी क्या रहेगी, देह तो दिन-रात बिना ही आगके जला करती है" यह कहकर वह नाना प्रकारकी व्याधियों का नाम गिनाने लगी फिर बोली—ऐसे निकम्मे शरीरका न रहना ही अच्छा है। इतना दुःख पाने पर भी मरण नहीं होता।

जीवनके प्रति ऐसी उपेक्षा में कैलाशने आपत्तिकी और ये बातें बना कर उसके हृदयको गद्गद कर दिया कि यद्यपि बड़े भाई संसारमें नहीं हैं तथापि तुम्हारे रहनेसे हमें उनके न रहनेका दुःख नहीं है; हम सब तुम्हारा पूरा भरोसा रखते हैं और प्रमाणमें यह भी कहा—यही क्यों नहीं देखती कि आप यहाँ हैं, इसीसे कलकत्ते आना हुआ; नहीं तो यहाँ खड़े होने को भी कहीं जगह न मिलती।

घर और गाँवका सब कुशल समाचार आद्योपान्त सुनाकर कैलाशने चारों ओर देखकर पूछा—मालूम होता है यह मकान उसीका है।

हरिमोहिनी—हाँ।

कैलाश—मकान पक्का है।

हरिमोहिनीने उसके उत्साहको बढ़ाकर कहा—पक्का क्या, बिल्कुल पक्का है।

कैलाश—क्यों भाभी, सात-हजार रुपया तो इसके बनवानेमें लगा ही होगा ?

हरिमोहिनीने कैलाशकी देहाती बुद्धि पर विस्मय प्रकट करके कहा—बाबू यह क्या कहते हो। सात-आठ हजार रुपया क्या ! बीस हजारसे एक कौड़ी कम खर्च नहीं हुआ।

कैलाश फिर भी चारों ओर रक्खे हुये सामानको ध्यानसे देखने लगा। अब जरा सम्मति-सूचक सिर हिलाने ह . से इतनी बड़ी इमारतकई मालिक हो सकता हूं, यह सोचनेसे उसको बड़ी तृप्ति हुई। पूछा—सब तो हुआ, लकड़ी कहाँ है ?

हरिमोहिनी झट बोली—फूफीके घरसे नेवता आया था। वहीं गा है, दो-चार दिनों में लौट आवेगी।

कैलाश—तो उसको देखूँगा किस प्रकार ? मेरा एक मुकद्दमा है, कल ही जाना होगा

हरिमोहिनी—अभी उस मुकद्दमेको मुलतवी रक्खो। यहाँका काम हुए बिना तुम नहीं जा सकते।

कैलाशने कुछ सोचकर निश्चय किया कि मुहलत न लेनेसे मुद्दईको एक तरफ डिग्री मिलेगी। अच्छा पीछे देखा जायगा। यहाँ उस क्षतिके पूर्ण होनेका पूरा सामान है।

कैलाशने तब कन्याका रूप जाननेकी उत्सुकता प्रकट की।

हरिमोहिनीने कहा—उसे तो देखने हीसे जानोगे। पर तो भी मैं

इतना कह सकती हूँ कि तुम्हारे घरमें ऐसी रूपवती बहू आज तक न आई होगी।

कैलाश—यह क्या कहती हो! हमारी मंझली भाभी—

हरिमोहिनीने कहा—क्या कहा! भला तुम्हारी मंझली भाभी कब उसकी बराबरी कर सकती है! जो इसके पैरके रूप है वह उसके चेहरे में न होगा। तुम चाहे जो कहो, मंझली बहूसे मेरी सुचरिता कहीं बढ़कर सुन्दरी है।

मंझली बहू और नई बहू के सौन्दर्यकी तुलनामें कैलाश कुछ विशेष उत्साहका अनुभव न कर मन ही मन एक अपूर्व रूपकी कल्पना करने लगा।

हरिमोहिनीने देखा, इस पक्ष की अवस्था आशाजनक है। उसके मन में यहाँ तक भरोसा हुआ कि कन्या पक्षमें जो गुरुतर सामाजिक त्रुटियाँ हैं उनसे भी इस ब्याहमें कोई बाधा नहीं पहुँच सकती।

:o:—

[६९]

विनय जानता था कि गोरा आजकल सबेरे ही घरसे चल देता है। इसलिए वह सोमवार को बड़े तड़के उठकर गोराके घर उसके ऊपर वाले शयनगृहमें जा पहुँचा।

विनयने कहा—भाई आज सोमवार है।

गोरा—हाँ जरूर ही सोमवार है।

विनय—तुम तो शायद न जाओगे; शायद क्या, नहीं ही जाओगे; किन्तु आज एक बार बिना तुमसे कहे मैं इस काममें प्रवृत न हो सकूँगा, इसीसे आज इतने सबेरे उठकर पहले तुम्हारे ही पास आया हूं।

गोरा चुपचाप बैठा रहा, कुछ बोला नहीं।

विनय—तो तुम मेरे विवाह-मण्डपमें न आ सकोगे, यही बात स्थिर रही।

गोरा हां, मैं न आ सकूँगा।

विनय चुप हो रहा। गोराने हृदयकी वेदनाको दबाकर हँसकर कहा—मैं नहीं गया, इससे क्या? तुम्हारी ही तो जीत हुई। तुम माँको खींचकर ले ही गये हो। मैंने चेष्टा बहुत की, किन्तु मैं उनको किसी तरह रोककर नहीं रख सका। वह तुम्हें न छोड़ सकीं। आखिर तुमसे मुझे हार माननी पड़ी!

विनयने कहा—भाई, मुझे दोष मत दो। मैंने उनसे जोर देकर कहा था—'माँ, मेरे व्याहमें तुम कभी जाने न पाओगी।' मांने कहा—देखो विनय तुम्हारे व्याहमें जो न जायँगे, वे तुम्हारा निमन्त्रण पाकर भी न जायँगे और जो जानेवाले हैं वे तुम्हारे मना करने पर भी जायँगे। इसी लिए मैं तुमसे कहती हूं कि, न तुम किसी को निमन्त्रण दो, और न

किसीको मना करो, चुप हो रहो।—गोरा भाई क्या तुमने मुझसे हार मानी है ! तुम्हारी हार तुम्हारी माँके आगे है, हजार बार हार स्वीकार करनी पड़ेगी माँ क्या और कहीं है ।

गोराने यद्यपि आनन्दमयीको रोकने लिए बड़ी चेष्टा क ी थी, तथापि वह उसकी कोई बाधा न मान, उसके क्रोध और कष्ट की कुछ परवा न करके विनय के ब्याहमें चली गई। इससे गोरा के मनमें कोई कष्ट न हुआ बल्कि उसने एक-अपूर्व आनन्दका अनुभव किया था। विनय ने उसकी माताके अपरिमेय स्नेहका अँश पाया था। गोराके साथ विनयका चाहे जितना बड़ा विच्छेद हो गम्भीर स्नेह सुधाके अंशसे उसे किसी तरह बंचित न करनेका निश्चय जानकर गोराके हृदयमें तृप्ति और शान्ति दोनों एक साथ उत्पन्न हुई। और बातोंमें वह विनयसे बहुत दूर जा सकता है, किन्तु इस अक्षय मातृ स्नेह के बन्धनमें अत्यन्त गुप्त रूपसे ये दोनों चिरमित्र बहुत दिनों तक एक दूसरेके अत्यन्त निकटस्थ होकर रहेंगे।

विनयने कहा—तो मैं अब जाता हूँ। अगर तुम वहाँ आना एकदम पसन्द नही करते, तो मत आओ। परन्तु मनमें नाराजी न रखो। इस मिलनसे मेरे जीवनने कितनी बड़ी सार्थकता प्राप्त की है, उसे यदि तुम सोचोगे तो कभी हमारे इस विवाहको अपनी मित्रता की सीमासे बाहर न कर सकोगे। यह मैं तुमसे जोर देकर कहता हूँ।

यह कहकर विनय उठ खड़ा हुआ। गोराने कहा—विनय भाई, इतना क्यों उकता रहे हो ? तुम्हारे ब्याह का लग्न तो रातमें है अभी से उसकी इतनी जल्दी क्या है ?

गोराके इस स्नेह अनुरोध से विनय तुरन्त बैठ गया।

इसके बाद आज बहुत दिनोंके अनन्तर, इस भोरके समय दोनों पहलेकी तरह घुल-घुलकर बातें करने लगे।

विनयने गोरासे कहा—मैं तुमसे सच-सच कहता हूँ, मनुष्यकी सारी

प्रकृतिको क्षण भरमें जाग्रत् करनेका उपाय प्रेम है। चाहे जिस कारण से हो, हम लोगोंमें इस प्रेमकी उपज बहुत कम है। इसीसे हम अपने सम्पूर्ण सुखोंसे वञ्चित हैं। हम लोगोंके पास क्या है सो भी हम नहीं जानते जो गुप्त है उसे प्रकाशित नहीं कर सकते। जो सञ्चित है, उसे खर्च करने की सामर्थ्य नहीं। इसी लिए चारों ओर निरानन्द ऐसी उदासीनता है। इसीसे हम लोगोंमें जो महत्व है वह केवल तुम्हारे सदृश विरले ही मनुष्य जानते हैं, साधारण लोगों के मनमें उसका ज्ञान तक नहीं है।

महिम खूब जोर से जँभाई लेकर बिछौनेसे उठकर जब मुँह धोने गया, तब उसके पैरोंकी आहट सुन विनयके उत्साह का प्रवाह बन्द हो गया। वह गोरासे जानेकी आज्ञा लेकर चला गया।

विनयके साथ आज समाजिक विच्छेदका दिन है। आज विनयका हृदय गोराके हृदय पर एक अपूर्व संगीत का भाव अङ्कित कर गया। विनय चला गया। किन्तु उसके सङ्गीत की लहर घरमें अटक रही।

गोराका मन उस लहर में बार बार गोते खाने लगा। समुद्र-गामिनी दो नदियाँ एक साथ मिलनेसे जो रूप धारण करती हैं जैसे एक का प्रवाह दूसरी नदी की धारासे टकराकर तरङ्गको शब्दायमान करता है, वैसे ही विनयकी प्रेम-धारा आज गोराके प्रेम प्रवाह पर पतित हो तरंग के द्वारा तरंग का शब्दायमान करने लगी। गोरा जिसे किसी प्रकार बाधा देकर, बीचमें कोई परदा-डाल, अपनी आँखोंके सामने से दूर रखनेकी चेष्टा कर रहा था, उसीने आज परदा हटाकर अपनेको स्पष्ट रूपसे सामने ला रक्खा। उसे धर्म विरुद्ध कहकर निन्दा करे या उसे तुच्छ कहकर उपहास करे ऐसी शक्ति आज गोराके मनमें न रही।

गोरा आज दिन भर इसी चिन्तामें पड़ा रहा जब साँझ होनेमें थोड़ा सा विलम्ब रह गया, तब वह एक चादर ओढ़कर सड़क पर घूमने चला। उसने कहा—जो मुझे हृदयसे चाहता है उसकी चाह मैं भी अवश्य करूँगा; नहीं तो संसारमें मेरा काम अधूरा पड़ा रह जायगा।

सारी दुनियाके भीतर सुचरिता उसीके आह्वानकी अपेक्षा कर रही है,

इसमें गोराको जरा भी सन्देह न रहा। आज ही इसी सन्ध्या समय वह इस अपेक्षा को पूर्ण करेगा।

लोगोंसे भरे हुए कलकत्तेके रास्तेमें गोरा इस वेगसे चला, जैसे किसी को उसने सड़क पर देखा ही न हो। उसका मन उसके शरीरको छोड़ एकाग्र हो कहीं चला गया।

सुचरिताके घरके सामने आकर गोरा एकाएक सचेत होकर खड़ा हो गया। वह इतने दिन तक यहाँ आया है, पर कभी दरवाजा बन्द नहीं मिला। आज देखा, दरवाजा खुला नहीं है। ढकेलकर देखा भीतर बन्द था। खड़े होकर कुछ देर सोचा, फिर किवाड़ पर धक्का दे, दो चार बार पुकारा।

एक नौकर किवाड़ खोलकर बाहर आया। उसने सन्ध्याके सूक्ष्म अन्धकारमें गोराको देखते ही पहचान लिया और उनसे किसी प्रश्नकी अपेक्षा न करके कहा—मालकिन नहीं हैं।

"कहाँ गई हैं?"

वे ललिता बहनके व्याहकी तैयारीमें कई दिनोंसे वहीं रहती हैं।

एक बार गोराने मनमें कहा, चलो, बिनयके व्याह मण्डपमें ही जायँ। इसी समय एक अपरिचित व्यक्तिने घरके भीतरसे निकलकर कहा—क्या महाशय, क्या चाहिए?

गोराने सिरसे पैर तक उसे देखकर कहा—नहीं, कुछ नहीं चाहिए।

कैलासने कहा—आइए, जरा बैठिए, तम्बाकू पी लीजिए तो जाइयेगा। साथी के बिना कैलाश की जान निकली जा रही थी। देहाती लोग जब तक किसीके साथ भर पेट गप-सप न करें तब तक उनका खाना नहीं पचता। इसीसे वह गोराको देख खुश हुआ। दिनको वह हाथमें हुक्का ले गली के मोड़ पर खड़ा-खड़ा रास्ते पर लोगोंको आते-जाते देख किसी तरह जी बहला लेता था; किन्तु साँझको घरके भीतर अकेला बैठना उसके लिए असह्य हो उठता था। हरिमोहिनीके साथ जो कुछ आलोचना करने की थी, वह खतम हो चुकी है। हरिमोहिनीमें वार्तालाप करनेकी शक्ति

बहुत कम थी। इसी कारण कैलाश नीचे, फाटकके पास वाले छोटे कमरे में, चौकी पर हुक्का लेकर बैठता था और बीच बीचमें दरवानको पुकारकर उसके साथ गप-सप करके समय बिताता था।

गोराने कहा—नहीं, मैं अभी नहीं बैठ सकता।

कैलाशके दोबारा अनुरोध करनेका मौका न देकर वह पलक मारते ही उस गली से चला गया।

गोराके मनमें यह एक दृढ़ संस्कार था कि मेरे जीवनकी अधिकांश घटनाएँ आकस्मिक नहीं हैं अथवा मेरी व्यक्तिगत इच्छाके द्वारा वे सिद्ध नहीं होतीं। मैंने अपने देशके विधाता का कोई अभिप्राय सिद्ध करनेके लिए जन्म ग्रहण किया है।

इसलिए वह अपने जीवनकी छोटी-छोटी घटनाओंका भी कोई विशेष अर्थ जाननेकी चेष्टा करता था। आज जब उसने अपने मनकी इतनी बड़ी प्रबल इच्छा की प्रेरणासे एकाएक जाकर सुचरिताके घरका दरवाजा बन्द देखा और दरवाजा खुलने पर जब सुना कि वह नहीं है, तब उसने इसे एक अभिप्रायपूर्ण घटना समझा। जो ईश्वर सुचरिताको चलायमान कर यहाँसे अन्यत्र ले गया है वही आज गोरा को निषेधकी सूचना दे रहा है। इस जीवनमें उसके लिए सुचरिता का द्वार बन्द है। सुचरिता उसके लिए नहीं है। गोराके सदृश मनुष्यको अपनी इच्छाके अनुसार किसी वस्तु पर मुग्ध होनेसे काम न चलेगा। वह अपने सुख से सुखी और दुःखसे दुःखी होनेवाला नहीं है। वह भारतवर्ष का ब्राह्मण है; भारतवर्ष की ओरसे उसे देवता की अराधना करनी होगी। भारतवर्ष का होकर तपस्या करना ही उसका काम है। आसक्ति, विषयोपभोग उसके लिए नहीं सिरजा गया है। गोराने मनमें कहा—विधाताने आसक्तिका रूप स्पष्ट दिखा दिया। जो दिखाया, वह स्वच्छ नहीं, शान्त नहीं वह मद्य जैसा लाल और वैसा ही तेज है। वह बुद्धको स्थिर रहने नहीं देता। वह और को और कर दिखाता है। मैं संन्यासी हूं, मेरी साधना में उसका स्थान नहीं।

—:०:—

[७०]

कई दिन अनेक प्रकारकी पीड़ा भोगनेके अनन्तर इन कई दिनों में आनन्दमयी के पास सुचरिता ने जो सुख चैन पाया वैसा कभी न पाया था। आनन्दमयीने ऐसे सहज भावसे उसे अपना लिया है कि किसी दिन वह उसके लिए अपरिचित थी या दूर थी इसे सुचरिता सोच भी न सकी थी। आनन्दमयी न जाने सुचरिता के मन का भाव कैसे जान गई! वह कुछ न कहकर भी सुचरिताको एक गहरी सान्त्वना दे रही थी। सुचरिता "माँ" शब्द को इसके पूर्व इस प्रकार स्पष्ट और उत्कण्ठा सहित कभी उच्चारण नहीं करती थी। कोई प्रयोजन न रहने पर भी वह आनन्दमयी को केवल "माँ" कहकर पुकारनेके लिए अनेक प्रकारके बहाने रचती और बार-बार उसे "माँ" कहकर पुकारती थी। ललिताके ब्याहका जब सब काम ठीक हो गया, तब थके शरीरसे बिछौने पर लेटकर सुचरिता यही सोचा करती थी कि मैं अब आनन्दमयी को छोड़ कैसे अपने घर जाऊँगी। वह आपही आप कहने लगी—"माँ, माँ!" यह कहते-कहते उसका हृदय भक्तिसे भर गया और आखोंसे आंसू बहने लगे। इसी समय आनन्दमयी मसहरी उठाकर उसके पलङ्ग पर आ बैठी और उसके बदन पर हाथ फेरने लगीं।

विनयका व्याह हो जाने पर आनन्दमयी तुरन्त विदा न हो सकीं। उसने कहा, ये दोनो गृहकार्य से अनभिज्ञ हैं। इनके घर का सब प्रबन्ध किये बिना मैं कैसे जाऊँगी?

सुचरिताने कहा—माँ, तो मैं भी तब तक तुम्हारे साथ रहूँगी।

ललिताने उत्साहित होकर कहा—हाँ माँ, सुचरिता बहन भी कुछ दिन हमारे साथ रहे।

यह सलाह सुन सतीश दौड़कर आया और सुचरिताके गलेसे लिपट कर बोला—हाँ, बहन, मैं भी तुम्हारे साथ रहूँगा।

सुचरिताने कहा—तुमको जो पढ़ना है।

सतीश—विनय बाबू मुझको पढ़ावेंगे।

सुचरिता—विनय बाबू अभी तुम्हारी मास्टरी नहीं कर सकेंगे।

विनय पास के कमरेसे बोल उठा—अच्छी तरह कर सकूँगा। मैं एक ही दिनमें क्या ऐसा असमर्थ हो गया हूँ यह मेरी समझ में नहीं आता।

आनन्दमयीने सुचरितासे कहा—तुम्हारा यहाँ रहना क्या तुम्हारी मौसी पसन्द करेंगी।

सुचरिता - मैं उनको एक चिट्ठी लिखती हूं।

आनन्दमयी—तुम मत लिखो, मैं ही लिखूँगी।

आनन्दमयी जानती थी कि सुचरिता यदि रहने की इच्छा प्रकट करेगी तो हरिमोहिनी उस पर खफा होंगी। किन्तु मैं सुचरिताको कुछ दिन अपने पास रहने देनेका अगर उससे अनुरोध करूँगी तो मुझी पर क्रोध करेगी, और इसमें कुछ हानि नहीं।

आनन्दमयीने पत्रमें यह आशय जताया कि ललिताके नये घरका प्रबन्ध कर देनेके लिए कुछ दिन तक मुझे विनयके घर रहना होगा। यदि सुचरिताको भी मेरे साथ कुछ दिन और रहनेकी आज्ञा मिल जाय तो मुझे बड़ी सहायता मिलेगी।

आनन्दमयी के पत्रसे हरिमोहिनी केवल क्रुद्ध ही न हुई, वरन् उसके मनमें बड़ा भारी सन्देह भी उपजा। उसने सोचा कि मैंने इसके बेटेको तो अपने यहाँ आनेसे रोक ही दिया है। अब सुचरिता को फँसानेके लिए माँ कौशल जाल बिछा रही है। इसमें माँ बेटे दोनों की सलाह है। आनन्दमयी किसी तरह अपने बेटे का व्याह सुचरिता के साथ कर देना चाहती है। आनन्दमयी की चेष्टा शुरूसे ही उसे अच्छी न लगती थी।

अब कुछ भी विलम्ब न कर जितना शीघ्र हो सके, सुचरिता को प्रसिद्ध राय-परिवारके घर दे देने हीसे वह निश्चिन्त होगी। फिर कैलाश

को भी इस तरह वहाँ कब तक बिठा रक्खोगी। उस बेचारे को कुछ काम न धन्धा, दिन भर बैठा-बैठा तम्बाकू पीकर घरकी दीवालें काली किया करता है। भला इस तरह रहना उसे कैसे अच्छा लगेगा!

जिस दिन हरिमोहिनीको चिट्ठी मिली, उसके दूसरे दिन सबेरे ही नौकर को साथ ले, स्वयं विनयके घर गई! तब नीचेके कमरे में सुचरिता, ललिता और आनन्दमयी रसोई-पानीकी तैयारी कर रही थी।

हरिमोहिनीको आनन्दमयी बिशेष आदरके साथ पालकीसे उतार लाई। वह उन शिष्टाचारों पर ध्यान न देकर एकाएक बोली—मैं राधा-रानीको लेने आई हूं।

आनन्दमयीने कहा—अच्छी बात है, ले जाओ; जरा बैठों भी तो।

हरिमोहिनी—नहीं मेरा पूजा-पाठ सभी पड़ा है। नित्य कृत्य करके नहीं आई हूं। मैं अभी यहाँ न बैठ सकूँगी।

सुचरिता चुपचाप कद्दू छील रही थी हरिमोहिनीने उसे पुकार कर कहा—सुनती हो चलो अब वक्त हो गया।

ललिता और आनन्दमयी चुपचाप बैठी रही। सुचरिता अपना काम छोड़ उठ खड़ी हुई और बोली—मौसी आओ।

हरिमोहिनीको पालकीकी ओर जाते देख सुचरिताने उसका हाथ पकड़कर कहा—चलो एक बार इस कमरेमें चलो।

सुचरिताने हरिमोहिनीको घरके भीतर ले जाकर दृढ़ता पूर्वक कहा—जब तुम मुझको लेने आई हो तब सब लोगोंके सामने तुमको खाली हाथ न लौटाऊँगी मैं तुम्हारे साथ चलूँगी; किन्तु आज ही दोपहरको फिर मैं यहाँ लौट आऊँगी।

हरिमोहिनीने मुँह फुलाकर कहा—तो यह क्यों नहीं कहतीं कि यहीं रहना चाहती हो।

सुचरिता—हमेशा तो न रह सकूँगी। हाँ जब तक मां यहाँ रहेगी मैं भी इसके साथ रहूँगी। उसे छोड़कर न आऊँगी।

वह बात सुनतेही हरिमोहिनीका सर्वाङ्ग जल उठा। किन्तु अभी कोई बात कहना उसने ठीक न समझा।

आनन्दमयीके पास आकर सुचरिता मुस्कराती बोली—माँ मैं जरा घर हो आऊँ।

आनन्दमयीने और कुछ न पूछ कर कहा—अच्छा हो आओ।

सुचरिताने ललिताके कानमें कहा—मैं आज ही दोपहरको लौट आऊंगी।

पालकीके सामने खड़ी होकर सुचरिताने कहा—सतीश।

हरिमोहिनीने कहा—सतीशको यहीं रहने दो न।

सतीश जो घर जायगा तो विघ्न स्वरूप हो सकता है यह सोचकर उसने सतीशको दूर रखना ही पसन्द किया।

दोनों जब पालकीमें बैठीं और कहार पालकी ले चले तब हरिमोहिनी ने भूमिका बाँधनेकी चेष्टा कर कहा—"ललिता का तो व्याह हो गया। यह अच्छा ही हुआ। एक लड़कीसे तो परेश बाबू निश्चिन्त हुए।" इसके बाद उसने कहा—घरमें कुँवारी लड़की बहुत बड़ी विपदकी वस्तु है पिताके लिये यह बड़ी ही दुश्चिन्ताका कारण है।

मैं तुमसे क्या कहूँ, मेरे मन में भी दिन रात यही चिन्ता लगी रहती है। मैं एक ऐसे घरानेमें तेरा सम्बन्ध पक्का कर दूँगी जिसका सुयश सर्वत्र छाया हुआ है। एक ऐसा अवसर प्राप्त होगया है जिसके कारण तू बड़े-बड़े कुलीनोंके घर एक पंक्ति में बैठकर भोजन करेगी और कोई चूँ तक न कर सकेगा।

भूमिका समाप्त न होने पाई थी कि पालकी दर्वाजे के पास आ पहुंची। दोनों पालकीसे उतरकर घरके भीतर आयीं। ऊपर जाते समय सुचरिता की दृष्टि एकाएक दर्वाजेके समीपवाले कमरेमें एक अपरिचित व्यक्ति पर पड़ी। देखा, वह एक नौकरसे तेल की मालिश जोरसे करा

रहा है। उसने सुचरिता को देखकर कुछ संकोच न किया बल्कि बड़े कुतूहल के साथ उसकी ओर निहारने लगा।

ऊपर जाकर हरिमोहिनीने अपने देवरके आने का संवाद सुचरिता को सूचित किया। हरिमोहिनीने उसको समझानेकी चेष्टाकी कि घर पर एक मेहमान आया है, उसे ऐसी अवस्थामें छोड़ आज ही दोपहर को चला जाना तुम्हारे लिये उचित न होगा।

सुचरिताने सिर हिलाकर कहा—नहीं मौसी, मुझे जानाही होगा।

हरिमोहिनी—अच्छा आजके दिन रह जाओ, कल चली जाना।

सुचरिता—मैं अभी स्नान करके परेश बाबूके घर भोजन करने जाऊँगी और वहींसे ललिताके पास जाऊँगी।

तब हरिमोहिनीने स्पष्ट कहा—तुम्हींको देखने आये हैं। इसमें क्या हानि है सिर्फ पाँच ही मिनटमें देखा-सुनी हो जायेगी।

सुचरिता—नहीं।

यह 'नहीं' शब्द इतना प्रबल और साफ था कि हरिमोहिनीको फिर उसे दुहरानेका साहस न हुआ। उसने कहा—अच्छा न सही। देखनेकी उतनी जरूरत भी नहीं है। यह तो अपने घरकी बात है। परन्तु कैलाश आज-कल का लिखा-पढ़ा लड़का है, तुम्हीं लोगोंकी तरह वह भी कुछ नहीं मानता। कहता है, कन्याको अपनी आँखसे देखूँगा! तुम लोग सबके सामने-आती जाती हो, इसीसे कहा। देखना तो कोई बड़ी बात नहीं है। किसी दिन तुमसे उसकी भेंट कराऊँगी। अभी तुम लजाती हो, तो भले ही उससे भेंट न करो। यह कहकर वह कैलाशका वर्णन करने लगी। उसके शील स्वभावके बारेमें उसने बहुत कहना फजूल समझा। इतना ही कहा, स्त्रीके मरने पर वह किसी तरह दूसरा व्याह करना नहीं चाहता था। घरके लोगोंने जब उसे बहुत तङ्ग किया तब वह लाचार होकर केवल गुरुजनोंकी आज्ञा पालन करने को प्रवृत्त हुआ है।

सुचरिताने किसी तरह उनकी प्रतिष्ठा को बिगाड़ना नहीं चाहा। हरिमोहिनीके प्रस्ताव पर वह किसी तरह राजी न हुई।

तब वह मनकी कोपाग्निसे प्रज्वलित हो बार-बार गोराको लक्ष्य करके कटु वाक्योंका प्रयोग करने लगी। उसने कहा—गोरा अपनेको चाहे जितना बड़ा हिंदू कहकर अपनी बड़ाई करे। परन्तु हिन्दू समाजमें उसे पूछता कौन है? उसे कौन जानता है? यदि वह लोभ में पड़कर ब्राह्म घर की किसी रुपये-पैसेवाली लड़की से व्याह करेगा तो समाजके शासनसे फिर उद्धार कैसे पावेगा। दस लोगोंके मुँह बन्द करने के लिये रुपये फूँकने पड़ेंगे। तो भी समाज उसे ग्रहण करेगा या नहीं, इसमें संदेह है।

सुचरिता—मौसी, तुम ये बातें क्यों कह रही हो? तुम जानती हो, ये बिल्कुल बे सिर पैर की बातें हैं।

हरिमोहिनीने कहा—मैं बूढ़ी हुई, मुझे कोई बातोंमें कैसे ठगेगा? मेरे आँख कान खुले हैं। मैं सब कुछ देखती सुनती हूँ, परन्तु समझ बूझकर चुप हो रहती हूँ।

सुचरिता का स्वभाव बड़ा ही सहिष्णु था, तथापि वह अबकी बार उकताकर बोली—तुम जिनकी बात कह रही हो उन्हें मैं गुरु मानती हूँ, उनपर मेरी हार्दिक भक्ति और श्रद्धा है। उनके साथ मेरा कैसा भाव है, यह जब तुम किसी तरह नहीं समझती। अब मैं यहाँसे जाती हूं। जब तुम शांत होगी तब मेरे हृदय को पहचानोगी, और तुम्हारे साथ अकेली रहनेका अवसर होगा तब मैं फिर यहां आऊँगी।

हरिमोहिनी—गोरा को यदि तुम दूसरी दृष्टि से देखती हो, यदि उसके साथ तुम्हारा व्याह न होगा, तो तुम ऐसी अवस्था में ऐसे योग्य वर (कैलाश) का निषेध क्यों करती हो? तुम कुँवारी तो रहोगी नहीं।

सुचरिता—क्यों न रहूँगी! मैं व्याह न करूँगी।

हरिमोहिनीने आँखें फाड़ कर कहा—तो बुढ़ापे तक यों ही रहेगी?

सुचरिता—हाँ, मृत्युपर्यन्त।

[७१]

इस आघातसे गोराके मनका भाव बदल गया। सुचरिताके द्वारा जो गोराका मन आक्रान्त हुआ था, उसने उसका कारण सोचकर देखा वह उन लोगों के साथ हिल-मिल गया है, कब कैसे उन लोगोंके साथ इस तरह मिल गया, इसका ज्ञान उसे न रहा। जो निषेध की सीमा थी उसे गोरा भूलसे लाँघ गया है। यह हमारे देशकी रीति नहीं है। कोई अपनी सीमा की रक्षा न कर सकने पर, जानकर या न जानकर, केवल अपनाही अनिष्ट नहीं कर डालता वरन् दूसरेका हित करने की शक्ति भी उसकी चली जाती है। हृदय की वृत्ति संसर्गसे प्रबल होकर ज्ञान, निष्ठा और शक्तिको मलिन कर देती है। निर्मल बुद्धि भी संसर्ग से बिगड़ जाती है।

केवल ब्राह्म-घरकी लड़कियोंके साथ मिलने जाकर गोरा अपनेको भूल गया हो, सो नहीं; वह जो आस-पासके गाँवमें साधारण लोगोंके साथ मिलने गया था, वहाँ भी वह मानों एक भ्रम-जालमें पड़कर अपनेको भूल सा गया था। क्योंकि उसको पग-पग पर दया उपजती थी इसी दयाके वश होकर वह केवल यही सोचता था कि यह काम बुरा है, यह अन्याय है, इसको दूर कर देना उचित है। किन्तु यह दयावृत्ति क्या भले-बुरे के सुविचारकी योग्यताको विकृत नहीं करती? दया करने की झोंक जितनी ही बढ़ उठती है, उतनी ही निर्विकार भावसे सत्यको देखने की हमारी शक्ति क्षीण पड़ जाती है। दया-वश हम अयुक्त विचार करनेको बाध्य हो पड़ते हैं।

इसीलिये जिसके ऊपर देशके समस्त हितका भार है, उसको सबसे निर्लिप्त होकर रहने की विधि हमारे देशमें चली आती है। प्रजाके साथ घनिष्ट भावसे मिलने ही पर राजा प्रजाका पालन कर सकता है, यह

बात सर्वथा अमूलक है। प्रजा के सम्बन्ध में राजा को जिस ज्ञानकी आवश्यकता है वह प्रजाके विशेष सम्पर्क से दूषित हो जाता है। इस कारण प्रजा आप ही अपने राजासे दूर रहकर उसकी आज्ञाका पालन करती है। अगर राजा प्रजा का सहचर हो जाय तो उसकी जरूरत ही न रहे।

ब्राह्मण को भी उसी तरह सबसे दूरस्थ और निर्लोभ रहना चाहिए। ब्राह्मणको बहुतोंका मगंल करना पड़ता है इसलिए वह बहुतों के संसर्ग से बचकर रहे इसीमें कुशल है।

गोरा ने कहा—मैं भारतवर्षका वही ब्राह्मण हूं। किन्तु जो ब्राह्मण लोगोंके साथ सम्पर्क रखते हैं और व्यवसाय के कीचड़ में लोट, धनके लोभमें पड़, शूद्रत्वकी रस्सी गलेमें बाँधकर मरनेको तैयार हैं उनकी गणना गोराने स्वदेशके सजीव पदार्थों में नहीं की। उन्हें शूद्रसे भी नीच समझा। क्योंकि शूद्र अपने शूद्रत्वकी रक्षा करके जीवित है, किन्तु ये ब्राह्मणत्व के अभावसे मृतप्राय हैं। इसी लिए ये अपवित्र और शक्ति हीन हैं। भारतवर्ष इन्हीं के कारण आज ऐसा दीन होकर अशौच में है।

इसके पूर्व गोरा का मन कभी देव-पूजामें नहीं लगता था। जब से उसका हृदय इन बातों को सोचकर क्षुब्ध हो उठा है तब से उसकी कुछ और ही धारणा हो गई है। सभी काम उसे निस्सार मालूम होते हैं। इस असार संसार का विचार कर जब वह कुछ पार न पाया तब देव-पूजा में मन लगानेका ही उसने निश्चय किया। कुछ दिनसे वह देवमूर्तिके सामने बैठकर उस मूर्तिमें अपने मनको एकदम निविष्ट कर देना चाहता है। परन्तु वह किसी उपायसे अपनी चित्त-वृत्ति को उस मूर्तिमें स्थिर नहीं कर सकता। वह बुद्धि के द्वारा देवता की व्याख्या करता है, उसकी महिमा गाता है। परन्तु कल्पित मूर्तिके आगे उससे भक्ति करतेनहीं बनता। आध्यात्मिक दृष्टिसे मूर्ति-पूजा नहीं की जाती। मन्दिरमें बैठकर मूर्ति-पूजा की कोई चेष्टा न करके जब वह घर बैठकर किसी के साथ आध्यात्मिक आलोचना करता था या एकान्त

में बैठकर अपने मन और वाणीको भावके स्रोतमें बहा देता था तब उसके हृदयमें आनन्द और भक्तिरस का सचांर हो आता था। यह समझकर भी उसने मूर्ति-पूजा करना न छोड़ा। वह नित्य नियमपूर्वक पूजा पर बैठने लगा। इसे उसने अपना नित्य का नियम मान लिया और यह कह कर मन को समझाया कि जहाँ भाव की प्रबलता नहीं वहाँ नियम ही प्रधान है, वहाँ नियम से ही काम लेना चाहिए।

गोरा जब गाँवमें जाता था तब वहाँके देवालयमें जाकर मन ही मन ध्यान करके कहता था यहीं मेरे साधन का विशेष स्थान है, एक ओर देवता और एक ओर भक्ति, इन दोनों के बीचमें ब्राह्मण सेतु स्वरूप होकर दोनोंको परस्पर मिला रहे हैं। क्रमशः गोरा के मन में यह खायल भी पैदा हुआ कि ब्राह्मण के लिए भक्ति की आवश्यकता नहीं। भक्ति साधारण मनुष्योंकी ही विशेष सम्पत्ति है। इस भक्त और भक्ति के बीच का जो मार्ग है वही ज्ञान का मार्ग है। यह जैसे दोनों की योगरक्षा कर रहा है, वैसे दोनोंकी सीमा का भी न पालन कर रहा है। भक्त और देवताके बीच यदि निर्मल ज्ञान परदेकी तरह न रहे तो सब बातें बिगड़ जायँ। इसलिए भक्तिमें तन्मय होना ब्राह्मणके सुखकी सामग्री नहीं।

[७२]

गङ्गा के किनारे एक बाग में प्रायश्चित-सभा की तैयारी होने लगी।

अविनाशके मनमें एक त्रुटि यह मालूम हो रही थी कि कलकत्ते के बाहर जो प्रायश्चित का अनुष्ठान हो रहा है, वहाँ लोगोंकी दृष्टि, जैसी चाहिये, आकृष्ट न होगी। वह जानता था कि गोरा को अपने लिए प्रायश्चितकी कोई आवश्यकता नहीं। आवश्यकता है, देशके लोगोंके लिए। इसलिए लोगों की भीड़-भाड़में ही यह काम होना चाहिए।

किन्तु गोरा राजी न हुआ। वह वेद मन्त्र पढ़कर जैसा बृहत् होम करके यह काम करना चाहता है, वैसा कलकत्ता शहर के भीतर होनेकी सम्भावना नहीं। उसके लिए तो तपोवन प्रयोजन है। वेदाध्ययनसे प्रतिध्वनित, होमाग्नि से प्रदीप्त गङ्गाके शान्त तटमें दुनियाके गुरु पुराने भारतवर्ष को गोरा जगावेगा और गङ्गाजलमें स्नान करके पवित्र हो उससे नये जीवन की दीक्षा ग्रहण करेगा।

अविनाश ने तब अन्य कोई उपाय न देख समाचारपत्रों का सहारा लिया। उसने गोरा से छिपाकर इस प्रायश्चित की बात सब समाचार पत्रों में छपवा दी केवल यही नहीं, उसने सम्पादकीय कालम में बड़े-बड़े निबन्ध लिख भेजे। उनमें उसने विशेषकर यही बात जताई कि गोरा के समान तेजस्वी पवित्र ब्राह्मण को कोई दोष स्पर्श नहीं कर सकता। तो भी वे साम्प्रतिक पतित भारतवर्ष के समस्त पातकों का भार अपने ऊपर लेकर सारे देशकी ओर से प्रायश्चित कर रहे हैं। इसलिए हे भारत के पचीस करोड़ दुःखी सन्तानों! तुम लोग इस प्रयश्चित्तकर्त्ता को इत्यादि इत्यादि······।

गोरा इन लेखोंको पढ़कर खफा हो उठा। किन्तु अविनाश किसी

तरह दबने वाला न था। गोरा उसे गाली भी देता तो भी वह मनमें कुछ न लाता था बल्कि खुशी होता था। वह समझता था कि मेरे गुरु (गौरमोहन) का भाव बहुत ऊंचे दर्जे का है।

अविनाश की चेष्टा से गोरा के प्रायश्चित के विषय में चारों ओर खासी धूम मच गई। गोराको देखनेके लिए उसके साथ बातें करने के लिए झुण्ड के झुण्ड लोग उसके घर आने लगे। पहले से भी लोगोंकी भीड़ बढ़ गई। रोज-रोज उसके पास चारों ओरसे इतनी चिट्ठियाँ आने लगीं कि उनका पढ़ना भी बन्द कर दिया गया। गोरा को मालूम होने लगा जैसे इस देशव्यापिनी आलोचनाके द्वारा उसके प्रायश्चितकी सात्विकता नष्ट हो गई हो।

कृष्णदयाल आजकल समाचार पत्रोंको हाथसे छूते तक न थे। किन्तु यह बात लोगों के मुँहसे उनके कानोंमें भी जा पहुंची। उनका योग्य पुत्र गोरा बड़े समारोह के साथ प्रायश्चित करने बैठा है, और वह अपने पिता के पद चिन्ह का अनुसरण करके किसी समय उन्हींकी भांति सिद्ध पुरुष हो जायगा, यह सम्वाद और आशा कृष्णदयाल के कृपापात्रों ने उनके आगे बढ़े गौरवके साथ प्रकट की।

गोरा के कोठेमें कृष्णदयालने बहुत दिनों से पैर न रक्खा था। आज वे अपना रेशमी वस्त्र उतारकर, सूती कपड़े पहिनकर एकाएक उसके कोठे में गये। वहां उन्होंने गोरा को नहीं देखा। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ कि वह ठाकुर जी के घर में हैं।

कृष्णदयालने चकित होकर फिर नौकर से पूछा—एँ! ठाकुर जी के कमरेमें उसका क्या काम है?

"वे पूजा करते हैं।"

कृष्णदयालने हड़बड़ाकर ठाकुर जी के घर के पास जाकर देखा कि यथार्थ ही गोरा पूजा पर बैठा है।

कृष्णदयालने बाहरसे पुकारा—गोरा।

गोरा अपने पिता के आगमनसे उठ खड़ा हुआ।

तब कृष्ण दयाल ने कहा—गोरा, तुम प्रायश्चित करोगे, इसके लिए क्या सब पण्डितों को निमन्त्रित किया है ?

गोरा—जी हां !

कृष्णदयालने अत्यन्त उत्तेजित होकर कहा—मैं अपने जीते जी यह कभी न होने दूँगा।

गोरा अब अपने मनको न रोक सका। उसने पूछा—क्यों ?

कृष्णदयाल—मैंने तुमसे एक दिन और कहा था कि तुम प्रायश्चित न कर सकोगे।

गोरा—कहा तो था, किन्तु कारण तो आपने कुछ बताया नहीं।

कृष्णदयाल—कारण बतानेकी मैं कोई आवश्यकता नहीं देखता। हम तुम्हारे गुरुजन हैं, मान्य हैं, शास्त्रीय क्रियाकर्म हमारी अनुमति के बिना तुम नहीं कर सकते। उनमें पितरों का श्राद्ध करना पड़ता है, सो जानते हो न !

गोरा ने विस्मित होकर कहा—इसमें हानि क्या है ?

कृष्णदयालने क्रुद्ध होकर कहा—बड़ी हानि है। वह मैं कभी न होने दूँगा।

गोरा ने हृदयमें आघात पाकर कहा—देखिए, यह मेरा निजी काम है। मैंने अपनी पवित्रताके ही लिए यह आयोजन किया है। इस पर आप वृथा आलोचना करके क्यों कष्ट पा रहे हैं।

कृष्णदयाल—देखो, तुम बात-बातमें तर्क करना छोड़ दो। यह तर्क का विषय नहीं है। ऐसे बहुत से विषय हैं जो अब भी तुम्हारे समझने योग्य नहीं। मैं फिर भी तुमसे कहता हूँ कि तुम हिन्दू धर्म में प्रवेश कर सके हो, इसीका तुमको गर्व है, किन्तु यह तुम्हारी बिलकुल भूल है। तुम कभी हिन्दू हो नहीं सकते। तुम्हारे शरीरका प्रत्येक कण तुम्हारे सिर से पैर तक उस धर्म के प्रतिकूल है। हिन्दू होनेकी तुममें कोई योग्यता नहीं। इच्छा करनेसे भी तुम हिन्दू नहीं होगे। तुम अपनेको हिन्दू कहते

हो, परन्तु विलायती बोली कहां जायगी। जो कहता हूँ उसे मानो, वह सब करना छोड़ दो।

गोरा सिर झुकाकर चुप हो रहा। कुछ देर बाद बोला—यदि मैं प्रायश्चित न करूंगा तो शशिमुखीके व्याह में मैं सबके साथ बैठकर भोजन नहीं कर सकूँगा।

कृष्णदयाल उत्साहित होकर बोले—अच्छा तो इसमें हर्ज ही क्या है। तुम अलग ही बैठकर खा लेना तुम्हारे लिए अलग आसन रखवा दिया जायगा।

गोरा—तो समाजमें मुझे अलग होकर रहना पड़ेगा।

कृष्णादययाल—यह तो अच्छा ही होगा। अपने इस उत्साह से गोरा को विस्मित होते देख उन्होंने कहा—देखते नहीं हो, मैं किसी के साथ भाजन नहीं करता निमन्त्रण होने पर भी किसीके हाथका छुआ नहीं खाता। समाजके साथ मेरा क्या संपर्क है। तुम जिस सात्विक भावसे जीवन बिताना चाहते हो उसके लिए तुम्हें भी इसी मार्गका अवलम्बन करना उचित है। इसीमें तुम्हारा मङ्गल है।

कृष्णदयालने दोपहरके समय अविनाशको बुलाकर कहा—मालूम होता है, तुम्ही सबने मिलकर गोराको नचाने का सामान किया है।

अविनाश—यह आप क्या कहते हैं। आपही का गोरा हम लोगों को नचा रहा है, वह आप तो कम ही नाचता है।

कृष्णदयाल—परन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि तुम लोगों का प्रायश्चित्त न होगा। मेरी उसमें सम्मति नहीं। अभी सब रोक दो।

अविनाश सोचने लगा बूढ़े की यह कैसी जिद है। इतिहासमें ऐसे बहुत लोग पाये जाते हैं जो अपने पुत्रके महत्व से एकदम अपरिचित थे। हमारे कृष्णदयाल भी उसी श्रेणी के हैं। यदि ये दिन रात सन्यासियों के पास न रहकर अपने बेटेसे शिक्षा ग्रहण करते तो इनका विशेष उपकार होता।

अविनाश बड़ा चतुर आदमी था। जब वाद प्रतिवाद में कोई फल न देखता था यहाँ तक कि "नैतिक-प्रभाव" की भी सम्भावना कम पर देखने वह वृथा विवाद न करता था। तब उसने कहा—अच्छा जो आपकी सम्मति नहीं है तो न होगा। पर बात यह है कि उसका सब आयोजन हो चुका है, निमंत्रण पत्र भी जहाँ-तहाँ भेजे जा चुके हैं। इसमें अब विलम्ब भी नहीं है न हो तो एक काम किया जाय। गोरा अलग रहे हमी लोग प्रायश्चित्त करलें। देशीय लोगोंके पापका तो अभाव नहीं है।

अविनाशके आश्वासन-वाक्यसे कृष्णदयाल निश्चिन्त हुए।

कृष्णदयाल को गोराकी बात पर विशेष श्रद्धा कभी नहीं थी आजभी उसने उनके आदर्शको हृदयसे स्वीकार न किया। यद्यपि वह देशोपकार के आगे माँ बापके हुक्मकी पाबन्दीको नहीं मानता था, तो भी आज दिन भर उसके मनमें पिताके निशेध वाक्य पर दुख होता रहा। कृष्ण-दयाल की सब बातोंमें उसे एक छिपे हुए सत्य रहस्यकी धुँधली छाया मालूम होती थी। जितना ही वह सोचता था उतना ही उसका सन्देह दृढ़ होता जाता था। मानों जागने पर वह एक दुःस्वप्न से दुःख पा रहा था। उसे मालूम होने लगा जैसे कोई उसे चारों ओरसे ढक कर पंक्ति से बाहर फेंक देने की चेष्टा कर रहा हो। आज उसको अपनी एकाकिता एक वृहत रूप धारण किये दिखाई दी। उसके आगे कर्मक्षेत्र बहुत लम्बा चौड़ा है, काम भी बहुत बड़ा है, किन्तु वह अकेला खड़ा है उसके पास और कोई नहीं है।

[७३]

कल प्रायश्चित्तकी सभा होगी, और आज रातसे ही गोरा उस बाग में जाकर रहेगा, जहाँ प्रायश्चित्त होने वाला है, यही तय हुआ था। जिस समय गोरा वहाँ जानेको तैयार था, उसी समय हरिमोहिनी आकर उपस्थित हुई। उन्हें देखकर गोराके मनको कुछ प्रसन्नता नहीं हुई। गोराने कहा—आप आई हैं, लेकिन मुझे तो अभी जाना है। माँ भी कई दिनसे घरमें नहीं हैं। अगर उनसे कुछ प्रयोजन हो, तो···

हरिमोहिनीने कहा—ना भैया, मैं तुम्हारे ही पास आई हूँ। जरा बैठ जाओ, तुम्हारा बहुत समय न लूँगी।

गोरा बैठ गया। हरिमोहिनीने सुचरिताका जिक्र छेड़ा। कहा—तुम्हारी दी हुई शिक्षासे उसका बड़ा उपकार हुआ है। यहाँ तक कि आज कल वह हर एक के हाथका पानी भी नहीं पीती, और सभी बातोंमें उसकी सुमतिका परिचय मिलता है। हरिमोहिनी कहने लगी—भैया, उसके बारे में मुझे क्या कम चिन्ता थी उसे सुमार्ग पर लाकर तुमने जो मेरा उपकार किया है, उसका बखान मैं मुखसे नहीं कर सकती।

इसके बाद हरिमोहिनीने फिर कहना शुरू किया कि—सुचरिता की अवस्था अब अधिक हो चुकी है। उसका ब्याह अब बहुत जल्दी हो जाना चाहिये, यहाँ तककि उसमें एक दिन की भी देर होना अब मुनासिब नहीं है। हिन्दूके घरमें अगर वह होती, ब्राह्म परिवारमें न रहती, तो अब तक बाल-बच्चोंसे उसकी गोद भर गई होती। ब्याह में दे करके कितना बड़ा अवैध कार्य हुआ है, इस बार में निश्चय ही तुम भी सहमत होंगे। मैं बहुत समय तक सुचरिताके विवाहके बारेमें असह्य उद्वेग सहन करने के बाद अन्तको बहुत कुछ साध्य साधना और अनुनय-विनयके उपरान्त अपने देवर कैलाश को राजी करके कल-

करने में बुला रखी हूँ। उन्होंने पहले जिन सब गुरुतर विघ्न बाधाओं की आशंका की थीं, वे सब ईश्वर की इच्छासे दूर हो गई हैं। सब कुछ पक्का और ठीक होगया है, वर पक्षके लोग एक पैसा भी दहेज न लेंगे और सुचरिताके पूर्व इतिहास पर भी कुछ आपत्ति नहीं करेंगे। मैंने इन सब समस्याओं को हल कर दिया है। इसी समय—सुन कर तुमको आश्चर्य होगा—सुचरिता एक दम खिलाफ हो बैठी है; वह व्याह करनेको राजी नहीं होती। उसके मनका क्या भाव है, नहीं जान पड़ता। मालूम नहीं, किसी ने उसको भड़का कर वहका दिया है, और किसी को वह चाहती है। भगवान् ही जाने। लेकिन भैया, तुमसे मैं खुलासा ही कहे देती हूं। वह लड़की तुम्हारे योग्य नहीं है! दिहात में उसका व्याह होजायगा तो कोई उसका पहलेका हाल जान भी नहीं सकेगा, और किसी तरह काम चल जायगा। लेकिन तुम लोग शहर में रहते हो, तुम अगर उससे व्याह करोगे, तो शहरके लोगोंगोंको मुँह नहीं दिखा सकोगे।

गोराने क्रुद्ध होकर कहा—आप यह सब क्या बक रही हैं? किसने आपसे कहा है कि मैं उसने व्याह करने केलिए तैयार हूँ या मैंने उससे इस बारे में कहा सुना है।

हरिमोहिनीने कहा—मैं क्या जानूं भैया, अखबार में छप गया है और वही सुन कर मैं लज्जाके मारे मरी जा रही हूँ।

गोरा समझा, हारान बाबूने या उनके दलके किसी आदमीने, अखबारमें विषयकी आलोचना की है। गोराने क्रोध से मुट्ठी बाँध कर कहा—सब झूठ है।

हरिमोहिनी उसके गर्जन-शब्द से चौंक उठी। बोली मैं भी तो यही जानती हूँ। अब तुम्हें मेरे एक अनुरोधकी रक्षा करनी होगी। तुम राधा-रानीके पास जरा हो आओ।

गोराने पूछा—क्यों?

हरिमोहिनी—तुम एक बार चलकर उसे समझा दो।

गोराका मन इस उपलक्षसे एक बार सुचरिताके पास जानेके लिए उसी समय उद्यत हो उठा। उसके हृदयने कहा—चलो आज एक बार आखिरी मुलाकात कर आओ। कल तुम्हारा प्रायश्चित है, उसके उपरान्त तो तुम तपस्वी हो जाओगे। आज केवल यही एक रात्रि भरका समय है; इसीमें केवल कुछ मिनटोंके लिए मिल लो कुछ अपराध न होगा। और अगर होगा भी तो वह कल प्रायश्चित्तमें भस्म हो जायगा।

गोराने दम भर चुप रह कर पूछा—उनको क्या समझाना होगा, बतलाइए।

हरिमोहिनीने कहा—और कुछ नहीं, केवल यही कि हिन्दू आदर्श के अनुसार सुचरिता जैसे सयानी लड़की को शीघ्र व्याह कर लेना चाहिए, यही उसका कर्तव्य है और हिन्दू-समाजमें कैलाश जैसे सत्पात्रका लाभ सुचरिताकी अवस्थाकी लड़कीके लिए अचिन्तनीय सौभाग्य है।

गोराके हृदयमें जैसे कोई भाले भोंकने लगा। जिस आदमीको उस दिन सुचरिताके घरमें द्वार पर देखा था उसे स्मरण करके गोराके जैसे हजारों बिच्छू डंक मारने लगे! सुचरिताको वह पावेगा ऐसी कल्पना करना भी गोराके लिए असत्य है। उसका मन वज्र-नादसे कहने लगा, ना यह कभी नहीं हो सकता।

और किसीके साथ सुचरिताका मिलन होना असम्भव है; बुद्धि-प्रेमी और भावकी गम्भीरतासे परिपूर्ण सुचरिता का गम्भीर निस्तब्ध हृदय पृथ्वी पर गोराके सिवा दूसरे किसी आदमीके सामने इस तरह स्पष्ट-रूपसे प्रकाशित नहीं हुआ था, और अन्य किसीके आगे किसी दिन उस तरह प्रकाशित भी नहीं हो सकता। वह हृदय कैसा अद्भुत है। कैसा सुन्दर है! रहस्य निकेतनकी अन्तरतम ड्योढ़ीमें वह कौन अनिर्वचनीय सत्ता देखी गई है! मनुष्य को इस तरह कितनी दफे देखा जाता है और कितने आदमियों को देखा जाता है! दैवसंयोगसे ही जिस आदमीने सुचरिताको ऐसे गहरे सत्य रूप में देख पाया है, अपनी सम्पूर्ण प्रकृतिके द्वारा

उसका अनुभव किया है, उसीने तो सुचरिताको प्राप्त किया ! और कोई कभी उसे इस तरह कैसे पावेगा ?

हरिमोहिनीने कहा—राधारानी क्या सदा इसी तरह क्वाँरी रहेगी ! यह भी कभी क्या हो सकता है या होना चाहिये ?

यह भी तो ठीक है। गोरा तो कल प्रायश्चित करने जा रहा है ! उसके बाद तो वह सम्पूर्ण रूपसे पवित्र होकर ब्राह्मण बनेगा ! तो फिर क्या सुचरिता सदा अविवाहित ही रहेगी। उसपर यह चिर-जीवन-व्यापी दुर्वह भार लादनेका अधिकार किसको है ! स्त्री जातिके लिए इतना बड़ा बोझ और क्या हो सकता है।

हरिमोहिनी न जाने क्या बातें बकती चली जा रही थीं, उनका एक अक्षर भी गोराके कानोंमें नहीं पहुँचता था। गोरा सोचने लगा—पिताजी जो इस तरह जोर देकर मुझे प्रायश्चित करनेसे रोक रहे हैं, सो उनके इस निषेधका क्या कुछ भी मूल्य नहीं है ?

मैं अभी पिताजी के पास जाऊँ, आज अभी इसी सन्ध्याकालमें मैं उनसे जोर देकर पूछूँ कि उन्होंने मुझमें ऐसा क्या देख पाया है ? प्रायश्चित्तकी राह भी मेरे लिए बन्द है, ऐसी बात उन्होंने क्यों कही ? अगर वह मुझे वह बात अच्छी तरह समझा दे सकें, तो उधरसे मैं छुट्टी पा जाऊँगा।

हरिमोहिनीसे गोराने कहा — आप जरा ठहरिए, मैं अभी आता हूं

गोरा फुर्तीके साथ अपने पिताके पास गया। उसे जान पड़ा कृष्णदयाल अभी उसे छुटकारा दे सकते हैं।

साधनाश्रमका द्वार बन्द था ! गोराने दो एक बार धक्का दिया, मगर नहीं खुला। कोई बोला भी नहीं। भीतर से धूप की खुशबू आ रही थी। कृष्णदयाल आज सब दरवाजे बन्द करके संन्यासी के साथ अत्यन्त गूढ़ और अत्यन्त दुरुह एक योग की प्रणाली का अभ्यास कर रहे थे।

— :०:—

गोरा जैसे ही हरिमोहिमोनीके सामने आया वैसे ही वह कह उठो—भैया, तुम एकबार मेरे साथ चलो! तुम्हारे जाने से ही, तुम्हारे एक बार अपने मुखसे कुछ कह देनेसे ही, सब काम बन जायगा।

गोराने कहा—मैं क्यों जाऊँ! सुचरिताके साथ मेरा क्या सम्बन्ध है? कुछ भी नहीं।

हरिमो०—वह तुम्हें देवता के समान मानती है, भक्ति करती है तुम्हें अपना गुरू मानती है?

[illegible] पिण्डमें एक तरफसे दूसरी तरफ तक जैसे बिजलीकी आगसे गर्म की हुई सुई किसीने भोक दी।

गोराने कहा—मुझे वहाँ अपने जानेका कुछ प्रयोजन नहीं देख पड़ता। सुचरिताके साथ मेरी भेंट होने की कोई संभावना नहीं है।

हरिमोहिनीने खुश होकर कहा—सो तो है ही। इतनी बड़ी सयानी लड़की से तुम्हारा मिलना-जुलना तो बेशक अच्छा नहीं है। लेकिन भैया, आज मेरा इतना काम किये बिना तो मैं तुमको छोड़ूँगी नहीं। उसके बाद अगर फिर कभी तुमको बुलाऊँ, तो कहना।

गोराने बार-बार सिर हिलाकर इस आहवाहको अस्वीकार कर दिया। अब नहीं, किसी तरह नहीं। सब खतम हो गया। उसने अपने विधाताको सब अर्पण कर दिया है। अपनी पवित्रता में अब वह किसी तरहका दाग नहीं लगा सकेगा। अब वह सुचरिता से मिलने नहीं जायगा।

हरिमोहिनीने जब गोराके भावसे यह निश्चय समझ लिया कि उसे डिगाना असंभव है, तब उसने कहा—अगर नहीं हो जा सकते, तो एक काम करो भैया? एक चिट्ठी उसे लिख दो?

गोराने फिर सिर हिलाया। यह भी नहीं हो सकता! चिट्ठी पत्री

हरिमोहिनीने कहा—अच्छा, तुम मुझीको दो लाइन लिख दो! तुम तो सभी शास्त्र जानते हो, मैं तुमसे व्यवस्था लेने आई हूं।

गोराने पूछा—काहेकी व्यवस्था?

हरिमो०—हिन्दूके घरकी लड़कीके लिये ब्याह के लायक अवस्थामें ब्याह करके गृहस्थाश्रम का पालन करना ही सबसे बढ़कर धर्म है कि नहीं—इसी की।

गोराने कुछ देर चुप रहकर कहा—देखिए, आप इन सब बातों में मुझको न लपेटिए। व्यवस्था देनेके लायक मैं पण्डित नहीं हूँ, और न यह मेरा काम है।

तब हरिमोहिनीने जरा तीव्र भावसे ही कहा—तो फिर अपने मनके भीतरकी बात खोलकर ही क्यों नहीं कह देते? शुरूसे गुत्थी तुम्हींने डाली है, अब खोलनेके समय कहते हो कि मुझे न लपेटिए। इसके क्या माने? असल बात यह है कि तुम नहीं चाहते कि सब मामला साफ हो जाय—सुलझ जाय।

और कोई समय होता, तो गोरा इतने ही में आग बबूला हो उठता। ऐसे अपवाद को वह किसी तरह भी सह न सकता। किन्तु आज उसका प्रायश्चित्त शुरू हो गया है; इससे उसने क्रोध नहीं किया। उसने अपने मन के भीतर डूबकर टटोल कर देखा, हरिमोहिनी सत्य ही कह रही है। वह सुचरिता के साथ अपने बड़े बन्धन को काटने के लिए अवश्य निर्मम हो उठा है, किन्तु एक सूक्ष्म सूत्रको जैसे उसने देख ही नहीं पाया—इस तरह वह बनाये रखना चाहता है। वह सुचरिताके साथ सम्बन्धका अब भी सम्पूर्ण रूप से त्याग नहीं कर सका।

किन्तु कृपणता दूर ही करनी होगी। एक हाथ से दान करके दूसरे हाथसे उसे पकड़े रहनेसे काम नहीं चलेगा।

उसने उसी समय कागज निकाल कर खूब ज़ोर के साथ बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा कि "विवाह ही नारी के जीवन की साधना का मार्ग है; गृहस्थ-धर्म ही उसका प्रधान धर्म है। यह विवाह इच्छा-पूर्ति के लिये नहीं, कल्याण-साधना के लिये है। गृहस्थाश्रम चाहे सुखका हो, चाहे दुखका, एकाग्र मनसे उसी गृहस्थाश्रमको ग्रहण करके, सती, साध्वी और पवित्र होकर धर्म को ही घरमें मूर्तिमान करके रखना रमणी का कर्तव्य है! यही स्त्रियों का व्रत है।"

हरिमोहिनीने कहा—इसके साथ ही कैलाशके बारेमें भी कुछ लिख देते, तो अच्छा होता भैया।

गोरा—ना, मैं उसको नहीं जानता। उसकी सिफारिश नहीं कर सकूँगा।

हरिमोहिनीने उस कागज को प्रामिसरी नोटकी तरह बड़े यत्न से मोड़कर अपने आंचलमें बाँध लिया और घर को लौट गई।

सुचरिता उस समय भी आनन्दमयी के निकट ललिता के ही घर में थी। वहाँ इस प्रसङ्गकी आलोचनामें सुविधा न होगी और ललिता तथा आनन्दमयीके मुख से विरुद्ध बातें होकर सुचरिताके मनमें दुविधा पैदा हो सकती है, यह आशंका करके हरिमोहिनी वहाँ नहीं गई। उन्होंने सुचरिताको घरमें ही बुला भेजा। कहला भेजा कि वह दूसरे दिन दोपहर को उनके पास आकर भोजन करे, एक बहुत जरूरी और खास बात है। तीसरे ही पहर वह फिर चली जा सकती है।

दूसरे दिन दोपहरको सुचरिता अपना मन कठिन करके ही आकर उपस्थित हुई। वह जानती थी कि मौसी उससे ब्याह की बात ही फिर और किसी प्रकारसे कहेंगी। उसका यह दृढ़ संकल्प था कि आज वह बहुत कड़ी जबान देकर इस प्रसङ्गको आज ही एकदम खत्म कर देगी।

सुचरिताका भोजन समाप्त हो जाने पर हरिमोहिनीने कहा—कल सन्ध्या के समय मैं तुम्हारे गुरु के घर गई थी।

सुचरिताका अन्तःकरण कुण्ठित हो गया। मौसी फिर क्या गोरा की कोई बात उठाकर उसका अपमान कर आई हैं ?

हरिमोहिनीने कहा—डरो नहीं राधारानी, मैं उनके साथ लड़ने भिड़ने नहीं गई थी। अकेली थी सोचा जाऊँ। उनके पास, दो-चार अच्छी बातें सुन आऊं। बातों ही बातोंमें तुम्हारा जिक्र खड़ा हुआ मैंने देखा, उनकी भी वही राय है। स्त्री जातिका बहुत दिन क्वारी रहना वह भी अच्छा नहीं बताते। वह कहते हैं शास्त्रके मतसे वह अधर्म है। वह साहब लोगोंके यहाँ चल सकती है, हिन्दू के यहाँ नहीं। मैंने उनसे अपने कैलाशके सम्बन्ध की बात भी खोलकर कही थी। मैंने देखा गौरमोहन बाबू बेशक ज्ञानी आदमी हैं।

लज्जा और अप्रिय प्रसङ्ग उठनेमें कष्ट से सुचरिता जैसे मरी जा रही थी। हरिमोहिनीने कहा—तुम तो उन्हें अपना गुरु समझ कर मानती हो! उनकी आज्ञाका तो पालन तुम्हें करना होगा?

सुचरिता चुप रही। हरिमोहिनीने फिर कहा—मैंने उनसे कहा—भैया, तुम खुद चलकर उसे समझा दो वह हम लोगोंकी बात तो मानती ही नहीं। उन्होंने कहा—ना, उनसे अब फिर भेंट करना उचित न होगा! उसके लिये हमारा हिन्दू समाज रोकता है। तब मैंने कहा—फिर अब और उपाय क्या है? इसपर गौरमोहन बाबू ने अपने हाथसे लिख दिया है—देखो?

इतना कहकर हरिमोहिनीने धीरे-धीरे वही कागज अपने आँचल से खोला। उसे खोलकर सुचरिताके सामने उन्होंने रख दिया।

सुचरिताने पढ़ा। उसका दम जैसे घुटने लगा, वह काठ की पुतली की तरह जड़ होकर बैठी रही।

उस लिखावटके भीतर ऐसी कोई बात न थी, जो नई या असंगत हो। यह भी न था कि उन बातोंके साथ सुचरिता का मत न मिलता हो। किन्तु हरिमोहिनीके हाथ से विशेष करके अपना यह सुचरिताके पास भेज देने का जो मतलब निकलता था, वही सुचरिता को तरह-

तरह से घोर कष्ट देने लगा। गोराकी ओर से आज ये आज्ञा क्यों है? अवश्य ही सुचरिताके लिए भी ऐसा समय उपस्थित होगा, उसको भी एक दिन व्याह करना ही होगा—किन्तु उसके लिये गोरा को इतनी शीघ्रता करने का क्या कारण हुआ है, उसके सम्बन्धमें गोराका काम क्या बिल्कुल ही समाप्त हो गया, वह क्या गोराके कर्तव्यमें कुछ हानि कर रही है, उसके जीवनके मार्गमें कोई बाधा डाल रही है? उसके लिये गोराको देनेका या उससे प्रत्याशा करने का कुछ भी नहीं है? उसने लेकिन इस तरहसे सोचा नहीं था, वह तो इस समय भी गोराकी प्रतीक्षा कर रही थी। सुचरिता अपने भीतर के इस असत्य कष्टके-विरुद्ध युद्ध करने के लिए प्राण-पण से चेष्टा करने लगी; किन्तु उसने मनमें कहीं भी कुछ भी सान्त्वना नहीं पाई।

हरिमोहिनीने सुचरिता को सोचने के लिये बहुत सा समय दिया। उन्होंने नित्य नियमके अनुसार कुछ देर तक सो भी लिया। नींद खुलने पर सुचरिताके कमरे में आकर उन्होंने देखा, वह जैसे बैठी थी, वैसे ही अब तक चुपचाप बैठी हुई है।

हरिमोहिनीने कहा—राधारानी भला तू इतना सोच-विचार क्यों कर रही है? इतना सोचने की ऐसी कौन सी बात है? क्यों, गौरमोहन बाबू ने इसमें क्या कुछ अन्याय की बात लिखी है?

सुचरिताने शान्त स्वरमें कहा—ना, उन्होंने ठीक ही लिखा है।

हरिमोहिनी अत्यन्त आश्वस्त होकर कह उठी—तो फिर अब और देर करके क्या होगा बेटी?

सुचरिता—ना, मैं देर करना नहीं चाहती। मैं जरा बाबूजी के पास जाऊँगी।

हरिमोहिनी—देखो राधारानी, तुम्हारे बाबूजी यह कभी नहीं चाहेंगे कि तुम्हारा व्याह हिन्दू समाजमें हो। किन्तु तुम्हारे जो गुरु हैं, वह···।

सुचरिता से अधिक सहा नहीं गया। वह कह उठी—मौसी, तुम क्यों बार-बार यही एक बात पकड़ कर पीछे पड़ गई हो! ब्याहके बारे में मैं बाबूजी से कोई बात तो कहने नहीं जा रही हूँ। मैं योंही एक बार उनके पास जाऊंगी।

परेश बाबूके निकट ही सुचरिताके लिये सान्त्वना का स्थान था। परेशके घर जाकर सुचरिताने देखा, वह एक लकड़ीके बक्समें अपने कपड़े लत्ते रखने में लगे हुये हैं।

सुचरिताने पूछा बाबू जी यह क्या है?

परेशने जरा हँस कर कहा—बेटी, मैं जरा शिमले सैर करने जा रहा हूँ, कल सबेरे की गाड़ीसे जाऊँगा।

परेशकी इस जरा-सी हँसीके भीतर एक भारी विप्लवका इतिहास छिपा हुआ था, और यह सुचरिता की तीक्ष्ण बुद्धि से छिपा नहीं रहा। घरमें उनकी स्त्री कन्या आदि और बाहर उनके बन्धु-बान्धव लोग उन को तनिक भी शांतिसे रहने नहीं देते थे। कुछ दिनके लिये भी अगर दूर जाकर कुछ समय बिता आवें तो उनकी जान बचे। तब घरमें उन्हें केन्द्र करके केवल एक आवर्त (बवण्डर) घूमता रहेगा। कल उन्होंने विदेश जाने का इरादा किया है, और आज उनका कोई अपना आदमी उनके कपड़े तक रख देनेको निकट नहीं आया, उन्हें अपने हाथसे ही यह काम करना पड़ रहा है; यह दृश्य देखकर सुचरिताके हृदयको बड़ी चोट पहुँची। वह परेश बाबूको हटाकर आप ही वह काम करने लगी। पहले उसने सन्दूक के सब कपड़े बाहर निकाल डाले, उसके बाद विशेष यत्न के साथ कपड़ों को तहाकर कायदे से सन्दूक के भीतर रखना शुरू किया। सुचरिता ने कपड़ों के ऊपर परेश बाबूके सदा पढ़ने की किताबें इस तरह रक्खी, जिसमें उन्हें निकालनेमें कुछ असुविधा न हो, और कपड़े भी उलझने न पावें। इस तरह बक्स को भरते-भरते धीरे-धीरे सुचरिताने पूछा—बाबू जी, तुम क्या अकेले ही जाओगे?

सुचरिताके इस प्रश्नके भीतर वेदना का आभास पाकर परेशने कहा—उससे तो मुझे कुछ कष्ट न होगा राधे।

सुचरिताने कहा—ना बाबूजी, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी।

परेश बाबू सुचरिताके मुखकी ओर ताक रहे थे। सुचरिताने कहा—बाबू जी, मैं तुमको कुछ दिक नहीं करूँगी।

परेश—यह तुम क्यों कहती हो? तुमने कब दिक किया है राधे?

सुचरिता—तुम्हारे पास न रहनेसे मेरा भला न होगा बाबूजी बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जिन्हें मैं समझ नहीं पाती। तुम मुझे समझा न दोगे, तो मैं कुछ निर्णय न कर सकूँगी। बाबूजी, तुम मुझ से अपनी बुद्धि पर भरोसा करने को कहते हो, लेकिन मुझ में वैसी बुद्धि नहीं है, और मैं अपने मन में वह जोर भी नहीं देख पाती। तुम मुझे अपने साथ ले चलो बाबू जी।

इतना कह कर, परेश की ओर पीठ करके; बहुत ही सिर झुका कर सुचरिता सन्दूक के कपड़े संभालने लगी। उसकी आंखोंसे टप-टप करके आँसू गिरने लगे।

[७५]

गोराने जब वह कागज लिखकर हरिमोहिनीके हाथ में दिया तब उसे जान पड़ा, जैसे उसने सुचरिताके सम्बन्धमें त्याग-पत्र लिख दिया हो। किन्तु व्यवस्था लिख देने ही से तो बात तय नहीं हो जाती। उसके हृदयने उस व्यवस्था को एकदम अग्राह्य कर दिया। उस व्यवस्था पर केवल गोरा का नाम अङ्कित था, उसके हृदय का दस्तखत तो उसमें न था। इसीसे उसका हृदय अबाध्य हो रहा। ऐसी अबाध्यता कि उसकी प्रेरणासे उसी रातको गोरा को एक बार सुचरिताके घरकी ओर दौड़ लगानी पड़ी। किन्तु ठीक उसी समय गिर्जाघर की घड़ी में दस बज गये, इससे गोराको होश हो आया कि अब किसीके घर जाकर भेंट करने का समय नहीं। उस रातको वह उस बाग में जहाँ प्रायश्चित की आयोजना की गई थी, न जा सका। उसने कल खूब तड़के वहाँ हाजिर होने की खबर भेज दी।

गोरा बड़े तड़के उठकर गङ्गाके तट पर उस बागमें गया। किन्तु मनको जैसा पवित्र और बलशाली करके प्रायश्चित्त करने की बात स्थिर की थी, वैसी उसके मन की अवस्था न रही।

कितने ही पण्डित और अध्यापक लोग आये हैं और कितने ही अभी आनेको हैं! गोरा यथाक्रम सबका स्वागत कर आया। उन्होंने गोरा का सनातन धर्म पर अचल विश्वास देख बार-बार उसकी प्रशंसा की।

बाग धीरे-धीरे लोगोंसे भर गया। गोरा चारों ओर घूम-घूमकर सबकी खोज-खबर लेने लगा। किन्तु इतनी भीड़ के बीच गोरा के अन्तःकरण में मानों कोई कह रहा था—अन्याय करते हो, अन्याय करते हो। क्या अन्याय? यह उस समय सोचकर देखने का समय न था। किन्तु वह किसी तरह अपने गम्भीर हृदयका मुँह बन्द नहीं कर सका।

प्रायश्चित्त अनुष्ठान की विपुल आयोजना के बीच उसका हृदयवासी कोई एक गृह-शत्रु उसके विरुद्ध आज कह रहा था—अन्याय घोर अन्याय ! अन्याय ! यह नियम की त्रुटि नहीं मन्त्रका भ्रम नहीं शास्त्र की विरुद्धता नहीं अन्याय प्रकृति के भीतर है। इसीलिए गोरा का अन्तःकरण इस अनुष्ठान उद्योगसे विमुख हो पड़ा ! वह जो कुछ कह रहा था ऊपरके मन से। भीतर उसका मन अनेक आशङ्काओं से भरा था।

समय समीप आया। शामियाना खड़ा करके सभास्थान प्रस्तुत किया गया। गोरा गङ्गास्नान करके कपड़ा बदलने लगा। इसी समय लोगों की भीड़में एक प्रकारकी चंचलता फैल गई। मानों चारों ओर क्रमशः एक उद्वेगका श्रोत उमड़ पड़ा। आखिर अविनाशने मुँह उदास करके गोरा से कहा—आपके घर से खबर आई है कि कृष्णदयाल बाबूके मुँहसे रक्त जा रहा है। उन्होंने आपको बहुत जल्द ले आने के लिए गाड़ी के साथ आदमी भेजा है।

गोरा झट गाड़ी पर सवार हो उनको देखने गया अविनाश उनके साथ जाने को उद्यत हुआ। गोराने कहा—तुम सबके स्वागत सत्कार करने को यहीं रहो। तुम्हारे जानेसे यहां का काम न चलेगा।

गोराने कृष्णदयालके कमरेमें जाकर देखा, वे बिछौने पर लेटे हैं और आनन्दमयी उनके पायताने बैठी धीरे धीरे उनके पैर दाब रही हैं। गोरा ने उद्विग्न होकर दोनोंके मुँह की ओर देखा कृष्णदयालने उसे पास ही रक्खी हुई एक कुरसी पर बैठने का इशारा किया। गोरा बैठ गया

उसने माँ से पूछा—अब कैसी तबीयत है ?

आनन्दमयी—अब कुछ अच्छे हैं। एक आदमी अँगरेज डाक्टर को बुलाने गया है।

कोठेमें शशिमुखी और नौकर था। कृष्णदयालने हाथ हिला कर उन दोनों को कोठे से जाने का संकेत किया।

जब देखा कि सब चले गये तब उन्होंने चुपचाप आनन्दमयी के मुँह की ओर देखा और कोमल स्वरमें गोरासे कहा—मेरा समय अब समीप आ

गया। इतने दिन तक मैंने जो बात तुमसे छिपा रक्खी थी, वह अब न कहने से मेरे सिर का भार मेरे साथ ही जायगा। मैं मुक्त न हो सकूँगा।

गोरा का मुह मलीन हो गया। वह स्थिर होकर बैठ गया। बड़ी देर तक कोई कुछ न बोला।

पीछे कृष्णदयाल ने कहा—गोरा तब मैं कुछ न मानता था। इसी लिए इतनी बड़ी भूल मुझसे हुई। सच तो यह है कि उसके बाद मेरे लिए भूल सुधारनेका कोई मार्ग भी न था।

यह कह वे फिर चुप हो रहे। गोरा भी कोई प्रश्न न करके चुपचाप बैठा रहा।

कृष्णदयाल—मैंने समझा था कि कभी तुमसे कहनेकी आवश्यकता न होगी। जैसे चल रहा है, चला जायगा। किन्तु अब देखता हूँ, न निभेगा। मेरी मृत्यु के अनन्तर तुम मेरा श्राद्ध कैसे करोगे!—यह कहते समय कृष्णदयालका हृदय मानों कांप उठा था।

इधर असल बात जाननेके लिये गोरा अधीर हो उठा था। उसने आनन्दमयीकी ओर देखकर कहा—मां तुम्हीं कहो बात क्या है! क्यों मुझे श्राद्ध करनेका अधिकार नहीं है?

आनन्दमयी इतनी देर सिर नीचा किये चुपचाप बैठी थी—गोराका प्रश्न सुनकर उसने सिर उठाया और गोराके मुंहकी ओर दृष्टि स्थिर करके कहा नहीं बेटा; नहीं है।

गोराने चकित होकर पूछा—मैं इनका बेटा नहीं हूँ?

आनन्दमयी—नहीं।

जैसे ज्वालामुखी पहाड़से आगका गोला निकलता है, वैसे ही गोराके मुंहसे यह शब्द निकला—क्या तुम मेरी मां भी नहीं हो?

आनन्दमयीका कलेजा फट गया। उसने रुंधे हुए कण्ठसे कहा—बेटा, तुम मुझ पुत्रहीनाके पुत्र हो, तुम गर्भके बालक से भी बढ़कर मेरे प्यारे हो।

गोराने तब कृष्णदयालके मुंह की ओर देखकर कहा—तो आपने मुझको कहां पाया?

कृष्णदयाल—जब सिपाही विद्रोह हुआ था, उस समय हम इटावेमें थे। तुम्हारी माँने बागी सिपाहियोंके डरसे भागकर रातको हमारे घरमें आश्रय लिया था। तुम्हारे बाप उसके पहले ही लड़ाईमें मारे गये थे उनका नाम था—

गोराने गरजकर कहा—नाम बतानेकी जरूरत नहीं। मैं नाम जानना नहीं चाहता।

गोरा के उस उत्तेजनासे विस्मित होकर कृष्णदयाल ठहर गये। पीछे बोले—वे आयरिश थे। तुम्हारी माँ उसी रात तुमको प्रसव कर मर गई तबसे तुम बराबर पुत्रकी भांति मेरे घरमें पाले पोसे गये।

एकही क्षणमें गोरा को अपना जीवन एक अद्भुत स्वप्नकी भांति दीखने लगा। बाल्यावस्थासे अब तक उसके जीवनकी जो दीवार तैयार होती आ रही थी वह एक बारगी नष्ट हो गई। मैं कौन हूँ, कहाँ हूँ, उसका वह ज्ञान जाता रहा। इतने दिन तक मैंने अपनेको क्या मानकर क्या किया और अब क्या करूँगा, उसके लिए एक कठिन समस्या हो गई। कहाँ तो वह अपनेको आनन्दमयीका पुत्र मानकर हिन्दू धर्मका प्रचरिक बन बैठा था और कहाँ अब वह आयरिशका मातृ पितृ हीन बालक है। मानों उसके लिए सृष्टि ही बदल गई, उसके माँ नहीं, बाप नहीं, जाति, नहीं, नाम नहीं, गोत्र नहीं, देवता नहीं! उसके पास नहीं के सिवा और कुछ भी नहीं। अब मैं क्या करूँ, किस धर्मका अवलम्बन करूँ, किस ओर अपना लक्ष्य स्थिर करूँ—यह कुछ भी वह निश्चय न कर सका। वह अपनेको एक दिशाहीन अद्भुत शून्य के भीतर सम्प्रात देख हक्का बक्का सा होगया। उसका मुँह देख कोई उससे और बात कहनेका साहस न कर सका।

इसी समय एक पूर्व परिचित बंगाली चिकित्सकके साथ अँग्रेज डाक्टर सिविल सर्जन आ पहुँचा। डाक्टरने जैसे रोगीकी ओर देखा वैसे गोराकी ओर भी देखे बिना न रह सका, सोचा, यह आदमी कौन है? तब भी गोरा के सिरमें मिट्टीका तिलक था और स्नानके बाद जो रेशमी वस्त्र धारण किये

था, वह भी पहिरे ही आया था। बदनमें कोई कुरता न था सिर्फ एक चादर कन्धे पर था और उसका सारा विशाल शरीर खुला हुआ था।

अपना परिचय पानेके पूर्व यदि गोरा अंग्रेज डाक्टरको देख पाता तो उसके मनमें विद्वेष उत्पन्न हुए बिना न रहता। आज डाक्टर जब रोगी की परीक्षा कर रहा था तब गोराने बड़ी उत्सुकताके साथ उसकी ओर देखा वह बार-बार अपने मनसे पूछने लगा, क्या यही आदमी यहाँ सबकी अपेक्षा मेरा आत्मीय है।

डाक्टर ने परीक्षा करके और पूछकर कहा—कोई वैसा बुरा लक्षण तो दिखाई नहीं देता। नाड़ीकी गति भी शङ्काजनक नहीं, हृत्पिण्डमें भी कोई विकार मालूम नहीं होता। जो उपद्रव हुआ है सावधान होकर औषधि सेवन करनेसे फिर न होगा।

डाक्टरके चले जाने पर गोरा कुछ न बोल कर कुर्सीसे उठनेको उद्यत हुआ।

डाक्टरके आनेसे आनन्दमयी पास के कमरेमें चली गई थीं। वह दौड़ कर आईं और गोरा का हाथ पकड़कर बोलीं—बेटा ? तू मुझ पर क्रोध मत कर, क्रोध करेगा तो मैं प्राण दे दूँगी।

गोरा—तुमने इतने दिन तक मुझसे सब हाल क्यों न कहा ? कह देती तो तुम्हारी कोई क्षति न होती।

आनन्दमयीने सब दोष अपने ऊपर लेकर कहा—तुमको कहीं खो न बैठूँ, इस भयसे मैंने यह अपराध किया है। आखिर यदि वही हो, अगर तू मुझे आज छोड़कर चला जाय, तो मैं किसीको दोष न दूँगी। तुम्हारा जाना मेरे लिए प्राण दण्ड होगा। तू जैसे पहले मेरे पास था तैसे अब भी रह।

गोरा सिर्फ "मां" कहकर चुप हो रहा।

गोराके मुँहसे वह माँ सम्बोधन सुनकर इतनी देरके बाद आनन्दमयी के रुके हुए आँसू टपक पड़े।

गोराने कहा—माँ, एक बार परेश बाबूके घर जाऊँगा।

आनन्दमयीके हृदयका बोझ हल्का हो गया। उसने आँसू पोंछकर कहा—जाओ बेटा ! इनके शीघ्र मरनेकेकी आशङ्का नहीं है।

उधर गोराके निकट बात भी प्रकट हो गई, इससे कृष्णदयाल बड़े भयभीत हो गये। आखिर उन्होंने बड़े कातर भावसे कहा—देखो गोरा, इस बातको किसीके आगे प्रकट करनेकी आवश्यपता नहीं। केवल तुम समझ बूझकर काम करो तो जैसे चला जाता था वैसे चल जायगा। कोई कुछ न जानेगा।

गोरा इसका कुछ जवाब न देकर चला गया। कृष्णदयाल से उसका कोई सम्बन्ध नहीं, यह जानकर वह खुश हुआ।

महिमको आफिससे एकाएक गैरहाजिर होने का कोई उपाय न था वह डाक्टर का लाने सब प्रबन्ध करके एक बार केवल साहबसे छुट्टी लेने गया। उसने पूछा—गोरा कहाँ जा रहे हो ?

गोरा—समाचार अच्छा है। डाक्टर आये थे कहा, कोई डर नहीं, शीघ्र आराम हो जायगा।

महिमने बड़ी तसल्ली पाकर कहा—परसों अच्छा मुहूर्त है—शशिमुखीका व्याह उसी दिन कर दूँगा। तुमको कुछ उद्योग करना पड़ेगा। और देखो विनयको पहले ही सावधान कर देना जिसमें वह उस दिन न आवे अविनाश पक्का हिन्दू है। उसने समझाकर कह दिया है जिसमें उसके व्याह में वैसे लोग न आने पावें। एक बात और तुमसे अभी कह रखता हूँ मैं उस दिन अपने आफिसके बड़े साहबको नेवता देकर लाऊँगा। तुम उनसे जरा सादगीके साथ पेश आना और कुछ नहीं, सिर्फ जरा सिर नवाकर गुडईवनिंग कहनेसे तुम्हारा हिन्दू शास्त्र दूषित न होगा बल्कि तुम पण्डितों से व्यवस्था ले लेना। समझते हो न, वे हमारे राजा के सजातीय है उनके आगे अपना अहङ्कार कुछ कम करनेसे तुम्हारा अपमान न होगा।

महिम की बात का कोई उत्तर न देकर गोरा चला गया।

[७६]

सुचरिता जिस समय आँखोंके आँसू छिपानेके लिये संदूकके ऊपर एकदम झुक कर कपड़े रखनेमें लगी हुई थी, उसी समय खबर आई कि गोरा बाबू आये हैं।

सुचरिता फौरन आँसू पोंछ कर हाथका काम छोड़कर उठ खड़ी हुई वैसे ही गोराने भी वहाँ प्रवेश किया।

गोराके ललाट में उस समय भी तिलक लगा हुआ था इसका उसे होश ही नहीं था। शरीर पर भी वही पिताम्बर और चादर थी। ऐसे वेशसे साधारणतः कोई किसीके घर मुलाकात करने नहीं जाता। वही पहले पहल जब गोरासे भेंटहुई थी, उस दिनका ख्याल सुचरिताको हो आया। सुचरति जानती थी कि उस दिन गोरा विशेष कर युद्धके वेशसे आया था। तो फिर क्या आज भी यह युद्धका साज है?

गोरा आते ही एकदम जमीन में सिर रखकर परेशबाबूको प्रणाम किया और उनके चरणों की रज मस्तक में लगाई परेशबाबू ने व्यस्त होकर उसें उठाया और कहा—आओ, आओ भैया बैठो।

गोरा कह उठा—परेस बाबू मुझे अब कोई बन्धन नहीं है!

परेशने विस्मित होकर पूछा—काहेका बन्धन?

गोरा—मैं हिन्दू नहीं हूँ?

परेश—हिन्दू नहीं हो?

गोरा—ना, मैं हिन्दु नहीं हूं, आज खबर मिली है कि मैं गदर के समयका पाया हुआ लड़का हूँ मेरे पिता आयरिश मैन थे। भारतवर्ष के उत्तर से दक्षिण तक सब देव मन्दिरों का द्वार आज मेरे लिए बन्द हो गया है। आज सारे देश भरमें किसी पंक्ति में किसी भी जगह मेरे भोजनके लिये आसन नहीं है।

परेश और सुचरिता, सन्नाटेमें आकर बैठे रहे। परेशको न सूझा कि वह गोरासे क्या कहें

गोराने कहा---आज मैं मुक्त हूं परेश बाबू मुझे अब भय नहीं है कि मैं किसी कामसे पतित हो जाऊँगा अब मुझे पग-पग पर जमीन की तरफ देखकर पवित्रताकी रक्षा करके चलना होगा।

सुचरिता गोराके प्रदीप्त उज्ज्वल मुखकी ओर एक टक ताक लगी।

गोराने कहा परेश बाबू इतने दिनों तक भारतवर्ष को पाने के लिए मैंने सम्पूर्ण हृदय से मन, वाणी कायासे---साधनाकी मगर एक न एक जगह जाकर रुकावट पड़ती ही गई। उन सब बाधाओंसे अपनी श्रद्धा का मेल करनेके लिए मैं जीवन भर दिनरात केवल चेष्टा करता आया हूँ उसी श्रद्धाकी नींवको खूब मजबूत बनानेकी चेष्टामें फँसे रह कर मैं और कोई काम ही नहीं कर सका, वही मेरी एक मात्र साधना थी इसी कारण यथार्थ भारतवर्षकी ओर सच्ची दृष्टि फैलाकर उसकी सेवा करने जाकर मैं बार-बार डरसे लौट आया हूँ---मैंने एक निष्कण्टक निर्विकार भावके भारतवर्षको गढ़कर उसी अभेद्य दुर्गसे अपनी भक्ति को सम्पूर्ण निरापद भावसे सुरक्षित करनेके लिए अब तक अपने चारों ओरकी वस्तुओंके साथ बहुत बड़ा युद्ध किया है। आज एक दम भरमें ही मेरा वह भाव दुर्ग स्वप्न की तरह गायब हो गया है। मैं एक दम छुटकारा पाकर अचानक एक बहुत बड़े सत्यके बीचमें आ पड़ा हूँ! समग्र भारतवर्षका भला-बुरा, सुख-दुख, ज्ञान-अज्ञान एकदम बिलकुल मेरे हृदयके निकट आकर पहुंच गया है। आज मैं वास्तवमें उसकी सेवाका अधिकारी हो गया हूँ यथार्थ कर्म क्षेत्र मेरे सामने आकर उपस्थित हुआ है। वह मेरे मनके भीतर कल्पनामय क्षेत्र नहीं है। वह इन बाहर के करोड़ों मनुष्योंके यथार्थ कल्याणका क्षेत्र है।

गोराकी इस नव लब्ध अनुभूतिके प्रबल उत्साह का वेग परेशबाबू को भी जैसे हिलाने लगा। उनसे बैठे नहीं रह गया वह कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुये।

गोराने कहा---मेरी बातें क्या आपकी समझमें ठीक-ठीक आरही हैं! मैं दिन रात जो कुछ होना चाहता था मगर हो नहीं पाता था वही मैं आज आप हीसे हो गया हूं। मैं आज भारतीय हूं मेरे हृदय में आज

हिन्दू मुसलमान, ईसाई आदिके किसी समाज से कोई विरोध विद्वेष है। आज इस भारतकी सभी जातियाँ मेरी जाति हैं सभीका अन्न मेरा है। किसीसे रोटी बेटीका सम्बन्ध करनेमें मुझे कोई संकोच या ए नहीं है। देखिये मैं बङ्गालके अनेक जिलोंमें घूमा हूँ, खूब नीच जाति बस्ती में जाकर उनका भी अतिथि हुआ हूँ। यह न समझियेगा कि केवल शहर की सभाओंमें व्याख्यान भर दिये हैं—किन्तु किसी सभी लोगोंके पास जाकर बैठ नहीं सका, अब तक अपने साथ ही एक अदृश्य व्यवधान लेकर घूमा हूँ किसी तरह उसे नांघ नहीं सका उसके कारण मेरे मनके भीतर एक बहुत बड़ी शून्यता थी! उस शून्यता को विविध उपायोंसे अस्वीकार करनेकी ही मैंने चेष्टाकी है— शून्यताके ऊपर तरह तरहके कारुकार्य करके उसीको और भी विशेष रूप सुन्दर बना डालनेकी ही कोशिश करता आया हूं, कारण मैं भारतवर्षको प्राणोंसे भी बढ़कर प्यार करता हूँ—मैं उसे जिस अंश में देख पाता था उस अंशके किसी स्थल पर कुछ भी अभियोग का अवकाश बिल्कुल ही देख या सह नहीं सकता था, आज उस सारे कारुकार्यके बनाने की व्यर्थ चेष्टासे छुटकारा पाकर मुझे बड़ा आराम मिला है परेश बाबू?

परेशने कहा—सत्यको जब हम पाते हैं, तब वह अपने सम्पूर्ण अभाव और अपूर्णताके रहते भी हमारी आत्माको तृप्ति देता है, तब मिथ्या उपकरणके द्वारा सजाने की इच्छा ही नहीं होती।

गोराने कहा—देखिये परेश बाबू कल रातको मैंने विधाता प्रार्थनाकी थी कि आज सबेरे मैं नवीन जीवनप्राप्त करूँ? लड़कपन इतने दिनों तक जो कुछ 'मिथ्या' जो कुछ अपवित्रता मुझे ढके या घेरे हुए थी वह आज सब क्षय हो गई है और मैंने नया जन्म पाया है। मैं ठीक कल्पनाकी सामग्री माँग रहा था मगर ईश्वरने मेरे उस प्रर्थना को नहीं सुना, उन्होंने अपना सत्य अकस्मात एकदम मेरे हाथमें ला देकर मुझे विस्मित कर दिया है! मैंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि वह इस तरह मेरी अपवित्रताको मिटा देंगे। आज मैं ऐसा पवित्र हो उठा हूँ कि

अब चण्डालके घरमें भी मुझे अपवित्र होनेका भय नहीं रहा ! परेशबाबू आज प्रातः काल सम्पूर्ण अनावृत चितको लेकर मैं भारतवर्षकी गोदमें ्मिष्ठ हुआ हूँ—माताकी गोद किसे कहते हैं, इसकी सम्पूर्ण उपलब्धि तने दिनके बाद मैं कर सका हूँ।

परेशने कहा—गोरा, अपनी माताकी गोदमें तुमने जो अधिकार पाया उसी अधिकारके भीतर तुम हम लोगोंको भी बुला कर ले चलो !

गोराने कहा—आप जानते हैं आज मुक्ति पाकर पहले ही आपके ास क्यों आया हूँ।

परेश —क्यों ?

गोरा —आपके पास ही इस मुक्तिका मन्त्र है, इसीलिए आज आपने ्सी समाजके भीतर स्थान नहीं पाया। मुझे अपना शिष्य कर लीजिये ! ाप आज मुझे उन्हीं देवताका मन्त्र दीजिए, जो हिन्दू, मुसलमान, ईसाई ाह्म आदि सभीके मन्दिरका द्वार किसी जातिके लिए, किसी व्यक्तिके ़िए कभी बन्द नहीं होने देता—जो केवल हिन्दुओंके ही देवता नहीं हैं, भारतवर्ष भरके देवता हैं !

परेश बाबूके मुख मडल पर भक्तिके गहरे माधुर्यसे स्निग्ध झलक ़ड़ गई—वह आँखें नीची करके चुपचाप खड़े रहे।

इतनी देरके बाद गोराने सुचरिताकी ओर फिर कर देखा। सुचरिता ़नी कुर्सी पर स्तब्ध होकर बैठी हुई थी।

गोराने हँस कर कहा—सुचरिता अब मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूँ मैं यह ़ुकर तुम्हारे आगे प्रार्थना करता हूँ कि तुम मेरा हाथ पकड़कर मुझे अपने गुरुदेवके पास ले चलो।

यह कहकर गोरा सुचरिताकी ओर अपना दाहिना हाथ बढ़ाकर ़सर हुआ। सुचरिताने कुर्सी परसे उठकर गोराके हाथमें अपना हाथ दे ़या ! तब गोराने सुचरिताके साथ परेश बाबूको प्रणाम किया।

-:०:-

परिशिष्ट

गोराने सन्ध्याके उपरान्त घरमें लौट कर देखा, आनन्दमयी अपनी दालानके सामने बदामदेमें चुपकी बैठी हुई हैं।

गोराने आते ही उनके दोनों पैर पकड़ कर उन पर अपना सिर रख दिया। आनन्दमयी ने दोनों हाथोंसे उसका सिर उठा कर चूम लिया।

गोराने कहा—माँ, तुम्हीं मेरी माता हो ! जिस माताको मैं ढूँढ़ता फिर रहा था, वही मेरे घरमें आकर बैठी हुई थी। तुममें जाति नहीं है, विचार नहीं है, घृणा नहीं है —तुम केवल कल्याणकी प्रतिमा हो। तुम्हीं मेरी भारतमाता हो।—माँ, अब जरा अपनी लछमिनियाको बुलाओ, उससे कह दो, मेरे लिए जल ला दे।

तब आनन्दमयीने गोराके कानके पास मुँह ले जा कर अश्रु गद्गद् कोमल स्वरमें कहा—गोरा, अब जरा विनय को बुला भेजूँ !

—:समाप्तः—